महाकवि श्री विशाखदत्तप्रणीतम्

मुद्राराक्षस-नाटकम्

(हिन्दी तथा अंग्रेजी अनुवाद, अन्वय, संस्कृतव्याख्या,
टिप्पणी, भूमिका आदि से युक्त)

टीकाकार

रामचन्द्र शुक्ल

प्रकाशक

रामनारायणलाल बेनीमाधव

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

२, कटरा रोड, इलाहाबाद—२

[द्वितीय संस्करण] १९७० [मूल्य ५ ०० रु०

प्रकाशक
रामनारायणलाल बेनीमाधव
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
इलाहाबाद

मुद्रक
विजय कुमार अग्रवाल
नव साहित्य प्रेस
इलाहाबाद

विषयानुक्रमणिका

(क) भूमिका

(ख) मूलग्रंथ तथा टीका

परिशिष्ट

मुद्राराक्षसम्

भूमिका

१. पूर्व कथा

प्राचीन काल मे मगध राज्य एक बडा भारी जनस्थान था। इस देश की राजधानी पाटलिपुत्र अथवा पुष्पपुर थी। यहॉ जरासध आदि अनेक पुरुवशी राजा हो गये है। कालान्तर मे नन्दवश ने पौरवो को निकाल कर वहॉ अपनी जयपताका फहराई। नन्दवश का प्रताप सारे भारतवष मे व्याप्त हो गया। इसी वश मे महानन्द का जन्म हुआ। वह बडा वीर और प्रतापी था।

महानन्द के दो मत्री थे। मुख्य मत्री का नाम शकटार और दूसरे का राक्षस था। शकटार शूद्र था और राक्षस ब्राह्मण। दोनो बडे प्रतिभा-सपन्न थे। किन्तु शकटार उद्धत था। इसी से उससे अप्रसन्न होकर महानन्द ने उसे कैदी बना दिया।

शकटार यद्यपि कारागार से छट गया तथापि अपनी प्रतिष्ठा की हानि और परिवार का नाश उसके मन मे सदा खटकता रहा। प्रतिहिसा की अग्नि सदा उसके हृदय मे धधकती रही। एक दिन वह बाहर भ्रमण करने गया। मार्ग मे उसने एक काले ब्राह्मण को देखा कि वह कुशो को खन खन कर उनकी जडो मे मट्ठा डाल रहा है। शकटार ने उस ब्राह्मण से ऐसा करने का कारण पूछा। उस ब्राह्मण ने अपना परिचय देते हुए कहा कि मै ब्राह्मण हूँ। मेरा नाम विष्णुगुप्त चाणक्य है। मै किसी कार्य से बाहर जा रहा था। ये कुश मेरे पैर मे गड गये जिससे मेरा काम रुक गया। अत मै इन कुशो को उखाड कर इनकी जड मे मट्ठा दे रहा हूँ ताकि इनका सर्वनाश हो जाय।

यह बात सुनकर शकटार ने सोचा कि अगर यह ब्राह्मण किसी प्रकार महानन्द से रुष्ट हो जाय तो उसका सर्वनाश कर सकता है। वह अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। महानन्द के यहाँ एक श्राद्ध था। शकटार ने चाणक्य को श्राद्ध मे निमन्त्रित

किया और स्वय कही चला गया। क्योकि वह जानता था कि महानन्द काले ब्राह्मण को देखकर नाराज हो जायगा और उसे श्राद्ध के आसन से हटा देगा और ऐसा ही हुआ भी। जब राजा ने श्राद्धभवन मे एक अनिमन्त्रित काले ब्राह्मण को देखा तो क्रोध से आगबबूला हो गया और उसको वहाँ से निकाल देने की आज्ञा दे दी। इस अपमान से रुष्ट होकर चाणक्य ने नन्द वश का नाश करने की प्रतिज्ञा की और राजभवन से चल दिया।

महानन्द के नव पुत्र थे। उनमे एक चन्द्रगुप्त भी था जो एक शूद्रा से पैदा हुआ था। उस शूद्रा का नाम मुरा था। इसी से चन्द्रगुप्त को मौर्य और वृषल भी कहते है। चन्द्रगुप्त बडा बुद्धिमान् था। एक तो यह शूद्रा-पुत्र था दूसरे यह प्रतिभाशाली भी था। इसी कारण उसके आठो भाई उससे भीतर ही भीतर जलते थे और महानन्द भी पुत्रो का पक्ष लेकर चन्द्रगुप्त से कुढता था। ज्येष्ठ होने के कारण चन्द्रगुप्त अपने को राज्य का अधिकारी समझता था और इसी से राज-परिवार से उसका पूरा वैमनस्य था। चाणक्य और शकटार ने निश्चय किया कि राज्य का लोभ देकर चन्द्रगुप्त को अपनी ओर मिला ले और नन्दो का नाश करके इसी को राजा बनावे।

जब यह बात निश्चय हो गई तो चाणक्य अपनी कुटी मे जाकर रहने लगा और शकटार महानन्द की एक दासी विचक्षणा और चन्द्रगुप्त को मिलाकर अपनी ओर फोडने लग गया। इधर चाणक्य ने कुछ ऐसे विषैले पकवान तैयार किये जो परीक्षा करने मे न पकडे जायँ पर उनके खाते ही प्राणान्त हो जाय। विचक्षणा ने किसी प्रकार महानन्द को पुत्रो समेत यह विष भरा पकवान खिला दिया जिससे वे सबके सब एक साथ परलोकगामी हो गये। शकटार तो कुछ दिनो बाद मर गया और चाणक्य चन्द्रगुप्त को राजा बनाने का उपाय सोचने लगा। वह पर्वतक नामक एक राजा को आधा राज देने का लालच दिलाकर पटने पर चढाई करने के लिए ले आया। पर्वतक का पुत्र मलयकेतु और भाई वैरोचक था। पर्वतक अपनी सहायता के लिये पाँच और म्लेच्छ राजाओ को साथ ले आया।

इधर राक्षस मत्री राजा के मरने से दु खी होकर उसके भाई सर्वार्थसिद्धि को सिंहसान पर बैठाकर राजकाज चलाने लगा। सर्वार्थसिद्धि कुछ दिनो बाद वन मे चला गया और वहाँ चाणक्य ने उसे मरवा डाला। यह देखकर राक्षस मत्री बहुत दु खी हुआ और पर्वतक को मिलाने का प्रयत्न करने लगा। उसको

मिलाकर उसने चन्द्रगुप्त को मारना चाहा। चाणक्य को यह बात मालूम हो गई। उसने एक विषकन्या भेजी। कामी पर्वतक उससे ससर्ग करते ही मर गया और उसका पुत्र मलयकेतु भी भयवश अपने देश को चला गया। अब राक्षस चन्द्रगुप्त का अनिष्ट करने मे पूर्णरूपे से उद्यत हो गया। इसके पीछे की घटना का इस नाटक मे वर्णन है। नाटक का आरम्भ तब होता है जब मलयकेतु और राक्षस के आक्रमण का शोर मच रहा था।

२ कथावस्तु का मूलाधार

विष्णुपुराण, भागवत और अन्य पुराणो मे यह कथा मिलती है। इनमे यही कहा गया है कि कौटिल्य (चाणक्य) द्वारा नन्द का वध किया गया और उसके स्थान पर चन्द्रगुप्त राजा बनाया गया। यह भी लिखा मिलता है कि कामन्दक चाणक्य के एक शिष्य ने अभिचार के द्वारा नन्द का नाश किया। दशरूपक मे जो दशवी शताब्दी ई० मे लिखा गया है, यह कहा गया है कि मुद्राराक्षस का कथानक मूलरूप से बृहत्कथा पर आधारित है। बृहत्कथा मे लिखा है—

तत्र बृहत्कथामूल मुद्राराक्षसम्
चाणक्यनाम्ना तेनाथ शकटारगृहे रह।
कृत्या विधाय सहसा सपुत्रो निहितो नृप
योगानन्दे यश शेषे पूर्वनन्दसुतस्तत।
चन्द्रगुप्त कृतो राज्ये चाणक्येन महौजसा॥

यह ग्रथ (बृहत्कथा) अब उपलब्ध नही है। कहा जाता है कि कथासरित्सागर उसका अनुवाद है परन्तु कथासरित्सागर मे भी इतना बृहत् वर्णन नही है। इसमे तो मत्री राक्षस की भी चर्चा नही है। अत यह कहा जा सकता है कि नाटक की घटनाएँ कवि के दिमाग की सूझ है।

३. संक्षिप्त कथावस्तु

मुद्राराक्षस मे सात अङ्क है। नाटक की कथावस्तु बडी सफलता तथा बुद्धिमानी से सगठित की गई है। चाणक्य इसका नायक है और उसका विपक्षी राक्षस प्रतिनायक है। इसमे जो सघर्ष वर्णन है वह विचित्र ही है। राक्षस तो हत्या का बदला लेने का उपाय करता है परन्तु चाणक्य अपनी सारी बुद्धि इसमे लगाता है कि वह किस प्रकार राक्षस को चन्द्रगुप्त का समर्थक बनावे। चाणक्य हृदय से

चाहता है कि यदि राक्षस चन्द्रगुप्त का मत्री बन जाय तो बडा उत्तम हो। चाणक्य की सारी कार्यवाही इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये है।

प्रथम श्रङ्क

नान्दी के बाद सूत्रधार श्राकर सूचना देता है कि सामत बटेश्वर दत्त के पौत्र श्रौर महाराज पृथु के पुत्र विशाखदत्त कवि का बनाया हुश्रा नाटक श्रभिनीत किया जायगा। ऐसा कहकर वह नाटक मे भाग लेने के लिए श्रपनी पत्नी को बुलाने के लिये श्रपने घर जाता है। वहाॅ उसे पता चलता है कि चन्द्रग्रहण के उपलक्ष्य मे उसकी स्त्री ने ब्राह्मण-भोजन का श्रायोजन किया है। इतने मे नेपथ्य मे शब्द होता है कि मेरे रहते चन्द्र को कौन बल से ग्रस सकता है। यह शब्द चाणक्य का है। प्रस्तावना के बाद नट श्रौर नटी चले जाते हैं। श्रौर श्रपनी खुली हुई शिखा को फटकारता हुश्रा चाणक्य रगमच पर प्रवेश करता है। वह राक्षस मत्री को धन्यवाद देता है कि नन्दवशियो के समाप्त हो जाने पर भी वह उनका भक्त बना है। इसी से वह राक्षस को श्रपनी श्रोर मिलाना चाहता है। लोगो मे यह किंवदन्ती फैला दी गई है कि पर्वतक को राक्षस ने मरवाया है। भागुरायण के द्वारा मलयकेतु को यह समझा दिया गया है कि तुम्हारे पिता को चाणक्य ने मरवाया है श्रत वह भाग जाता है। चाणक्य ने विष्णुशर्मा नामक ब्राह्मण को जैन सन्यासी बनाकर कुसुमपुर मे भेज दिया है जो राक्षस का विश्वासपात्र बनकर उसके सारे कार्यो का भेद ले रहा है।

इसके बाद यम का चित्र हाथ मे लिये योगी के वेश मे चाणक्य का गुप्तचर निपुणक प्रवेश करता है। वह चाणक्य को बताता है कि चन्द्रगुप्त के विरोधी तथा राक्षस के सहायक तीन व्यक्ति है, वे हैं—जीवसिद्धि क्षपणक, श्रमात्य राक्षस का मित्र शकटदास श्रौर तीसरा सेठ चन्दनदास जो राक्षस के परिवार को श्रपने यहाँ शरण दे रहा है। इसके प्रमाणस्वरूप वह राक्षस की श्रँगूठी चाणक्य को देता है जिसे पाकर चाणक्य प्रसन्न होता है।

इसी बीच चाणक्य को यह सूचना मिलती है कि चन्द्रगुप्त पर्वतक का श्राद्ध करना चाहता है श्रौर ब्राह्मणो को दक्षिणा देना चाहता है। यह सूचना पाकर चाणक्य तीन ब्राह्मणो को दान लेने के लिये नियुक्त करता है।

इसके बाद चाणक्य चन्दनदास को बुलवाता है श्रौर उससे कहता है कि राक्षस

के परिवार को तुमने अपने यहाँ टिकाया है उसे हमे सौप दो। चन्दनदास कहता है कि राक्षस का परिवार हमारे यहाँ नही है और अगर होता भी तो मै न सौंपता। यह उत्तर पाकर चाणक्य बडा अप्रसन्न होता है और उसे कैद करने की आज्ञा देता है और यह भी आदेश देता है कि चन्दनदास की सम्पत्ति जब्त कर ली जाय।

इतने मे नेपथ्य के कोलाहल से सूचना मिलती है कि शकटदास को वधस्थान से सिद्धार्थक भगा ले गया है। चाणक्य यह सुन कर बडा प्रसन्न होता है। क्योंकि उसी के कहने से सिद्धार्थक ऐसा करता है ताकि वह शकटदास को राक्षस के पास ले जाकर यह सिद्ध करे कि उसी ने शकटदास को बचाया है और राक्षस का विश्वासपात्र बनकर उसका भेद लेता रहे।

द्वितीय अङ्क

सर्वप्रथम इस अङ्क मे एक सँपेरा रगमच पर आता है। इसका नाम जीर्णविष है। यह राक्षस का गुप्तचर विराधगुप्त है। यह राक्षस से मिलना चाहता है।

इसके बाद अपने भवन मे चारपाई पर आसीन चिन्ताग्रस्त राक्षस दिखाई पडता है। वह अनेक बातो को सोच रहा है। इसी बीच मलयकेतु का कञ्चुकी जाजलि राक्षस के पास आता है। वह कहता है कि कुमार मलयकेतु ने अपने आभूषण आपके पहनने के लिये भेजा है, आप उसे पहन ले। राक्षस आभूषणो को स्वीकार करता है। जाजलि चला जाता है।

इसके बाद सँपेरा आकर अपना परिचय देकर कुसुमपुर का सारा समाचार राक्षस को बताता है। उसके द्वारा यह पता चलता है कि चन्द्रगुप्त को मारने के लिये जो विषकन्या भेजी गई थी उससे पर्वतक मारा गया और चन्द्रगुप्त के धोखे मे बेचारा वैरोचक मारा गया। दारुवर्मा भी मारा गया। फिर राक्षस पूछता है कि वैद्य अभयदत्त का क्या हुआ। विराधगुप्त कहता है उसने ओषधि मे विष तो मिला दिया पर चाणक्य को कुछ सदेह हुआ। इससे उसने वह ओषधि चन्द्रगुप्त को नही पीने दी, प्रत्युत वही ओषधि पिलाकर अभयदत्त को मार डाला। विराधगुप्त ने यह भी बताया कि प्रमोदक और बीभत्सादिक आपके गुप्तचर सभी मारे गये। वह चन्दनदास का पकडा जाना और शकटदास का वध-स्थान मे भेजा जाना तथा जीवसिद्धि क्षपणक का देश से निकाला जाना सब कुछ बताता है।

इसी बीच शकटदास को लेकर सिद्धार्थक आता है। शकटदास बताता है कि

सिद्धार्थक की ही कृपा से मेरे प्राण बचे। अब सिद्धार्थक राक्षस का विश्वासपात्र बन कर उसके पास रहने लगता है। राक्षस विराधगुप्त को इसी वेश मे कुसुमपुर भेजता है और आदेश देता है कि तुम किसी प्रकार चाणक्य और चन्द्रगुप्त मे फूट पैदा कर दो। तदनन्तर तीन आभूषण खरीदे जाते है और राक्षस करभक को कुछ आदेश देकर कुसुमपुर भेजता है।

तृतीय अङ्क

कचुकी आकर घोषणा करता है कि महाराज चन्द्रगुप्त ने कौमुदी-महोत्सव पर कुसुमपुर को सजाने की आज्ञा दी हे। चन्द्रगुप्त अपने महल की छत पर से नगर की शोभा देखना चाहता है पर नगर मे कोई चहलपहल नही। वह चाणक्य को बुलवाता है और चाणक्य से कौमुदी-महोत्सव न मनाने का कारण पूछता है। इसी प्रश्न को लेकर पूर्व निश्चय के अनुसार दोनो मे बनावटी झगडा हो जाता है। राक्षस का गुप्तचर स्तनकलश उसको सच्चा झगडा समझता है। चन्द्रगुप्त भी अपने कञ्चुकी वैहीनरि से कहता है कि जाकर यह घोषणा कर दो कि आज से चन्द्रगुप्त अपना राजकाज स्वय देखेगा। कञ्चुकी भी नही समझ पाता कि यह झगडा बनावटी है।

चतुर्थ अङ्क

घबडाया हुआ करभक आता है। वह मत्री राक्षस से मिलना चाहता है। द्वारपाल कहता है कि "स्वामी, राक्षस रात को ज्यादा जगे थे अत उनका सर दर्द कर रहा है। कुछ समय तक रुको" मौका पाकर द्वारपाल करभक के आने की सूचना राक्षस को देता है। राक्षस करभक को भीतर बुलाता हे। उसी समय राक्षस की सिर की पीडा का हाल सुनकर कञ्चुकी, भागुरायण तथा मलयकेतु भी आ जाते है। यह भागुरायण चाणक्य का गुप्तचर है। इसी से रास्ते मे वह कुछ ऐसी बाते करता है जिससे राक्षस और मलयकेतु मे फूट हो जाय।

इस प्रकार भागुरायण और मलयकेतु जब राक्षस के समीप पहुँचते है तो वे छिपकर करभक और राक्षस की बाते सुनते है। करभक राक्षस से कौमुदी-महोत्सव के अवसर पर जो कलह चाणक्य और चन्द्रगुप्त मे हुआ उसका वर्णन करता है। राक्षस को इस बात पर विश्वास नही होता परन्तु शकटदास उसे विश्वास दिलाता है कि यह बात हो सकती है और बहुत सम्भव है कि चाणक्य बन मे तपस्या करने चला जाय।

सभी बँधे हुए को बन्धनमुक्त किया जाता है। राक्षस अमात्य बनकर आशीर्वाद देता है। चाणक्य भी पूर्णप्रतिज्ञ होकर अपनी शिखा बाँध लेता है।

४. मुद्राराक्षस की विशेषता

सस्कृत के नाटक साहित्य मे "मुद्राराक्षस" का नाम नही भूला जा सकता। सस्कृत मे बडे-बडे नाटककार हो गये हैं, जैसे भास, कालिदास और शूद्रक आदि। परन्तु इनके नाटको की विशेषताएँ मुद्राराक्षस को प्रभावित नही कर पायी। मुद्राराक्षस मे जो विशेषताएँ है वे अपनी है जो अन्य नाटको मे नही है।

सर्वप्रथम विशेषता यह है कि यद्यपि इसका लिखने वाला नाट्यशास्त्र का ज्ञाता था फिर भी नाट्यशास्त्र के नियमो का अक्षरश अनुसरण नही करता, बल्कि उस पर अपनी व्यक्तिगत नाट्यप्रतिभा की छाप छोड जाता है। नाट्य-शास्त्र की पुरानी प्रथा के अनुसार नाटक का नायक ख्यात वश मे उत्पन्न कोई राजा होता था पर इस नाटक का नायक भारतीय इतिहास मे सर्वप्रथम सर्वप्रसिद्ध सम्राट् का निर्माता और उसके वश के साम्राज्य का स्थापित करने वाला है। पुरानी प्रणाली के अनुसार नाटको मे रामायण, महाभारत या पुराणो से कथा लेकर नाटक की रचना की जाती थी पर इस नाटक का इतिवृत्त मौर्य साम्राज्य की स्थापना और प्राण-प्रतिष्ठा पर निर्भर है।

इसकी दूसरी विशेषता इतिवृत्त (plot) की वस्तुरचना है। इस नाटक का लिखने वाला एक ऐसा कुशल नाट्य-कलाकार है जिसने नाना प्रकार की घटनाओ से सम्बद्ध एक ऐसी इतिवृत्त-रचना कर दिखाई है जिसमे प्रत्येक घटना मुख्य वृत्त से निकलती और उसी मे अन्त होती हुई दिखाई देती है। इस नाटक के इतिवृत्त-सस्थान की बराबरी सम्भवत किसी भी नाटक का इतिवृत्त नही कर सकता। और नाटको मे इतिवृत्त तो चरित से स्वतत्र भी अपना अस्तित्व रखता है। उदाहरणार्थ "उत्तररामचरित" का इतिवृत्त भवभूति द्वारा उसमे चित्रित राम के चरित से अलग भी अवस्थित है, परन्तु मुद्राराक्षस का इतिवृत्त ऐसा है जो उसके प्रमुख चरित की प्रेरणा से जन्म लेता तथा जीवित-जागृत खडा दिखायी देता है।

तीसरी विशेषता यह है कि यद्यपि इस नाटक मे सर्वत्र युद्ध की चर्चा है और युद्ध के प्रति उत्साह है फिर भी कही युद्ध नही, कही रक्तपात नही और न कही

ऐसा अवसर ही आया है कि युद्ध की लिप्सा को शान्त किया जा सके। अत इस नाटक का वीररस सग्राम मे नही, युद्ध स्थल मे नही बल्कि बडे-बडे सग्रामो को जन्म देने वाली राजनीतिज्ञो की प्रतिभा मे है। नायक चाणक्य और प्रति-नायक राक्षस की लडाई शस्त्रबल की नही बल्कि बुद्धिबल की है।

चरित्रचित्रण की विशदता, असकीर्णता, महाप्राणता इस नाटक की चौथी विशेषता है। मुद्राराक्षस का चरित्रचित्रण आदर्श और यथार्थ की सीमाओ का सम्मेलन है। इस नाटक के पात्र साधारण होते हुए भी विशिष्ट है, आदर्श होते हुए भी यथार्थ है। नाटकीय होते हुए भी वास्तविक है।

इसकी पाँचवी विशेषता यह है कि यह हर प्रकार से नाटक है। इसमे ऐसा नही प्रतीत होता कि कवि कुछ अपनी ओर से कह रहा है जिसे हम सुनने को रुक जायँ। नाटककार ने "मुद्राराक्षस" के कथोपकथन के नाटकीय औचित्य की वृद्धि के लिये काव्य-कल्पना का बलिदान तक कर दिया है। और कवियो ने अपने नाटक को काव्यमय बना दिया है, पर इस नाटक मे यह बात नही पाई जाती।

पाँचवी विशेषता इस नाटक की यह है कि इसमे कोई नायिका नही है। इसके पहले का या बाद का कोई ऐसा नाटक नही है जिसमे नायिका न हो। परन्तु इस नाटक मे न तो कोई नायिका है न कोई प्रेम की वार्ता है। इसमे स्त्री पात्र भी नही है। जो स्त्री पात्र है भी उनका कोई महत्त्व नही है।

यद्यपि अन्तिम अङ्क मे चन्दनदास की स्त्री रगमच पर आती है, पर वह भी नीरस, कठोर, कर्त्तव्यपालनोन्मुखी तथा स्वार्थत्यागिनी के रूप मे प्रदर्शित है। उसके पास भी करुण रस नही फटकने पाया, तब शृगार की कहाँ पूछ होती है। नाटककार ने लिख ही दिया है (कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च) अर्थात् राजनीतिज्ञ के लिये स्त्रियाँ सुख-दु ख दोनो मे भार सी प्रतीत होती है। इस प्रकार के राजनीति-धुरधर नाटककार के लिखे गये राजनीति विषयक नाटक मे माधुर्य या सौन्दर्य का खोजना व्यर्थ है।

छठवी विशेषता यह है कि इस नाटक का मुख्य विषय राजनीतिक है। इसमे न तो प्रम का वर्णन है और न वियोग का। इसकी सभी घटनायें, सभी पात्र हमको एक लक्ष्य की ओर ले जाते हुए प्रतीत होते है। वह लक्ष्य है कि किसी भी

प्रकार राक्षस चन्द्रगुप्त का मत्री बनना स्वीकार कर ले। और अन्त मे चाणक्य की नीति सफल होती है। राक्षस ऐसी परिस्थिति मे पड जाता है कि उसे चन्द्रगुप्त का मत्रित्व स्वीकार ही करना पडता है।

एक विशेषता इसमे यह भी है कि भास और कालिदास के नाटको मे अक का विभाजन दृश्यो मे नही किया गया है। उनमे मुख्य पात्र अङ्क के आरम्भ से लेकर अत तक रगमच पर रहते है। पर मुद्राराक्षस मे अङ्क का दृश्यो मे विभाजन स्पष्ट प्रतीत होता है। उदाहरणार्थं तृतीय अङ्क मे अनेक दृश्य-परिवर्तनो का स्पष्ट आभास मिलता है।

५. मुद्राराक्षस का मूल्यांकन

यह नाटक सात अङ्को मे है और नाट्यकला के सभी लक्षण इसमे पूर्ण रूप से वर्तमान है। इस नाटक मे वीररस प्रधान है। यद्यपि आश्चर्य की मात्रा भी प्रचुर रूप से वर्तमान है पर कर्मवीरत्व या उद्योग ही का प्राधान्य सारे नाटक मे परिलक्षित होता है। प्रथम अङ्क मे चाणक्य का मौर्यराज्य की स्थिरता के लिये राक्षस को चन्द्रगुप्त का मत्री बनाने की दृढ इच्छा प्रकट करना बीज है। राक्षस के मुहर की प्राप्ति और शकटदास से पत्र लिखाकर मुहर करना तथा उसे कपट रूप से मलयकेतु को दिखाना विन्दु है। इसी विन्दु तथा कार्य से नाटक का नामकरण हुआ। विराधगुप्त का राक्षस से उसके प्रयत्नो का निष्फल होने का सदेह करना पताका है। चाणक्य और चन्द्रगुप्त के मिथ्या कलह की बात राक्षस के पास लाना प्रकरी है। राक्षस का मत्रीपद ग्रहण करना कार्य है।

नाटक की कथावस्तु का निर्वाह भी विवेचनीय है। इसका प्रासगिक कथा-वस्तु सर्वदा गौण तथा आधिकारिक कथावस्तु की सौदर्यवृद्धि मे सहायक रहा। इसके दृश्य और घटनाक्रम ऐसी बुद्धिमानी और कुशलता से सगठित किये गये है कि वे कही उखडे-से या असम्बद्ध नही मालूम पडते। प्रथम अङ्क मे चाणक्य का आकर कुछ पहले का इतिहास कहना और नाटक का उद्देश्य बतलाना तथा उसी के साथ ही राक्षस की मुद्रा की प्राप्ति से उसे फँसाने का प्रबध करना, दिखला-कर दर्शको को नाटक की घटना का पूरा ज्ञान करा दिया जाता है। इसके बाद दूसरे अङ्क मे राक्षस के उपायो का निष्फल होना, चौथे मे चाणक्य और चन्द्रगुप्त का बनावटी झगडा दिखाना उद्देश्य पूर्ति का यत्न है। चौथे और पाँचवे अङ्क मे

मलयकेतु का राक्षस के प्रति सन्देह होने से लेकर अन्त मे उन दोनो का सत्यकलह दिखलाना प्राप्त्याशा है। छठे मे राक्षस का वधस्थान को जाना नियताप्ति और सातवे मे मन्त्रित्व ग्रहण करना फलागम है।

इस प्रकार विवेचना करने पर स्पष्ट होता है कि मुद्राराक्षस रूपक का प्रथम भेद नाटक है और नाट्यकला के अनुसार नाटक के सभी लक्षणो से युक्त है।

मुद्राराक्षस की वाक्यरचना-शैली चाहे गद्य की हो अथवा पद्य की न तो हमारे कानो मे सगति सी लगती है न हमारी आँखो मे चित्र सी झलकती है प्रत्युत ऐसी प्रतीत होती है मानो हमारी ही शैली हो और भिन्न भिन्न भावावेशो मे हमारे ही व्यक्तित्व की अभिव्यजना हो। इस नाटक का नाटककार अपने नाट्य जगत् के छोटे से छोटे और बडे से बडे व्यक्ति को समान स्नेहभाव से देखता है और निष्पक्ष भाव से मानता है। इस नाटक का नायक जितना महान है प्रतिनायक उससे कम नही है। नायक की अन्तिम विजय मे यदि नाटककार अति प्रसन्न होता है तो प्रतिनायक की हार से वह कम दु खित नही होता।

मुद्राराक्षस समग्र सस्कृत साहित्य मे अपने ढग का एक ही नाटक है। यह रसप्रधान न होकर घटनाप्रधान नाटक है। राजनीति की कुटिल चालो और कूटनीति के दाव-पेचो का इसमे बडा ही सजीव और सफल चित्रण हुआ है। अपने पात्रो का चरित्र-चित्रण करने मे विशाखदत्त ने विशेष कौशल दिखाया है। वे नाटक के पात्रो को इस तुलनात्मक ढग से चित्रित करते है कि उनकी विशेषताएँ बिलकुल स्पष्ट हो जाती है। चाणक्य और राक्षस का तुलनात्मक चित्रण पूर्ण सफल हुआ है। चाणक्य यदि स्थिरचित्त, प्रतिक्षण जागरूक, कठोर, शाठ्य-नीति-निपुण और कभी न झुकने वाला है तो राक्षस अस्थिरचित्त, विस्मरणशील, उदार, सज्जन और अन्त मे झुक जाने वाला है।

६. मुद्राराक्षस में सामाजिक दशा का ज्ञान

विलसन महोदय ने लिखा है—

"Mudra Rakshasam represents a curious state of public morals in which fraud and assassination are the simple means by which inconvenient obligations are aquitted, and trouble-some friends or open enemies removed"

किन्तु आज यदि विलसन साहेब जीते होते तो वे देखते कि सारे ससार में

राजनीति प्रत्येक काल मे राजनीति ही है, आजकल भी बीमारो की जहाजो पर और ग्रामीण क्षेत्रो मे रात को सोते हुए व्यक्तियो पर बम छोडे जाते है। शत्रुपक्ष के पीने का जल विषाक्त कर दिया जाता है। अणुबम तथा टैको का प्रयोग बेखटके किया जाता है। फिर भी इतना तो विलसन महोदय कहते है—

A redeeming feature of Hindu treachery is devoted fidelity to an employer Although some of the personages cannot help expressing a disgust for the duty they have to discharge, they never intimate any relaxation of purpose, although treated with indignity or blows

नाटककार के समय मे वर्ण-भेद उतना ही प्रबल था जितना मनु के काल मे। विशाखदत्त शूद्रो से घृणा करते थे। शूद्र का कोई आदर नही था। यहाँ तक कि राजा चन्द्रगुप्त शूद्र होने के नाते हमेशा "वृषल" शब्द से सम्बोधित किया जाता है। चाणक्य हमेशा उसे वृषल ही कहता है। (तत् स्थाने खल्वस्य वृषल देवश्चन्द्रगुप्त, अङ्क ३।) वह किसी दूसरे नाम से चन्द्रगुप्त को नही सम्बोधित करता। वृषल चन्द्रगुप्त का नाम नही है जैसा कि कुछ कोषकारो ने लिखा है। कुछ भी हो विशाखदत्त वृषल शब्द व्यक्तिवाचक नही मानते। वह हमेशा शूद्र अर्थ मे ही इस शब्द का प्रयोग करते है।

इस नाटक मे वैश्यो का उल्लेख नही है। श्रेष्ठिन् शब्द बडे-बडे साहूकारो और धनियो के लिये प्रयुक्त हुआ है वह चाहे जिस भी वर्ण के हो। मृच्छकटिक मे श्रेष्ठी चारुदत्त ब्राह्मण है। यदि यह मान लिया जाय कि इस नाटक का श्रेष्ठी वैश्य है तो यह मानना पडेगा कि उनका पतन हो चुका था। वे प्राकृत भाषा का प्रयोग करते है न कि सस्कृत का, जो द्विजातियो को बोलना चाहिये (पाठ्य तु सस्कृत नृणामनीचानाम् कृतात्मनाम्—दशरूपक)। सभवत बहुत काल से व्यापार से सबधित होने के कारण वे कृतात्मा न रहकर अकृतात्मा हो गये।

क्षत्रियो मे अधिक परिवर्तन नही होता। प्राचीन काल के क्षत्रियो जैसे वे अब मृगया और युद्ध के प्रेमी है।

विशाखदत्त कायस्थो को ज्यादा सम्मान समाज मे देते है। कायस्थ मुशी तथा हिसाब-किताब रखने वाले का काम अब भी करते है। चाणक्य स्वय शकटदास को कायस्थ शकटदास कहता है न कि वृषल शकटदास। चन्दनदास का एक मित्र श्रेष्ठी चन्दनदास को राक्षस के सामने केवल चन्दनदास कहता है और कोई आदर-

सूचक शब्द उसके साथ नही लगाता। परन्तु शकटदास के विषय मे बात करते समय वह "आर्य शकटदास" कहता है। (आर्य, शकटदासो वधस्थानमानायित। श्रेष्ठिचन्दनदासस्य वध)।

कायस्थ शकटदास सस्कृत भाषा का प्रयोग करता है जो केवल द्विजातियो (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) की ही भाषा है। परन्तु कायस्थ केवल लिखा पढी करते थे। उनका विशेष महत्त्व नही था। चाणक्य उनको "लम्बी मात्रा" वाला कहता है।

ब्राह्मणो का इस काल मे वह आदर नही था जो कालिदास के काल मे था। राक्षस ब्राह्मण था तो भी मलयकेतु उसे एक बार मार डालना चाहता था किन्तु (रक्षितव्या राक्षसस्य प्राणा) के कारण उसका वध नही हुआ। इस नाटक मे अनेक उदारहण ऐसे है जो यह बताते है कि प्रजा और राजा का, मित्र-मित्र का, पति-पत्नी का कितना सुन्दर सबध था। समाज मे कर्त्तव्य-पालन का आदर्श था।

७. मुद्राराक्षस राजनीतिशास्त्र का रूपान्तर है

सक्रिय राजनीति विषय पर लिखा गया यह नाटक अपने ढग का अनूठा ही है। इसमे राजनीति एक कठिन खेल के रूप मे चित्रित की गई है, इसे एक सर्प के रूप मे ही कहा गया है। द्वितीय अङ्क मे प्रारम्भ मे ही आहितुण्डिक नामक सँपेरे का वेष धारण किया हुआ विराधगुप्त कहता है—

'ननु खेलत्येवार्योऽहिना।'

राक्षस तथा चाणक्य दोनो के लिए अपने लक्ष्य का जितना महत्त्व है, उतना साधन का नही। राजनीति मे इसी प्रकार की स्थिति अपेक्षित भी होती है। यहाँ कर्तव्य-अकर्तव्य, पुण्य-पाप आदि का कोई स्थान नही है, अपितु किस प्रकार लक्ष्यसिद्धि हो—इस योजना का और उसके साफल्य का स्थान अत्यधिक महत्त्व का है।

८. पात्रो का चरित्रचित्रण

कवि विशाखदत्त ने अपने पात्रो का चरित्रचित्रण बडी अच्छी तरह से किया है। इस नाटक के प्रधान पात्र कुटिल राजनीति धुरधर चाणक्य का उपनाम कौटिल्य है। इसका प्रतिद्वन्द्वी नन्दवश का मन्त्री राक्षस है और चन्द्रगुप्त, मलयकेतु

केतु, चन्दनदास, शकटदास और भागुरायण उल्लेखनीय है। चाणक्य और चन्द्रगुप्त ऐतिहासिक पुरुष है। राक्षस और मलयकेतु की ऐतिहासिकता सभवत हमारे ऐतिह्यविद् यदि अभी नही सिद्ध कर पाये तो भविष्य मे कर ही दिखायेगे। अन्य पात्र कल्पित है।

सस्कृत के नाट्य साहित्य मे जितने भी नायक-चरित चित्रित है उनमे एक भी ऐसा नही जो कि मुद्राराक्षस के चाणक्य के समान प्रभावोत्पादक और शक्तिशाली हो। चाणक्य ही इस नाटक के घटनाचक्र का एकमात्र नियन्ता है। परन्तु वह जो कुछ करता है अपने लिये नही, अपने स्वार्थभाव से नही, अपितु चन्द्रगुप्त के लिए करता है। यह वीतराग निरीह और लोकोत्तर व्यक्ति है। यद्यपि वह इतने बडे साम्राज्य का महामत्री है, फिर भी वह अपने सुख की परवाह नही करता। सादा जीवन बिताने वाला, झोपडी मे रहने वाला, विरागपूर्ण जीवन बिताने वाला व्यक्ति चाणक्य के समान दूसरा न मिलेगा। चन्द्रगुप्त का कञ्चुकी स्वयम् कहता है।

अहो राजाधिराजमत्रिणो गृहविभूति । कुत —
उपलशकलमेतद्भेदक गोमयानाम्
वटुभिरुपहृताना वर्हिषा स्तोम एष ।
शरणमपि समिद्भि शुष्यमाणाभिराभि-
विनमितपटलान्तम् दृश्यते जीर्णकुड्यम् ।। (३-१५)
निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कारविषय ।। (२-१६)

वह बुद्धिमान् है। उसे अपनी बुद्धि पर विश्वास है। वह कहता है—

नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमाबुद्धिस्तु मागान्मम ।। (१ २६)

वह अपने पौरुष और पुरुषार्थ मे अटूट और अदम्य विश्वास रखता है। वह दैव मे विश्वास नही करता है। जब वह यह सुनता है कि नन्दवश का नाश दैव ने किया। (नन्दकुलविद्वेषिणा दैवेन) तो वह रुष्ट होकर कहता है— (दैवमविद्वास प्रमाणयन्ति)। वह मूर्त्तिमान् आत्मविश्वास है।

उसमे पक्षपात नाम का भी नही है। वह अपने शत्रु के गुणो की प्रशसा करने मे नही चूकता। वह गुणग्राही है। वह राक्षस की प्रशसा करता हुआ कहता है—

(अहो राक्षसस्य नन्दवशे निरतिशयो भक्तिगुण । साधु अमात्य राक्षस साधु, साधु श्रोत्रिय, साधु मन्त्रिबृहस्पते)

उसमे क्रोध, हठ की मात्रा और उग्रता पूर्ण रूप से वर्तमान है—चाणक्य निरन्तर आत्म-निरीक्षण करता और लोकहित के लिये आत्मशुद्धि से भरा रहता है। वह अपने शिष्य से कहता है—

"वत्स कार्याभिनियोग एव अस्मानाकुलयति" इत्यादि।

राक्षस

राक्षस चाणक्य का प्रतिपक्ष है। मुद्राराक्षस का नाटककार राक्षस के जिस व्यक्तित्व का चित्रण करता है उसकी अपनी विशेषताएँ है। यदि राक्षस के ऐसा प्रतिनायक मुद्राराक्षस मे न चित्रित होता तो इस नाटक मे कोई आनन्द न मिलता। मुद्राराक्षस के निर्वहण मे राक्षस की जो मुद्रा उसके निग्रह का कारण बनती है वही, उपक्रम मे उसकी प्रबल शक्ति की सूचना देती है। चाणक्य के लिये राक्षस एक महान् शक्ति है।

राक्षस ब्राह्मण-कुलावतस, नन्दो का प्रधानमत्री है। उसमे स्वामिभक्ति कूटकूट कर भरी है। वह चन्द्रगुप्त को राजा नही बनने देना चाहता। "जब तक नन्द वश का एक भी व्यक्ति उसे मिलेगा वह उसी को राजा बनायेगा" ऐसी प्रतिज्ञा राक्षस की है। चाणक्य स्वय उसकी स्वामिभक्ति देखकर कहता है—(अहो राक्षसस्य नन्दवशे निरतिशया भक्ति । स खलु कस्मिश्चिदपि जीवति नन्दान्वयावयवे वृषलस्य साचिव्य ग्राहयितु स शक्यते।) राक्षस की वास्तविक महत्ता का जितना पता चाणक्य को है उतना सभवत उसको (राक्षस) को भी नही है। राक्षस की राजनीतिक महत्त्वाकाक्षा उसी प्रकार नि स्वार्थ है जिस प्रकार चाणक्य की राजनीतिक महत्त्वाकाक्षा। चाणक्य को पता है कि राक्षस का व्यक्तित्व साम्राज्य की कैसी शक्ति है और इस शक्ति को अपने पक्ष मे कर लेने से क्या हो सकता है। चाणक्य की यह चिन्ता (अत एवास्माक त्वत्सग्रहे यत्न कथमसौ वृषलस्य साचिव्यग्रहणेन सानुग्रह स्यादिति) राक्षस के व्यक्तित्व की महत्ता की छाप है।

चाणक्य यदि राक्षस से बुद्धि मे बडा दिखाई देता है तो राक्षस पराक्रम मे चढा-बढा है। राक्षस मे सैन्यसग्रह-शक्ति और स्वय सैन्य-सचालन-शक्ति है। इसी से चाणक्य राक्षस को सग्राम मे जीतने की बात न सोचकर दावपेच मे उसे फँसाकर वश मे करना चाहता है।

राक्षस भावुक व सरलहृदय है। वह मनुष्यो का जल्दी विश्वास कर लेता है। वह जीवसिद्धि और सिद्धार्थक को अपना विश्वासपात्र और प्रिय सुहृत् समझता है। परन्तु चाणक्य केवल अपने पर ही विश्वास करता है। राक्षस के हृदय की भावुकता ही उसके पराजय का कारण होती है।

राक्षस शकुन व अपशकुन का मानने वाला और दैव मे विश्वास करने वाला है। जब चतुर्थ अङ्क मे द्वारपाल करभक के आने की सूचना देता है उस समय राक्षस की बाई आँख फडकती है। उस पर वह कहता है (दुरात्मा चाणक्य-वटुर्जयति अभिसधातु शक्य स्यादमात्य इति वागीश्वरी वामाक्षिस्पन्दनेन प्रस्तावगता प्रतिपादयति)। फिर प्रियवदक के द्वारा यह जानकर कि जीवसिद्धि क्षपणक आया है तो राक्षस कहता है—(स्वगतमनिमित्त सूचयित्वा कथ प्रथममेव क्षपणकदर्शन)। फिर कहता है "अबीभत्सदर्शन कृत्वा प्रवेशय" (अङ्क ४)। जब मलयकेतु को राक्षस के ऊपर सदेह हो जाता है और वह नकली पत्र तथा गहनो की पेटी खोलकर राक्षस से पूछता है कि यह किसने किया तो राक्षस कहता है—दैवेन। देखिए अङ्क ५

मलयकेतु—इदमिदानी किम्।
राक्षस—(सवाष्पम्) विधेर्विलसितमिदम्।
मलयकेतु—केन तर्हि व्यापादितस्तात।
राक्षस—दैवमत्र प्रष्टव्यम्—

चाणक्य मार्ग की कठिनाइयो को कुचलता हुआ उन्नतमस्तक होकर चलता है पर राक्षस दैव को दोष देकर मन को शान्त कर लेता है। वह कहता है—

दैव हि नन्दकुलशत्रुरसौ न विप्र। (६-७)
दैवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा पूर्वं विपर्यस्यति।। (६-८)

राक्षस अपने मित्र का स्नेही है। मित्र के प्राणो की रक्षा वह अपने को बन्धन मे डालकर भी करता है। जब उसे यह पता चलता है कि चन्दनदास को फाँसी होने वाली है तो वह आत्मसमर्पण करने की बात सोचता है। सोचता ही नही अपितु आत्मसमर्पण कर भी देता है। वह वधस्थान पर यकायक पहुँच कर वधिको से कहता है वध्यमाला मुझको पहना दो।

तस्येय मम मृत्युलोकपदवी वध्यस्रगाबध्यताम्।। (७-४)

चन्दनदास के यह कहने पर कि अमात्य क्या कर रहे हो, वह उत्तर देता है —

त्वदीयसुचरितैकदेशस्यानुकरणम् ।

वह चाणक्य से डरता नही । वधस्थान मे आकर वह वधिको से कहता है—(अयमर्थो निवेद्यताम् तावद् दुरात्मने चाणक्याय) । वह चाणक्य से दया नही चाहता । वह चाणक्य को फटकारता ही रहता है—'(भो भो विष्णुगुप्त न मा श्वपाकस्पर्शदूषित स्प्रष्टुमर्हसि ।) वह अपने मित्र के प्राणरक्षार्थ ही चाणक्य के कहने से शस्त्र ग्रहण करता है—(अपीष्यते चन्दनदासस्य जीवितम्) ।

राक्षस —भो विष्णुगुप्त कुत सन्देह ।

चाणक्य —यदि सत्यमेव चन्दनदासस्य जीवितमिष्यते ततो गृह्यतामिद शस्त्रम् ।

राक्षस —शस्त्रम् मित्रशरीररक्षणकृते व्यापारणीय मया । (१-१६)

राक्षस का यह उद्गार कितना मर्मस्पर्शी है ।

वह अपने साथ उपकार करने वालो का कृतज्ञ भी है । जब मलयकेतु बन्दी की अवस्था मे चन्द्रगुप्त के सामने लाया जाता है तो राक्षस कहता है कि हम मलयकेतु के आश्रय मे कुछ समय तक रह चुके है । इसलिये उसके प्राणो की रक्षा की जाय । (राजन् विदितमेव यथा वयम् मलयकेतौ किञ्चित् कालान्तरमुषिता तत् परिरक्ष्यन्तामस्य प्राणा ।) राक्षस बाह्य परिस्थितियो की थपेड मे पडा अपने अतीत मे रहना चाहता है, क्योकि वर्तमान उसके लिये बडा कटु है । राक्षस की विषम परिस्थिति मे उसका कवि हृदय ही उसकी एकमात्र सान्त्वना है । यही कारण है कि वह अनुभव करते हुए भी —

पौरैरङ्गुलिभिर्नवेन्दुवदह निर्दिश्यमान शनै
यो राजेव पुरा पुरान्निरगम राज्ञा सहस्रैर्वृत ।
भूय सम्प्रति सोऽहमेव नगरे तत्रैव वन्ध्यश्रमो ।
जीर्णोद्यानकमेष तस्कर इव त्रासाद्विशामि द्रुतम् ।। (६-१०)

अपने आपको स्वस्थ कर पाता है और भविष्य मे अज्ञात दशाओ का सामना करने को भी तैयार हो जाता है ।

राक्षस और चाणक्य की तुलना

इस नाटक मे इन दोनो पात्रो के जीवन का केवल वही अश दिखाया गया है जो राज्य के षड्यत्रो मे व्यतीत होता था । दोनो ही स्वार्थ-रहित है । चाणक्य

ने इतने परिश्रम से, केवल अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करने के लिये चन्द्रगुप्त को राज्य का अधिकारी बनाया और अत मे उस राज्य को दृढकर मत्रिपद न ग्रहण किया, वरन् अपने प्रतिपक्षी राक्षस को मत्री बनाकर चैन लिया। राक्षस भी नि स्वार्थ भाव से ही अपने गत स्वामिवश का बदला लेने को प्राणपण से लगा था। चाणक्य दूरदर्शी, दृढप्रतिज्ञ और कुटिल नीति मे पारगत था। उसे अपने ऊपर विश्वास था। उसकी मेधा शक्ति बलवती थी। उसमे मनुष्यो के पहचानने की शक्ति थी। इसी से वह अपने प्रयत्नो मे सफल होता था। इसके विपरीत राक्षस को अपने ही लोगो से धोखा खाना पडा। राक्षस वीर सैनिक था पर राजनीति के कुटिल मार्गो का पूर्ण ज्ञाता न था। जिससे कभी-कभी भूलकर जाता था। (आ कार्यव्यग्रत्वात् मनस प्रभूतत्वाच्च प्रणिधीना विस्मृतम्, इदानी स्मृति-रुपलब्धा।)

यह स्वभाव से मृदुल होने के कारण सब पर विश्वास कर लेता था पर चाणक्य मे यह बात न थी। जहाँ तक घटनाओ का सम्बन्ध है कोई भी घटना उसकी इच्छा के विपरीत नही होती थी, मानो वह घटनाओ का नियन्ता था। इससे चाणक्य की दूरदर्शिता का पता चलता है। परन्तु राक्षस की सोची हुई सभी बाते उसकी इच्छा के विपरीत होती है।

चन्द्रगुप्त

चन्द्रगुप्त इस नाटक का नायक नही, इसलिये इसका व्यक्तित्व नाटककार ने इस दृष्टि से चित्रित किया है कि नायक चाणक्य की महत्ता पर कोई आँच न आ सके। मुद्राराक्षस का चन्द्रगुप्त चाणक्य की राजनीति का सच्चा होता हुआ स्वप्न है। साम्राज्य की प्रतिष्ठा के लिये चन्द्रगुप्त अपनी भावनाओ का दमन करते हुए चित्रित किया गया है। चाणक्य की कुटिल नीति के कारण उसको अपना पौरुष दिखाने का अवसर नही मिलता। राक्षस भी समझता है कि न तो चन्द्रगुप्त स्वय ही राज्यकार्य सँभालकर मेरी सेना के आक्रमण को रोक सकता है और न दूसरे पर राज्यभार दे सकता है। (चन्द्रगुप्तस्तु दुरात्मा नित्य सचिवायत्त-सिद्धावेव स्थितश्चक्षुर्विकल इवाप्रत्यक्षलोकव्यवहार कथमिव स्वय प्रतिविधातु समर्थ॰ स्यात्)। चाणक्य उसको सचिवायत्तसिद्ध कहता है। इसी कारण से चाणक्य उसे हेय दृष्टि से देखता है और उसे "वृषल" कह करके ही सम्बोधित करता है।

इतना होने पर भी चन्द्रगुप्त चाणक्य को आदर की दृष्टि से देखता है और उसके नियत्रण मे रहना चाहता है। उसमे प्रजा को प्रसन्न रखने का सब गुण वर्तमान है। मुद्राराक्षस का चन्द्रगुप्त विजयी मौर्य सम्राट् के रूप मे भले ही न दिखाई दे किन्तु मौर्य साम्राज्य के कुशल शासक के रूप मे दिखाई ही देता है।

मलयकेतु

मलयकेतु के व्यक्तित्व का नाटककार ने ऐसा चित्रण किया है जिससे चन्द्रगुप्त के व्यक्तित्व की विशेषता का ज्ञान स्पष्ट रूप से हो सके। चन्द्रगुप्त गम्भीर और शान्त प्रकृति का है पर मलयकेतु उद्धत और अशान्त प्रकृति का है। वह बिना विचारे काम करता है। राक्षस के ऊपर वह व्यर्थ ही सन्देह करता है और अन्त मे कुछ व्यक्तियो के कहने से उसे निकाल भी देता हे। मलयकेतु मे साहस ओर पराक्रम की कमी नही है। मलयकेतु का धीरोद्धत स्वभाव उसकी इस उक्ति से झलकता है—

विष्णुगुप्त च मौर्यं च सममप्यागतौ त्वया।
उन्मूलयितुमीशोऽह त्रिवर्गमिव दुर्नय ॥ (६-२२)

किन्तु उसकी विवेकशून्यता इतनी भयङ्कर है कि उसका पतन अवश्यभावी है और होकर रहता है (अहो विवेकशून्यता म्लेच्छस्य)।

९. मुद्राराक्षस मे उल्लिखित स्थानो तथा जातियो का विवरण

काश्मीर—पजाब के उत्तर हिमालय पर्वतमाला से घिरा हुआ प्रान्त जो अपनी प्राकृतिक शोभा के लिए प्रसिद्ध है। इस प्रान्त का यह नाम बहुत प्राचीन है। इस देश का प्राचीन इतिहास कल्हणकृत राजतरगिणी मे मिलता है।

काम्बोज—यह निषध पर्वत के दक्षिण मे बतलाया जाता है। यहाँ अर्जुन राजसूय यज्ञ के अवसर पर दिग्विजय करने गये थे। वर्तमान मे इस देश की स्थिति अफगानिस्तान, जो अश्वस्थान का अपभ्रंश है, बतलायी जाती है। वहाँ घोडे अधिक होते हैं।

किरात—एक प्राचीन जगली जाति विशेष। इसका उल्लेख महाभारत (आदिपर्व, सर्ग १७७ श्लोक ३), किरातार्जुनीय तथा रघुवश सर्ग ४ श्लोक ७६) मे है। किरातो का देश हिमालय का पूर्व का पार्वत्य प्रान्त था, जिसके

अन्त्रर्गत आधुनिक नेपाल का कुछ पूर्वीय अश, सिक्किम तथा भूटान माना जाता है।

कुलूत—यह जालन्धर दो-आब के उत्तर-पूर्व और सतलज के दाहिने तट पर स्थित है। इसका आधुनिक नाम कुलू है।

खस—यह भी एक पार्वत्य जाति है। इसका निवास-स्थान गारो तथा खसिया पहाडियाँ लिखा है जो आसाम प्रान्त मे ब्रह्मपुत्र के बाएँ तट की ओर है।

गान्धार—यह देश काबुल के किनारे-किनारे कुनार और सिन्ध नदी के बीच मे है। इसकी राजधानी का नाम पुरुषपुर (आधुनिक पेशावर) था।

चेदि—यह शिशुपाल के राज्य का नाम था। इस राज्य मे आधुनिक बुन्देल-खड का दक्षिणी भाग और जबलपुर का उत्तरी भाग सम्मिलित था।

पारस—फारस या परसिया देश जो हिन्दुस्तान के पश्चिम मे स्थित हे।

मगध—बिहार प्रान्त का एक भाग। इसकी प्राचीन राजधानी का नाम गिरिव्रज या राजगृह था। मुद्राराक्षस मे मगध का तात्पर्य मगधवासी से है।

मलय—प्रो० के० एच० ध्रुव ने ह्वेनसाग के यात्रा-विवरण के अनुसार निश्चित किया है कि काश्मीर की पूर्वीय सीमा और कुलूत के मध्य मे मलय जाति का स्थान था।

मालवा—मध्य भारत का एक प्रसिद्ध प्रदेश।

यवन—यूनान देश के निवासी।

वाल्हीक—व्यास और सतलज के बीच का प्रान्त जो केकय देश के उत्तर मे है। वलख को ही वाल्हीक कहते है, जो तुर्किस्तान मे है।

शक—भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर रहने वाली एक ऐतिहासिक जाति का नाम। सीदियन नाम से इस जाति का परिचय परवर्ती इतिहासकारो ने दिया है।

सिन्ध—सिन्ध नदी और झेलम नदी के बीच मे बसा हुआ प्रदेश। आधुनिक पाकिस्तान का एक प्रान्त।

हूण—एक म्लेच्छ जाति जिसने भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर कई बार आक्रमण किया था और जिसे एक बार विक्रमादित्य ने बुरी तरह हराया भी था।

१०. विशाखदत्त—नाटककार

प्राचीन काल के विद्वान् आत्मविज्ञापन करने से दूर रहते थे। वे अपने विषय मे कुछ नही लिखते थे। सभवत प्राचीन काल के लेखक अपने ऊपर अधिक

महत्त्व न देकर ग्रथ को ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझते थे। यही कारण है कि कालिदास, भास तथा विशाखदत्त आदि अपने व्यक्तित्व के परिचय के सबध मे उदासीन दिखाई देते हैं। मुद्राराक्षस के रचयिता के नाम तथा उनके पिता और पितामह आदि के नाम-ज्ञान के लिये साहित्यप्रेमियो को नाटयकला के उन आचार्यो को अनेकानेक धन्यवाद देना चाहिये जिन्होने यह आवश्यक नियम बना दिया है कि प्रस्तावना मे कवि परिचय अवश्य दिया जाय। मुद्राराक्षस के नाटककार ने प्रस्तावना मे जो अपना परिचय दिया है उससे पता चलता है कि इनका नाम विशाखदत्त है, उनके पिता का नाम महाराज पृथु और पितामह का नाम सामत वटेश्वरदत्त था। जर्मनदेशीय प्रोफेसर हिलब्राड ने भारत मे भ्रमण कर मुद्राराक्षस की सभी प्रतियो का मिलान किया है, जिनमे कुछ प्रतियो मे विशाखदत्त के पिता का नाम भास्करदत्त भी मिला है।

सस्कृत के नाटक-साहित्य का ऐतिहासिक काल-निर्णय करने वाले विद्वानो न विशाखदत्त के कार्यकाल के सबध मे अनेक कल्पनाएँ की है। कुछ विद्वानो ने "विशाखदत्त" के आगे 'दत्त' शब्द और साथ ही साथ सामन्त वटेश्वरदत्त के आगे भी दत्त शब्द देखकर यह विचार प्रकट किया है कि इनका वश "दत्तवश" था किन्तु इसका कोई ऐतिहासिक उल्लेख नही मिलता।

प्रोफेसर विलसन ने महाराज पृथु को चौहानवशीय राय पिथौरा या पृथ्वीराज साबित करने का प्रयत्न किया था पर वे स्वय उनकी पदवियो तथा उनके पिताओ के नामो की विभिन्नता का किसी प्रकार मण्डन न कर सके। प्रोफेसर हिल ब्राड की खोज से पृथु का पाठान्तर भास्करदत्त मिलने से यह प्रयत्न निर्मूल हो गया और अब वह उपेक्षणीय है। अत इनके पिता भास्करदत्त थे, इसमे कोई सन्देह नही।

इस नाटककार के कालनिर्णय से सम्बद्ध सभी कल्पनाएँ इस भरत-वाक्य पर केन्द्रित है—

वाराहीमात्मयोनेस्तनुमतनुबलामास्थितस्यानुरूपा
यस्य प्राग् दन्तकोटिं प्रलयपरिगता शिश्रिये भूतधात्री।
म्लेच्छैरुद्वेज्यमाना भुजयुगमधुना सश्रिता राजमूर्त्तेः
स श्रीमद्बन्धुभृत्यश्चिरमवतु महीं पार्थिवश्चन्द्रगुप्त ॥

अर्थात् जिस महाराज चन्द्रगुप्त का निर्देश है उन्ही का समकालीन यह नाटककार भी होगा। किन्तु इस श्लोक मे कही-कही चन्द्रगुप्त के बदले "पार्थिवो दन्तिवर्मा", "पार्थिवोऽवन्तिवर्मा" इत्यादि पाठ मिलते है, पहले पाठ के आधार पर प्रोफेसर शारदारजन राय का कहना है कि "मुदाराक्षस" मे विशाखदत्त ने गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य (३७५-४१३) की ओर सकेत किया है। वे अपने नाटक मे प्रकारान्तर से चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल का चित्रण करके अपने आश्रयदाता चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की प्रशसा करते है। मुद्राराक्षस का घटना-स्थल पाटलिपुत्र है, जो उस समय एक समृद्ध नगर रहा होगा। फाहियान ने पाटलिपुत्र को मगध की राजधानी बतलाया है। ह्वेनसाग ने उसे भग्नावशेष पाया। इसके अतिरिक्त "मुद्राराक्षस" मे जो बौद्धधर्म की ओर सकेत (७–५) है, उससे प्रतीत होता है कि उस समय बौद्धधर्म का अभ्युदय था। उपर्युक्त श्लोक इस प्रकार है—(बुद्धानामपि चेष्टित सुचरितै क्लिष्ट विशुद्धात्मना––(अङ्क ७ श्लोक ५ तीसरा चरण)। यह दशा फाहियान के भारत आने के समय थी। इन प्रमाणो के आधार पर कुछ विद्वान "मुद्राराक्षस" को पॉचवी शताब्दी की रचना मानते है। दूसरे 'पार्थिवो दन्तिवर्मा' पाठ के आधार पर मुद्राराक्षस की रचना पल्लव राजा दतिवर्मा (७७९-८३० ई०) के समय मे मानी जा सकती है। किन्तु दक्षिण मे हूणो का (जिनका उल्लेख मुद्राराक्षस मे स्पष्ट है) आतक नही फैला था, अत यह मत मान्य नही है।

तेलग महोदय "पार्थिवोऽवन्तिवर्मा" को प्रामाणिक मानते है। उनके मतानुसार ये अवन्तिवर्मा, राजा हर्ष (६०७-६४८) ई० के बहनोई ग्रहवर्मा के पिता मौखरि राजा अवन्तिवर्मा थे। इस मत के अनुसार मुद्राराक्षस की रचना सातवी शताब्दी मे हुई।

कुछ विद्वान् इस पाठ को नही मानते। प्रोफेसर शारदारजन राय का कथन है कि 'पार्थिव चन्द्रगुप्त' ही पाठ ठीक है। यह भरत-वाक्य राक्षस के मुख से निकला है। जब राक्षस ने चन्द्रगुप्त का मन्त्रित्व स्वीकार कर लिया और चन्द्रगुप्त राजा हो गया और म्लेच्छ मलयकेतु वैभवहीन हो गया तो राक्षस के मुँह से 'पार्थिव चन्द्रगुप्त' का ही निकलना ठीक प्रतीत होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि विशाखदत्त का आश्रयदाता चन्द्रगुप्त ही रहा होगा। उनका कथन है, जैसा कि ऊपर कह आये है कि यह चन्द्रगुप्त वही राजा है, जिसने म्लेच्छो और हूणो को

परास्त किया। यह चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य है, जो मगध का राजा था और जिसकी राजधानी पाटलिपुत्र थी तथा राज्यकाल पाँचवी शताब्दी था।

अत यह कहा जा सकता है कि विशाखदत्त पाँचवी शताब्दी मे हुए थे और चन्द्रगुप्त द्वितीय, जो मगध का राजा था, के आश्रय मे बगाल के एक छोटी-सी रियासत पर राज्य करते थे।

११. जन्म-स्थान

इसके अतिरिक्त नाटककार के जन्म-स्थान, जन्म तथा मृत्यु-काल का भी कुछ पता नही। महामहोपाध्याय प० हरप्रसाद शास्त्री की सम्मति है कि गौडीय रीति की बहुलता से कवि गौडदेशीय ज्ञात होता है। कवि ने गौड देश की ललनाओ के कपोलो का और केशो का जो वर्णन किया है उससे वह गौडदेशीय ही जान पडते है।

गौडाना लोध्रधूलीपरिमलबहलान् धूम्रयन्त कपोलान्
क्लिश्नन्त कृष्णिमान भ्रमरकुलरुच कुञ्चितस्यालकस्य।
पाशुन्व्यूहा बलाना तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभा
शत्रूणामुत्तमाङ्गे गजमदसलिलच्छिन्नमूला पतन्तु॥ (५-२३)

प्रस्तावना मे कवि ने लिखा है—

चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषि।
न शाले स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते। (१-३)

इससे प्रतीत होता है कि विशाखदत्त ऐसे स्थान मे पैदा हुए थे जहाँ चावल की खेती अधिक होती थी और चावल बिहार और बङ्गाल मे अधिक होता है तथा कुसुमपुर (पाटलिपुत्र) गौडदेश (बगाल) के बहुत समीप है। अत उनको उत्तर भारत का (बगाली) मानना असगत न होगा जैसा कि प्रोफेसर शारदारजन राय लिखते है। प्रोफेसर विधुभूषण गोस्वामी ने भी उनको उत्तरी भारत का निवासी मानते हुए लिखा है कि नाटक मे एक को छोड कर सभी स्थान उत्तरापथ के है।

१२ विशाखदत्त का शास्त्र-ज्ञान

मुद्राराक्षस के अध्ययन करने वाले विद्वानो ने विशाखदत्त को न्यायशास्त्र तथा नाट्यशास्त्र का पण्डित माना है। मुद्राराक्षस के चतुर्थ अङ्क के तृतीय श्लोक

के (कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयन्) के आधार पर तथा पञ्चम अङ्क के दसवें श्लोक (साध्ये निश्चितमन्वयेन) के आधार पर उनको न्यायशास्त्र का पण्डित माना गया है।

विशाखदत्त एक सामत सरदार के पौत्र तथा महाराज के पुत्र होने के नाते कुटिल राजनीति के ज्ञाता थे और स्वय भी उसी प्रकार के समाज मे रहने के कारण राजनीतिक विषय ही पर लेखनी उठायी। वह राजनीति के पूरे ज्ञाता थे। चाणक्य के ही समान वे भी राजनीति के पण्डित थे। राजायत्त, सचिवायत्त, उभयायत्त इन तीन प्रकार की सिद्धियो का भी विवेचन उन्होने किया है। विरक्त व्यक्तियो के अनुग्रह और निग्रह के विषय मे चाणक्य और चन्द्रगुप्त के बीच जो वार्तालाप हुआ, वह भी इन्हे नीतिशास्त्र का विद्वान् सिद्ध करता है। प्रथम अङ्क मे "नानाव्यञ्जना प्रणिधय" कहकर उन्होने गुप्तचरो का लक्षण बताया है। अच्छे और बुरे मत्री का भी उन्होने वर्णन किया है —

अप्राज्ञेन च कातरेण च गुण स्याद्भक्तियुक्तेन क
प्रज्ञाविक्रमशालिनोऽपि हि भवेत् किं भक्तिहीनात् फलम्।
प्रज्ञा विक्रमभक्तय समुदिता येषा गुणा भूतये
ते भृत्या नृपते कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च।। (१-१५)

अत्युच्छ्रिते मत्रिणि पार्थिवे च
विष्टभ्य पादावुपतिष्ठते श्री।
सा स्त्री स्वभावादसहा भरस्य
तयोर्द्वयोरेकतर जहाति।।

यह श्लोक भी विशाखदत्त के नीतिशास्त्र का ज्ञाता होना बताता है। विशाखदत्त नाटचशास्त्र के भी पण्डित थे। यह बात तो यह नाटक ही बता देता है। विशाखदत्त ने नाटचशास्त्र के सम्प्रदाय के अनुसरण और अपनी वैयक्तिक नाटचकला-प्रतिभा की स्फूर्ति के सघर्ष की जो अभिव्यञ्जना की है, वह कोई भूल नही सकता।

कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयस्तस्य विस्तारमिच्छन्
बीजाना गर्भिताना फलमतिगहन गूढमुद्भेदयश्च।
कुर्वन् बुद्धया विमर्शं प्रसृतमपि पुन सहरन् कार्यजातम्
कर्ता वा नाटकानामिममनुभवति क्लेशमस्मद्विधो वा।। (४-३)

वह ज्योतिषशास्त्र के भी पण्डित थे। प्रस्तावना मे सूत्रधार कहता है—

क्रूरग्रह स केतु चन्द्रमसम्पूर्णमण्डलमिदानीम्
अभिभवितुमिच्छति बलात् रक्षत्येन तू बुधयोग ।

आदि वाक्य बताते है कि वे गणित और ज्योतिष के विद्वान् थे। फलित ज्योतिष का ज्ञान भी उनको था। मलयकेतु जब आकर राक्षस से पूछता है कि चढाई का कौन-सा समय रक्खा है तो क्षपणक बताता है—(उपासक, निरूपितो मुहूर्त्त आमध्याह्नात् निवृत्त सप्तशकला शोभना तिथि सम्पूर्णचन्द्र। युष्माकमुत्तरस्या दिशो दक्षिणा दिश प्रस्थितानाम् दक्षिणद्वारिकम् नक्षत्रम्। गमन बुधस्य नक्षत्रे') ।

एकगुणा भवति तिथि चतुर्गुण भवति नक्षत्रम् ।
चतु षष्टि गुण लग्नमेतद्दृश्यते ज्योतिषमत्रसिद्धान्ते ।।

प्रस्तावना मे सूत्रधार कहता है 'आर्ये कृतश्रमोऽस्मि चतु षष्ट्यङ्गे ज्योति -शास्त्रे। चन्द्रोपराग प्रति केनापि विप्रलब्धा।' ये सभी इस बात के प्रमाण है कि विशाखदत्त ज्योतिष के भी विद्वान् थे। इन सभी प्रमाणो से हमे यह मालूम होता है कि विशाखदत्त अनेक शास्त्रो के ज्ञाता और बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थे।

१३. विशाखदत्त की अन्य कृतियाँ

विशाखदत्त के बनाये हुए चार नाटक कहे जाते है —

१—देवीचन्द्रगुप्तनाटकम् है। इसका भी इतिवृत्त राजनीतिक है और चरित्रचित्रण भी राजनीति के दाव-पेचो वाला है। नाटचदर्पण मे देवीचन्द्रगुप्त नाटक का पाँचवाँ श्लोक उद्धृत है —

एसो सिअकर सत्थप्पणासि आसेस वैरितिमिरीहो
पि णि अविहवएण चन्दो गअण गहलाघिओ विसई ।

२—दूसरा अभिसारिकावञ्चितक या अभिसारिकाबधितक नाटक है।

३—प्रोफेसर ध्रुव ने "सदुक्ति कर्णामृत" मे विशाखदत्त के नाम से निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किया है —

रामोऽसौ भुवनेषु विक्रमगुणैर्यात प्रसिद्धि परा-
मस्मद्भाग्यविपर्ययाद् यदि पर देवो न जानाति तम्।
बन्दी वैष यशासि गायति मरुद् यस्यैकबाणाहत-
श्रेणीभूतविशालतालविवरोद्गीर्णै. स्वरै सप्तभि ।।

इस श्लोक के आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि विशाखदत्त का रामचरित-सम्बन्धी कोई अन्य भी नाटक होगा, किन्तु यह केवल अनुमान ही है। सभवत यह राघवानन्द नाटक है, पर यह उपलब्ध नही है।

४—मुद्राराक्षस—यह विशाखदत्त की अन्तिम और सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसका विषय राजनीति है। इस नाटक के नाम की व्युत्पत्ति इस प्रकार है—(मुद्रया गृहीत राक्षसमधिकृत्य कृतो ग्रन्थ, मुद्राराक्षसम्)। ऐसा प्रतीत होता है कि महाकवि शूद्रक के नाटक "मृच्छकटिक" और महाकवि कालिदास के" अभिज्ञान शाकुन्तल" नाम ने विशाखदत्त की कल्पना को अपने नाटक के नामकरण के लिये प्रेरित किया है। इस नाटक मे मुद्रा के द्वारा राक्षस के निग्रह की घटना एक ऐसी घटना है, जिस पर इस नाटक के नायक चाणक्य की समस्त कूटनीति केन्द्रित होती हुई प्रतीत होती है। इससे यह नाम सार्थक है।

१४. विशाखदत्त की शैली

मुद्राराक्षस के वस्तुचरित रसभावादि की दृष्टि से विशाखदत्त की रचना-शैली की जितनी प्रशसा की जाय थोडी है। मुद्राराक्षस की शैली प्रवाह, प्रासादिकता और ओज लिये हुए है। इसके वाक्य छोटे-छोटे और मुहावरेदार हैं। दीर्घ-समासबहुल पदावलि का प्रयोग कम हुआ है। अलकारो का प्रयोग सीमित मात्राओ मे ही किया गया है।

विशाखदत्त ने नाटक की रचना की है और नाटकीय औचित्य की दृष्टि से या तो काव्यकल्पनाओ को दूर ही रक्खा है या नाटक के रग मे रँग दिया है—उदाहरण के लिये मलयकेतु के कञ्चुकी की यह उक्ति—

काम नन्दमिव प्रमथ्य जरया चाणक्यनीत्या यथा
धर्मो मौर्य इव क्रमेण नगरे नीत प्रतिष्ठा मयि।
त सम्प्रत्युपचीयमानमपि मे लब्धान्तर सेवया
लोभो राक्षसवज्जनाय यतते जेतु न शक्नोति च।। (२-६)

ऐसी है कि जिसमे नाटककार की कविकल्पना की कोई रूप-रेखा भले ही न दिखायी दे किन्तु नाटकीय वृत्त और चरित की अभिव्यजना बडी सुन्दर प्रतीत होती है। इसी प्रकार शकटदास की यह भावाभिव्यक्ति—

दृष्ट्वा मौर्यमिव प्रतिष्ठितपद शूल धरित्र्यास्तले
तल्लक्ष्मीमिव चेतस प्रमथनीमुन्मुच्य वध्यस्रजम्।

श्रुत्वा स्वाम्युपरोधरौद्रविषमानाध्माततूर्यस्वनान्
न ध्वस्त प्रथमाभिघातकठिन मन्ये मदीय मन ॥ (२–२१)

नाटककार की काव्यकल्पना की उडान का उदाहरण भले ही न हो किन्तु उसके नाटकीय औचित्य की सतर्कता का एक उदाहरण अवश्य है। विशाखदत्त ने पद्यो के बाहुल्य से अपनी नाटकीय शैली को कृत्रिम नही बनाया है। उनका शब्द-विन्यास बडा सशक्त और प्रभावशाली है। पद्य की अपेक्षा उनका गद्य अधिक ओज पूर्ण है। उसमे भावुकता के स्थान पर प्रभविष्णुता अधिक है। कही कही व्यग्यपूर्ण हास्य का भी पुट दिया गया है। नाटककार की भाषा नाटक के व्यक्तित्वो के भावावेश मे कभी स्वभावोक्ति से भरी है तो कभी वक्रोक्ति की ओर उन्मुख है। भाषा यहाँ भावो पर आधिपत्य नही जमाती अपितु भाव ही भाषा पर अपना अधिकार रखते प्रतीत होते है।

नपे-तुले शब्दो मे जोरदार भाषा प्रयुक्त हुई है। कुछ उदाहरण देखिये। (अयमपरो गण्डस्योपरि स्फोट । न प्रयोजनमन्तरा चाणक्य स्वप्नेऽपि चेष्टते। तन्मयास्मिन् वस्तुनि न शयानेन स्थीयते। कीदृश पुन तृणानामग्निना सह विरोध । सर्वज्ञतामुपाध्यायस्य चोरयितुमिच्छसि) ।

मुद्राराक्षस मे नाटककार ने श्लेष का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग किया है। यह श्लेष अधिकतर व्यग्यार्थ मे ही प्रयुक्त हुआ है। "पताकास्थानक" का भी श्लेष-गर्भित प्रयोग किया गया है। पताकास्थानक की रचना करने मे विशाखदत्त बडे पटु है। पाश्चात्य नाटच साहित्य मे जिसे Dramatic Irony कहते है उसी के लिये भारतीय नाटच-साहित्य मे पताकास्थानक की योजना हुआ करती है— पताकास्थानक-पटुता का उदाहरण देखिये—

क्रूरग्रह　　सकेतुश्चन्द्रमसम्पूर्णमण्डलमिदानीम्
अभिभवितुमिच्छति बलात् .　　..　　..
आ˙ क ए ष मयि स्थिते चन्द्रमभिभवितुमिच्छति बलात्
....रक्षत्येन तु बुधयोग ॥ (१-६)

मुद्राराक्षस मे "भग्यतर कथन" का भी आश्रय अनेक स्थानो पर लिया गया है। कवि किसी एक ही बात को गद्य मे कहकर उसे पुन पद्य मे दोहराता है। अङ्क दो श्लोक ३ और उसके पहले गद्याश (तदेवमनयो बुद्धिशालित सुसचिवयो विरोधे सशयितेव नन्दकुललक्ष्मी)

विरुद्धयोर्भृशमिह मन्त्रिमुख्ययो-
र्महावने वनगजयोरिवान्तरे। (इत्यादि २-३)

विशाखदत्त के गद्य मे जहाँ ओज है वहाँ उनके पद्यो मे स्थल-स्थल पर लालित्यमय प्रवाह है। देखिये—

आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्
सन्ध्यारुणामिव कलाम् शशलाञ्छनस्य।
जृम्भाविदारितमुखस्य मुखात् स्फुरन्ती
को हर्तुमिच्छति हरे परिभूय दंष्ट्राम्॥ (१-८)

चाणक्य की राजनीति की विचित्रता देखिये—

मुहुर्लक्ष्योद्भेदा मुहुरधिगमाभावगहना
मुहु सम्पूर्णाङ्गी मुहुरतिकृशा कार्यवशत।
मुहुर्नश्यद्बीजा मुहुरपि बहुप्रापितफले-
त्यहो चित्राकारा नियतिरिव नीतिर्नयविद॥ (५-३)

मुद्राराक्षस मे सरल पद्यो मे शिक्षाप्रद बाते भी मिलती है—

शासनमर्हताम् प्रतिपद्यध्वम् मोहव्याधिवैद्यानाम्।
ये प्रथममात्रकटुक पश्चात्पथ्यमुपदिशन्ति॥ (४-१६)

उनके कथोपकथन और पद्य नाटकीय गुणो से परिपूर्ण है। कथोपकथन स्वाभाविक और रोचक है। देखिये।

मलयकेतु —एतदार्यम् पृच्छामि।
राक्षस —कुमार य आर्यस्त पृच्छ, वयमिदानीमनार्या सवृत्ता।
मलयकेतु —इदमिदानीं किम्।
राक्षस —विधेर्विलसितमिदम्।
मलयकेतु —केन तर्हि व्यापादितस्तात।
राक्षस —दैवमत्र प्रष्टव्यम्।
मलयकेतु —दैवमत्र प्रष्टव्यम् न क्षपणको जीवसिद्धि. ?

कभी-कभी तो एक शब्द के प्रयोग मात्र से ही नाटककार अधिकाधिक अभिप्राय प्रकाशित करने मे समर्थ दिखाई देता है। उदाहरणार्थ राक्षस की इस उक्ति मे (सत्य नगरान्निष्क्रामतो मम हस्ताद् ब्राह्मण्या उत्कण्ठाविनोदार्थं गृहीता)

ब्राह्मण्या शब्द ग्राम्य प्रतीत होने पर राक्षस के हृदय की समस्त करुणा और वेदना का घनीभूत निष्यन्द सा ही लगता है।

नाटककार ने जो छन्दो योजना की है वह किसी औचित्य की दृष्टि से और किसी औचित्य की सिद्धि के लिये। शार्दूलविक्रीडित का २८ बार प्रयोग, स्रग्धरा का १७ बार प्रयोग किया गया है । जो भाव कवि उन-उन छन्दो के द्वारा प्रकट करना चाहता है वे भाव दूसरे छन्द द्वारा प्रकट नही हो सकते। विषय की दृष्टि से उनका प्रयोगौचित्य सर्वथा श्लाघनीय है।

सक्षेप मे यह कहना असगत न होगा कि विशाखदत्त की नाटक-प्रबध-रचना की सफलता एकमात्र उनकी औचित्य दृष्टि और उसकी प्रबल शक्ति पर निर्भर है।

१५. नाटक के सबंध मे कुछ ज्ञातव्य बातें

नाटक की परिभाषा—सस्कृत साहित्यकारो ने काव्य के दो मुख्य भाग बतलाये है। दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य। दृश्य वह है जो रगमच पर खेलकर दिखाया जाय या जिसका अभिनय हो सके। श्रव्य काव्य वह है जो सुना जा सके। साहित्यदर्पण मे लिखा है —

दृश्यश्रव्यत्वभेदेन पुन काव्य द्विधा मतम्
दृश्य तत्राभिनेय तद्रूपारोपात्तु रूपकम्।
नाटक सप्रकरण भाण प्रहसन डिम
व्यायोगसमवाकारौ वीथ्यङ्केहामृगा दश
वस्तुनेता रसस्तेषा भेदक ॥

दृश्य काव्य अभिनय के लिए होता है। उसमे नट लोग अनेक राजाओ तथा देवताओ का रूप धारण करके उनके चरित का अभिनय दिखाते है। उस समय हम उनको उसी राजा या देवता के ही रूप मे मानते है। इस आरोप के कारण इस काव्य रचना को रूपक कहते है। सस्कृत मे "रूपक" और "नाटक" दोनो शब्दो का पृथक्-पृथक् अर्थ है। रूपक तो व्यापक अर्थ रखता है—"रूप्यन्तेऽभिनीयन्ते इति रूपकाणि नाटकादीनि" और इसके नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, डिम, ईहामृग, अक, वीथी तथा प्रहसन ये प्रमुख १० भेद है। किन्तु नाटक इन्ही दस प्रकार के रूपको मे सर्वप्रथम तथा सर्वोत्कृष्ट प्रकार है। सत्य और कल्पना दोनो नाट्य के आधार हैं।

प्रसिद्धकल्पितकृतानुकरणम् नाट्यम् ।

सत्य और काल्पनिक जगत् की अनुकृति नाट्य है। नाटक की कथावस्तु कोई प्रसिद्ध पौराणिक या ऐतिहासिक होती है और उसका नायक लोकप्रसिद्ध होता है"। रूपक की अधिकाश रचनाएँ इसी भेद का लक्षण लेकर लिखी गई है। मातृगुप्ताचार्य के अनुसार नाटक की परिभाषा यह है —

प्रख्यातवस्तुविषय धीरोदात्तादिनायकम् ।
राजर्षिवशचरित तथा दिव्याश्रयान्वितम् ।।
शृङ्गारवीरान्यतरप्रधानरससश्रयम् ।
प्रकृत्यवस्थासध्यङ्गसन्ध्यन्तरविभूषितम् ।।
सुखदु खोत्पत्तिकृत चरित यच्च भूभृताम् ।
इतिवृत्तम् कथोद्भूतम् किञ्चिदुत्पाद्यवस्तु च ।
नाटक नाम तज्ज्ञेय रूपक नाट्यवेदिभि ।।

साहित्यदर्पणकार ने नाटक का लक्षण इस प्रकार लिखा है —

नाटक ख्यावृत्त स्यात् पचसधिसमन्वितम्
विलासमृद्धि्यादि गुणवद्युक्त नानाविभूतिभि. ।
सुखदु खसमुद्भूतिनानारसनिरन्तरम् ।
पञ्चाधिका दशपरास्तत्राङ्का परिकीर्तिता:
प्रख्यातवशो राजर्षिर्धीरोदात्त प्रतापवान् ।
दिव्योऽथ दिव्यादिव्यो वा गुणवान्नायको मत
एक एव भवेदङ्गी शृङ्गारो वीर एव वा ।
अङ्कमन्ये रसा सर्वे कार्यो निर्वहणोऽद्भुत
चत्वार पञ्च वा मुख्या कार्यव्यापृतपूरुषा
गोपुच्छाग्रसमग्र तु बन्धन तस्य कीर्तितम् ।।

नाटक उसे कहते है जिसका कथानक प्रसिद्ध हो और जिसमे पाँचो सधियाँ हो। इसमे विलास, समृद्धि आदि गुण तथा अनेक प्रकार के ऐश्वर्यों का वर्णन होना चाहिए। सुख और दु ख की उत्पत्ति दिखायी जाय और वह अनेक रसो से पूर्ण होना चाहिए। इसमे पाँच से लेकर दस तक अङ्क होते है। इसका नायक प्रसिद्ध वश मे उत्पन्न धीरोदात्त, प्रतापी, गुणवान् राजर्षि होता है। वह दिव्य हो अथवा दिव्य और अदिव्य दोनो प्रकार के गुणो से युक्त हो। इसमे वीर या

शृङ्गार एक रस प्रधान होता है और रस उसके अङ्गभूत होते है। निर्वहण सधि मे इसे अद्भुत होना चाहिए। इसमे चार या पाँच कार्यरत पुरुष प्रधान हो और गौ की पूँछ के अग्रभाग की तरह इसकी रचना हो।

१६. नाटक की उत्पत्ति

सस्कृत नाटको की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, यह एक अत्यन्त विवादग्रस्त विषय है। परम्परानुसार "नाट्यवेद" की रचना ब्रह्मा ने की थी तथा भरत मुनि ने उसका प्रचार पृथिवी पर किया। भरत मुनि अपने नाट्यशास्त्र मे लिखते है कि ब्रह्मा जी ने ऋग्वेद से सवाद, सामवेद से सगीत, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस के तत्त्वो को लेकर "नाट्यवेद" का निर्माण किया।

जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च ।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ।।

इसी से इसको पचम वेद भी कहते है। इसका प्रथम प्रयोग इन्द्रध्वज-नामक उत्सव के अवसर पर भरतमुनि ने अपने शिष्यो तथा अप्सराओ की सहायता से किया। इस अभिनय मे देवताओ के द्वारा दानवो का पराजय दिखलाया गया था, जिससे दैत्य अप्रसन्न होकर प्रयोग मे विघ्न डालने के लिये उद्यत हो गये। तब ब्रह्मा ने विश्वकर्मा के द्वारा रङ्गस्थान का निर्माण किया। एक तिकोना, दूसरा चौकोना, तीसरा गोलाकार—इन तीनो का उपयोग भिन्न भिन्न प्रकार के रूपको के अभिनय के लिये किया जाने लगा। भरत मुनि के इस वर्णन से स्पष्ट है कि भारतीय नाटक का उदय वेदो के ही उपकरणो को लेकर हुआ है तथा वह भरत की निजी प्रतिभा का विकास है। हम कह सकते है कि वैदिक साहित्य मे एक प्रकार से नाटक के मूल तत्त्व प्रस्तुत थे और इस अर्थ मे यह कहा जा सकता है कि सस्कृत नाटक की उत्पत्ति वैदिक काल मे हुई। पर वास्तविक नाटक के विकसित रूप का आभास वेदो मे कही लक्षित नही होता।

रामायण-महाभारत काल मे नाटक का कुछ और भी स्पष्ट उल्लेख मिलता है। विराट्पर्व मे रगशाला का उल्लेख पाया जाता है। नट शब्द का भी प्रयोग मिलता है जिसका अर्थ श्रीधर स्वामी के अनुसार "नवरसाभिनयचतुर" है। रामायण मे भी नट, नर्तक, नाटक एव रङ्ग अर्थात् रङ्गमञ्च का कई स्थलो पर वर्णन मिलता है। उसमे "कुशीलव" शब्द का प्रयोग भी नट या अभिनेता

के अर्थ मे हुआ है। यह मत निराधार है कि सस्कृत नाटको की उत्पत्ति कठपुतलियो के खेल से हुई।

पाणिनि ने अपने "पाराशर्यशिलालिभ्याम् भिक्षनटसूत्रयो" इस सूत्र मे "नटसूत्र" अर्थात् नाट्यशास्त्र का उल्लेख किया है। स्पष्ट है कि पाणिनि के समय मे या उनके पूर्व ही अनेक नाटक रचे जा चुके होगे। जिनके आधार पर इन नट सूत्रो का निर्माण हुआ, क्योकि लक्षणग्रन्थ की रचना लक्ष्यग्रन्थ के उपरान्त ही होती है।

इसके बाद सस्कृत नाटको की सख्या मे उतरोत्तर वृद्धि और परिष्कार होता गया। चौथी पॉचवी शताब्दी ई० पू० मे जाकर नाटको की बहुसख्यक रचना होने लगी थी जैसा कि भास के उपलब्ध नाटको से प्रकट है। पतजलि के महाभाष्य मे कसवध और बलिबन्ध नामक दो नाटको का स्पष्ट उल्लेख है। सस्कृत नाटको का सर्वश्रेष्ठ परिमार्जन एव परिष्कार प्रथम शताब्दी ई० पू० के कालिदास के नाटको मे जाकर उपलब्ध होता है।

सस्कृत नाटको मे रगमच के पर्दो के लिये कही कही यवनिका शब्द का प्रयोग हुआ है। इसके आधार पर कुछ विद्वान् कहते है कि सस्कृत नाटको की उत्पत्ति ग्रीक नाटको के प्रभाव से हुई। किन्तु यह मत सर्वथा भ्रान्त और आधार-रहित प्रमाणित हो चुका है। "यवनिका" शब्द का प्रयोग केवल इसलिये होता था कि यवन (Ionia) देश से आये हुए वस्त्रो से वे परदे बनाये जाते थे। सस्कृत नाटको की उत्पत्ति तथा विकास स्वतत्र रूप से हुआ है।

उपर्युक्त समीक्षा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सस्कृत नाटक ने अपने क्रमिक विकास मे कुछ तत्त्व वैदिक साहित्य से लिये, कुछ इतिहास पुराणो से तथा कुछ लोकगीतो से। धार्मिक एव सामूहिक उत्सवो से भी उसे प्रेरणा मिली। पतजलि के समय मे तो उसका पूर्ण विकसित रूप मे अभिनय भी होने लगा था। इस प्रकार भारत मे सस्कृत नाटक का पूर्ण विकास कई शताब्दियो मे हुआ और उसकी उत्पत्ति तथा अभ्युदय मे अपने तत्त्वो या उपादानो का उपयोग हुआ।

१७. संस्कृत नाटको की विशेषताएँ

सस्कृत के नाटक रस प्रधान होते है। उनमे वास्तविकता अथवा कथावस्तु की यथार्थता की ओर उतना ध्यान नही दिया गया, जितना दर्शको अथवा पाठको

के हृदय मे किसी रस-विशेष का सचार करने की ओर। कवि की विदग्धता केवल रसाभिव्यक्ति की पूर्णता मे ही मानी जाती थी। रस ही नाट्यकला का प्रधान लक्ष्य माना गया। प्रधान रस शृगार अथवा वीर इन्ही दो मे से कोई एक होता था। पाश्चात्त्य नाटको की तरह चरित्रचित्रण इसका मुख्य अग नही समझा गया। अत नाटको मे प्राय ऐसी ही कथा का आश्रय लिया गया जो प्रसिद्ध होने के कारण प्रेक्षको के मनोनूकूल हो।

सस्कृत नाटको मे पात्रो की सख्या नियत नही रहती। पात्र लौकिक, दिव्य अथवा अर्धदिव्य होते है। कवियो ने व्यक्तिमूलक (individual) पात्रो की अवतारणा की ओर उतना ध्यान नही दिया जितना समुदायगत (typical) चरित्रो की सृष्टि की ओर। कालिदास, शूद्रक प्रभृति कुछ महान् कलाकारो की कृतियो मे भले ही पात्र अपना विशिष्ट व्यक्तित्व रखते हो, किन्तु साधारणतया सस्कृत नाटककारो ने परम्परायुक्त चरित्रो का ही निर्माण किया है। पात्र अपनी स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न भाषाओ का प्रयोग करते है। सस्कृत का प्रयोग केवल नायक अथवा उच्च वर्ग के पात्रो द्वारा होता है, निम्न श्रेणी के लोग और स्त्री पात्र प्राकृत मे ही बोलते है।

सस्कृत नाटको मे समय और स्थान की अन्विति (unities of time and place) भी नही पाई जाती। पाश्चात्त्य नाटको की भाँति सस्कृत नाटको के अको का विभाजन विभिन्न दृश्यो मे नही होता। भाषा गद्य-पद्यमय होती है। नाटक के अन्तर्गत पत्रलेखन, अभिज्ञान (पहचान की निशानी) विदूषक आदि के उपयोगो मे सस्कृत तथा पाश्चात्त्य नाटको मे समानता है।

सस्कृत नाटक प्राय सुखान्त होते है किन्तु यह नही कहा जा सकता कि सस्कृत मे दु खान्त नाटको का नितान्त अभाव है, यदि दु खान्त नाटक का अर्थ नायक के शोक, पराभव और मृत्यु का चित्रण करना है तो इस दृष्टि से कर्णभार, ऊरुभग, वेणीसहार दु खान्त नाटक माने जाने चाहिए। ऊरुभग मे दुर्योधन की मृत्यु रगमच पर हो जाती है और वेणीसहार मे उसकी मृत्यु की सूचना हमे द्वारपाल के द्वारा मिलती है।

प्रत्येक सस्कृत नाटक का आरम्भ "प्रस्तावना" से होता है। प्रस्तावना मे सूत्रधार, नटी, विदूषक अथवा पारिपार्श्वक के साथ बातचीत करता हुआ नाटक की कथावस्तु और कवि का सक्षिप्त परिचय देकर नाटक का आरम्भ कराता है।

अङ्क की समाप्ति तक रगमच कभी खाली नही रहता। प्रथम अङ्क के आरम्भ मे अथवा दो अङ्को के बीच मे "विष्कम्भक" का प्रयोग होता है जिसमे सवाद या स्वागत-भाषण द्वारा दर्शको को ऐसी घटनाओ की सूचना दी जाती है जिनका रगमच पर दिखाना आवश्यक नही किन्तु कथा-सूत्र के निर्वाह के लिए जिनका जानना अनिवार्य है। नाटक की समाप्ति "भरतवाक्य" से होती है। सस्कृत नाटक मे कम से कम पाँच और अधिक से अधिक दस अङ्क होते है।

सस्कृत नाटको मे प्रकृति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध दीख पडता है। प्रकृति की रमणीयता नाटक की सुन्दरता को बढा देती है। उपवन के वृक्ष, लतायें, नदियाँ, पशु-पक्षी आदि सभी नाटक के सजीव अग है। भरतमुनि ने कहा है कि नाटक दु ख, परिश्रम अथवा शोक से ग्रस्त लोगो के लिए विश्राम और विनोद का साधन है —

दु खार्ताना श्रमार्ताना शोकार्ताना तपस्विनाम् ।
विश्रामजनन लोके नाट्यमेतद्भविष्यति ।।

कालिदास ने भी नाटक को भिन्न रुचि वाले लोगो का एक सामान्य मनो-विनोद बतलाया है —

देवानामिदमामनन्ति मुनय कान्त क्रतु चाक्षुषम्
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वाङ्गे विभक्त द्विधा ।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरित नानारस दृश्यते
नाट्य भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येक समाराधनम् ।। (१४)

भवभूति ने अच्छे नाटको के लक्षण इस प्रकार बताये हैं —

भूम्ना रसाना गहना प्रयोगा सौहार्दहृद्यानि विचेष्टितानि ।
औद्धत्यमायोजितकामसूत्र चित्रा कथा वाचि विदग्धता च ।।
(मा० मा० १६)

विभिन्न रसो का प्रचुर एव गहन प्रयोग, प्रीतिपूर्ण रुचिर तथा सुन्दर कार्यों का अभिनय, पराक्रम और प्रणय का चित्रण विभिन्न कथावस्तु तथा निपुण सवाद ऐसे लक्षणो से युक्त नाटक ही उत्कृष्ट माने जाते है।

१८. नायक के भेद

साधारण तौर से नायक चार प्रकार के होते है —धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और धीरशान्त। जो नायक शूरवीर हो, उदार हो, चरित्र-बल-युक्त

हो और दृढ हो तथा अन्य साधारण गुणो से युक्त हो वह **धीरोदात्त** कहलाता है। राम और जीमूतवाहन आदि ऐसे नायक है। शक्ति और वीरता के कारण अभिमान, शक्ति की इच्छा, आत्मश्लाघा तथा स्पर्धा इत्यादि गुण जिसमे पाये जायँ वह **धीरोद्धत** नायक है। रावण, परशुराम और भीमसेन आदि ऐसे नायक है। जो नायक चिन्तारहित हो, सुन्दर कलाओ का प्रेमी हो वह **धीरललित** नायक है। जैसे वत्सराज या रत्नावली का नायक। **धीरशान्त नायक** साधारण प्रकृति का नम्रतायुक्त, उदार चित्त का और मृदु होता है, जैसे मालतीमाधव मे माधव। दशरूपक मे नायक का भेद इस प्रकार है —

महासत्त्वोऽतिगभीर क्षमावानविकत्थन ।
स्थिरो निगूढाहकारो धीरोदात्तो दृढव्रत ॥
दर्पमात्सर्यभूयिष्ठो मायाच्छद्मपरायण ।
धीरोद्धतस्त्वहकारी चलश्चण्डो विकत्थन ॥
निश्चिन्तो धीरललित कलासक्त सुखी मृदु ।
सामान्यगुणयुक्तस्तु धीरशान्तो द्विजादिक ॥

सामान्य गुण की परिभाषा दशरूपक मे इस प्रकार दी गई है —

नेताविनीतो मधुरस्त्यागी दक्ष प्रियवद ।
रक्तलोक शुचिर्वाग्मी रुढवश स्थिरो युवा ॥
बुद्ध्युत्साहस्मृतिप्रज्ञाकलामानसमन्वित ।
शूरो दृढश्च तेजस्वी शास्त्रचक्षुश्च धार्मिक ॥

नायक का एक अन्य प्रकार से भी विभाजन हो सकता है। शृङ्गार नायक के आधार पर भी चार भेद नायक के होते है। **अनुकूल नायक** अर्थात् जो केवल एक ही स्त्री से अनुराग रखता है। **दक्षिण नायक** वह है जो कई पत्नियो के साथ एक-सा व्यवहार करता है। **धृष्ट नायक** वह है जो उस स्त्री से प्रेम करना चाहता है जो दूसरे मे अनुरक्त है। **शठ नायक** वह है जो गुप्त रूप से दुष्कर्म करता है। यह भेद आगे के श्लोक से स्पष्ट हो जाता है —

एकायत्तोऽनुकूल स्यात् तुल्योऽनेकत्र दक्षिण ।
व्यक्तागा गतभीर्धृष्ट गूढविप्रियकृच्छठ ॥

राम अनुकूल नायक के उदाहरण है। उत्तर रामचरित का निम्नलिखित श्लोक अनुकूल नायक की परिभाषा के लिए उद्धृत किया जाता है।

अद्वैत सुखदु खयोरनुगत सर्वास्ववस्थासु य-
द्विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रस ।
कालेनावरणात्ययात्परिणते यत्स्नेहसारे स्थितम्
भद्र तस्य सुमानुषस्य कथमप्येक हि तत्प्राप्यते ।। (१३६)

वत्सराज और अग्निमित्र दक्षिणकोटि के नायक है। मालविकाग्निमित्र का निम्नलिखित श्लोक दक्षिण नायक का परिचय देने के लिए दशरूपक मे उद्धत है—

उचित प्रणयो वर विहन्तुम् बहव खण्डनहेतवो हि दृष्टा ।
उपचारविधिर्मनस्विनीना ननु पूर्वाभ्यधिकोऽपि भावशून्य ।। (३-३)

धृष्ट नायक का उदाहरण —

लालालक्ष्मललाटपट्टमभित केयूरमुद्रा गले
वक्त्रे कज्जलकालिमा नयनयोस्ताम्बूलरागोऽपर ।
दृष्ट्वा कोपविधायि मण्डनमिद प्रातश्चिर प्रेयसो
लीलातामरसोदरे मृगदृश श्वासा समाप्ति गता ।।

शठ नायक के लिए अमरुशतक का निम्नलिखित श्लोक दर्शनीय है —

शठान्यस्या काञ्चीमणिरणितमाकर्ण्य सहसा
यदा श्लिष्यन्नेव प्रशिथिलभुजग्रथिरभव ।
तदेतत्क्वाचक्षे घृतमधुमयत्वद्बहुवचो—
विषेणाघूर्णन्ती किमपि न सखी मे गणयति ।।

मालविकाग्निमित्र का नायक दक्षिण नायक है। देखिए —

दाक्षिण्य नाम बिम्बोष्ठि बैम्बिकाना कुलव्रतम् ।
तन्मे दीर्घाक्षि ये प्राणास्ते त्वदाशानिबधना ।। (४-४१)

१६. नाटको में प्रयुक्त होने वाले कुछ शब्दो की परिभाषा

नान्दी

आशीर्वचनसयुक्ता स्तुतिर्यस्मात्प्रयुज्यते ।
देवद्विजनृपादीना तस्मान्नान्दीति सज्ञिता ।।
मङ्गल्यशखचन्द्राब्जकोककैरवशसिनी ।
पदैर्युक्ता द्वादशभिरष्टाभिर्वा पदैरुत ।।

नाटक के आरम्भ मे देवता, ब्राह्मण तथा राजा आदि की आशीर्वादयुक्त जो स्तुति की जाती है वह नान्दी कहलाती है। इसमे माङ्गलिक वस्तु, शङ्ख, चन्द्र, चक्रवाक और कुमुद आदि का वर्णन होना चाहिये और यह बारह या आठ पदो से युक्त होनी चाहिये।

नान्दी दो प्रकार की होती है। एक तो नटकल्पिता, दूसरी नाटककार-रचिता। भास के नाटक मे (नान्द्यन्ते तत प्रविशति सूत्रधार) इस सकेत से 'पूर्वरगनान्दी' 'नटकृता नान्दी' समझना चाहिये। कालिदास के नाटक मे (तत्त प्रविशति सूत्रधार) इस सकेत से कविकृत नान्दी समझना चाहिये। पत्रावली उस नान्दी को कहते है जिसमे बीज तथा वर्णनीय वस्तु का विन्यास हो। जैसा कि नाटचदर्पण मे लिखा है —

यस्या बीजस्य विन्यासो ह्यभिधेयस्य वस्तुन ।
श्लेषेण वा समासोक्त्या नान्दी पत्रावली तु सा ।।

सूत्रधार

नाट्योपकरणादीनि सूत्रमित्यभिधीयते ।
सूत्र धारयतीत्यर्थे सूत्रधारो निगद्यते ।।

बीज सहित नाटक के अनुष्ठान को सूत्र कहते है। उसका सचालन करने वाले तथा रगमच के अधिष्ठाता देव की पूजा करने वाले को सूत्रधार (Stage Manager) कहते है।

मातृगुप्ताचार्य ने सूत्रधार की परिभाषा निम्न प्रकार से दी है —

चतुरातोद्यनिष्णातोऽनेकभूषासमावृत ।
नानाभाषणतत्त्वज्ञो नीतिशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।।
नानागतिप्रचारज्ञो रसभावविशारद ।
नाटचप्रयोगनिपुणो नानाशिल्पकलान्वित ।।
छन्दोविधानतत्त्वज्ञ सर्वशास्त्रविशारद ।
तत्तद्गीतानुगलयकलातालावधारण ।।
अवधाय प्रयोक्ता च योक्तॄणामुपदेशक ।
एवं गुणगणोपेत सूत्रधारोऽभिधीयते ।।

प्रस्तावना (Prologue) आमुख

स्थापना, प्रस्तावना और आमुख ये सब पर्यायवाची हैं। प्रस्तावना मे सूत्रधार

नटी या किसी सहायक पात्र से अभिनय की जाने वाली वस्तु के विषय मे वार्तालाप करके दर्शको को सूचित करता है कि कौन सा नाटक खेला जाने वाला है अथवा अभिनेय वस्तु का ज्ञान कराता है।

सूत्रधारो नटी ब्रूते मारिष वा विदूषकम् ।
स्वकार्यप्रस्तुताक्षेपि चित्रोक्त्या यत्तदामुखम् (प्रस्तावना वा) ।।

कोई कोई प्रस्तावना की परिभाषा निम्न तौर पर करते है —

विदूषकनटीमार्षै प्रस्तुताक्षेपिभाषणम् ।
सूत्रधारस्य वक्रोक्तिस्पष्टोक्तैर्यत्तदामुखम् ।।

अर्थात् नाटक की सूक्ष्म सूचना देने के लिये सूत्रधार का नटी अथवा मारिष अर्थात् पारिपार्श्वक के साथ यथावसर जो आलाप-सलाप है उसे "आमुख" या "प्रस्तावना" कहा जाता है। दो प्रकार से नाटक की सूचना दी जाती है स्पष्ट रूप से अथवा किसी विचित्रता के साथ नाटकान्तर्गत पात्र के प्रवेश से। पहले का जो नाटक भाग है वह तो प्रस्तावना अथवा "आमुख" है और बाद का "नाट्य" अथवा "नाटक"।

प्रस्तावना मे ही प्ररोचना भी अन्तर्भूत है। प्ररोचना की परिभाषा है (पूर्वरङ्गे गुणस्तुत्या सभ्यौन्युख्य प्ररोचना) अर्थात् रगमच पर अवतरित किये जाने वाले नाटक की प्रशसा, नटो की अभिनय-कला की प्रशसा या नाटक के रचयिता की प्रशसा या नाटक के सामाजिको की प्रशसा या इन सबकी प्रशसा को प्ररोचना कहा जाता है।

प्रवेशक अथवा विष्कम्भक

प्रवेशक की परिभाषा दशरूपक मे इस प्रकार दी गई है —

वृत्तवर्तिष्यमाणाना कथाशाना निदर्शक ।
सक्षेपार्थस्तु विष्कम्भो मध्यपात्रप्रयोजित ।।
तद्वदेवानुदात्तोक्त्या नीचपात्रप्रयोजित ।
प्रवेशोऽङ्कद्वयस्यान्त शेषार्थस्योपसूचक ।।

विष्कम्भक नाटक का वह भाग है जिसमे एक या अधिक मध्यम पात्र आकर भूत या भविष्य की घटना का वर्णन करते है। विष्कम्भक और प्रवेशक दोनो का उद्देश्य एक ही है। दोनो मे अन्तर यही है कि विष्कम्भक मे तो मध्यम श्रेणी के पात्र आते हैं और प्रवेशक मे अवर श्रेणी के। मुद्राराक्षस के प्रथम अङ्क

के आदि मे जीवसिद्धि और क्षपणक का सवाद प्रवेशक है। इसी प्रकार पचम अङ्क मे भी सिद्धार्थक और सुसिद्धार्थक का सवाद प्रवेशक है। विष्कम्भक दो प्रकार का होता है। शुद्ध और मिश्र। शुद्ध मे केवल मध्यमपात्र ही आते है पर मध्य मे नीचपात्र भी भाग लेते है और वार्तालाप सस्कृत और प्राकृत दोनो में ही होता है।

पूर्वरङ्ग

यन्नाट्यवस्तुन पूर्वं रङ्गविघ्नोपशान्तये ।
कुशीलवा प्रकुर्वन्ति पूर्वरङ्ग स उच्यते ।।

नाटकीय कथा के आरम्भ के पूर्व रगमच के विघ्नो की शान्ति के लिये नर्तक या अभिनेता जो मङ्गलाचरण करते है उसे पूर्वरङ्ग कहते है।

चूलिका, अङ्कास्य, अङ्कावतार

पर्दे के पीछे बैठे हुए पात्रो द्वारा कथा की सूचना देने को चूलिका कहते है। अङ्क की समाप्ति पर निष्क्रान्त होने वाले पात्रो द्वारा अगले अङ्क की कथा की सूचना अङ्कास्य है। अङ्क समाप्त होने के पूर्व ही आगामी अङ्क की कथा का प्रारम्भ कर देना अङ्कावतार है।

अन्तर्यवनिका सस्थैश्चूलिकार्थस्य सूचना
अक्रान्तपात्रैरकास्य - मुत्तराङ्कार्थसूचना ।
यत्र स्यादुत्तराङ्कार्थं पूर्वाङ्कार्थानुसगत
असूचिताङ्कपात्र तदङ्कावतरणम् मतम् ।।

गर्भाङ्क

अङ्कोदरप्रविष्टो यो रङ्गद्वारामुखादिमान् ।
अङ्कोऽपर स गर्भाङ्क सबीज फलवानपि ।।

गर्भाङ्क वस्तुत (किसी नाटक के) एक अङ्क के अन्तर्गत रहने वाले दूसरे अङ्क का नाम है। इसमे भी अङ्क की भाँति सूत्रधारकृत मङ्गलाचरण वा प्रस्तावना अनिवार्य है। इसमे बीजरूप इतिवृत्तार्थ किवा नायक के प्रधान प्रयोजन का अशत उपन्यास आवश्यक है।

कञ्चुकी

अन्त पुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वित ।
सर्वकार्यार्थकुशल कञ्चुकीत्यभिधीयते ।।

अथवा

ये नित्य सत्त्वसम्पन्ना कामदोषविवर्जिता ।
ज्ञानविज्ञानकुशला काञ्चुकीयास्तु ते स्मृता ।।

कञ्चुकी जाति का ब्राह्मण होता है, वह वृद्ध होता है तथा सर्वगुणसम्पन्न और प्रत्येक कार्य मे कुशल होता है। वह अन्त पुर मे जाने वाला होता है। जो कामादि दोष से रहित हो, सत्त्वशाली हो और ज्ञान-विज्ञान को जानने वाले हो वे कञ्चुकी कहलाते है।

रङ्गमञ्च

यह भी नाटचशास्त्र का एक प्रमुख अङ्ग है। जैसे वस्तुनायक और सङ्गीत, नृत्य आदि आवश्यक है वैसे ही रङ्गमञ्च भी आवश्यक है। रङ्गमञ्च ही पर पात्र लोग नाटक खेलते है। भरत मुनि ने इसकी बनावट के विषय मे बहुत कुछ लिखा है। यहाँ केवल यही कह देना पर्याप्त है कि यह तीन प्रकार का होता है। १—विकृष्ट जो १०८ हाथ लम्बा होता है, २—चतुरस्र जो चौकोर होता है और ६४ हाथ लम्बा और ३२ हाथ चौडा होता है, ३—त्र्यस्र अथवा त्रिकोण जिसमे प्राय आपस के ही लोग बैठकर नाटक का आनन्द लेते थे।

अङ्क

अङ्क इति रुढशब्दो भावै रसैश्च रोहयत्यर्थान् ।
नानाविधानयुक्तो यस्मात् तस्मात् भवेदङ्क ।।
यत्रार्थस्य समाप्तिर्यत्र च वीजस्य भवति सहार. ।
किञ्चिदवलग्नविन्दु सोऽङ्क इति सदावगन्तव्य ।।

अङ्क नाटक का वह अवच्छेद है अथवा अन्तर्विभाग है जिसमे सामाजिको की दृष्टि नायक-चरित का साक्षात्कार किया करती है और जो भावो और रसो द्वारा अर्थो को प्रस्फुटित करता है, जो अनेक प्रकार के विधान से युक्त होता है और जहाँ एक अर्थ की समाप्ति होती है तथा बीज का उपसहार होता है और अशत बिन्दु का सबध बना रहता है। इसमे अनेकानेक घटनाचक्र का वर्णन रहता है। इसमे ऐसी कथा की रचना नही होती जो कई दिन तक चलती रहे जैसा कि साहित्य-दर्पण मे लिखा है—

नानेकदिननिर्वर्त्य. कथया सम्प्रयोजित ।
अन्तनिष्क्रान्तनिखिलपात्रोऽङ्क इति कीर्त्तित ।

अङ्क के अन्त मे सभी पात्र अपना-अपना अभिनय समाप्त कर रङ्गमञ्च से निकलते दिखाई दिया करते है ।

भरतवाक्य

सस्कृत नाटको का आरम्भ नान्दी सगीत से और अन्त भरतवाक्य सगीत से होता है। नान्दी को तो मुखसधि का अङ्ग नही मानते किन्तु भरतवाक्य को निर्वहणसधि का वह अङ्ग माना जाता है जिसे "प्रशस्ति" कहते है। प्रशस्ति की परिभाषा है —'**प्रशस्ति शुभशसना**'।

अर्थात् जगत् के कल्याण की आशसा अथवा सद्भावना का प्रकाशन। नाटक का नायक अथवा अन्य कोई पात्र इस "भरतवाक्य" का सगीत के साथ पाठ करता है।

नेपथ्य

जहाँ नाचने वाले, नाटक खेलने वाले नाटकोपयोगी वेशभूषा धारण करते है उसे नेपथ्य कहते है —**कुशीलवकुटुम्बस्य गृह नेपथ्यमुच्यते ।**

रगमच पर प्रदर्शन की दृष्टि से कथावस्तु के दो भेद होते है —(१) अभिनेय जो रगमच पर दिखाया जाय, (२) सूच्य वे वस्तुएँ जिनका रगमच पर प्रदर्शन न होकर केवल पात्रो के सवाद के माध्यम से सूचना दे दी जाती है। कुछ वस्तुएँ रगमच पर नही दिखाई जाती, जैसे—वध, युद्ध, विवाह, भोजन, यात्रा, मृत्यु आदि अशुभ या पीडाजनक व्यापार। साहित्यदर्पण मे लिखा है —

दूराह्वान वधो युद्ध राज्यदेशादिविप्लव ।
विवाहो भोजन शापोत्सर्गो मृत्यूरत तथा ।
दन्तच्छेद्य नखच्छेद्यमन्यद् व्रीडाकर च यत् ।
शयनाधरपानादि नगराद्यवरोधनम् ।
स्नानानुलेपने चैभिर्वर्जितो नातिविस्तरै ।।

सर्वश्राव्य या प्रकाश

रगमच पर कथोपकथन मे पात्र की कथावस्तु को तीन तरह से व्यवहार मे लाते है (१) जो बात सब के सामने कही जाय उसे **सर्वश्राव्य** या **प्रकाश** कहते है।

(२) जो दूसरे पात्रो के सुनने योग्य न होकर केवल अपने ही सुनने योग्य हो और उसे वह पात्र अपने मन के लिये कहे वह **स्वगत** या **अश्राव्य** है। (३) जो केवल कुछ पात्रो के सामने कही जा सके वह **नियतश्राव्य** है। (४) नियत श्राव्य मे ही जब दो पात्र हाथ की ओट करके बात करते हैं तो उसे **जनान्तिक** तथा (५) जब कोई पात्र मुँह फेर कर दूसरे पात्र की गुप्त बात कहता है तो उसे **अपवारित**। (६) और जब आकाश की ओर देखकर किसी से बातचीत करने का अभिनय करते हुए कोई अपने प्रश्न उत्तर दोनो कहता चला जाता है उसे **आकाशभाषित** कहते हैं।

कथावस्तु

नाटक की सफलता के लिये उसके तीन प्रमुख तत्त्व कथावस्तु, नायक और रस का भली भाँति निर्वाह कवि को करना चाहिये। काव्य के नवो रसो मे शान्तरस को छोडकर आठ रस नाटक मे व्यवहृत होते है। वीर या शृङ्गार रस की प्राय नाटक मे प्रधानता होती है। नायक के चार भेद पहले ही बताये जा चुके है। वे है धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और धीर-प्रशान्त।

कथावस्तु दो प्रकार की होती है—मुख्य कथावस्तु और उसकी अगभूत कथावस्तु। जिससे मुख्य कथा के विकास मे सहायता मिलती है उसको क्रमश: **आधिकारिक** और **प्रासङ्गिक** कथावस्तु कहते है। प्रासङ्गिक कथावस्तु भी दो प्रकार की होती है—एक वह जो मुख्य कथावस्तु के साथ दूर तक चलती रहती है और इसको **पताका** कहते है। दूसरी वह जो स्थान विशेष पर ही मुख्य कथावस्तु की सहायक होती है और इसे **प्रकरी** कहते हैं।

अर्थप्रकृति, अवस्था और सधियाँ

अर्थप्रकृति पाँच प्रकार की होती है —

बीज बिन्दु पताका च प्रकरी कार्यमेव च।
अर्थप्रकृतय पञ्च ज्ञात्वा योज्या यथाविधि ॥

(१) **बीज**—मुख्य फल का कारणभूत कथाभाग जिसका पहले बहुत सक्षेप मे वर्णन किया जाता है और आगे वह क्रमश विस्तृत होता जाता है।

(२) **बिन्दु**—कारण बनकर आने वाली वह बात बिन्दु कहलाती है जिससे

समाप्त होने वाली अवान्तर कथा आगे बढती है और प्रधान कथा अविच्छिन्न बनी रहती है —

अवान्तरार्थविच्छेदे बिन्दुरच्छेदकारणम् ।

(३) **पताका**—वह प्रासङ्गिक कथावस्तु है जो दूर तक नाटक मे चलती रहे। यह वह प्रासङ्गिक इतिवृत्त है जो व्यापक हुआ करता है और प्रधान फल का सहायक बना रहता है। साहित्यदर्पणकार ने लिखा है —

व्यापि प्रासङ्गिक वृत्तम् पताकेत्यभिधीयते।

जैसे "बेणीसहार" मे भीमसेन सम्बन्धी वृत्तान्त अथवा "अभिज्ञानशाकुन्तल" मे विदूषक सबधी वृत्तान्त।

(४) **प्रकरी**—नाटक मे आये हुए उस प्रासगिक वृत्त को प्रकरी कहते है जो आधिकारिक वृत्त के साथ थोडी ही दूर तक सम्बद्ध हो।

प्रासङ्गिक प्रदेशस्थ चरित प्रकरी मता ।

मुद्राराक्षस मे "प्रकरी" रूप अर्थ प्रकृति है ही नही । यहाँ यह अनावश्यक है।

(५) **कार्य**—कार्य का अर्थ फल है। जिस फल की प्राप्ति के वास्ते उपाय किया जाता है और जो साध्य होता है वह कार्य है—

अपेक्षित तु यत्साध्यमारम्भो यन्निबन्धन ।
समापन तु यत्सिद्धयै तत्कार्यमिति समतम् ॥

अवस्था

फल के उद्देश्य से जो कार्य किया जाता है उसकी स्वभावत पाँच अवस्थाएँ होती हैं—(१) आरम्भ (२) प्रयत्न (३) प्राप्त्याशा (४) नियताप्ति (५) फलागम। साहित्यदर्पण मे लिखा है —

अवस्था पञ्च कार्यस्य प्रारब्धस्य फलार्थिभि ।
आरम्भयत्नप्रत्याशा नियताप्तिफलागमा ॥

१—जहाँ कार्य के आरम्भ की सूचना मिले। कार्य की सिद्धि के लिये नायक मे जो उत्सुकता होती है उसे **आरम्भ** कहते है।

भवेदारम्भ औत्सुक्य यन्मुख्यफलसिद्धये।

२—कार्य को सिद्ध होता न देखकर उसके वास्ते शीघ्रता से उपाय करना **प्रयत्न है।**

प्रयत्नस्तु फलावाप्तौ व्यापारोऽतित्वरान्वित ।

३—उपाय और विघ्न दोनो के बीच की अवस्था जब दोनो की खीचातानी मे फलप्राप्ति का निश्चय न किया जा सके उसे **प्राप्त्याशा** कहते है —

उपायापायशङ्काभ्या प्राप्त्याशा प्राप्तिसभव ।

४—**नियताप्ति**—विघ्न के नष्ट हो जाने से जहाँ फल-प्राप्ति का पूर्ण निश्चय हो जाय।

अपायाभावत प्राप्तिर्नियताप्तिस्तु निश्चित ।

५—**फलागम** वह कार्यावस्था है जिसे समग्र-फल-लाभ कहा गया है ।

सावस्था फलयोग स्याद्य समग्रफलोदय ।

सधियाँ

'अर्थप्रकृतिपञ्चक' रूप भेद के साथ अवस्था पञ्चक की क्रमिक सम्बद्ध योजना के कारण नाटकीय इतिवृत्त के जो पाँच भाग है, उन्हे ही पञ्चसधियाँ कहा करते है, उसके पाँच भेद है ।

१—**मुखसधि**—"आरम्भ" नामक अवस्था और "बीज" अर्थ प्रकृति का जहाँ सयोग होता है उसे **मुखसधि** कहते है ।

२—**प्रतिमुखसधि**—रूपक के प्रधान फल का साधक कथानक जिसमे कभी गुप्त और कभी प्रकट होता दिखाई दे उसे **प्रतिमुख सधि** कहते है ।

३—**गर्भसधि**—इस सधि मे प्रतिमुखसधि का कुछ आविर्भूत बीज बार-बार प्रकट, गुप्त और अन्वेषित होता रहता है।

४—**विमर्शसधि**—वहाँ होती है जहाँ बीज के अधिक विस्तृत होने से उसके फलोन्मुख होने मे विघ्न उपस्थित होते है । इसमे नियताप्ति अवस्था और प्रकरी अर्थप्रकृति होती है ।

५—**निर्वहणसधि**—यह रूपक प्रबन्ध की वह अर्थराशि है, जिसमे उन सधियो मे यत्र तत्र उपन्यस्त बीजादि रूप इतिवृत्ताश प्रधान फल के निष्पादक बनते दिखाई दिया करते है ।

साहित्यदर्पण मे पाँचो सधियो का लक्षण इस प्रकार दिया है —

यत्र बीजसमुत्पत्तिर्नानार्थरससम्भवा ।
प्रारम्भेण समायुक्ता तन्मुख परिकीर्तितम् ।।
फलप्रधानोपायस्य मुखसंधिनिवेशिन ।
लक्ष्यालक्ष्य इवोद्भेदो यत्र प्रतिमुख च तत् ।।

फलप्रधानोपास्य प्रागुद्भिन्नस्य किञ्चन ।
गर्भो यत्र समुद्भेदो ह्रासान्वेषणवान्मुहु ।।
यत्र मुख्यफलोपाय उद्भिन्नो गर्भतोऽधिक ।
शापाद्यैं सान्तरायश्च स विमर्श इति स्मृत ।।
बीजवन्तो मुखाद्यर्था विप्रकीर्णा यथायथम् ।
एकार्थमुपनीयन्ते यत्र निर्वहण हि तत् ।।

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

चाणक्य—नायक, एक महान् राजनीतिज्ञ, मौर्य साम्राज्य को प्रतिष्ठापित करने वाला।

राक्षस—नन्द साम्राज्य का महामत्री, प्रतिनायक।

चन्द्रगुप्त—मौर्यवश का पहला सम्राट्, चाणक्य का भक्त।

मलयकेतु—महाराज पर्वतक का पुत्र, महत्त्वाकाक्षी योद्धा, राक्षस का सहायक, चन्द्रगुप्त का प्रतिद्वन्द्वी।

चन्दनदास—पाटलिपुत्र का सेठ, महामात्य राक्षस का परम मित्र।

भागुरायण—एक राजकुमार, चाणक्य का गुप्तचर जो मलयकेतु का बनावटी मित्र है।

जीवसिद्धि (क्षपणक)—चाणक्य का मित्र व गुप्तचर, राक्षस का बनावटी मित्र।

सिद्धार्थक—चाणक्य का गुप्तचर, राक्षस का बनावटी सेवक।

सुसिद्धार्थक—सिद्धार्थक का मित्र, चाण्डाल वेष मे वेणुवेत्रक।

निपुणक—चाणक्य का गुप्तचर, राक्षस की मुद्रा को उडाने वाला।

विराधगुप्त—राक्षस का गुप्तचर, सँपेरा।

करभक—राक्षस का गुप्तचर।

भासुरक—कुमार मलयकेतु का अनुचर।

अन्य पात्र कञ्चुकी, दौवारिक आदि।

स्त्री-पात्र

शोणोत्तरा—मौर्य सम्राट् की प्रतीहारी।

विजया—मलयकेतु की प्रतीहारी।

कुटुम्बिनी—चन्दनदास की स्त्री।

श्रीविशाखदत्तप्रणीतम्

मुद्राराक्षसम्

प्रथमोऽङ्कः

धन्या केयं स्थिता ते शिरसि शशिकला किन्नु नामैतदस्या
नामैवास्यास्तदेतत् परिचितमपि ते विस्मृतं कस्य हेतोः ।
नारी पृच्छामि नेन्दुं कथयतु विजया न प्रमाणं यदीन्दु-
र्देव्या निह्नोतुमिच्छोरिति सुरसरितं शाठ्यमव्याद्विभोर्वः ।।१।।

अन्वय—का इय धन्या ते शिरसि स्थिता ? शशिकला । एतत् अस्या नाम नु किम् ? अस्या नाम एव । तदेतत् ते परिचितमपि कस्य हेतो विस्मृतम् ? नारी पृच्छामि इन्दु न । यदि इन्दु प्रमाण न, विजया कथयतु । इति देव्या सुरसरितम् निह्नोतुमिच्छो विभो शाठ्य व अव्यात् ।

हिन्दी अनुवाद—(पार्वती शकर से पूछती है) यह कौन सी सौभाग्यशालिनी स्त्री है जो तुम्हारे शिर पर बैठी है ? (शिव का उत्तर) यह तो शशिकला है। (पार्वती) तो क्या उसका वास्तविक नाम चन्द्रकला है। (शिव) क्या तुम भूल गई हो। इसका यह नाम ही है। यह तो तुम्हारा परिचित नाम है! (पार्वती) मैं स्त्री को पूछ रही हूँ चन्द्रमा को नहीं। (शिव) तो मैं क्या बताऊँ ? यदि तुम्हें इस बात पर कि यह चन्द्रकला है, विश्वास नही है तो विजया ही (जो तुम्हारी सखी है) इसका नाम बतावे। इस प्रकार गङ्गा को पार्वती से छिपाने के इच्छुक शकर का यह (प्रेमपूर्ण) कपट आप लोगो की रक्षा करे।

(*Goddess Parvatı*) Who ıs the fortunate lady sıttıng on your head ? (*Shıva*) Sashıkala (dıgıt of the moon) (*Parvatı*) Is ıt really the name of thıs lucky one ? (*Shıva*) It ıs the one well-known to you , have you forgotten her ? (*Parvatı*) I ask about the woman not about the moon (*Shıva*) If you do not belıeve me let Vıjaya answer May thıs craft of Shıva, desırous of concealıng the heavenly stream (*Ganga*) from hıs consort, protect you

व्याख्या—पुरा किल भगीरथेन आकाशात् प्रवर्तिता गङ्गा शिवशिरसि निपतिता देवेन शिवेन पत्नीत्वेन अङ्गीकृता आत्मरूपेण तस्य जटामण्डले एव स्थिता। देवोऽपि तां शिरसि कृत्वा गृह प्रत्यावर्त्तत। तदा शिरो विभूषयन्तीम् गङ्गामुद्दिश्य ईर्ष्याकवलिताऽन्तरा पार्वती तस्या कुलशीलादि जिज्ञासमाना शङ्करमपृच्छत् का इय धन्या सौभाग्यवती स्त्री जगद्गुरो अपि ते तव शिरसि स्थिता वर्त्तते। शिवस्तु इति कथयितु नैच्छत् यत् "इयम् तव सपत्नी" अत गङ्गा निह्नोतुकाम स अकथयत् "इयम् शशिकला" चन्द्ररेखा। पुन सा अपृच्छत्—किमस्या सुभगाया नामाभिधानमेवैतत्। तत शिव प्रतारयन्नाह अस्या मम शिरसि स्थिताया चन्द्रकलाया शशिकला इति नाम एव। ननु पृच्छामि तत् प्रसिद्धम् नाम ते परिचितमपि सुविदितमपि कस्मात कारणात् अद्य विस्मृतम्। नारी रमणी पृच्छामि इन्दु न चन्द्र न तर्हि प्रिया प्रसादयन् निगूहितगगाभावो भृश मनसि प्रहृष्यन् शकर कथयति, यदीन्दु अय यस्य शशिकलेति मद्वचो न प्रमाण न विश्वासावहम् तर्हि भवत्या सखी विजया एव पृच्छ्यताम् सैव कथयतु यत् शशिकलेति इन्दोर्नाम न वा। इति एतत् उक्तरूपम् देव्या पार्वत्या सुरसरित देवनदी गङ्गा निह्नोतुमिच्छो गोपयितुकामस्य विभो शिवस्य शाठ्य कैतव व युष्मान् रक्षतु इति सामाजिकान् प्रति आशीर्वचनम्।

टिप्पणी

(१) **नादी**—उन आशीर्वादात्मक श्लोको या पद्यो को नादी मगलाचरण कहते है जिन्हे सूत्रधार नाटक के आरम्भ करने से पहले पाठ करता है। नादी चार प्रकार की होती है—नमस्कृति, माङ्गलिकी, आशी तथा पत्रावली। घटना का कुछ आभास देने के कारण इस नाटक की नान्दी पत्रावली है। (२) **मुद्राराक्षस**—यह नाटक का नाम है। मुद्रा—मुहर seal। राक्षस—नन्द का प्रधान मत्री है। इस नाटक मे मुद्रा के द्वारा राक्षस को फाँसा गया है अत इसका नाम मुद्राराक्षस हुआ। मुद्रया गृहीत राक्षस मुद्राराक्षस (मध्यमपदलोपी समास)। मुद्राराक्षसम् अधिकृत्य कृत नाटकम् इति मुद्राराक्षसम् मुद्राराक्षस+अण्। 'नाटकम्' का विशेषण होने के कारण यह नपुसकलिग हुआ। (३) **धन्या**—धन लब्ध्वा। धन+यत्+टाप् स्त्रियाम्। भाग्यशालिनी। टीकाकार ढुण्ढिराज का कथन है कि "धन्या" शब्द ईर्ष्या के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। क्योकि पार्वती तो शङ्कर जी के बाये भाग मे आधे अङ्ग पर विराजती है और उनकी सौत गङ्गा

महादेव जी के सर पर विराजमान हैं। यह शब्द (धन्या) निन्दा-वाचक भी है, क्योंकि पति के सिर पर बैठना स्त्री के लिए सर्वथा अनुचित है। (४) **परिचितमपि**—परि+चि+क्त कर्मणि वर्तमाने। अत यहाँ "ते" का प्रयोग हुआ है। 'क्तस्य च वर्तमाने' इति षष्ठी। (५) **कस्य हेतो**—किस कारण से। 'षष्ठी हेतुप्रयोगे' इति सूत्रेण अथवा 'सर्वनाम्नस्तृतीया च' इति सूत्रेण षष्ठी। (६) **नारी पृच्छामि नेन्दुम्**—इस नारी (जो तुम्हारे शिर पर है) के बारे मे पूछती हूँ न कि चन्द्रमा के विषय मे। (७) **इन्दु प्रमाणम् न**—मेरी यह बात कि वह चन्द्रमा है अगर मान्य नही है तो (८) **देव्या निह नोतुम् इच्छो**—पार्वती से छिपाने के इच्छुक। यहाँ "ध्रुवमपाये" से पञ्चमी है। निह्नोतुम्—छिपाना। नि+ह्नु+तुमुन्। (९) **विभो शाठ्यम्**—शङ्कर जी का कपट। शङ्कर जी ने गङ्गा को पार्वती से छिपाने के लिए यह व्यवहार किया। (१०) **अव्यात्**—रक्षा करे। अव्+लिङ (आशिषि)। यह स्रग्धरा छन्द है। छन्द का लक्षण—अम्नैर्याना त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्'। इसमे वक्रोक्ति अलकार है।

अपि च—

पादस्याविर्भवन्तीमवनतिमवने रक्षतः स्वैरपातैः
संकोचेनैव दोष्णां मुहुरभिनयतः सर्वलोकातिगानाम्।
दृष्टिं लक्ष्येषु नोग्रां ज्वलनकणमुचं बध्नतो दाहभीते-
रित्याधाराऽनुरोधात् त्रिपुरविजयिनः पातु वो दुःखनृत्यम्॥२॥

अन्वय—आविर्भवन्तीम् अवने अवनतिं पादस्य स्वैरपातै रक्षत, सर्वलोकातिगाना दोष्णा मुहु सकोचेनैव अभिनयत, दाहभीते लक्ष्येषु ज्वलनकणमुचम् उग्रा दृष्टि न बध्नत, त्रिपुरविजयिन आधारानुरोधात् इति दु खनृत्य व पातु ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—अपने चरणो को स्वच्छन्द चलाने से, पृथ्वी को रसातल में धँस जाने की सम्भावना से सदा बचाते रहने वाले, अपनी भुजाओ को जो समस्त लोको का अतिक्रमण करने वाली हैं बार-बार सकुचित करके ही अभिनय करने वाले, (ससार के जलने के डर से) दृश्य पदार्थों पर अग्नि-स्फुलिगो को छोडने वाली भयानक दृष्टि को कही एक लक्ष्य पर न रखने वाले त्रिपुर-विजयी शङ्कर का वह ताण्डव जो केवल अभिनय के आधारो की रक्षा करते रहने के कारण स्वय इस प्रकार कष्टमय बना हुआ है आप (दर्शको) का सदा कल्याण करे।

विशेष—इस दूसरे नान्दी पद मे नाटककार ने त्रिपुर-विजयी शिव के दु खसाध्य ताण्डव मे चरितनायक चाणक्य के नीति-ताण्डव की सूक्ष्म अभिव्यक्ति की है। इस पद मे यह दिखाया गया है कि जिस प्रकार क्रोधित होने पर महादेव जी ने त्रिपुर का नाश कर दिया था उसी प्रकार चाणक्य ने भी क्रोध मे नवनन्दो का नाश कर दिया, पर शान्ति के समय जिस प्रकार महादेव जी सब के रक्षार्थ कष्ट-नृत्य करते हैं उसी प्रकार क्रोध शान्त होने पर चन्द्रगुप्त के राज्य को दृढ करने के लिए राक्षस को मिलाने के लिए कष्टसाध्य कार्य को चाणक्य ने शान्ति से अपनी कूटनीति द्वारा सफल किया।

May the dance of Shiva uncomfortable due to his regard for the arena, protect you In the dance, the conqueror of Tripura avoided imminent subsidence of the earth by light treads of his feet, acted with the shortening of his arms which outreached all the worlds and did not fix his grim eye, that emitted sparks of fire, on objects that are seen, for he feared that the whole world would be burnt

संस्कृत व्याख्या—आविर्भवन्तीम् उत्पत्स्यमानाम् अवने पृथिव्या अवनति अधोगमन पादस्य स्वैरपातै आत्मकलनया विन्यासै न तु ताण्डवरीत्या पातै रक्षत परिहरत सर्वलोकातिगानाम् सर्वान् लोकान् अतिक्रम्य गच्छताम् जिगमिषता वा दोष्णा भुजानाम् मुहु प्रतिक्षण सकोचेनैव निरुद्धप्रसारेणैव न तु ताण्डवोचितप्रसारेण अभिनयत हस्ताभिनयकार्यं कुर्वत लोकान्तरमनुरुन्धानस्य दाहभीते नयनकिरणात् अभिज्वलन् शङ्कया अर्थात् दृष्टिपथमायातानि समग्रभावजातानि मा भूवन् भस्मसात् इति धिया लक्ष्येषु दर्शनविषयेषु ज्वलनकणमुचम् ज्वलनकणान् मुञ्चति या तादृशीम् अतएव उग्राम् घोरा दृष्टि न बध्नत न स्थिर निक्षिपत त्रिपुरविजयिन त्रिपुरान्तकस्य आधारानुरोधात् रङ्गभूमे ब्रह्माण्डोदरस्य अनुरोधात् अपेक्षया ब्रह्माण्डम् पूर्णताण्डवस्य अपर्याप्तमितिहेतो दु खनृत्यम् विकलताण्डव व पातु रक्षतु। शिवस्य रौद्र रसमभिनयत महानटस्य दु खनृत्यम् नियन्त्रिताङ्गहारादिस्वाच्छन्द्य कृच्छ्रसाध्य नटन व सामाजिकान् पातु दौर्मनस्यादिकचिन्तासन्तापाद्रक्षत्विति भाव ।

टिप्पणी

(१) **आविर्भवन्तीम्**—आविस्+भू+'वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा' इति सूत्रण भविष्यदर्थे लट्—शतृ स्त्रिया ङीप्। **जायमानाम्**—उत्पन्न होने वाली। यह अवनतिम् का विशेषण है। (२) **रक्षत**—रक्षा कुर्वत—रक्षा करने वाले (शकर का) (३) **स्वैरपातै**—स्व ईर येषु ते स्वैरा तादृशा पाता तै

स्वैरपातै—सभालकर पैर रखने से, या धीरे रखते हुए, "मन्दस्वच्छन्दयो स्वर" इत्यमर । यहाँ पर करणे तृतीया है। (४) **सकोचेन एव**—एव शब्द से ज्ञात होता है कि बाहुओ का पूरा-पूरा फैलाना असभव था। सकोच से ही। जैसा कि एक टीकाकार ने लिखा है—सक्षेपेणैव व्यावर्तनेनैव नतु ताण्डवोचितप्रसारेण असकोचे तु भुजदण्डाभिघातेन विश्वमेव विनश्येदिति भाव । यदि हाथो को सभाल कर अभिनय न करते तो शायद सारा ससार भुजदण्ड के चोट से नष्ट हो जाता। (५) **दोष्णाम्**—बाहुओ का। यह भुजावाची दोष् शब्द के षष्ठी-बहुवचन का रूप है। (६) **अभिनयत** —अभिनय करते हुए। अभि+नी+शतृ। (७) **दाहभीते**—दाहात् भीति (पञ्चमी तत्पु०) तस्या दाहभीते—जल जाने के भय से। हेतौ पञ्चमी 'विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्' इति सूत्रेण। (८) **सर्वलोकातिगानाम्**—सर्वे लोका सर्वलोका तानि अतिगच्छन्ति तेषाम्। सर्वलोक +अति+गम+ड कर्त्तरि—सारे ससार को अतिक्रमण करने वाले। यह दोष्णाम् का विशेषण है। (९) **ज्वलकणमुचम्**—यह "दृष्टिम्" का विशेषण है—अग्निकणो को उगलने वाली। ज्वलकण+मुच्+क्विप् कर्त्तरि ताम्। (१०') **त्रिपुरविजयिन**—त्रिपुरस्य विजयिन इति त्रिपुरविजयिन । त्रिपुरासुर को विजय करने वाले (शकर का) त्रिपुरासुर स्वर्ग, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी पर तीन नगर बनाकर रहता था। शकर ने इन नगरो को जलाकर त्रिपुर-सहार किया था। (११) **आधारानुरोधात्**—आधारस्य अनुरोधात्। आधार के अनुरोध के कारण। अर्थात् नृत्य के आधारो की रक्षा करते हुए। शकर जी के नृत्य का आधार सारा ब्रह्माण्ड है। आध्रियते अस्मिन् अनेन वा। आ+धृ+घञ्। अनुरोधात् मे "हेतौ पञ्चमी" है (१२) **दु खनृत्यम्**—दु खयति इति दु खम्। दु ख+णिच्+अच् (पचाद्यच्) दु खम् नृत्यम्—दु ख पूर्ण नृत्य। 'स्वैरपात' शब्द से सूचित होता है कि शकर जी को पादक्षेप करने मे असुविधा है। "सकोच" शब्द से सूचित होता है कि हस्तविक्षेप मे भी "कष्ट" है। "दृष्टेरबन्धनम्" से पता चलता है कि वे पूरी तौर से देखते भी नही। शकर जी को दृष्टिपात करने मे भी सकोच है। अत यह नृत्य हर प्रकार से दु खप्रद है। अमात्य राक्षस का विफल होना दु खनृत्य है। जैसा कि राक्षस स्वय कहता है "विपर्यस्त सौधम्" (६–११) 'द्रव्यम् विजिगीषुमधिगम्य" (७–१४)। आधार मलयकेतु है। कुछ टीकाकार ऐसा भी अर्थ करते है कि आधार राक्षस है और दु खनृत्य चाणक्य का कार्य है,

क्योकि उसे राक्षस की रक्षा करते हुए सब काम करने पडे थे। अत उसका प्रयत्न दु खनृत्य कहा गया है। इस श्लोक मे स्रग्धरा छन्द है। सबधरूपातिशयोक्ति अलकार है।

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः—अलमतिप्रसङ्गेन। आज्ञापितोऽस्मि परिषदा यथा "अद्य त्वया सामन्तवटेश्वरदत्तपौत्रस्य महाराजपदभाक्-पृथुसूनोः कवेर्विशाखदत्तस्य कृतिः अभिनवं मुद्राराक्षसं नाम नाटकं नाटयितव्यम्" इति यत्सत्यं काव्यविशेषवेदिन्यां परिषदि प्रयुञ्जानस्य ममापि सुमहान् परितोषः प्रादुर्भवति। कुतः—

हिन्दी अनुवाद—(नान्दी के बाद) सूत्रधार—अधिक विस्तार की आवश्यकता नहीं है। परिषद से मुझे आज्ञा मिली है कि आज तुम सामन्त वटेश्वरदत्त के पौत्र और महाराज की उपाधि से भूषित पृथु के पुत्र विशाखदत्त कवि की नई कृति मुद्राराक्षस नामक नाटक का अभिनय करो। "सच है जो सभा काव्य के गुण और दोष को (विशेषता को) समझती है उसके सामने अभिनय करते हुये मेरा भी चित्त अति सतुष्ट होता है। क्योकि —

(After the Nandi)—*Stage Manager*—Enough of excessive talk I have been ordered by the assembly, "The new drama entitled the Mudrarakshas, the work of the poet Vishakhadatta, the son of Vateshwardatta, has to be staged by you today" Really, I find much pleasure in acting before an audience which knows the techniques of poems For—

सस्कृत व्याख्या—नान्द्यन्ते नान्द्या मङ्गलाचरणस्य अन्ते समाप्ते सूत्रधार नटाना नेता आह—अतिप्रसङ्गेन बहुभाषणेन अलम् पर्याप्तम्। परिषदा समागतेन सामाजिकजनेन आज्ञापितोऽस्मि कथितोऽस्मि सामन्तवटेश्वरदत्तस्य पौत्रस्य तथा महाराजपदभाक्पृथुसूनो महाराजोपाधि य भजते तस्य पृथो पृथुनामकस्य सामन्तभूपते य सूनु आत्मज तस्य कवे विशाखदत्तस्य कृति रचना अभिनवम् नवीनम् मुद्राराक्षस नाम नाटकम् नाटयितव्यम् अभिनेतव्यम् यत् सत्यम् तथ्यम् काव्यविशेषवेदिन्या काव्यस्य विशेषम् उत्कर्षं या वेत्ति जानाति तस्या परिषदि सभायाम् प्रयुञ्जानस्य प्रयोक्ष्यमाणस्य ममापि सुमहान् भूयान् परितोष आनन्द प्रादुर्भवति जायते कुत यतो हि।

टिप्पणी

(१) **नान्द्यन्ते**—नन्दयतीति नन्द । नन्द एव नान्द नन्द+अण् (स्वार्थे)। नान्द+ङीप् नान्दी । नान्द्या अन्त तस्मिन् नान्द्यन्ते । 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' इति सूत्रेण भावे सप्तमी । नान्दी की परिभाषा भूमिका मे देखिये । नान्दी इसलिए की जाती है कि नाटक की समाप्ति निर्विघ्न हो जाय । यह देवता की स्तुति है। नान्दी का लक्षण है— "देवद्विजनृपादीनामाशीर्वादपरायणा । नन्दन्ति देवता यस्मात्तस्मान्नान्दी प्रकीर्त्तिता" । इसका प्रयोजन है "तथाप्यवश्य कर्त्तव्यम् नान्दी विघ्नोपशान्तये" । (२) **सूत्रधार** —रगशाला का व्यवस्थापक । सूत्र धारयति इति सूत्र+धृ+णिच्+अण् कर्तरि । (३) **अतिप्रसङ्गेन अलम्**— अधिक विस्तार रहने दो। "अल योगे तृतीया" से तृतीया है। प्रसञ्जनमिति प्रसङ्ग —प्र+सज्+घञ् भावे। अतिशयित प्रसङ्ग अतिप्रसङ्ग (प्रादि तत्पुरुष समास) किसी विषय पर अधिक कहना अतिप्रसङ्ग है। (४) **आज्ञापित** —आ+ज्ञा, पुक्+णिच्+क्त—आदेश दिया गया है। (५) **परिषदा**— परिषद् से। परि+षद्+क्विप् तृतीया—एकवचन। (६) **काव्यविशेषवेदिन्याम्**—काव्य की विशेषता जानने वाली (परिषद्) यह परिषदि का विशेषण है। काव्यस्य विशेष वेत्तीति तस्या काव्यविशेषवेदिन्याम् । विशेष+विद्+णिनि (प्रत्यय)+ङीप्। (७) **प्रयुञ्जानस्य**—नाटक कुर्वत —अभिनय करते हुए (का)। प्र+युञ्ज्+लट्—शानच् ।

चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः ।
न शालेः स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते ।।३।।

अन्वय—बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषि चीयते, शाले स्तम्बकरिता वप्तु गुणम् न अपेक्षते ।

हिन्दी अनुवाद—मूर्ख का भी अच्छे खेत में डाला हुआ बीज वृद्धि को प्राप्त होता है। घने गुच्छे बन-बन कर उपजने वाले धान के बीज किसान के गुण (या अवगुण) पर नहीं निर्भर रहते।

Seeds sown, even by a fool, in a good soil thrive The growth of paddy in clusters does not depend upon the skill of the sower

सस्कृत व्याख्या—बालिशस्यापि मूर्खस्यापि कृषकस्य सत्क्षेत्रपतिता उदारे क्षेत्रे पतिता प्रयुक्ता (सती) कृषि लक्षणया बीज चीयते वर्धते शाले धान्य-

विशेषस्य स्तम्बकरिता स्तोमीभवनयोग्यता निविडभवन वा वप्तु बीजनिक्षेपकर्तु गुण कृषिपाण्डित्यादिक न अपेक्षते नाकाङ्क्षते प्रत्युत स्वयमेव क्षेत्रसम्पदा समृद्धिमती भवतीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **बालिशस्य**—मूर्खस्य अर्थात् कृषि कर्म न जानने वाले किसान का। बाड्+इन्, बाडि श्यति इति बाडि+शो+ड, डलयोरभेद=बालिश, तस्य। (२) **सत्क्षेत्रपतिता कृषि**—उत्तम खेत मे बोई हुई (खेती) अर्थात् बीज। (३) **चीयते**—वर्धते—बढती है। (४) **शाले**—एक प्रकार का (जडहन) धान। (५) **स्तम्बकरिता**—गुच्छे बन-बन कर उपजना। स्तम्ब करोतीति—स्तम्ब+कृ+इनि स्तम्बकरि तस्य भाव स्तम्बकरि+तल्+टाप्। इसमे अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है और पथ्यावक्त्र छन्द है। छन्द का लक्षण—'युजोश्चतुर्थतो येन पथ्यावक्त्र प्रकीर्तितम्'।

तद्यावदिदानी गृहं गत्वा गृहिणीमाहूय गृहजनेन सह सङ्गीतकमनुतिष्ठामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) इमे नो गृहाः। तद्यावत् प्रविशामि। (नाट्येन प्रविश्यावलोक्य च) अये, तत् किमिदमस्मद्गृहेषु महोत्सव इव दृश्यते। स्वस्वकर्मणि अधिकतरमभियुक्तः परिजनः। तथाहि—

हिन्दी अनुवाद—तो अब मै घर जाकर स्त्री को बुलाकर घर के लोगो के साथ गाने बजाने का आयोजन करता हूँ। (चारो ओर घूमकर और देखकर) यही मेरा घर है। तो इसमें मै प्रवेश करता हूँ। (भीतर प्रवेश करने का अभिनय करके और देख-दाख कर) अहा! आज मेरे घर में यह कैसा बडा उत्सव दिखाई पड़ रहा है। सभी परिजन अपने-अपने काम में तल्लीन है। क्योकि—

So I shall go home, summon my wife, and commence music with the house-hold servants (Going home and observing) This is my house, I shall go inside (Acting entry and observation) Oh! what is this? It seems that there is a great festival in my house The servants are busily engaged in their respective duties, For—

सस्कृत व्याख्या—तत् तस्मात् इदानी सम्प्रति गृह वेश्म गत्वा गृहिणीम् स्त्रीम् आहूय गृहजनेन परिजनवर्गेण सह सङ्गीतकम् यावत् अनुतिष्ठामि आयोजयामि गीतवाद्यादिकमेव प्रवर्त्तयामीति भाव परिक्रम्य रगमच परित गत्वा अवलोक्य च दृष्ट्वा च इमे न अस्माकम् गृहा भवनानि तत् यावत् प्रविशामि

अन्तर्गच्छामि। (नाट्येन प्रविश्य प्रवेश नाटयित्वा अवलोक्य दृष्ट्वा च आह) अये, तत् किम् इदम् अस्मद्गृहेषु मम वेश्मनि महान् उत्सव इव दृश्यते यत परिजन भृत्यवर्ग स्वस्वकर्मणि निजकार्ये अधिकतरम् अत्यन्तम् अभियुक्त सलग्न तथाहि अभिनिवेशाधिक्यादेव —

टिप्पणी

(१) **गृहिणीम्**—गृहमस्या अस्तीति गृह+इति (मत्वर्थे)+ङीप्=गृहिणी, ताम्—पत्नी को। यह आहूय का कर्म है। (२) **गृहजनेन**—यहाँ "जन मे" जातौ एकवचनम् से एकवचन है। गृहस्थ जन गृहजन "शाकपार्थिवादि" समास है। घर वालो के साथ। (३) **सगीतकम्**—सम्+गै+क्त भावे सगीतम्, सगीतमेव सगीतकम् स्वार्थे कन्। नृत्य, गीत तथा वाद्य को सगीत कहते है। 'गीत वाद्य नर्तन च त्रय सगीतमुच्यते'। (४) **गृहा**—गृह शब्द नपुसक मे एकवचन होता है परन्तु पुलिङ्ग मे बहुवचन होता है। "गृहा पुसि च भूम्न्येव" इत्यमर। (५) **स्वस्वकर्मणि**—अपने-अपने काम मे। यहाँ पर अधिकरणे सप्तमी है। (६) **अभियुक्त**—सलग्न है—अभि+युज्+क्त कर्त्तरि।

वहति जलमियं पिनष्टि गन्धा-
नियमियमुद्ग्रथते स्रजो विचित्राः।
मुसलमिदमियञ्च पातकाले
मुहुरनुयाति कलेन हुंकृतेन ॥४॥

अन्वय—इय जल वहति इय गन्धान् पिनष्टि इय विचित्रा स्रज उद्ग्रथते इय च पातकाले मुहु कलेन हुकृतेन इदम् मुसलम् अनुयाति।

हिन्दी अनुवाद—एक (दासी) तो इधर जल ला रही है, दूसरी उधर सुगधित मसालो को पीस रही है, कोई रग-बिरगी सुन्दर मालायें गूँथ रही है और उधर कोई मीठी हुकार सी भरती हुई खल में मूसल के गिरने के साथ-साथ अपनी धुन मे लगी दिखाई दे रही है।

Some one is carrying water, some one is pounding spices, the other is preparing speckled wreaths, and one is always accompanying, with a sweet 'hum' that pestle when it is dropped down

संस्कृत व्याख्या—इयम् एका जल पानीयम् वहति ग्रानयति इयम् ग्रपरा गधान् पिनष्टि ग्रधिवासद्रव्याणि चूर्णयति इयम् काचित् विचित्रा ग्रनेकवर्णा स्रज पुष्पमाल्यानि उद्ग्रथते उद्ग्रथ्नाति रचयति इयम् च ग्रन्या पातकाले (उलूखले) पतनसमये मुहु वारवार कलेन मधुरास्फुटेन हुङ्कृतेन हुमिति ध्वनिना सह इदम् दृश्यमानम् मुसलम् ग्रनुयाति ग्रनुसरति ।

टिप्पणी

(१) **इयम्**—यहाँ बार-बार इयम् का प्रयोग है । इसका **ग्रर्थ** है एक, कोई, दूसरी, एक माला बना रही है, दूसरी जल ला रही है कोई सुगधित द्रव्य पीस रही है ग्रादि (२) **गन्धान्**—सुगधित द्रव्य या पदार्थो को । यह पिनष्टि का कर्म है । "गधो गन्धक ग्रामोदे लेशे सबधगर्वयो । स एव द्रव्यवचनो बहुत्वे पुसि च स्मृत" इति विश्व (३) **उद्ग्रथते**—गूँथ रही है । उद्+ग्रथ्+लट् ते (४) **विचित्रा**—ग्रनेकवर्णा—ग्रनेक रग की । (५) **पातकाले**—पतनोत्पतन-काले—(मूसल के ग्रोखरी मे) गिरने के समय । (६) **हुङ्कृतेन ग्रनुयाति**—हुम्+कृ+क्त भावे=हुङ्कृतम्, तेन । सहार्थे तृतीया । हु शब्द के साथ ग्रनुसरण कर रही है । जब-जब उलूखल मे मूसल गिरता है तब-तब वह भी हु शब्द का उच्चारण करती है । भाव यह है कि हु हु करती हुई कुछ वस्तु कूट रही है । इसमे पुष्पिताग्रा छन्द है ग्रौर स्वभावोक्ति ग्रलकार है । छन्द का लक्षण —'ग्रयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा' ।

भवतु । कुटुम्बिनीमाहूय पृच्छामि । (नेपथ्याभिमुखमवलोक्य)

गुणवत्युपायनिलये स्थितिहेतोः साधिके त्रिवर्गस्य ।
मद्भवननीतिविद्ये कार्याचार्ये द्रुतमुपेहि ॥५॥

ग्रन्वय—गुणवति उपायनिलये स्थितिहेतो त्रिवर्गस्य साधिके कार्याचार्ये मद्भवननीतिविद्ये द्रुतम् उपेहि ।

हिन्दी ग्रनुवाद—जो हो (घर से) स्त्री को बुलाकर पूछता हूँ (नेपथ्य की ग्रोर देखकर) हे गुणवती, सब उपायो को जानने वाली, ससार-यात्रा के लिये मेरे त्रिवर्ग (धर्म, ग्रर्थ ग्रौर काम) की साधने वाली, मेरे घर की नीति विद्या स्वरूप ग्रौर कार्य का उपदेश करने वाली शीघ्र ग्राग्रो ।

However, I shall call my wife and ask her, (Looking towards the tiring room) O, the virtuous one, the store-house of

plans, the giver of the group of three (धर्म, अर्थ, काम) which is the very cause of existence, the adviser of duties, and the science of politics of my house, come quickly

सस्कृत व्याख्या—कुटुम्बिनीम् पत्नीम् आहूय पृच्छामि सैव तथ्य कथयिष्यति नेपथ्यस्य वेषरचनास्थानस्य अभिमुख दृष्ट्वा हे गुणवति दयादाक्षिण्यादिभूषिते, हे उपायनिलये उपायाना गृहकार्यपाटवादीना निलये निवासभूते, स्थितिहेतो-गृहस्थाश्रमस्थिते यो हेतु कारणम् तस्य त्रिवर्गस्य धर्मकामार्थरूपस्य साधिके निर्वाहयित्रि, हे कार्याचार्ये कार्यस्य कर्तव्यस्य आचार्ये उपदेष्ट्रि, अतएव हे मद्भवनस्य मद्गृहस्य नीतिविद्ये नयशास्त्रस्वरूपे, द्रुतम् शीघ्रम् उपेहि आगच्छ।

टिप्पणी

नाटककार यहाँ सूत्रधार के द्वारा नटी के बुलाने मे वस्तुत चरितनायक चाणक्य द्वारा उसकी चिरसगिनी कूटनीति को कितनी सुन्दरता से उद्भावित कर रहा है। और आह्वान मे कैसा विचित्र और मार्मिक व्यङ्ग्य छिपा हुआ है। इस नाटक मे चाणक्य की कोई नायिका नही। उसका सबध तो केवल राजनीति से है। उसका गृहस्थ जीवन स्वार्थ-साधन के लिये नही लोक-कल्याण के लिये है। उसकी राजनीति मे सधि, विग्रह, अभियान, आसन, सश्रय और द्वैधीभाव के छ गुण वर्तमान हैं। साम, दान, दण्ड और भेद के सभी उपाय भरे हैं, धर्म, अर्थ और काम की सभी सिद्धियाँ भरी हुई है। (१) **कुटुम्बिनीम्**—कुटुम्बमस्ति अस्या इति कुटुम्बिनी ताम्। कुटुम्ब+इनि+ङीप्। स्त्री को। (२) **गुणवति**—गुण+मतुप्+ङीप्—गुणवती तत्सम्बोधने। गुणो से युक्त। स्त्री के छ गुण सुभाषित मे इस प्रकार गिनाये हैं—कार्येषु मत्री, वचनेषु दासी, भोज्येषु माता, शयनेषु रभा। धर्मानुकूला क्षमया धरित्री भार्या च षड् गुण्यवतीह दुर्लभा। राजनीति के भी इसी प्रकार छ गुण हैं—सधि, विग्रह, आसन, यान, द्वैध और आश्रय। यान-चढाई। आसन—अच्छा मौका पाने या निर्बलता को दूर करने के लिए रुकना। द्वैध-मुख्य उद्देश्य को गुप्त रखकर दूसरा प्रकट करना। आश्रय-प्रबल की सहायता लेना। ये छ गुण राजनीति के है। शरद् मे जल प्रसाद रूपी गुण है। (३) **उपायनिलये**—उप+इ वा अय्+घञ्=उपाया। उपाया निलीयन्ते अस्याम् इति उपाय-नि-ली+अच् अधिकरणे स्त्रियाम्+टाप्=उपायनिलया, तत्सम्बोधने हे उपायनिलये-उपायो की आश्रय

कार्यों के साधन को जानने वाली। नीति विद्या के पक्ष मे चार उपाय हैं सामन्, दान, दण्ड, भेद। शरद् ऋतु मे जयेच्छा का उत्पन्न होना। (४) **स्थितिहेतो**—ससार यात्रा के लिए त्रिवर्ग को साधने वाली। अर्थात् सासारिक व्यापार अर्थ, धर्म, और काम को साधने वाली राजनीति। त्रिवर्ग क्षय, स्थान और वृद्धि को कहते हैं। शरद् ऋतु विजय का अवसर देकर अर्थ तथा उसे पूरा कर धर्म और काम को साधती है। (५) **कार्याचार्ये**—कर्त्तव्यो का उपदेश करने वाली। शरद् पक्ष मे युद्धयात्रादि कार्यों की प्रवर्त्तिका। (६) **मद्भवननीतिविद्ये**—अस्मद्भवनस्य रङ्गमन्दिरस्य या नीतिविद्या अभिनयादिकला तत्स्वरूपभूते। रङ्ग मन्दिर की (हमारे घर की) नीतिविद्या स्वरूप। (७) **द्रुतम्**—जल्दी। (८) **उपेहि**—उप+आ+इण् (गतौ)+लोट् (आज्ञा)। आओ। इस प्रकार भार्या, नीतिविद्या, तथा शरद् तीन पक्षो मे इस श्लोक का अर्थ घटाया गया है। पहले मे सूत्रधार अपनी स्त्री को प्रशसापूर्वक बुलाता है। दूसरे से राक्षस को पकडने की नीतिविद्या का आमत्रण किया जाता है और तीसरे से तृतीय अङ्क मे उल्लिखित शरद् का आगम दिखाया जाता है। यहाँ आर्या छन्द है और अर्थालकार है। छन्द का लक्षण—'यस्या पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या'।

(प्रविश्य)

नटी—अज्ज, इअम्हि। अण्णाणिओएण मं अज्जो अणुगेह्णदु। (आर्य, इयमस्मि। आज्ञानियोगेन मामार्योऽनुगृह्णातु।)

सूत्रधारः—आर्ये, तिष्ठतु तावदाज्ञानियोगः। कथय किमद्य भवत्या तत्रभवतां ब्राह्मणानामुपनिमन्त्रणेन कुटुम्बकमनुगृहीतमभिमता वा भवनमतिथयः सम्प्राप्ता यत एष पाकविशेषारम्भः।

नटी—अज्ज, आमन्तिद मए भअवन्तो बह्मणा। (आर्य, आमन्त्रिता मया भगवन्तो ब्राह्मणाः।)

सूत्रधारः—कथय कस्मिन्निमित्ते।

नटी—उवरज्जदि किल भअवं चन्दो त्ति। (उपरज्यते किल भगवान् चन्द्र इति।)

सूत्रधारः—आर्ये, क एवमाह।

नटी—एवं खु णअरवासि जणो मन्तेदि। (एवं खलु नगरवासी जनो मन्त्रयते।)

हिन्दी अनुवाद (प्रवेश कर)—नटी—आर्य, यह मै हूँ। आज्ञा देकर आर्य मुझे अनुगृहीत करें।

सूत्रधार—आर्ये, आज्ञा अभी रहने दो। पहले बताओ तो ब्राह्मणो को न्यौता देकर तुमने आज कुटुम्ब के लोगो पर क्यो अनुग्रह किया है या यह तो नहीं है कि अतिथि लोग घर में पधारे हो जिससे यह नाना प्रकार के भोजन बनाये जा रहे हैं।

नटी—आर्य, आज मैंने ब्राह्मणो को न्यौता दिया है।

सूत्रधार—क्यो? बात क्या है?

नटी—सुना है, चन्द्रग्रहण लगने वाला है।

सूत्रधार—यह तुमसे किसने कहा?

नटी—नगर के सभी निवासी ऐसा कह रहे हैं।

(Entering) *Nati*—Arya, here I am Let you favour me by giving command for work

Stage Manager—Let command for work be postponed Tell me why you have shown favour to the house-hold by inviting worthy Brahmans, or is it that respectable guests have come and therefore this special preparation for cooking is going on

Nati—Noble Sir, I have invited Brahmans to-day

Stage Manager—Tell me what for?

Nati—I have heard that the lunar eclipse is to take place

Stage Manager—Dear, who has told you this?

Nati—All the people, living in the city, say so

सस्कृत व्याख्या—प्रविश्य रङ्गमञ्चमागत्य नटी सूत्रधारगृहिणी प्राह आर्य इयमस्मि एषा अहम् आगता आर्ये मान्यो भवान् माम् आज्ञानियोगेन—आज्ञा दत्त्वा अनुगृह्णातु ममोपरि अनुग्रह करोतु। सूत्रधार प्राह आज्ञानियोग तावत् तत्काल तिष्ठतु आस्ता तत्कथा यातु इत्यर्थं। कथय अद्य भवत्या तत्रभवता माननीयाना ब्राह्मणानाम् निमत्रणेन निमत्रणदानेन कुटुम्बकम् पोष्यवर्ग अनुगृहीत किम् अथवा अभिमता आदरयोग्या अतिथय भवन गृह प्राप्ता समागता किम् यत यस्मात्कारणात् एष पाकविशेषारम्भ विशिष्टभोजनस्य रचना दृश्यते।।

एना रचना दृष्ट्वा मन्ये ब्राह्मणा निमन्त्रिता. अतिथयो वा प्राप्ता कथय कतमदेतयो । उपरज्यते राहुग्रस्तो भविष्यति ।

टिप्पणी

(१) **आर्य**—ऋ+ण्यत् कर्मणि=आर्य । स्त्री अपने पति को आर्य कहती है। पति अपनी पत्नी को आर्या कहता है। यही प्राचीन भारतीय पद्धति रही है। नाटक के नट एव नटी भी परस्पर आर्या तथा आर्य कहकर ही बात करते हैं। यह आदरसूचक सम्बोधन है। (२) **आज्ञानियोग**—आज्ञाया नियोग तृ० तत्पु० आज्ञा द्वारा काम मे लगाना। नि+युज्+णिच्+घञ् (भावे)। (३) **तत्रभवताम्**—उन (माननीय) लोगो का। आदरसूचक शब्द है। तत्रभवान्। तभवन्तम्—तत्रभवन्त। (४) **कुटुम्बकम्**—पोष्यवर्ग। कुटुम्बाना समूह इति कुटुम्बकम्। (५) **पाकविशेषारम्भ**—पाकस्य विशेष पाकविशेष तस्य आरम्भ पाकविशेषारम्भ—विशेष भोजन की तैयारी। (६) **उपरज्यते**—ग्रहणयुक्त हो रहा है, उपराग—ग्रहण। उप+रञ्ज्+घञ्। "उपरागस्तु पुसि स्यात् राहुग्रासेऽर्कचन्द्रयो" इति विश्व ।

सूत्रधारः—आर्ये ! कृतश्रमोऽस्मि चतुःषष्ट्यङ्गे ज्योतिःशास्त्रे। तत् प्रवर्त्यतां भगवतो ब्राह्मणानुद्दिश्य पाकः। चन्द्रोपरागं प्रति तु केनापि विप्रलब्धासि । पश्य—

हिन्दी अनुवाद—सूत्रधार—आर्ये, मैंने चौसठों अङ्ग समेत ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन किया है। तुम ब्राह्मणो के निमित्त जो भोजन की तैयारी कर रही हो उसे करो। (इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं) परन्तु चन्द्रग्रहण की बात कह कर किसी न तुम्हें धोखा दिया है। देखो—

Stage Manager—Noble lady, I have studied all the sixty-four branches of astronomy Let the food be cooked for the Brahmans, but as regards the eclipse of the moon, you have been misled by some one For—

क्रूरग्रहः स केतुश्चन्द्रमसम्पूर्णमण्डलमिदानीम् ।
अभिभवितुमिच्छति बलात्—(इत्यर्द्धोक्ते)
आः, क एष मयि स्थिते—

(नेपथ्ये)

सूत्रधारः—रक्षत्येनं तु बुधयोगः ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—क्रूरग्रह केतु चन्द्रमा के अपूर्ण मण्डल को बलात् ग्रास करना चाहता है (इतनी आधी बात कहते ही) । आ मेरे रहते यह कौन है । (नेपथ्य में)

सूत्रधार—बुधयोग उसकी रक्षा कर रहा है ।

That wicked planet Ketu is now trying forcibly to overcome the moon the orb of which is not yet full (When half uttered) Ah, who is that while I am alive ? (in the dressing room) *Sutra*—But conjunction with Mercury (बुध) saves him

संस्कृत व्याख्या—आर्ये माननीये चतु षष्ट्यङ्गे चतु षष्टि अङ्गानि यस्य तादृशे कठिने ज्योति शास्त्रे कृतश्रम अस्मि कृताभ्यास अस्मि मया ज्योति - शास्त्र सम्यक् पठितमिति भाव अत कथयामि यत् चन्द्रोपराग प्रति चन्द्रग्रहण-विषये केनापि विप्रलब्धा प्रतारिता असि चन्द्रग्रहणमद्य नैव भविष्यति । किन्तु भगवतो ब्राह्मणान् उद्दिश्य पाक प्रवर्त्त्यताम् पाकनिर्माण कुरु ब्राह्मणान् भोजय । ब्राह्मणभोजन मया न निषिध्यते इति भाव ।

अन्वय—स क्रूरग्रह इदानीम् असम्पूर्णमण्डलम् चन्द्रम् बलात् अभिभवितुम् इच्छति, बुधयोग तु एनम् रक्षति ।

संस्कृत व्याख्या—स क्रूरग्रह असौ प्रसिद्ध दुष्टग्रह केतु अङ्गाङ्गिभावाल्ल-क्षणया राहुरित्यर्थं इदानीमद्य असम्पूर्णमण्डलम् असमग्रकलम् चन्द्रम् बलात् हठात् अभिभवितुम् ग्रसितुमिच्छति यतते न तु अभिभवति हि अद्य पौर्णमासी न चन्द्र अपूर्णं चन्द्रग्रहण तु पूर्णिमायामेव भवति । किन्तु बुधयोग बुधग्रहस्य सम्बन्ध एन चन्द्रमस सम्भाव्यमानोपराग रक्षति ग्रासान्मोचयति । पक्षान्तरे क्रूरग्रह चन्द्र-गुप्तम् अभिभवितुम् दुराग्रह मानस यस्य स राक्षस केतुना मलयकेतुना सह सधाय इदानीमस्मिन्नवसरेऽसम्पूर्णमण्डलम् अवशीकृतशेषराजवर्ग चन्द्र चन्द्र-गुप्तम् पराभवितुमिच्छति (एतमर्थमवलम्ब्य) कश्चित् नेपथ्ये अर्धोक्ते एव सूत्र-धारकथने सकोपमाह "आ क एष मयि स्थिते मामनादृत्य चन्द्रगुप्तम् अभि-भवितुमिच्छति" तत सूत्रधार समापयति । बुधयोग नयविद्याविशारदस्य कौटिल्यस्य राजराज्ययो कण्टकशोधनाद्युपायवर्ग एन चन्द्रगुप्त रक्षति त्रायते अर्थात् पराभवान्निस्तारयति । द्वितीयेन अर्थेन कथावस्तु उपक्षिप्त भवति ।

टिप्पणी

चन्द्रग्रहण केवल पूर्णिमा को होता है जब चन्द्रमण्डल पूरा रहता है । अपूर्ण

मण्डल होने के कारण पूर्णमासी को छोडकर अन्य तिथियो मे चन्द्रग्रहण नही होता। चन्द्रमा का ग्रहण करने वाला राहु है केतु नही। जिस पूर्णिमा को बुधयोग रहता है उसमे चन्द्रग्रहण नही हो सकता। ऐसी असभाव्य बाते लिख कर कवि यह कहना चाहता है कि केतु जबर्दस्ती असभव को सभव करना चाहता है। इस श्लोक मे श्लेष अलकार है। कवि केतु, असम्पूर्ण चन्द्रमण्डल और बुधयोग शब्दो से नाटक की ओर सकेत करता है। केतु से मलयकेतु, बुधयोग से नीतिविशारद, कौटिल्य और अपूर्णचन्द्रमण्डल से चन्द्रगुप्त जो अभी पूर्ण रूप से राज्य पर अधिकार नही कर पाया है, इगित है। यह अर्थ समझकर "कि राक्षस मत्री मलयकेतु से सधि करके चन्द्रगुप्त को दबाना चाहता है" चाणक्य नेपथ्य से ही बोल उठता है "आ मेरे रहते चन्द्र (गुप्त) को कौन दबा सकता है। इस श्लोक मे श्लेष अलकार है और आर्या छन्द है। (१) **चतु षष्टिअङ्गे**—चतु षष्टि अङ्गानि यस्य तत् तस्मिन् (ब० व्री०) चौसठ अङ्गवाले। ज्योतिष शास्त्र के मुख्य तीन भेद है—गणित, फलित और होरा। इसके २४ अङ्ग और ४० उपाङ्ग है। परन्तु यहाँ पर अङ्गो और उपाङ्गो के भेद पर ध्यान नही दिया गया है। (२) **प्रवर्त्त्यताम्**—आयोजन करो। प्र+वृत्+णिच्+लोट्—ताम् कर्मणि कामचारानुज्ञायाम्। (३) **विप्रलब्धा**—प्रतारिता, धोखा दी गई। वि+प्र+लभ्+क्त+टाप्। (४) **क्रूरग्रह**—गृह्णाति रवितेजासि इति ग्रह। ग्रह+अच् कर्त्तरि। क्रूरश्चासौ ग्रहश्चेति क्रूरग्रह पापग्रह। दुष्टग्रह। पक्षान्तर मे इसका अर्थ होगा स राक्षस क्रूरग्रह क्रूर घोर ग्रह आग्रह चन्द्रगुप्तमभिभवितुमाग्रह यस्य स क्रूरग्रह—दुराग्रही। (५) **सकेतु**—वही प्रसिद्ध केतु। जब समास कर देगे तो "सकेतु केतुना सहित सकेतु अर्थात् मलयकेतु के साथ (सधि करके) राक्षस। पुराणो मे प्रसिद्ध है कि समुद्र-मथन के बाद अमृत बाँटे जाते समय विष्णु ने राहु को काट डाला क्योकि यह रूप बदल कर देवताओ के बीच मे बैठकर अमृत पी रहा था। पर सूर्य और चन्द्रमा ने यह भेद बता दिया और विष्णु ने उसे अपने चक्र सुदर्शन से काट दिया। पर अमृत पीने के कारण वह मरा नही। उसके दो टुकडे हो गए और शिर राहु कहलाने लगा तथा धड केतु। यही कारण है कि वह अपना बदला लेने के वास्ते समय-समय पर दोनो को ग्रसता है। इसी को ग्रहण कहते है। सूर्यग्रहण अमावस्या को तथा चन्द्रग्रहण पूर्णिमा को होता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस मे लिखा है—

"अजहुँ देत दुख रवि शशिहिं शिर अवशेषित राहु। टेढ जानि शका सब काहू वक्र चन्द्रमहि ग्रसै न राहू।" (६) **चन्द्रम् असम्पूर्णमण्डलम्**—चन्द्रमा पक्ष मे इसका अर्थ होगा जो पूर्ण मण्डल वाला नही है। अपूर्णमण्डल चाँद में ग्रहण नही लगता जैसा कि ऊपर की चौपाई भी यही बतला रही है। वक्र चन्द्रमा मे ग्रहण नही लगता। यह जबर्दस्ती कर रहा है। चन्द्रगुप्त पक्ष मे अर्थ होगा "जो पूर्णरूपेण राज्य पर प्रतिष्ठित नही है।" स्वामी, अमात्य, सुहृद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग और दल—ये सात राज्याग या प्रकृतिमण्डल कहलाते है। (७) **बुधयोग**—बुध के साथ एक राशि पर स्थित होना। बुधयोग के समय चन्द्रमण्डल अपूर्ण रहता है अत उस समय ग्रहण असभव है। पक्षान्तर मे अर्थ होगा बुध नीतिशास्त्र-विशारद चाणक्य का सयोग। इस श्लोक मे श्लेष अलकार तथा आर्या छन्द है।

नटी—अज्ज! को उण एसो धरणीगोअरो भविअ चन्दं ग्गहाभिजोआदो रक्खिदुं इच्छदि। (आर्य! कः पुनरेष धरणीगोचरो भूत्वा चन्द्रं ग्रहाभियोगाद्रक्षितुमिच्छति।)

सूत्रधारः—आर्ये! यत्सत्यं मयापि नोपलक्षितः। भवतु। भूयोऽभियुक्तः स्वरव्यक्तिमुपलप्स्ये। ('क्रूरग्रहः'—इत्यादि पुनस्तदेव पठति।)

(नेपथ्ये)

आः, क एष मयि स्थिते चन्द्रगुप्तमभिभवितुमिच्छति।

सूत्रधारः—(आकर्ण्य) आर्ये! ज्ञातम्। कौटिल्यः।

(नटी भयं नाटयति)

सूत्रधारः—कौटिल्यः कुटिलमतिः स एष येन
क्रोधाग्नौ प्रसभमदाहि नन्दवंशः।
चन्द्रस्य ग्रहणमिति श्रुतेः सनाम्नो
मौर्येन्दोर्द्विषदभियोग इत्यवैति॥७॥

तदित आवां गच्छावः। (इति निष्क्रान्तौ।)

(इति प्रस्तावना।)

हिन्दी अनुवाद—नटी—आर्य, यह कौन है जो पृथिवी पर रहकर चन्द्रमा को ग्रहण से बचाना चाहता है।

सूत्रधार—अरे यह बात तो मेरी भी समझ में न आई। अच्छा, ध्यान से इसकी आवाज सुनूँ (क्रूरग्रह इत्यादि श्लोक का पुन पाठ)

(नेपथ्य में) अरे किसकी शक्ति है जो मेरे रहते चन्द्रग्रहण कर ले।

सूत्रधार—(सुनकर) आर्ये, मालूम हो गया। यह तो कौटिल्य है।

(नटी भयभीत होने का अभिनय करती है)

सूत्रधार—जिन्होने क्रोध की अग्नि में नन्दवश को हठात् जला दिया यही वह कूटनीतिज्ञ कौटिल्य है और अभी मेरे चन्द्रग्रहण की बात सुनते ही समान नाम वाले चन्द्रगुप्त पर शत्रु का आक्रमण हो रहा है—ऐसा समझ रहा है। इसलिए हम दोनो यहाँ से चल दें। (दोनो चले जाते है) [प्रस्तावना समाप्त]

Nati—Arya, who is that person, who, having the earth for his residence, dares to protect the moon from being eclipsed

Stage Manager—Noble lady, really I too have not been able to notice him However, I will try again, and shall know him by the sound of his voice (Repeats the verse in the dressing room) Ha ! who is it that dares to overcome Chandragupta while I am alive

Stage Manager—(Hearing) I have known Kautilya (when half spoken) (Nati acts to be frightened)

Stage Manager—It is Kautilya, insincere at heart, who consumed the Nanda family in the fire of his anger and who, on hearing of the eclipse of the moon, understands that it is an attack on Chandragupta Maurya, who has a similar name

So let us go away from here (They depart) [End of the prelude]

संस्कृत व्याख्या—धरणीगोचरो भूत्वा धरणी पृथ्वी गोचर देशो यस्य स अर्थात् भूलोकवासी एष क चन्द्र ग्रहाभियोगात् ग्रहस्य अभियोगात् ग्रासात् रक्षितुम् त्रातुम् इच्छति वाञ्छति। सूत्रधार कथयति आर्ये यत्सत्यम् मयापि न उपलक्षित न निरूपित एष क। भवतु भूय भूय पुन अभियुक्त सावधानो भूत्वा स्वरव्यक्तिम् स्वरस्य कण्ठध्वने व्यक्तिम् निर्णयम् उपलप्स्ये प्राप्स्यामि अर्थात् पुन श्लोक पठिष्यामि सावधानो भूत्वा, तस्य अलक्षितस्य पुरुषस्य वचन श्रुत्वा तस्य कण्ठध्वनिना ज्ञास्यामि अय क क्रूरग्रह इत्यादि पुन भूय पठति। तच्छ्रुत्वा स नेपथ्यस्थित पुरुष पुन क्रोधयुक्त सन् आह—आ, मयि स्थिते क एष चन्द्रगुप्तम् अभिभवितुम् आक्रान्तुमिच्छति। सूत्रधार आकर्ण्य श्रुत्वा कथयति

यत् मया ज्ञात स्वरध्वनिना अय कौटिल्य ज्ञायते। अर्घोक्ते एव असमाप्ते एव वचसि नटी भय नाटयति।

अन्वय—येन क्रोधाग्नौ नन्दवश प्रसभमदाहि स एव कुटिलमति कौटिल्य चन्द्रस्य ग्रहणम् इति श्रुते सनाम्न मौर्येन्दो द्विषदभियोग इति अवैति।

सस्कृत व्याख्या—येन पुरुषेण क्रोधाग्नौ कोपवह्नौ नन्दवश प्रसभ शीघ्रम् अदाहि दग्ध स एष नेपथ्यगत जन कुटिलमति दुष्टबुद्धि कौटिल्य चाणक्य चन्द्रस्य इन्दो ग्रहणम् इति श्रुते चन्द्रग्रहण श्रुत्वा सनाम्न समानाख्यस्य मौर्येन्दो इन्दुसदृशस्य चन्द्रगुप्तस्य द्विषदभियोग द्विषता राक्षसेन अभियोगोऽभिभवम् आस्कन्द वेति सभाव्य कोपादेव भाषते।

टिप्पणी

(१) **धरणीगोचर**—धरणी पृथ्वी गोचर देशो यस्य स—धरणी पर रहने वाला, जमीन पर बसने वाला। गाव चरन्ति अस्मिन् इति गो+चर्+घ अधिकरणे (सज्ञायाम्)। (२) **अभियुक्त**—व्यापृत—सावधान। अभि+युज् +क्त। (३) **स्वरव्यक्तिम्**—वि+अञ्ज्+क्तिन् भावे=व्यक्ति, स्वरस्य व्यक्ति ताम्—स्वर का मालूम करना, आवाज की पहचान। (४) **कुटिलमति**—कुटिला मति यस्य स—कुटिल नीति वाला। चाणक्य वस्तुत कुटिलमति है। नन्दवश का विनाश इसका उदाहरण है। यह कुटिलता उस समय पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है जब पर्वतक का विनाश होता है। पर्वतक ने चन्द्रगुप्त को राज्य पर प्रतिष्ठित करने के लिए इसकी सहायता की थी। (५) **प्रसभम्**—शीघ्रता से। (६) **नन्दवश अदाहि**—नन्दवश भस्म कर दिया गया। चाणक्य ने नन्द के सभी पुत्रो समेत उसका वध कर दिया था। देखिये भूमिका। अदाहि—जला दिया गया। दह्+लुङ कर्मवाच्य। (७) **क्रोधाग्नौ**—क्रोध रूपी आग मे। क्रोध एव अग्निरिति तस्मिन्। (८) **सनाम्न**—समान नाम यस्य सनामा तस्य सनाम्न—समान नाम वाले का। (९) **मौर्येन्दो**—चन्द्रगुप्त मौर्य का। पुराण की कथा के अनुसार नन्द की मुरा नाम की शूद्रा पत्नी थी। चन्द्रगुप्त उसी से पैदा हुआ था। इसी से वह मौर्य कहलाया। मुराया अपत्य पुमान् इति मुरा+ण्य। (कुर्वादिभ्य ण्य)। मौर्य इन्दुरिव इति मौर्येन्दु तस्य मौर्येन्दो। (१०) **द्विषदभियोग**—द्विषदा अभियोग—

शत्रु द्वारा आक्रमण। (११) **अवैति**—जानता है, समझता है। अव+इ+लट्। इस श्लोक मे प्रहर्षिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयति प्रहर्षिणीयम्'। (१२) प्रस्तावना की परिभाषा भूमिका मे देखिये। नाटक के पूर्व नटी और नट जो प्रस्तावविषयक कथोपकथन करते है उसी को प्रस्तावना कहते है। यह पाँच प्रकार की होती है—उद्घात्यक, कथोद्घात, प्रयोगातिशय, प्रवर्तक और अवगलित। जहाँ पर सूत्रधार की बात को लेकर पात्र प्रवेश करता है वहाँ कथोद्घात नाम की प्रस्तावना होती है—"स्वेति वृत्तसम वाक्यमथवा यत्र सूत्रिण। गृहीत्वा प्रविशेत् पात्रम् कथोद्घातो द्विधैव स" दशरूपक।

(ततः प्रविशति मुक्तां शिखां परामृशंश्चाणक्यः।)

चाणक्यः—कथय क एष मयि स्थिते चन्द्रगुप्तमभिभवितुमिच्छति।

पश्य—आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभां
सन्ध्यारुणामिव कलां शशलाञ्छनस्य।
जृम्भाविदारितमुखस्य मुखात्स्फुरन्तीं
को हर्तुमिच्छति हरेः परिभूय दंष्ट्राम् ॥८॥

अन्वय—क जृम्भाविदारितमुखस्य हरे मुखात् आस्वादितद्विरदशोणित-शोणशोभा शशलाञ्छनस्य सध्यारुणा कलाम् इव स्फुरन्ती दष्ट्रा परिभूय हर्तुम् इच्छति।

हिन्दी अनुवाद—(अपनी खुली हुई शिखा को हाथ से फटकारते हुए चाणक्य का प्रवेश।) चाणक्य—अरे यह कौन है जो मेरे रहते चन्द्रगुप्त को ग्रसना चाहता है। कौन है जो जँभाई लेते हुए शेर को दबाकर उसके मुँह से उसकी डाढ़ो को, जो सद्य पिए हुए हाथी के रक्त से लाल हो रही है और जो सध्याकालीन लालिमा से लाल चन्द्रमा की तरह चमक रही है, उखाडना चाहता है।

(Feeling the loose tuft of hair on his crest with his hand, enters Chanakya) Who is it that wants to suppress Chandragupta while I am alive Who ventures to extract forcibly, from the mouth of the yawning lion, the fiery tooth, which is red from the elephant's blood just drunk, and hence shining like the digit of the moon made red at dusk

संस्कृत व्याख्या—जृम्भाविदारितमुखस्य क श्रस्ति स साहसिक य खलु जृम्भया विदारितमुखस्य व्यात्ताननस्य हरे सिंहस्य मुखात् श्राननात् श्रास्वादित-द्विरदशोणितशोणशोभाम् श्रास्वादितम् सपीतम् यत् द्विरदशोणित दन्तावलस्य गजराजस्य सद्योनिपातितस्य रक्त तेन शोणा रक्तवर्णशोभा कान्ति द्युतिर्वा यस्या-स्ताम् श्रतएव शशलाञ्छनस्य चन्द्रस्य सन्ध्यारुणाम् सन्ध्यया श्ररुणाम् रक्ताम् कलाम् इव स्फुरन्तीम् श्रवभासमानाम् दष्ट्राम् तमेव हरिं परिभूय पराजित्य हर्तुमिच्छति समुत्पाटयितुम् इच्छति समीहमान चेष्टते ।

टिप्पणी

(१) **मुक्ताम् शिखाम्**—खुली हुई चोटी को, पहले चन्द्रगुप्त को राज्य दिलाने के लिए चाणक्य ने श्रपनी शिखा खोलकर प्रतिज्ञा की थी। परन्तु श्रभी चन्द्रगुप्त की स्थिति सुदृढ नही हुई थी श्रत चाणक्य ने शिखा नही बाँधी थी। **परामृशन्**—छूते हुए। इससे यह प्रकट होता है कि श्रब वह दूसरी प्रतिज्ञा करने वाला है। जब चाणक्य कोई प्रण करता था तो वह श्रपनी शिखा को खोल देता था। जब सूत्रधार की बात उसने सुनी तो स्वभावत उसका हाथ उसकी खुली हुई शिखा पर पहुँच गया—देखिये "शिखा मोक्तु बद्धामपि भवति कर" ३-२९। यह दृश्य कुसुमपुर मे चाणक्य के घर का है। परा-श्रा-मृश्+लट्+शतृ कर्तरि=परामृशन्। (२) **श्रास्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्**—श्रास्वा-दित यत् द्विरदस्य गजस्य शोणितम् रक्तम् तेन शोणा रक्ता शोभा यस्या तादृशीम्—(मारकर)। सद्य पान किए हुए हाथी के रक्त से लाल शोभा-वाली। यह दष्ट्राम् का विशेषण है। द्वौ रदौ दन्तौ श्रस्य इति द्विरद (ब० स०)। (३) **जृम्भाविदारितमुखस्य**—जृम्भया विदारित मुख यस्य स तस्य—जँभाई लेने के कारण खुला है मुख जिसका। यह हरे का विशेषण है। इससे यह द्योतित हुश्रा कि चाणक्य रूपी सिह नन्दवश रूपी हाथी को मार कर विश्राम कर रहा है। वह मरा नही है। श्रभी वह जँभाई ले रहा है। मुख चन्द्रगुप्त है। (४) **परिभूय**—दबाकर, श्रनादर कर। परि+भू+ल्यप्। इसमे उपमा श्रलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है। छन्द का लक्षण—'ज्ञेय वसन्ततिलक तभजा जगौ ग'। **क एष मयि स्थिते**—प्रस्तावना के श्रन्त मे इस वाक्य से मुख सधि का श्रारम्भ होता है। मुख सधि मे "श्रारम्भ" नामक श्रवस्था श्रौर "बीज" नामक

अर्थप्रकृति का सयोग होता है। राक्षस को वश मे करने की उत्सुकता आरम्भावस्था है। उसे वश मे करना कार्य है। चन्द्रगुप्त को दृढ बनाना कार्य का फल है और चाणक्य की नीति का प्रयोग बीज है।

अपि च

नन्दकुलकालभुजगीं कोपानलबहुलनीलधूमलताम् ।
अद्यापि बध्यमानां वध्यः को नेच्छति शिखां मे ॥९॥

अन्वय—क वध्य नन्दकुलकालभुजगी कोपानलबहुलनीलधूमलता मे शिखाम् अद्यापि बध्यमाना न इच्छति ॥९॥

हिन्दी अनुवाद—मेरी शिखा नन्दकुल की कालसर्पिणी है और क्रोधाग्नि की काली धूम रेखा है। ऐसा कौन मनुष्य है जो अपनी मौत को चाहता हुआ मेरी चोटी को अब भी नहीं बाँधने देना चाहता।

The tuft of hair on my crest is the snake for the Nanda family and (is) the black line of smoke of the fire of my anger, who is that death deserving person who does not like to see my crest being tied even to-day

संस्कृत व्याख्या—क वध्य हन्तु योग्य जन नन्दकुलकालभुजगी नन्दकुलस्य कालभुजगी कालरूपिणी सर्पिणीमिव स्थिता नन्दकृते सक्षोभे यया हि नन्दान्वय एव दष्ट विनाशितश्च ता तथाभूतामथ च कोपानलबहुलनीलधूमलताम् अनल अग्नि इव यो मे कोप क्रोध तस्य बहुलनीलाम् अतिकृष्णाम् धूमलताम् धूमसततिस्तामिव स्फुरन्ती मे मम शिखाम् अद्यापि नन्दान्वयनाशेऽपि बध्यमाना सयम्यमाना नेच्छति। क जन नन्दवशनाशेऽपि माम् क्रोधयुक्त कृत्वा स्ववधमिच्छतीति भाव

टिप्पणी

(१) **वध्य**—वधम् अर्हतीति वध्य। वध+य। वध करने योग्य। (२) **नन्दकुलकालभुजगीम्**—नन्दकुल की कालसर्पिणी के समान। चाणक्य ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक नन्दकुल का नाश न कर लूंगा तब तक शिखा को नही बाँधूंगा यही कारण है कि वह उसे नन्दकुल को डसने वाली कालसर्पिणी बतला रहा है। (३) **कोपानलबहुलनीलधूमलताम्**—कोपानलस्य बहुलनीलधूमलताम्। क्रोधरूप अग्नि की घनीभूत काली धूमरेखा। बहुल—अधिक।

यह शिखाम् का विशेषण है। (४) **अद्यापि**—आज भी। अर्थात् नन्दवश के नाश होने पर भी। (५) **बध्यमानाम्**—बाँधी जाती हुई। ऐसा कौन है जो चाहता है कि मैं आज भी अपनी चोटी न बाँधूं अर्थात् मुझे क्रुद्ध कर दूसरी प्रतिज्ञा करने के लिए बाध्य करता है। बध्+लट्+शानच्+टाप् द्वितीया एकवचन। यहाँ आर्या छन्द है। मालारूपकालङ्कार है।

अपि च—उल्लङ्घयन् मम समुज्ज्वलतः प्रतापं
कोपस्य नंदकुलकाननधूमकेतोः।
सद्यः परात्मपरिमाणविवेकमूढः
कः शालभेन विधिना लभतां विनाशम् ॥१०॥

अन्वय—क परात्मपरिमाणविवेकमूढ मम समुज्ज्वलत नन्दकुलकाननधूमकेतो कोपस्य प्रताप शालभेन विधिना उल्लघयन् सद्य विनाश लभताम्।

हिन्दी अनुवाद—और भी—वह कौन है जो पराए तथा अपने बल को न जानता हुआ नन्दवश की दावाग्नि मेरे देदीप्यमान अग्निरूप क्रोध की भयानक लपटो को लाँघकर कीडे की मौत मरना चाहता है।

Besides, who is that fellow who, being unable to measure the strength of self and of the adversary, wants to die the death of a moth by crossing the flame of my anger, which is like a fire unto the forest like family of Nanda, and which is blazing brighter

सस्कृत व्याख्या—क असौ परात्मपरिमाणविवेकमूढ परस्य आत्मनश्च यत् परिमाण तारतम्य सामर्थ्यमिति यावत् तस्य यो विवेक विमर्श तत्र मूढो मन्दमति शून्यबुद्धिर्वा मम चाणक्यस्य समुज्ज्वलत दीप्यमानस्य नतु प्रशमितस्य नन्दकुलकाननधूमकेतो नन्दकुलमेव कानन तस्य धूमकेतो दावाग्ने भस्मीकृत-नन्दवशस्य कोपस्य क्रोधस्य प्रतापम् प्रभावम् शालभेन विधिना पतङ्ग इव उल्लङ्घयन् अतिक्रमिष्यन् सद्य झटिति विनाश लभता मरण भजताम्।

य चन्द्रगुप्तम् अभिभवितुमिच्छति स मूढ आत्मन परस्य च बल न जानाति। मया नन्दा हता मम कोपानल शमित न अपितु ज्वलन् अस्ति अस्य क्रोधाग्ने शिखा लघयित्वा क शलभायते इति भाव।

टिप्पणी

(१) **परात्मपरिमाणविमूढ**—अपने और शत्रु के बल को न समझ

सकने वाला। परश्च आत्मा च (द्वन्द्वस०), तयो परिमाणम्, तस्य विवेक (षष्ठीतत्०), तस्मिन् मूढ (सुप्सुपा स०)। **समुज्ज्वलत**—जलती हुई, धधकती हुई, यह कोपस्य और धूमकेतो का विशेषण है। धूमकेतो के पक्ष मे इसका अर्थ जलती हुई और कोपस्य के पक्ष मे इसका अर्थ बढता हुआ है। जलती हुई आग और बढता हुआ क्रोध। (२) **नन्दकुलकाननधूमकेतो**—नन्दकुलमेव कानन (मयूरव्यसकादि स०)। तस्य धूमकेतो—नन्दकुलरूपी वन के लिए आग। (३) **शालभेन विधिना**—पतिङ्गे के समान। पतिङ्गा बनकर मेरी क्रोधाग्नि मे जलना चाहता है। यह चाणक्य का भाव है। शलभ+अण् (तस्येद-मित्यण्) तेन शालभेन। (४) **लभताम्**—यहाँ पर 'विधौ लोट्' है न कि आशिषि। विनाश लभताम्—नाश को प्राप्त होवे। इस श्लोक मे परम्परित रूपक अलकार निदर्शना अलकार से ससृष्ट है। यहाँ वसन्ततिलका छद है।

चाणक्यः—शार्ङ्गरव शार्ङ्गरव !

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! आज्ञापयतु ।

चाणक्यः—वत्स ! उपवेष्टुमिच्छामि ।

शिष्यः—उपाध्याय ! नन्वियं सन्निहितवेत्रासनैव द्वार-प्रकोष्ठशाला । तदस्यामुपवेष्टुमर्हत्युपाध्यायः ।

चाणक्यः—वत्स ! कार्याभिनियोग एवास्मान् व्याकुल-यति, न पुनरुपाध्यायसहभूः शिष्यजने दुःशीलता । (नाट्-येनोपविश्यात्मगतम्) कथं प्रकाशतां गतोऽयमर्थः पौरेषु, यथा किल नन्दकुलविनाशजनितरोषो राक्षसः पितृवधामर्षितेन सकलनन्दराज्यपरिपणनप्रोत्साहितेन पर्वतकपुत्रेण मलयकेतुना सह सन्धाय तदुपगृहीतेन च महता म्लेच्छराजबलेन परिवृतो वृषलमभियोक्तुमुद्यत इति (विचिन्त्य) अथवा येन मया नन्दवंशवधं सर्वलोकप्रकाशं प्रतिज्ञाय निस्तीर्णा दुस्तरा प्रतिज्ञा-सरित् सोऽहमिदानीं प्रकाशीभवन्तमप्येनमर्थं न समर्थः किं प्रशमयितुम् ?

उपालम्भनशीलता (व्याकुलयतीति) कार्य्यचिन्ता मा व्याकुल करोति त्वयि दु शीलता न। (नाट्येन उपविश्य आत्मगतम् स्वमनसि) कथम् प्रकाशता गत आश्चयमिदम् यत् अयम् अर्थं वृत्तान्त सर्वे ज्ञात यथा किल नन्दकुलविनाश-जनितरोष नन्दकुलस्य विनाशेन जनित जात रोष क्रोध यस्य स नन्दकुल-विनाशजातक्रोध राक्षस नन्दस्य अमात्य पितृवधामर्षितेन पितु वधेन हेतुना अमर्षितेन जातरोषेण सकलनन्दराज्यपरिपणनप्रोत्साहितेन सकलनन्दराज्यस्य सम्पूर्णनन्दसाम्राज्यस्य परिपणनेन शुल्कत्वेन अवस्थापनेन प्रोत्साहितेन उत्साह प्राप्तवता पर्वतकपुत्रेण पर्वतकतनयेन मलयकेतुना सह सधाय सधि कृत्वा तदुपगृहीतेन च तेन मलयकेतुना उपगृहीतेन सभृतेन महता अधिकेन म्लेच्छबलेन यवनवाहिन्या परिवृत युक्त वृषल चन्द्रगुप्तम् अभियोक्तुम् आक्रमितुम् उद्यत सन्नद्ध। (विचिन्त्य विचार्य) अथवा येन मया चाणक्येन नन्दवशवध नन्दकुल-हत्या सर्वलोकप्रकाश सर्वेषु सम्पूर्णेषु लोकेषु जनेषु यथा स्यात्तथा प्रतिज्ञाय दुस्तरा दुरतिक्रमा प्रतिज्ञासरित् प्रणरूपा नदी निस्तीर्णा अतिक्रान्ता स अहम् इदानीम् एतर्हि प्रकाशीभवन्तमपि प्रचार गच्छन्तमपि एनमर्थं राक्षसाक्रमण-वार्ताम् प्रशमयितु निराकर्त्तु न समर्थ किम् अर्थात् शक्त अस्मि।

टिप्पणी

(१) **उपाध्याय**—उपेत्य अस्मात् अधीयते इति उपाध्याय उप-अधि+इ+घञ् अपादाने सञ्ज्ञायाम्। तस्य सम्बोधने उपाध्याय इति। 'आर्येति ब्राह्मण ब्रूयान्महाराजेति पार्थिवम्। उपाध्यायेति चाचार्यम्'—। नाटयशास्त्र। (२) **सन्निहितवेत्रासना**—बेत का आसन जिसके पास है, अर्थात् जिसमे चटाई बिछी है। यह शाला का विशेषण है। (३) **द्वारप्रकोष्ठशाला**—द्वारस्य प्रकोष्ठे या शाला। कुटी—द्वार के पास की कुटी। प्रकोष्ठ—आँगन। (४) **कार्य्या-भियोग**—कार्य की अधिकता, काम की चिन्ता। अभि+युज्+घञ् भावे अभियोग। (५) **उपाध्यायसहभू**—आचार्य की जन्मजात। उपाध्यायानां सहभू। सह+भू+क्विप्। यह दु शीलता का विशेषण है। इससे सूचित होता है कि उपाध्याय लोग स्वभाव से ही विद्यार्थियो के प्रति कठोर होते है। (६) **अर्थ**—बात। **प्रकाशता गत पौरेषु**—नागरिको मे फैल गई। (७) **नन्दकुलविनाशजनितरोष**—नन्दकुलस्य विनाशेन जनित रोष यस्य स—नन्द कुल के नाश होने से क्रोध पैदा हो गया जिसे वह (८) **पितृवधामर्षितेन**—

पितु वध पितृवध तेन अमर्षित इति पितृवधामर्षित । मर्षण मर्ष मृष्+घञ् भावे। न मर्ष अमर्ष (नञ्तत्०), अमर्ष सञ्जात अस्य इति अमर्ष+इतच्= अमेर्षित अथवा अमर्षेण योजित इति अमर्ष+णिच्+क्त कर्मणि+अमर्षित । पिता के वध से क्रोध उत्पन्न हो गया जिसे। (९) **सकलनन्दराज्यपरिपणन-प्रोत्साहितेन**—समास के लिये व्याख्या देखिए। मलयकेतु को उसकी सेवा के बदले मे नन्द का सम्पूर्ण राज्य दिया जाने का प्रलोभन दिया था। सर्वार्थसिद्धि के मरने के बाद नन्द वश मे कोई नही बचा था जो राजा होता। इसी से मलयकेतु को यह लालच दी गई थी। इसी लालच से उसने एक विशाल सेना तैयार की थी जिसमे कई म्लेच्छ राजा शामिल थे। परि+पण् (व्यवहारे)+ल्युट् भावे= परिपणनम्। (१०) **तदुपगृहीतेन**—तेन उपगृहीतेन, उसके द्वारा एकत्रित की गई। उपगृहीत शब्द से सूचित होता है कि यह स्थायी सेना नही थी बल्कि उसी अवसर के वास्ते एकत्रित की गयी थी। **म्लेच्छबलेन**—म्लेच्छ सेना के द्वारा। म्लेच्छन्ति इति म्लेच्छ+अच् कर्तरि=म्लेच्छा । तेषा बलम्, तेन। प्राचीन काल मे आर्य लोग अपने से भिन्न लोगो को म्लेच्छ कहा करते थे। (११) **सर्व-लोकप्रकाशम्**—सब के सामने। (१२) **दुस्तरा प्रतिज्ञासरित्**—मुश्किल से पार की जाने वाली प्रतिज्ञारूपी नदी। (१३) **प्रकाशीभवन्तम्**—फैलता हुआ (समाचार)।

कुतः। यस्य मम—

श्यामीकृत्याननेन्दूनरियुवतिदिशां सन्ततैः शोकधूमैः
कामं मन्त्रिद्रुमेभ्यो नयपवनहृतं मोहभस्म प्रकीर्य।
दग्ध्वा सम्भ्रान्तपौरद्विजगणरहितान् नन्दवंशप्ररोहान्
दाह्याभावान्न खेदाज्ज्वलन इव वने शाम्यति क्रोधवह्निः॥११॥

अन्वय—(यस्य मम) क्रोधवह्नि अरियुवतिदिशाम् आननेन्दून् सन्ततै शोकधूमै श्यामीकृत्य मन्त्रिद्रुमेभ्य नयपवनहृत मोहभस्म काम प्रकीर्य सम्भ्रान्त-पौरद्विजगणरहितान् नन्दवशप्ररोहान् दग्ध्वा वने ज्वलन इव दाह्याभावात् शाम्यति न खेदात् ॥११॥

हिन्दी अनुवाद—मेरी क्रोधाग्नि दिशा रूपी शत्रुओ की स्त्रियों के मुखचन्द्रों को शोकरूपी धूम अर्थात् कालिख (पति आदि के मारे जाने के कारण) से काला

कर वृक्ष रूपी मत्रियो पर नीति रूपी वायु की सहायता से भस्म अर्थात् राख डालकर (उन्हें मोह में डालकर और उनकी आँखो में धूल झोक कर) नगर-वासियो को पक्षियो के समान बिना जलाए (जो वन में उडकर अपनी रक्षा कर लेते है) और नन्दवंश रूपी बाँस को समूल नष्ट करके इसलिए शान्त हो गई कि जलने वाली कोई वस्तु उसे ईंधन के समान नही मिली न कि उसकी जलाने की शक्ति कम हो गई है।

भाव यह है कि जैसे दावानल वन में चारो दिशाओ को धुयें से मलिन कर देती है, सजीव वृक्षो पर राख फैलाकर और पक्षियो से परित्यक्त बाँसो या सूखे पेडो को जलाकर शान्त हो जाती है उसी प्रकार चाणक्य की क्रोधाग्नि ने शत्रुओ का नाश करके उनकी नारियो का मुख दु ख से मलिन कर दिया, नन्द के मत्रियो को नीति के बल पर किंकर्त्तव्यविमूढ बना दिया, कुछ नागरिको को छोडकर सारे नन्दवश को भस्म कर डाला और अब इतना करके वह क्रोधानल शान्त हो गया है, क्योकि अब कुछ जलाने को बाकी न रहा।

Whence (is this assurance ?) The fire of my anger, like the fire in a forest, after having blackened the moon-like faces of the quarters in the shape of the ladies of my enemies,with the incessant smoke of grief, and having abundantly scattered over the ministers, which are tree-like, the ash of delusion spread here and there by my wind-like diplomacy and after having destroyed the bamboo-like Nanda family and its sprouts which were abandoned by the bird-like frightened citizens, is now extinguished (or inactive) not that it has lost the power to consume but because there is nothing left to burn

सस्कृत व्याख्या—मम क्रोधवह्नि क्रोधाग्नि सन्ततै समन्तात् सर्वं व्याप्नुवानै शोकधूमै अरियुवतिदिशाम् अरीणा रिपूणा नन्दाना नन्दवशीयानाम् या युवतय नार्यं ता एव दिश दिग्विभागा तासाम् आननेन्दून् मुखचन्द्रान् श्यामीकृत्य मलिनीकृत्य सततरुदितेन रिपुवनिताना मुखानि मलिनयित्वा इत्यर्थं मत्रिद्रुमेभ्य मत्रिण अमात्या एव द्रुमा वृक्षास्तेभ्य नयपवनहृत नय अन्योन्यसचरिष्णु षाड्गुण्यप्रयोगरूपो यो राजनयस्स एव पवनो वायुस्तेन हृतम् इतस्तत उह्यमान मोहभस्म अज्ञानरूप भस्म काम यथेच्छ प्रकीर्य विक्षिप्य स्वनीतिवैभवेन नन्दामात्यान् मोहयित्वा इत्यर्थं सभ्रान्तपौरद्विजगण-रहितान् सभ्रान्ता व्याकुलीभूता ये पौरा पाटलिपुत्रीया पौरवर्गा त एव द्विजगणा पक्षिण तै रहितान् सुतरा परित्यक्तान् नन्दवशप्ररोहान् नन्दवश एव वश वेणु तस्य प्ररोहा एव अङ्कुरा तान् दग्ध्वा वने ज्वलन् इव दावाग्निरिव

सम्प्रति यत् शाम्यति निर्वाति तन्न खेदात् दाहशक्तेरभावात् न अपि तु दाह्याभावात् अपरस्य दाह्यवस्तुन अप्राप्ते विरमति।

टिप्पणी

(१) **अरियुवतिदिशाम्**—शत्रुओ की स्त्रियो के जो दिशा के समान है। (२) **श्यामीकृत्य**—काला करके। शोकरूपी धुये से मलिन करके। श्याम+च्वि, ईत्व+कृ+क्त्वा—ल्यप्। (३) **सन्ततं**—निरन्तर। सम्+तत। सन्तत वा सतत 'समो वा ततहितयो' इति कारिकया विकल्पेन मलोपात्। (४) **मन्त्रिद्रुमेभ्य**—मन्त्रियो से। यहाँ अपादाने पञ्चमी है। मन्त्रियो को वृक्ष इसलिए कहा है कि वे मारे नही गए थे बल्कि बच गए थे। जगल मे जो पेड जलने से बच जाते है उनके ऊपर हवा से भस्म (राख) पडती रहती है उसी प्रकार मन्त्रियों को नीतिरूपी हवा से मोहरूपी भस्म के द्वारा किकर्त्तव्यविमूढ बना दिया गया था। 'अत्र क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि सम्प्रदानम्' इति वार्तिकेन सम्प्रदानसज्ञा—चतुर्थी। (५) **सम्भ्रान्तपौरद्विजगणरहितान्**—समास व्याख्या मे देखिए। डरे हुए पुरवासी रूपी पक्षियो से रहित। भाव यह है कि जगल मे आग लगने से जो पक्षी भाग जाते है वे बच जाते है उसी प्रकार डरकर जो लोग भाग गए थे क्रोधानल मे भस्म होने से बच गए। द्विज—पक्षी। यहाँ रूपक अलङ्कार है और स्रग्धरा छन्द है।

अपि च—

शोचन्तोऽवनतैर्नराधिपभयाद् धिक्शब्दगर्भैर्मुखै-
र्मामग्रासनतोऽवकृष्टमवशं दृष्टवन्तःपुरा।
ते पश्यन्ति तथैव सम्प्रति जना नन्दं मया सान्वयं
सिंहेनेव गजेन्द्रमद्रिशिखरात् सिंहासनात् पातितम् ॥१२॥

अन्वय—पुरा ये नराधिपभयात् अवनतै धिक्शब्दगर्भै मुखै शोचन्त अवशं माम् अग्रासनत अवकृष्ट दृष्टवन्त, ते जना सम्प्रति सिहेन गजेन्द्रम् अद्रिशिखरात् इव मया सान्वय नन्द सिंहासनात् तथैव पातित पश्यन्ति ॥१२॥

हिन्दी अनुवाद—और भी—पहले जिन लोगो ने राजा (नन्द) के डर से सिर झुका कर परन्तु मुँह से बाहर निकलने वाले धिक्कार के शब्दो को मुँह ही

में छिपाकर मुझे विवश किए जाकर प्रधान आसन से हटाए जाते हुए दु:ख के साथ देखा था वे इस समय देख रहे हैं कि मैंने कुल समेत नन्द को राजसिंहासन से उसी प्रकार गिराया जिस प्रकार पहाड़ की चोटी पर से सिंह द्वारा गजराज (बड़ा हाथी) नीचे पटक दिया जाता है।

भावार्थ यह है कि नन्द ने मुझे जब प्रधान आसन से हटाया तो लोगो को इस पर दु:ख हुआ और वे मेरे इस अपमान को सहन नही कर सके पर राजा के डर से वे चुप रह कर अपना मुह नीचे कर लिया और धिक्कार का शब्द उनके मुँह से बाहर न निकल कर भीतर ही रह गया। साथ ही चाणक्य के कहने का भाव यह भी है कि यदि कोई हमसे ऐसा बर्ताव फिर करेगा तो उसकी भी यही दशा होगी जो नन्द की हुई है।

Further more—Those people who, with grief, saw me helpless, being dragged down from the prominent seat, but cast down their faces through the fear of the king, and the cry of "Fie" remaining within their mouths, now see Nanda, with his whole family, cast down by me from the (throne) like a big elephant being dragged down by a lion from the mountain-top

संस्कृत व्याख्या—पुरा पूर्वस्मिन् काले ये जना नराधिपभयात् राजभयात् अवनतै नम्रीकृतै धिक्शब्दगर्भै नन्द धिगितिशब्द उत्क्रोशध्वनि गर्भे येषा तैस्तथाभूतैर्मुखै शोचन्त मामनुकम्पमाना माम् अवश कृपणम् अग्रासनत मुख्यासनात् अर्थात् यज्ञीयासनात् अवकृष्टम् सनिकारम् उत्थापितम् दृष्टवन्त तथा दृष्ट्वा नतमुखेन धिगिति राजान गर्हयन्त तस्थु सम्प्रति अधुना ते जना सिंहेन मृगराजेन गजेन्द्रम् करिराजम् अद्रिशिखरात् पर्वतशिखरात् मया सान्वय सपरिवार नन्द सिंहासनात् राजासनात् पातितम् तथैव अवशम् निष्प्रतीकार च पश्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **नराधिपभयात्**—नराधिपात् भयमिति नराधिपभयम् तस्मात् नराधिपभयात् हेतौ पञ्चमी है। राजा (नन्द) के डर से। (२) **धिक्शब्दगर्भै मुखै**—धिक् इति शब्द (कर्मधारय) स गर्भे येषा (बहुव्रीहि स०) तानि तै धिक्शब्दगर्भै मुखै—धिक्कार का शब्द जिन मुखो मे छिपा था। लोग नन्द के कार्य पर उसे धिक्कारना चाहते थे पर डर के मारे मुँह से धिक् शब्द निकाल न सके। वह उनके मुँह मे ही रह गया। रामचरितमानस मे गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसी

प्रकार का भाव सीता के लिए बालकाण्ड मे व्यक्त किया है—'लोचन जल रह लोचन कोना। जैसे परम कृपण कर सोना।' (३) **अवकृष्टम्**—घसीटा गया। अव+कृष्+क्त। (४) **सान्वय**—अन्वयेन सहित सान्वय, 'तेन सह'—इति बहुव्रीहि स०, 'वोपसर्जनस्य' इत्यनेन सहस्य सभाव, तम्। सन्तान समेत। यहाँ पूर्णोपमा अलङ्कार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है। छन्द का लक्षण—'सूर्याश्वैर्यदि म सजौ सततगा शार्दूलविक्रीडितम्'।

सोऽहमिदानीमवसितप्रतिज्ञाभरोऽपि वृषलापेक्षया शस्त्रं धारयामि। येन मया— शत्या

समुत्खाता नन्दा नव हृदयरोगा इव भुवः
कृता मौर्ये लक्ष्मीः सरसि नलिनीव स्थिरपदा।
द्वयोः सारं तुल्यं द्वितयमभियुक्तेन मनसा
फलं कोपप्रीत्योर्द्विषति च विभक्तं सुहृदि च ॥१३॥

अन्वय—भुव हृदयरोगा इव नव नन्दा समुत्खाता सरसि नलिनी इव मौर्ये लक्ष्मी स्थिरपदा कृता कोपप्रीत्यो द्वयो सारम् द्वितयम् फलम् अभियुक्तेन मनसा द्विषति च सुहृदि च तुल्य विभक्तम्।

हिन्दी अनुवाद—वह मै पूर्णप्रतिज्ञ हो चुकने पर भी वृषल (चन्द्रगुप्त) के लिए शस्त्र ग्रहण करूँगा (कर रहा हूँ) जिसमें मैंने—

पृथ्वी के हृदय के रोग के समान नव नन्दो को उखाड डाला, सरोवर में कमलिनी के समान चन्द्रगुप्त में राज्यलक्ष्मी को अचल कर डाला है, क्यो न हो अपने शत्रु को अपने क्रोध (निग्रह) और मित्र को प्रेम (अनुग्रह) दोनो को दो प्रकार का न्यायोचित फल बराबर पूरे मनोयोग से बाँट दिया है।

That I, inspite of fulfilling my vow, still handle the weapon out of regard for Vrishala, I by whom, the nine Nandas like the heart-ache of the earth have been uprooted, and Lakshmi has been made to take firm root in Chandragupta, like the lotus in a lake and the proper twofold products of the two, pleasure and anger, have been equally divided, with an attentive mind, between friend and enemy, (That I will now handle the sword, etc)

संस्कृत व्याख्या—येन मया चाणक्येन भुव पृथिव्या हृदयरोगा इव हृदय-पीडा इव नवनन्दा समुत्खाता समुन्मूलिता सरसि सरोवरे नलिनी कमलिनी

इव मौर्य्ये चन्द्रगुप्ते लक्ष्मी राज्यश्री स्थिरपदा कृता निश्चलस्थिति कृता। कोपप्रीत्यो क्रोधप्रसादयो द्वयो समम् सारम् न्याय्य फल निग्रहानुग्रहरूपम् द्वितयम् द्विविधम् फलम् अभियुक्तेन मनसा निविष्टेन चेतसा निपुण निरूप्य इत्यर्थं द्विषति शत्रौ नन्दे च सुहृदि मित्रे चन्द्रगुप्ते च तुल्यम् सम विभक्तम् स्थापितम् (स अहम् शस्त्र धारयामि इति पूर्वेणान्वय)।

टिप्पणी

(१) **अवसितप्रतिज्ञाभरोऽपि**—अवसित समाप्त प्रतिज्ञाभर व्रतपीडा यस्य तादृश अपि पूर्णप्रतिज्ञोऽपि—पूर्णप्रतिज्ञ होने पर भी। यद्यपि मेरा प्रण पूरा हो गया है तथापि। अव+सो+क्त कर्मणि=अवसित। (२) **कोपप्रीत्यो**— क्रोध और प्रेम का, क्रोध का फल निग्रह अपने शत्रु नन्द को और प्रेम का फल अनुग्रह अपने मित्र चन्द्रगुप्त को बाँट दिया गया। (३) **अभियुक्तेन मनसा**— सावधान चित्त होकर खूब सोच विचार कर। (४) **द्वितयम्**—दो प्रकार का। यहाँ उपमा और उत्प्रेक्षा अलङ्कार है और शिखरिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलाग शिखरिणी'।

अथवा, अगृहीते राक्षसे किमुत्खातं नन्दवंशस्य, किं वा स्थैर्यमुत्पादितं चन्द्रगुप्तलक्ष्म्याः। (विचिन्त्य) अहो! राक्षसस्य नन्दवंशे निरतिशयो भक्तिगुणः। स खलु कस्मिंश्चिदपि जीवति नन्दान्वयावयवे वृषलस्य साचिव्यं ग्राहयितुं न शक्यते। तदभियोगं प्रति निरुद्योगः शक्यः अवस्थापयितुमस्माभिः इति अनयैव बुद्ध्या तपोवनं गतोऽपि घातितस्तपस्वी नन्दवंशीयः सर्वार्थसिद्धिः। यावदसौ मलयकेतुमङ्गीकृत्य अस्मदुच्छेदाय विपुलतरं प्रयत्नम् उपदर्शयत्येव। (प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्यं बद्ध्वा) साधु, अमात्य राक्षस! साधु! साधु, श्रोत्रिय! साधु! साधु, मन्त्रिबृहस्पते! साधु! कुतः—

हिन्दी अनुवाद—अथवा जब तक राक्षस नही पकडा जाता तब तक नन्दवंश का नाश करने से क्या और चन्द्रगुप्त को राज्य मिलने से ही क्या लाभ। (सोचकर) अहा राक्षस की नन्दवश में कैसी दृढ भक्ति है। जब तक नन्दवश का कोई भी व्यक्ति जीवित रहेगा तब तक वह किसी प्रकार चन्द्रगुप्त का मत्री

बनना स्वीकार न करेगा। इसीलिये तो नन्दवश को राज्य पर प्रतिष्ठित करने के प्रति उसे निरुद्यम बनाने के लिये हमने वन में चले जाने पर भी बेचारे सर्वार्थसिद्धि को मरवा डाला। फिर भी वह मलयकेतु का सहारा लेकर हमारी जड खोदने के लिये यत्न करता ही रहता है। (आकाश में दृष्टि दे कर मानो साक्षात् राक्षस को देख रहा हो) वाह राक्षस मत्री, वाह! धन्य हो द्विजवर, धन्य हो! धन्य हो बृहस्पति के तुल्य बुद्धि वाले, तुम धन्य हो!

Or, what is the use of giving permanency to the Lakshmi of Chandragupta so long as Rakshas is not captured (or is unsecured) (Thinking) Oh, the unsurpassable devotion of Rakshas to the race of Nanda He can not be made to accept the office of the minister of Chandragupta so long as any member whatsoever of the race of Nanda is alive So with this idea that he can be made to be indifferent towards an invasion, we got the poor Sarvarthsiddhi killed, though he had retired to the forest But he, taking the help of Malayaketu, is indeed making greater effort to uproot us Bravo minister Rakshas, Bravo, Bravo, Oh Brahman, Bravo, Bravo Oh, Brihaspati like minister, Bravo

सस्कृत व्याख्या—अथवा पक्षान्तरे अगृहीते अवशीकृते राक्षसे किमुत्खात नन्दवशस्य नन्दवशस्य नाशेन को लाभ चन्द्रगुप्तलक्ष्म्या स्थैर्यम् उत्पादितम् चन्द्रगुप्तराज्यश्रिया स्थैर्येण किमपि प्रयोजन न सिद्ध्यते। (विचिन्त्य विचार्य) अहो राक्षसस्य नन्दवशे निरतिशय भक्तिगुण अधिकतर भक्तिरूप गुण राक्षसस्य नन्दवशे भक्ति आश्चर्यजनकेति भाव स राक्षस खलु हि कस्मिन् चित् अपि जीवति विद्यमाने सति नन्दान्वयावयवे नन्दवशस्य अशे वृषलस्य चन्द्रगुप्तस्य साचिव्यम् अमात्यताम् ग्राहयितु कारयितु न शक्यते। किन्तु तदभियोग प्रति चन्द्रगुप्तस्य आक्रमणमुद्दिश्य निरुद्योग उद्यमहीन, अवस्थापयितुम् उद्यमहीनता गमयितुम् अस्माभि शक्य इति अनया बुद्ध्या अनेनैव विचारेण नन्दवशीय-सर्वार्थसिद्धि तपोवन गत अपि घातित हत नाशितो वा। अय भाव एक एव नन्दवशशेष सर्वार्थसिद्धि यदा न भविष्यति तदा राक्षस अवश्य चन्द्रगुप्तस्य साचिव्य करिष्यतीति बुद्ध्या सर्वार्थसिद्धिर्हत। किन्तु असौ राक्षस मलयकेतुम् अङ्गीकृत्य मलयकेतो साहाय्यम् गृहीत्वा अस्मदुच्छेदाय अस्मान् उन्मूलयितुम् विपुलतरम् प्रबलतरम् प्रयत्नम् उद्योगम् उपदर्शयति एव करोति एव। साधु अमात्य राक्षस साधु एतत् ते श्लाघ्यम् साधु श्रोत्रिय सुब्राह्मण साधु मन्त्रिबृहस्पते बृहस्पतितुल्य अमात्य साधु सदृशम् एतत् ते।

टिप्पणी

(१) **अगृहीते**—बिना वश मे किये। राक्षस को वश मे करना नाटक का प्रधान उद्देश्य है। 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' इति सूत्रेण अत्र सप्तमी। (२) **किमुत्खातम्**—नाश करने से क्या लाभ, नाश करना व्यर्थ है। उद्+खन्+क्त कर्मणि=उत्खातम्। (३) **तपस्वी**—बेचारा। (४) **नन्दान्वयावयवे**—नन्दवश के किसी भी अश के (रहते हुए)। (५) **तदभियोगम् प्रति**—चन्द्रगुप्त के ऊपर आक्रमण करने के प्रति। (६) **निरुद्योग अवस्थापयितुम्**—उद्यम-हीन करने के लिये, निरुत्साहित करने के वास्ते। (७) **सर्वार्थसिद्धि घातित**—सर्वार्थसिद्धि मारा गया। चाणक्य के कहने का भाव यह है जब नन्दवश का कोई भी व्यक्ति न बच रहेगा तो राक्षस निराश्रय होकर चन्द्रगुप्त का मत्री बन जायगा। अत बेचारे सर्वार्थसिद्धि के वन मे चले जाने पर भी हमने उसका वध करवाया। (८) **अस्मदुच्छेदाय**—हमारे नाश के लिये। यहाँ "तादर्थ्ये" चतुर्थी है। (९) **अमात्य**—मत्री। अमा सह वसति इत्यर्थे अमा+त्यप्। (१०) **श्रोत्रिय**—वेद जानने वाले ब्राह्मण को कहते है। छन्द अधीते इति छन्दस्+घ, छन्दस् इत्यस्य श्रोत्रादेश। (११) **मत्रिबृहस्पते**—मत्री बृहस्पतिरिव इति मत्रिबृहस्पति तत्सबुद्धौ (उपमित समास) बृहस्पति के समान मत्री। बृहता वाचा पति बृहस्पति 'तद्बृहतो करपत्यो'—इत्यनेन सुट् तलोपश्च।

ऐश्वर्यादनपेतमीश्वरमयं लोकोऽर्थतः सेवते
तं गच्छन्त्यनु ये विपत्तिषु पुनस्ते तत्प्रतिष्ठाशया।
भर्तुर्ये प्रलयेऽपि पूर्वसुकृतासङ्गेन निःसङ्गया
भक्त्या कार्यधुरां वहन्ति बहवस्ते दुर्लभास्त्वादृशाः ॥१४॥

अन्वय—अय लोक ऐश्वर्यात् अनपेतम् ईश्वरम् अर्थत सेवते। ये पुन विपत्तिषु तमनुगच्छन्ति ते तत्प्रतिष्ठाशया। त्वादृशा कृतिन ये भर्तु प्रलयेऽपि पूर्वसुकृतासङ्गेन नि सङ्गया भक्त्या कार्यधुरा वहन्ति ते दुर्लभा ॥१४॥

हिन्दी अनुवाद—ससार के लोग ऐश्वर्य से युक्त स्वामी की सेवा किसी स्वार्थ से ही करते है और जो लोग विपत्ति में स्वामी का साथ देते है वे इस आशा से ऐसा करते है कि स्वामी को फिर से राज्य मिलेगा। परन्तु तुम्हारे समान कर्मवीर विरले ही होते है जो स्वामी के मर जाने पर भी पहले किये हुए उपकार का ख्याल करके नि स्वार्थ भक्ति से कार्य-भार को वहन करते है (स्वामी का कार्य करते जाते है)।

Why people serve, with selfish motive, the master possessing riches, those who follow him in adversity do so with the hope that he will again come back to power But workers, like you, who out of regard for the past benefits, bear the burden of work without selfish motive, even after the death of the master, are very rare

सस्कृत व्याख्या—अय ससार अत्रत्या जना ऐश्वर्यात् प्रभुत्वात् अनपेतम् अप्रच्युतम् ईश्वरम् स्वामिनम् अर्थत स्वप्रयोजनसिद्धयै स्वफलाशायै सेवते भजते ये पुन ये जना विपत्तिषु आपत्सु तमनुगच्छन्ति स्वामिनम् तद्दु खदु खिन सन्त अनुवर्तन्ते तेऽपि हन्त न नि स्वार्थसेवाभावतया अपितु तत्प्रतिष्ठाशया तस्य स्वामिन या प्रतिष्ठा पुन राज्यप्राप्ति तत्र गतया स्वेष्टसिद्धिरूपया कामनया तथा कुर्वन्ति त्वादृशा कृतिन कृतकर्माण ये भर्तु स्वामिन प्रलये विनाशेऽपि पूर्वकृतासङ्गेन पूर्वोपकारस्य आसङ्गेन सम्पर्केण पूर्वोपकारस्मरणेन नि सङ्गया फलासक्तिरहितया भक्त्या प्रेम्णा कार्यधुरा वहन्ति कर्त्तव्यभार धारयन्ति ते दुर्लभा दुष्प्रापा ।

टिप्पणी

(१) **अनपेतम्**—युक्तम्, युक्त। (२) **अर्थत**—प्रयोजन से, स्वार्थ-भाव से। (३) **तत्प्रतिष्ठाशया**—प्रति+स्था+अङ भावे=प्रतिष्ठा, तस्य प्रतिष्ठा तत्प्रतिष्ठा तस्याम् आशा इति तया—उसकी प्रतिष्ठा या अभ्युदय की आशा से। अर्थात् इस आशा से कि शायद उसके अच्छे दिन फिर लौटे। (४) **पूर्व-सुकृतासङ्गेन**—पूर्वं सुकृतम् पूर्वसुकृतम् (सुप्सुपासमास) तस्य आसङ्गेन इति। हेतौ तृतीया है। पहले के किए हुए उपकार का ख्याल करके। आ+सञ्ज्+घञ् भावे=आसङ्ग । (५) **निस्सङ्गया**—नि स्वार्थ भक्ति से। यहाँ करणे तृतीया है। (६) **कार्यधुराम्**—कार्यस्य धू कार्यधुरा ता कार्यधुरा "ऋक्-पूरब्धू" इससे समासान्त अप्रत्यय हो गया फिर टाप् प्रत्यय लगकर स्त्रीलिङ्ग हो गया। काम के भार को। (७) **कृतिन**—इसका अर्थ प्राय कृतकार्य (सफल) होता है। पर यहाँ पर "कृतज्ञ" अर्थ ठीक होगा। कृतम् पूर्वोपकार अस्ति एषाम् स्मरणार्थत्वेन इति। कृत+इनि (मत्वर्थे) यह अर्थ "पूर्व सुकृता-सङ्गेन" के साथ ठीक-ठीक बैठ जाता है। (८) **दुर्लभा**—दु खेन लभ्यन्ते इति दुर्लभा दुर्+लभ्+खल् कर्मणि। इसमे शार्दूलविक्रीडित छन्द है और व्यतिरेक अलङ्कार है।

अतएवास्माकं त्वत्संग्रहे प्रयत्नः, कथमसौ वृषलस्य साचिव्यग्रहणेन सानुग्रहः स्यादिति । कुत.—

अप्राज्ञेन च कातरेण च गुणः स्याद्भक्तियुक्तेन कः
प्रज्ञाविक्रमशालिनोऽपि हि भवेत् कि भक्तिहीनात् फलम् ।
प्रज्ञाविक्रमभक्तय· समुदिता येषा गुणा भूतये
ते भृत्या नृपते कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च ॥१५॥

अन्वय—भक्तियुक्तेन अप्राज्ञेन च कातरेण च क गुण स्यात् प्रज्ञाविक्रम-शालिन अपि भक्तिहीनात् कि हि फल भवेत्, समुदिता प्रज्ञा-विक्रम-भक्तय येषा गुणा, ते भृत्या नृपते सम्पत्सु च आपत्सु च भूतये, इतरे कलत्रम् ।

हिन्दी अनुवाद—इसीलिए तुम्हें वश में करने का उपाय किया जा रहा हैं कि तुम (राक्षस) किस प्रकार चन्द्रगुप्त का मन्त्रित्व स्वीकार कर हमें अनुगृहीत करोगे। क्योकि—उस स्वामिभक्त राजसेवक ही से क्या लाभ जिसमें न तो बुद्धि हो और न बल । और उस बुद्धि-विक्रम वाले से ही क्या जिसमें भक्ति नही हैं । राजा की विपत्ति व सम्पत्ति में कल्याण करने वाले तो वे ही होते हैं जिनमें बुद्धि, विक्रम और भक्ति तीनो गुणो का समावेश हो । और दूसरे सेवक तो स्त्री के समान हैं जिनका भरण-पोषण राजा को अच्छे और बुरे दोनो दिनो में भी करना ही पडता है।

This is why our effort is to secure you, our anxiety is 'how would you (Rakshas) do us a favour by accepting the minister-ship of Vrishala' For—What is the use of that loyal servant who is unwise or coward ? What is the use of that wise and reliant servant who is without devotion Those servants, who possess wisdom, valour and devotion all the three virtues combined, are for the weal of the king in both adversity and prosperity Others are like so many wives (whom the king has to support even in prosperity and adversity both)

सस्कृत व्याख्या—अतएव अस्मात् कारणात् असौ राक्षस केन विधिना वृषलस्य साचिव्यग्रहणेन सानुग्रह स्यात् इति चिन्ता कुर्वताम् अस्माकम् त्वत्सग्रहे भवद्वशीकरणे यत्न आयास । भक्तियुक्तेन भक्तिमता अप्राज्ञेन स्थूलदर्शिना कातरेण च विक्रमहीनेन च राजसेवकेन क गुण को लाभ न कोऽपि लाभ इति भाव । प्रज्ञाविक्रमशालिन अपि प्रज्ञाविक्रमयुक्तात् भक्तिहीनात् निरनुरागात् कि हि फलम् को लाभ न किमपि प्रयोजनम् किन्तु येषा राजसेवापरायणाना प्रज्ञा

बुद्धि विक्रम शौर्यम् भक्ति अनुराग अस्ति येषु सेवकेषु एते त्रय गुणा सन्ति येषु ते नृपते सम्पत्सु अभ्युदयेषु विपत्तिषु आपत्सु च भूतये कल्याणाय भवन्ति। इतरे च ये केवल सानुरागा ये वा केवल प्रज्ञाविक्रमशालिन ते सर्वे कलत्रमेव कुटुम्बवत् सर्वासु समविषमदशासु राज्ञैव भरणीया न ते राज्ञ सेवा कुर्वन्ति।

टिप्पणी

(१) **सग्रहे**—वश मे करने के लिए। लाने के लिए। सम्+ग्रह्+अप् भावे। (२) **प्रज्ञाविक्रमशालिन**—बुद्धि तथा विक्रम से युक्त। प्रज्ञा च विक्रमश्च प्रज्ञाविक्रमौ ताभ्या साधु शालते श्लाघते इति साधुकारिणि णिनि। (३) **भृत्या**—सेवक। भ्रियन्ते इति भृ+क्यप्। भृत्य का लक्षण—'यस्मिन् कृत्य समावेश्य निर्विशङ्केन चेतसा। आस्यते सेवक स स्यात् कलत्रमिव चापरम्॥' (४) **भूतये**—सम्पत्ति के लिए, सम्पत्ति बढाने (वाले) तादर्थ्ये चतुर्थी। (५) **प्रज्ञाविक्रमभक्तय**—प्रज्ञा च विक्रमश्च भक्ति च इति प्रज्ञा विक्रमभक्तय—बुद्धि, पराक्रम और भक्ति। (६) **कलत्र**—स्त्री या पोष्यवर्ग। स्त्री का भरण-पोषण हर समय करना ही पडता है इसीलिए ऐसे सेवक जिनमे कोई गुण नही है जो केवल पोष्य है कलत्र कहे गए हैं। गड्+अत्रन्, गकारस्य ककार, डलयोरभेद=कलत्रम्। 'कलत्र श्रोणिभार्ययो' इत्यमर। व्यतिरेकालकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

तन्मयाप्यस्मिन् वस्तुनि न शयानेन स्थीयते, यथाशक्ति क्रियते तद्ग्रहणं प्रति यत्नः। कथमिव? अत्र तावद् वृषलपर्वतकयोरन्यतरविनाशेनापि चाणक्यस्यापकृतं भवतीति विषकन्या राक्षसेनास्माकमत्यन्तोपकारि मित्रं घातितस्तपस्वी पर्वतक इति सञ्चारितो जगति जनापवादः। लोकप्रत्ययार्थमस्यैवार्थस्याभिव्यक्तये 'पिता ते चाणक्येन घातित' इति रहसि त्रासयित्वा भागुरायणेनापवाहितः पर्वतकपुत्रो मलयकेतुः। शक्यः खलु एष राक्षसमतिपरिगृहीतोऽपि व्युत्तिष्ठमानः प्रज्ञया निग्रहीतुम्। न पुनरस्य निग्रहात् पर्वतकवधोत्पन्नं राक्षस्यायशः प्रकाशीभवत् प्रमार्ष्टुमिच्छामि।

प्रयुक्ताश्च स्वपक्षपरपक्षयोरनुरक्तापरक्तजनजिज्ञासया बहुविधदेशवेषभाषाचारसञ्चारवेदिनो नानाव्यञ्जनाः प्रणिधयः। अन्विष्यते च कुसुमपुरवासिनां नन्दामात्यसुहृदा निपुणं प्रचारगतम्। तत्तत्कारणमुत्पाद्य कृतकृत्यतामापादिताश्चन्द्रगुप्तसहोत्थायिनो भद्रभटप्रभृतयः प्रधानपुरुषाः। शत्रुप्रयुक्तानां च तीक्ष्णरसदायिनां प्रतिविधानं प्रत्यप्रमादिनः परीक्षितभक्तयः क्षितिपतिप्रत्यासन्नाः नियोजितास्तत्राप्तपुरुषाः। अस्ति चास्माकं सहाध्यायि मित्रमिन्दुशर्मा नाम ब्राह्मणः। स चौशनस्यां दण्डनीत्यां चतुःषष्ट्यङ्गे ज्योतिःशास्त्रे च परं प्रावीण्यमुपगतः। स मया क्षपणकलिङ्गधारी नन्दवंशवधप्रतिज्ञानन्तरमेव कुसुमपुरमुपनीय सर्वनन्दामात्यैः सह सख्यं ग्राहितो विशेषतश्च तस्मिन्राक्षसः समुत्पन्नविश्रम्भः। तेनेदानीं महत्प्रयोजनमनुष्ठेयं भविष्यति।

तदेवमस्मत्तो न किञ्चित् परिहास्यते। वृषल एव केवलं प्रधानप्रकृतिरस्मास्वारोपितराज्यतन्त्रभारः सततमुदास्ते। अथवा यत्स्वयमभियोगदुःखैरसाधारणैरपाकृतं तदेव राज्यं सुखयति। कुतः—

हिन्दी अनुवाद—सो मैं भी इस विषय में कुछ सोता नहीं हूँ, यथाशक्ति उसी के मिलाने का प्रयत्न करता रहता हूँ। कैसे? (तो सुनो) इस विषय में (पहला प्रयत्न यह है) "चन्द्रगुप्त अथवा पर्वतक इन दोनों में से एक का भी नाश हो जाने पर चाणक्य की हानि होगी" यह सोचकर राक्षस ने विषकन्या के द्वारा हमारे अत्यन्त उपकारी मित्र पर्वतक को मरवा डाला है, यह अपवाद लोगों में फैला दिया गया है। पर एकान्त में मैंने भी भागुरायण द्वारा मलयकेतु के मन में यह बात बैठा दी है कि तुम्हारे पिता को चाणक्य ने ही मारा है, इससे वह डर कर भाग गया है। राक्षस के कथनानुसार आचरण करता हुआ युद्ध की तैयारी करता हुआ भी यह (मलयकेतु) बुद्धि के द्वारा वश में किया जा सकता है। पर इसको पकड कर मैं यह नहीं चाहता कि राक्षस की यह अपकीर्ति कि "पर्वतक को उसी ने मारा है" दूर हो जाय। और भी नाना प्रकार के छद्मवेषधारी और भिन्न-भिन्न देश-भाषा-भूषा-आचार और प्रचार में सर्वथा निपुण अनेकों गुप्तचरों को यह जानने के लिए नियुक्त कर दिया है

कि कौन हमारा और हमारे शत्रु का साथ देने वाला है और कुसुमपुर निवासी नन्द के मत्री और सबधियो के ठीक-ठीक वृत्तान्त का अन्वेषण हो रहा है। वैसे ही भद्रभटादिको को बडे-बडे पद देकर चन्द्रगुप्त के पास रख दिया है। और भवित की परीक्षा लेकर बहुत से सतर्कता से काम करने वाले पुरुष भी शत्रु से रक्षा करने के लिए नियत कर दिए गये हैं। मेरे साथ का पढने वाला इन्दुशर्मा नाम का ब्राह्मण है। वह शुक्राचार्य की बनाई हुई दण्डनीति में और चौसठ अङ्गो वाले ज्योतिष-शास्त्र में पारगत है। नन्दवश के विनाश की प्रतिज्ञा के बाद ही मैंने उसे बौद्ध सन्यासी के वेष में पाटलिपुत्र में लाकर नन्द के सभी मत्रियो से उसकी मित्रता करा दी। राक्षस उसमे विशेष रूप से विश्वास करता है। इससे यह बडा कार्य अवश्य पूरा हो जायगा। तो इस तरह मै कुछ उठा न रखूँगा। केवल चन्द्रगुप्त ही हमारे ऊपर राज्य का सारा भार छोडकर उदासीन रहता है। अथवा वही राज्य सच्चा सुख देने वाला होता है जिसमे उसके सचालन का दु ख नही भोगना पडता। क्योकि--

Then, I too, am not idle in this matter To the best of my ability, effoit is being made to win him over How ? This report has been circulated among the people that our great friend Parvataka, was killed by Rakshas by means of poison-maid, because by this, injuiy comes to Chanakya by the death of either Chandragupta or Parvataka To create confidence in the people and to make this very thing clear, Paivataka's son Malayaketu, has been frightened away by Bhaguiayan secretly saying that "Your father was murdered by Chanakya" This Malayaketu, guided by the advice of Rakshas and making preparations for war, can be checked by wit On the other hand, by arresting him, I do not wish to wipe out the calumny of Rakshasa which is due to the murder of Parvataka and which is spreading among the public Spies also conversant with the dress, dialect, manners and movements of the people of different countries, have been employed by me under several disguises to find out who are the persons that are faithful to us and to the enemy The movements of the friends of the ministers of Nanda, residing at Kusumpura, are being watched carefully The high officials like Bhadrabhatta, who were Chandragupta's helpers, have been made well satisfied by being offered high posts Trustworthy agents, whose loyalty has been tried and who are always cautious and remain near the person of the king, have been warned off beforehand to check the giving of poison (to the king) by the enemy Again, there is a Brahman (Indushrama, by name, who is my friend and fellow student He is proficient

in the science of politic of Ushanas (शुक्राचार्य) and in Astrology with its sixty four branches, and just after I had taken a vow to kill Nanda, he was brought by me to Kusumpura under the guise of a Jain saint and (there) he has made friendship with the ministers of Nanda Rakshas has placed special confidence in him

So in this matter I shall be leaving nothing undone Only Vrishala, the chief member, having placed the burden of administration in us, remains indifferent, or that kingdom alone gives happiness, which is devoid of the trouble of paying personal attention not shared in common by others For—

संस्कृत व्याख्या—तत् तस्मात् मयापि अस्मिन् वस्तुनि राक्षसग्रहणकर्मणि शयानेन अलसेन न स्थीयते निरुद्यमेन न भूयते किन्तु तस्य राक्षसस्य ग्रहण प्रति यथाशक्ति यत्न क्रियते। कथमिव केन वा प्रकारेण—अत्र तावत् खलु अस्मिन् कार्ये खलु लोके राक्षसो निन्द्यो भवतु इत्यभिप्रायेण लोके जनाना पौराणाम् अपवाद जनश्रुति प्रचारित सचारित वृषलपर्वतकयो चन्द्रगुप्तपर्वतकयो अन्यतरविनाशेनापि उभयो मध्ये एकस्यापि नाशेन वधेन वा चाणक्यस्य अपकृत भवति अनिष्टमापद्यते इति कृत्वा विषकन्यया राक्षसेन अस्माकम् अत्यन्तोपकारि परमोपकारक मित्र तपस्वी वराक पर्वतक घातित हत, लोकप्रत्ययार्थम् जनाना विश्वासार्थम् अस्यैव अर्थस्य अभिव्यक्तये अर्थात् राक्षसेन पर्वतक हत इति प्रकटीभवनाय ते पिता चाणक्येन घातित हत इति रहसि एकान्ते त्रासयित्वा भयम् उत्पाद्य भागुरायणेन अपवाहित अपसारित पर्वतकपुत्र मलयकेतु शक्य खलु एष मलयकेतु राक्षसमतिपरिगृहीतोऽपि राक्षसस्य उपदेशेन कार्यं कुर्वन् व्युत्तिष्ठमान युद्धार्थ यतमान प्रज्ञया बुद्ध्या निग्रहीतुम् वशीकर्तुं शक्य पुनरस्य मलयकेतो निग्रहात् पर्वतकवधोत्पन्नम् पर्वतकवधेन उत्पन्नम् राक्षसस्य अयश अपकीर्त्ति प्रकाशीभवत् प्रचार गच्छत् प्रमार्ष्टुम् प्रक्षालयितु न इच्छामि। यदि मलयकेतुम् इदानी दण्डयामि तर्हि लोको ज्ञास्यति यत् राक्षस निर्दोष अस्ति तथा च प्रतिज्ञात राज्यार्धदानमनिच्छता चाणक्येन सपुत्र पर्वतक हत। स्वपक्षपरपक्षयो स्वपक्षे आत्मन पक्षे परपक्षे शत्रो पक्षे च अनुरक्तापरक्तजनजिज्ञासया अनुरक्ता भक्ता अपरक्ता विरक्ता च ये जना तेषा जिज्ञासया परिज्ञानार्थ बहुविधदेशवेषभाषाचारसञ्चारवेदिन बहुविधाना नानाप्रकाराणा देशाना यो वेष परिच्छद या च भाषा य आचार.

व्यवहार यश्च सञ्चार आवागमन तत् सर्वं विदन्ति जानन्ति ये ते तथाविधा नानाव्यञ्जना बहुरूपधारिण प्रणिधय दूता प्रयुक्ता नियुक्ता कुसुमपुरवासिनाम् पाटलिपुत्रनिवासिनाम् नन्दामात्यसुहृदा नन्दामात्यस्य राक्षसस्य सुहृदा मित्राणा प्रचारगतम् गमनागमनविषयक सर्वं निपुण सावधानतया अन्विष्यते निरीक्ष्यते तै प्रणधिभिरिति। तत्तत्कारणमुत्पाद्य तोषकारणम् उत्पाद्य कृतकृत्यतामापादिता कृतार्थताम् आपादिता गमिता चन्द्रगुप्तसहोत्थायिन चन्द्रगुप्तेन सह उत्थायिन एकनिष्ठ या ये उद्यमपरा बभूवु ते भद्रभटप्रभृतय भद्रभटादय प्रधानपुरुषा। शत्रुप्रयुक्ताना शत्रुणा राक्षसेन प्रयुक्ताना व्यापारितानाम् तीक्ष्णरसदायिना विषदायिना प्रतिविधान नियमन प्रति अप्रमादिन सावधाना परीक्षितभक्तय येषा भक्ति परीक्षिता एवविधा क्षितिपतिप्रत्यासन्ना क्षितिपते नृपते चन्द्रगुप्तस्य प्रत्यासन्ना समीपस्थायिन आप्तपुरुषा विश्वस्ता भृत्या नियोजिता नियुक्ता। अस्माक सहाध्यायि मित्र इन्दुशर्मा नाम ब्राह्मण अस्ति। स च औशनस्याम् शुक्राचार्यनिर्मिताया दण्डनीत्याम् चतुषष्ट्यङ्गे ज्योति शास्त्रे च पर प्रावीण्यम् अतिदक्षताम् चोपगत प्राप्त। स मया क्षपणकलिङ्गधारी क्षपणकस्य बौद्धसन्यासिन लिङ्गधारी वेषभृत् नन्दवशवधप्रतिज्ञानन्तरमेव कुसुमपुरम् उपनीय आनीय सर्वनन्दामात्यै सर्वै समग्रै नन्दामात्यै नन्दमत्रिभि सह सख्यम् मित्रता ग्राहित विशेषतश्च तस्मिन् इन्दुशर्मणि राक्षस समुत्पन्नविश्रम्भ जातविश्वास तेन इदानीम् सम्प्रति महत् प्रयोजन गुरुकार्यम् अनुष्ठेयम् साधनीय भविष्यति तत् एवम् अनेन प्रकारेण अस्मत्त मत्त चाणक्यात् न किंचित् किमपि परिहास्यते ऊन भविष्यति। वृषल एव केवल प्रधानप्रकृति मुख्यप्रकृतिस्वामी अस्मासु आरोपितराज्यतत्रभार अस्मासु मयि आरोपित न्यस्त राज्यस्य यत् तत्र शासन तस्य भार येन तादृश सततम् निरन्तरम् उदास्ते उदासीन एव तिष्ठति। अथवा यत् स्वयम् अभियोगदु खै स्वयमभियोगस्य आत्मव्यापारस्य यत् दु ख तै असाधारणै अपाकृतम् वर्जित तदेव राज्य सुखयति सुख ददाति कुत कस्मात्।

टिप्पणी

(१) **न शयानेन स्थीयते**—(मै भी इस विषय मे) असावधान नही हूँ। (२) **वृषलपर्वतकयो अन्यतरविनाशेनापि**—चन्द्रगुप्त तथा पर्वतक दोनो मे एक का भी नाश होने से। (३) **विषकन्यया**—विषतुल्या वा विषदिग्धा वा

विषसिद्धा कन्या विषकन्या (मध्यमपदलोपी स०), तया। विषाक्त कन्या के द्वारा। पहले किसी कन्या को विषैली बनाने के लिए उसे बचपन से ही थोडा-थोडा विष खिलाया जाता था। इस क्रम से एक ऐसा समय आता था जब कि उसका शरीर सर्पिणी के समान विषैला बन जाता था। उसके साथ जो भी सभोग करता था वह मर जाता था। ऐसी कन्याये बहुत सुन्दरी हुआ करती थी। लोग अपने शत्रु को मारने के लिए ऐसी कन्याओ का प्रयोग किया करते थे। 'लावण्यभूषिता कान्ता योषित क्रमशो विषै । युवती योजयेत् कामिरिपुभूपान्य-घातने ।।' (४) **जनापवाद जगति सञ्चारित** —यह बदनामी ससार मे फैला दी गई है। (५) **त्रासयित्वा**—डराकर। लोक मे तो यह प्रसिद्धि करा दी गई कि राक्षस ने पर्वतक को मरवाया और एकान्त मे चाणक्य के गुप्तचर ने मलयकेतु को यह समझा दिया कि "तुम्हारे पिता को चाणक्य ने मारा है" इससे भयभीत होकर मलयकेतु भाग गया। यह है चाणक्य की बुद्धि की प्रखरता। (६) **राक्षस-मतिपरिगृहीत** —राक्षस की बुद्धि के अनुसार काम करने वाला। (७) **व्युत्तिष्ठ-मान** —लडाई के लिये उभडता हुआ। वि+उद्+स्था+शानच्। (८) **प्रज्ञया निग्रहीतुम् शक्य** —बुद्धिबल से वश मे किया जा सकता है। (९) **अनुरक्तापरक्त-जनजिज्ञासया**—अनुरक्ता अपरक्ता च ये जना तेषा जिज्ञासया—प्रेम तथा दुश्मनी करने वाले लोगो को जानने की इच्छा से। (१०) **बहुविधदेशवेश-भाषाचारसञ्चारवेदिन** —अनेक देशो की वेश-भूषा, भाषा, आचार तथा गति को जानने वाले। (११) **नानाव्यञ्जना** —नाना रूप धारी। (१२) **तत्तत्-कारणम्**—उन सभी कारणो को। (१३) **कृतकृत्यतामापादिता** —कृतकृत्य कर दिए गए है। (१४) **चन्द्रगुप्तसहोत्थायिन** —चन्द्रगुप्तेन सह उत्थायिन — चन्द्रगुप्त के साथ उठने-बैठने वाले। (१५) **तीक्ष्णरसदायिना प्रतिविधान प्रति**—विष देने वालो को रोकने के वास्ते । (१६) **परीक्षितभक्तय** — परीक्षिता भक्ति येषा ते परीक्षितभक्तय —जिनकी स्वामिभक्ति की परीक्षा कर ली गई है। (१७) **औशनस्याम्**—शुक्राचार्य की बनाई हुई। उशनस्+अण्+स्त्रीलिङ्ग। (१८) **प्रावीण्यम्**—निपुणता। (१९) **क्षपणकलिङ्गधारी**—बौद्ध सन्यासी का रूप धर कर। (२०) **सख्य ग्राहित** —मित्र बनवाया हुआ। यहाँ ग्रहधातु बुद्धचर्थक होने से द्विकर्मक है। (२१) **समुत्पन्नविश्रम्भ** —समुत्पन्न विश्रम्भ यस्य स विश्वास कर लिया है जिसने। यही इन्दुशर्मा जीवसिद्धि या

क्षपणक के नाम से विख्यात है। वास्तव मे यह चाणक्य का गुप्तचर है परन्तु इसने राक्षस के मन मे ऐसा विश्वास पैदा कर दिया जिससे राक्षस इसको अपना परम मित्र मानने लगा। (२२) **परिहास्यते**—कमी पाई जायगी। (२३) **प्रधानप्रकृति**—राजा, अमात्य, सुहृत्, कोष, राष्ट्र, सेना और दुर्ग—ये सात राज्य की प्रकृति=अग है। राजा इनमे प्रधान है।

स्वयमाहृत्य भुञ्जाना बलिनोऽपि स्वभावतः।
गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः सीदन्ति दुःखिताः ॥१६॥

अन्वय—स्वयम् आहृत्य भुञ्जाना नरेन्द्राश्च गजेन्द्राश्च स्वभावत बलिनोऽपि प्राय दु खिता सन्त सीदन्ति।

हिन्दी अनुवाद—स्वभावत शक्तिशाली हाथी और राजा भी स्वय साधन सामग्री जुटा-जुटाकर सब सुख भोग करते है तो भी दु खित और खिन्न ही रहा करते है।

Big elephants and powerful kings, though strong by nature, usually experience unhappiness if enjoying after having personally provided for it

सस्कृत व्याख्या—स्वभावत निसर्गत बलिन अपि शक्तिमन्त अपि गजेन्द्रा हस्तिन राजानश्च नृपतयश्च स्वयमात्मनाहृत्य सगृह्य भुञ्जाना भोग कुर्वाणा दु खिता सर्वदा तत्तदर्थजातसग्रहव्यापृतया तत्तद्दु खमनुभवन्त प्राय सीदन्ति क्लिश्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **भुञ्जाना**—भोग करते हुए, खाते हुए। भुज्+लट्—चानश् 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्' इत्यनेन। (२) **बलिन**—बलवान् (राजा और हाथी)। इस श्लोक मे दीपक अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है। छन्द का लक्षण—'श्लोके षष्ठ गुरु ज्ञेय सर्वत्र लघु पञ्चमम्। द्विचतु पादयोर्ह्रस्व सप्तम दीर्घमन्ययो'॥

(ततः प्रविशति यमपटेन चरः।)

चरः—

पणमह जमस्स चलणे किं कज्ज देवएहि अर्णोहि।
एसो खु अण्णभत्ताणं हरइ जीअं चडपडन्तम् ॥१७॥

(प्रणमत यमस्य चरणौ किं कार्यं दैवतैरन्यैः।
एष खल्वन्यभक्तानां हरति जीवं परिस्फुरन्तम् ।।)

अन्वय—यमस्य चरणौ प्रणमत अन्यै दैवतै कि कार्यम् एष खलु अन्य-भक्ताना परिस्फुरन्त जीव हरति।

हिन्दी अनुवाद—(यमपट लिए एक गुप्तचर का प्रवेश) चर—लोगो! धर्मराज के चरणो का सहारा लो। और देवताओ से क्या (उनको छोडो) ये यमराज दूसरे देवताओ के भक्तो के छटपटाते हुए प्राणो को हर लेते है।

(Enters a spy with Yama's board) *Spy*—O people, Bow down to the feet of Yama, what is the use of other gods He (this Yama) takes away the struggling life of the devotees of other gods

सस्कृत व्याख्या—यमस्य कृतान्तस्य चरणौ प्रणमत भजत अन्यै देवै हरिहरादिभि किं कार्य न किमपि प्रयोजनम् एष खलु यम अन्यभक्ताना अन्य-देवोपासकाना परिस्फुरन्त जीव स्पन्दमान जीवन हरति नाशयति।

अवि अ

पुरिसस्स जीविदव्वं विसमादो होइ भत्तिगहिआदो।
मारेइ सव्वलोअं जोतेण जमेण जीआमो ।।१८।।
जावएदं गेहं पविसिअ जमपडं दंसअन्तो गीआइं गाआमि।

अपि च

पुरुषस्य जीवितव्यं विषमाद्भवति भक्तिगृहीतात्।
मारयति सर्वलोकं यस्तेन यमेन जीवामः।।
यावदिदं गृहं प्रविश्य यमपटं दर्शयन् गीतानि गायामि।
(इति परिक्रामति)

अन्वय—भक्तिगृहीतात् विषमात् पुरुषस्य जीवितव्य भवति य सर्वलोक मारयति तेन यमेन जीवाम।

हिन्दी अनुवाद—भक्ति के द्वारा वश में किए गए भयकर (यम) से प्राणियो का जीवन चलता है। जो सारे ससार को मारा करता है, उस यम से हम जीवन धारण करते हैं। तो इस घर में प्रवेश करके यमपट दिखाता हुआ गीत गाता हूँ। (घर की ओर चलता है)

The livelihood of a man comes even from a difficult situation if one is earnest I live by Yama who kills all people Well, I will sing songs entering this house and displaying Yama's board (Walks round)

सस्कृत व्याख्या—यदि जीवितुम् इच्छथ तथा कुरुत यथा वय कुर्म । यथा वयम् तेन यमेन त यममुपजीव्य तदनुकम्पायामेव च जीवनभार निक्षिप्य जीवाम य सर्वलोक समस्त चराचर जगत् मारयति नाशयति तथा यूयमपि जीवत । नास्त्यन्य उपाय जीवनधारणस्य भक्तिगृहीतात् भक्त्या वशीकृतात् विषमात् क्रूरात् तस्मादेव यमात् पुरुषस्य प्राणिमात्रस्य जीवितव्य जीवनधारणादि सर्व भवति ।

टिप्पणी

(१) **जीवितव्यम्**—जीविका जीव्+तव्य । (२) **विषमात्**—विभिन्न समेभ्य (प्रादि तत्पुरुष) अपादाने पञ्चमी । कठिन (काम से) । (३) **भक्ति-गृहीतात्**—भक्तिपूर्वक (ईमानदारी से) किया गया (कर्म) भक्ति से पूजा गया (चाणक्य) । इसका भाव यह है कि भक्ति से वश मे किया हुआ चाणक्य बहुत कुछ दे देता है । वह इतना क्रूर नही है जितना लोग उसे समझते है । यहाँ आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार है ।

शिष्यः—(विलोक्य) भद्र ! न प्रवेष्टव्यम् ।

चरः—(विहस्य) हंहो बह्मण, कस्स एदं गेहम् ? (अहो ब्राह्मण, कस्येदं गृहम् ?)

शिष्यः—अस्माकमुपाध्यायस्य सुगृहीतानाम्न आर्यचाणक्यस्य ।

चरः—(विहस्य) हंहो बह्मण, अत्तकेरकस्स जेव्व मह धम्मभादुणो घरं होदि । ता देहि मे पवेसं जाव दे उवज्झाअस्स जमपडं पसारिअ धम्मं उवदिसामि । (अहो ब्राह्मण, आत्मीयस्यैव मम धर्मभ्रातुर्गृहं भवति । तस्माद्देहि मे प्रवेशं यावत्तवोपाध्यायस्य यमपटं प्रसार्य धर्ममुपदिशामि ।)

शिष्यः—(सक्रोधम्) धिङ् मूर्ख, किं भवानस्मदुपाध्यायादपि धर्मवित्तरः ?

चरः—हंहो बह्मण, मा कुप्प । णहि सव्वो सव्वं जाणादि । ता किवि ते उवज्झाओ जाणादि, किवि अम्हारिसा जाणादि । (अहो ब्राह्मण, मा कुप्य । नहि सर्वः सर्वं जानाति । तत् किमपि ते उपाध्यायो जानाति, किमप्यस्मादृशा जानन्ति ।)

शिष्यः—मूर्ख, सर्वज्ञतामुपाध्यायस्य चोरयितुमिच्छसि ?

चरः—हंहो बह्मण, जइ तव उवज्झाओ सव्वं जाणादि ता जाणादु दाव कस्स चन्दो अणिभिप्पेदो त्ति । (अहो ब्राह्मण, यदि तवोपाध्यायः सर्वं जानाति तर्हि जानातु तावत्कस्य चन्द्रोऽनभिप्रेत इति) ।

हिन्दी अनुवाद—शिष्य—(देख कर) अरे भाई, भीतर न आना।

चर—अहा, ब्राह्मण, यह किसका घर है ?

शिष्य—हमारे उपाध्याय प्रात स्मरणीय आर्य चाणक्य का।

चर—(हँस कर) अच्छा बताया, ब्राह्मण देवता (तब तो) यह मेरे अपने ही धर्म भाई का घर है। इसलिए मुझे भीतर जाने दो ताकि यम-पट फैलाकर तुम्हारे उपाध्याय को धर्म का उपदेश करूँ।

शिष्य—(क्रोध से) धिक्कार है मूर्ख ! क्या तू मेरे गुरु से भी बढकर धर्म-ज्ञानी है।

चर—अरे ब्राह्मण, क्रोध मत करो। सब लोग सब कुछ नही जानते। कुछ बातें ऐसी हैं जो तुम्हारे आचार्य जानते है और कुछ बातें ऐसी है जिसे हमारे ऐसे लोग ही जानते ह।

शिष्य—मूर्ख, तू मेरे आचार्य की सर्वज्ञता को चुराना चाहता है।

चर—हे ब्राह्मण, यदि तुम्हारे आचार्य सब कुछ जानते हैं तो बतावें कि चन्द्र को कौन है जो, नहीं चाहता।

Pupil (seeing)—Good fellow, do not enter

Spy—Hallo Brahman whose house is this ?

Pupil—of Arya Chanakya, our preceptor of auspicious name

Spy (*with a laugh*)—Well said, O Brahman, then this is the house of our brother-in-duty, so let me go in, so that opening the Yama board, I may teach religion to your teacher

Pupil (*Angrily*)—Fie idiot, do you know religion better than my teacher ?

Spy—Oh Brahman, do not be angry Everyone does not know everything So something are known to your preceptor and some are known only to people like me

Pupil—Fool, do you want to steal away the omniscience of my preceptor ?

Spy—Hallo Brahman, if your preceptor is omniscient, let him say, "To whom is Chandra undesirable ?"

टिप्पणी

(१) **सुगृहीतनाम्न**—प्रात स्मरणीय। सुष्टु गृहीतम् सुगृहीतम् तादृश नाम यस्य तस्य। 'स सुगृहीतनामा स्यात् य प्रात स्मर्यते जनै'। (२) **धर्म-भ्रातु**—एक ही प्रकार का काम करने के कारण धर्म-भाई कहा गया। छिपा हुआ अर्थ यह है कि चन्द्रगुप्त का सहायक मै भी हूँ और चाणक्य भी है। अत एक ही समान का कार्य करने के कारण हम धर्मभाई है। धर्मेण भ्राता सुप्सुपा। स इव अहमपि चन्द्रगुप्तस्य सेवक इत्याशय। (३) **धर्मवित्तर**—अधिक धर्म जानने वाला। धर्मं वेत्ति इति। धर्म+विद्+क्विप्। अतिशयेन धर्मवित् इति धर्मवित्तर धर्मविद्+तरप्। (४) **मा कुप्य**—क्रोध मत करो। कुप् (दिवादि)+लोट्—सिप्—हि—लुक्, श्यन्=कुप्य। यहाँ निषेधार्थक मा है। माङ का मा नही है, इसलिए 'मङिलुङ' से लुङ लकार नही हुआ। (५) **अस्मा-दृशा**—हमारे समान। वयमिव पश्यन्ति इति। अस्मद्+दृश्+कञ् "त्यदादिषु दृशेरनालोचने कञ्च"। (६) **अनभिप्रेत**—न अच्छा लगने वाला, अप्रिय। न अभिप्रेत इति अनभिप्रेत। अभि+प्र+इ+क्त कर्मणि।

शिष्यः—मूर्ख, किमनेन ज्ञातेनाज्ञातेन वा ?

चरः—तव उवज्झाओ एव्व जाणिस्सदि जं इमिणा जाणिदेण होदि। तुमं दाव एत्तिअं जाणासि कमलाणं चन्दो अणभिप्पेदो त्ति। णं पेक्ख—

कमलाणा मणहराणां वि रूआहिन्तो विसंवदइ शीलम्।
संपुण्णमण्डलम्मि वि जाइं चन्दे विरुद्धाइ ॥१९॥

तवोपाध्याय एव ज्ञास्यति यदेतेन ज्ञातेन भवति। त्वं तावदेतावद् जानासि कमलानां चन्द्रोऽनभिप्रेत इति। ननु पश्य—

कमलानां मनोहराणामपि रूपाद्विसंवदति शीलम्।
सम्पूर्णमण्डलेऽपि यानि चन्द्रे विरुद्धानि ॥२०॥

शिष्य—मूर्ख, इसके जानने अथवा न जानने से क्या?

चर—यह तो तुम्हारे आचार्य ही समझेंगे कि उसके जानने से क्या होता है। तुम तो केवल इतना ही जानते हो कि कमलो को चन्द्रमा अच्छा नहीं लगता। अच्छा देखो।

Fool, what is the use of knowing or not knowing this?

Spy—It is your preceptor who knows what is the use of knowing it You simply know this that the lotuses do not like Chandra Well then see

अन्वय—मनोहराणामपि कमलाना शील रूपात् विसवदति यानि सम्पूर्ण-मण्डले अपि चन्द्रे विरुद्धानि—

हिन्दी अनुवाद—कमल कितने सुन्दर हुआ करते है। किन्तु उनका स्वभाव उनकी सुन्दरता से बिल्कुल उलटा हुआ करता है और तभी तो पूर्ण मण्डल वाले चन्द्र के भी वैरी बने रहते हैं।

Though lotuses are so charming, yet their manners are quite contrary to their charms, the lotuses (are) opposed to Chandra even when it is in full orb

सस्कृत व्याख्या—यानीमानि कमलानि सम्पूर्णमण्डलेऽपि चन्द्रे षोडशकला-समन्वितेऽपि चन्द्रमसि विरुद्धानि नानुरक्तानि प्रत्युत प्रद्वेषभाञ्जि वा भवन्ति तत इदमेव निश्चीयते यन्मनोहराणा रम्याकृतीना कमलाना शील स्वभाव रूपाद्वि-सवदति न रूपमनुहरतीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **रूपात्**—यहाँ 'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' से पचमी हुई। 'रूपम-पेक्ष्य' ऐसी विवक्षा है। (२) **विसवदति**—प्रतिकूल आचरण करता है। वि—सम्+वद्+लट्–तिप्। (३) **सम्पूर्णमण्डलेऽपि चन्द्रे**—चन्द्रमा का मण्डल पूर्ण रहने पर भी। अर्थात् जब चन्द्रमा सोलहो कलाओ से युक्त रहता है तो सब को प्रिय लगता है। पर कमल को पूर्णमण्डल होने पर भी चन्द्रमा अप्रिय लगता है। अपूर्ण मण्डल युक्त होने पर तो बात ही निराली है। 'चन्द्रे' से चन्द्रमा तथा चन्द्रगुप्त दोनो से तात्पर्य है। इस श्लोक का भीतरी अर्थ यह है कि कमल को जैसे चन्द्रमा अच्छा नही लगता उसी प्रकार राक्षस के साथी लोग चन्द्रगुप्त को नही चाहते। इसमे आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार है।

चाणक्यः—(आकर्ण्यात्मगतम्) अये, चन्द्रगुप्तादपरक्तान् पुरुषान् जानामीत्युपक्षिप्तमनेन ।

शिष्यः—मूर्ख, किमिदमसम्बद्धमभिधीयते ?

चरः—हंहो बह्मण, सुसंबद्धं जेव्व एवं भवे । (अहो ब्राह्मण, सुसम्बद्धमेवैतद्भवेत् ।)

शिष्यः—यदि किं स्यात् ।

चरः—यदि सुणिदुं जाणन्तं लहे । (यदि श्रोतुं जानन्तं लभे ।)

चाणक्यः—भद्र, विश्रब्धं प्रविश । लप्स्यसे श्रोतारं ज्ञातारं च ।

चरः—एसो पविसामि । (एष प्रविशामि) । (प्रविश्योपसृत्य च) जेदु अज्जो । (जयत्वार्यः ।)

चाणक्यः—(विलोक्यात्मगतम्) कथमयं प्रकृतिचित्तपरिज्ञाने नियुक्तो निपुणकः । (प्रकाशम्) भद्र ! स्वागतम् । उपविश ।

चरः—जं अज्जो आणवेदि । (भूमावुपविष्टः ।) (यदार्य आज्ञापयति ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(सुनकर मन में) अरे ! इसने यह इशारा किया है कि चन्द्रगुप्त के शत्रुओं को जानता हूँ ।

शिष्य—मूर्ख ! क्या यह बे-सिर-पैर की बात कर रहे हो ।

गुप्तचर—ब्राह्मण महाराज ! यह उचित ही होती ।

शिष्य—यदि क्या होता ।

गुप्तचर—यदि सुनने के लिए जानकार (व्यक्ति) मिलता ।

चाणक्य—भद्र ! बेखटके भीतर आओ । सुनने और समझने वाले को पा जाओगे ।

गुप्तचर—यह आया । (प्रवेश करके और समीप जाकर) आर्य की जय हो ।

चाणक्य—(देखकर मन में) क्यो, यह तो प्रजा की मनोवृत्ति जानने के वास्ते भेजा गया निपुणक है । (प्रकट) भद्र, स्वागत है । बैठो ।

गुप्तचर—आर्य की जैसी आज्ञा (पृथ्वी पर बैठता है) ।

Chanakya (Listening to himself)—Ha ! this is hinted by him that he knows the people who dislike Chandragupta

Pupil—Fool, what nonsense are you talking ?

Spy—Hallo Brahman, this would have been very sensible

Pupil—If what ?

Spy—If I get a person who knows how to listen

Chanakya—Gentleman, come in with confidence, you will get one who can listen and understand

Spy—Here I enter (Entering and advancing) victory to your Noble self

Chanakya (Seeing to himself)—Why, this is Nipunaka employed by me to know the minds of the people (Aloud) Welcome gentleman, sit down

Spy—As Noble Sir commands (sits down on the earth)

टिप्पणी

(१) **चन्द्रगुप्तात् अपरक्तान्**—चन्द्रगुप्त से विरोध करने वाले (लोगो को)। अप+रञ्ज्+क्त, द्वितीयाबहुवचने=अपरक्तान्। (२) **उपक्षिप्तम्**—इशारा किया गया, इगित किया गया। उप्+क्षिप्+क्त। (३) **विश्रब्धम्**—विश्वासपूर्वक। यह 'प्रविश' क्रिया का विशेषण है। (४) **असम्बद्धम्**—बे-मतलब की। अनावश्यक। सम्+बन्ध्+क्त। न सम्बद्धम् इति असम्बद्धम्। (५) **कथम्**—आश्चर्यसूचक अव्यय है। आ ज्ञातम्—हाँ समझ गया। किसी-किसी पुस्तक मे यह पाठ है "कथ प्रभूतत्वात् कार्याणा कस्य परिज्ञाने नियुक्त निपुणक इति न ज्ञायते। आ ज्ञातम्। (६) **प्रकृतिचित्तपरिज्ञाने**—प्रजा के मन की बात जानने के वास्ते।

चाणक्यः—भद्र, वर्णयेदानी स्वनियोगवृत्तान्तम्। अपि वृषलमनुरक्ताः प्रकृतयः ?

चरः—अह इं ? अज्जेण क्खु तेसु तेसु विराअकारणेसु परिहरिअंतेसु सुगहीदणामहेए देवे चन्दउत्ते दिढं अनुरत्ताओ पकिदिओ। किंदु उण संति एत्थ णअरे अमच्चरक्खसेण सह पढमं समुप्पण्णसिणेहबहुमाणा तिण्णि पुरिसा, जे देवस्स चन्दसिरिणो सिरिं ण सहन्दि। (अथ किम् ? आर्येण खलु तेषु तेषु विरागकारणेषु परिह्रियमाणेषु सुगृहीतनामधेये देवे

चन्द्रगुप्ते दृढमनुरक्ताः प्रकृतयः। किन्तु पुनः सन्त्यत्र नगरे अमात्यराक्षसेन सह प्रथमं समुत्पन्नस्नेहबहुमानास्त्रयः पुरुषाः ये देवस्य चन्द्रश्रियः श्रियं न सहन्ते।)

चाणक्यः—(सक्रोधम्) ननु वक्तव्यं स्वजीवितं न सहन्ते इति। भद्र, अपि ज्ञायन्ते नामधेयतः?

चरः—कहं अजाणिअणामहेआ अज्जस्स णिवेदिअन्ति? (कथमज्ञातनामधेया आर्यस्य निवेद्यन्ते?)

चाणक्यः—तेन हि श्रोतुमिच्छामि।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अब अपने कार्य के विषय में बताओ। क्या प्रजा चन्द्रगुप्त को चाहती है या नही।

चर—आर्य, आपने पहले ही से ऐसा प्रबध किया है कि विरक्ति के सभी कारणो को दूर कर दिया है। इस हेतु सारी प्रजा महाराज चन्द्रगुप्त में अनुरक्त है। किन्तु इस नगर में राक्षस मत्री के तीन परम मित्र ऐसे है जो महाराज चन्द्रगुप्त की श्री को सहन नही कर सकते।

चाणक्य—(क्रोध से) ऐसा कहो कि वे अपना जीवन नहीं सहन कर सकते। क्या तुम उनका नाम जानते हो?

चर—जो नाम न जानता तो आप के सामने निवेदन क्यो करता?

चाणक्य—तो मैं उनको सुनना चाहता हूँ।

Chanakya—Good man, now tell me the details of your mission Are the people attached to Vrishala?

Spy—What else all the reasons for discontentment have already been removed by your Noble self and so the peoples are attached to king Chandragupta of auspicious name But there are three persons in this city who are fast friends of minister Rakshas and they do not brook the glory of the king (Chandragupta) whose splendour is like that of the moon

Chanakya (with anger)—You should rather say that they do not tolerate their own life Do you know their names?

Spy—How can be unknown persons be reported to you?

Chanakya—Then, I wish to know (the names)

टिप्पणी

(१) स्वनियोगवृत्तान्तम्—अपने कार्य का समाचार। (२) अथ किम्—स्वीकारवाचक अव्यय है। इसका अर्थ है "हाँ" "और नही तो क्या"। (३) तेषु

विरागकारणेषु परिह्रियमाणेषु—विराग के सभी कारणो को दूर कर देने पर अर्थात् नाराज होने के कारण दूर कर दिये गये है। यहाँ 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' सूत्र से सप्तमी हुई। (४) **चन्द्रश्रिय**—चन्द्रमा की श्री के समान श्री है जिसकी। चन्द्रस्य श्री इव श्री यस्य स तस्य। (५) **समुत्पन्नस्नेहबहुमाना**—जिनका (राक्षस मे) स्नेह और आदर पैदा हो गया है। (६) **नामधेयत**—नाम से। अत्र 'प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्' इति वार्तिकेन तृतीया। तत तृतीयान्तात् नामधेयशब्दात् तसि स्वार्थे। (७) **अज्ञातनामधेया**—जिनका नाम नही मालूम है।

चरः—सुणादु अज्जो। पढमं दाव अज्जस्स रिपुपक्खे बद्धपक्खवादो खवणओ जीवसिद्धी। (शृणोत्वार्यः। प्रथमं तावदार्यस्य रिपुपक्षे बद्धपक्षपातः क्षपणको जीवसिद्धिः।)

चाणक्यः—(सहर्षमात्मगतम्) अस्मद्रिपुपक्षे बद्धपक्षपातः क्षपणकः! (प्रकाशम्) किंनामधेयो हि सः।

चरः—जीवसिद्धी णाम सो जेण सा अमच्चरक्खसप्पउत्ता विसकण्णा देवे पव्वदीसरे समावेसिदा। (जीवसिद्धिर्नाम स येन सा अमात्यराक्षसप्रयुक्ता विषकन्या देवे पर्वतेश्वरे समावेशिता।)

चाणक्यः—(स्वगतम्) जीवसिद्धिरेष तावदस्मत्प्रणिधिः। (प्रकाशम्) भद्र, अथापरः कः?

चरः—अज्ज, अवरो वि अमच्चरक्खसस्स पिअवअस्सो काअत्थो सअडदासो णाम। (आर्य, अपरोऽपि अमात्यराक्षसस्य प्रियवयस्यः कायस्थः शकटदासो नाम।)

चाणक्यः—(विहस्यात्मगतम्) कायस्थ इति लघ्वी मात्रा। तथापि न युक्तं प्राकृतमपि रिपुमवज्ञातुम्। तस्मिन्मया सुहृच्छद्मना सिद्धार्थको विनिक्षिप्तः। (प्रकाशम्) भद्र, तृतीयं श्रोतुमिच्छामि।

चरः—तिदीओ वि अमच्चरक्खसस्स दुदीअं विअ हिअअं पुप्फउरणिवासी मणिआरसेट्ठी चन्दणदासो णाम। जस्स गेहे कलत्तं ण्णासीकदुअ अमच्चरक्खसो णअरादो अवक्कन्तो। (तृतीयोऽपि अमात्यराक्षसस्य द्वितीयमिव हृदयं पुष्पपुरनिवासी मणिकारश्रेष्ठी चन्दनदासो नाम। यस्य गेहे कलत्रं न्यासीकृत्य अमात्यराक्षसो नगरादपक्रान्तः।)

हिन्दी अनुवाद—गुप्तचर—आर्य सुने। पहला तो आपके शत्रुओ का बहुत बडा सहायक क्षपणक जीवसिद्धि है।

चाणक्य—(हर्ष के साथ मन में) हमारे शत्रुओ का सहायक क्षपणक! (प्रकट) उसका नाम क्या है?

चर—उसका नाम जीवसिद्धि है जिसने अमात्य राक्षस द्वारा भेजी गई विषकन्या को महाराज पर्वतेश्वर पर प्रयोग किया।

चाणक्य—(मन में) अरे यह जीवसिद्धि तो हमारा गुप्तचर है। (प्रकट) अच्छा, दूसरा कौन है।

चर—आर्य, दूसरा अमात्य राक्षस का प्रियमित्र शकटदास कायस्थ है।

चाणक्य—(हँस कर अपने आप) "कायस्थ" यह तो छोटी मात्रा है (अर्थात्) (कोई बडी बात नही है) तथापि क्षुद्र शत्रु की भी उपेक्षा नही करनी चाहिए। इसी हेतु तो मैने सिद्धार्थक को उसका मित्र बनाकर उसके पास रक्खा है। (प्रकाश) तीसरे को सुनना चाहता हूँ।

चर—तीसरा भी अमात्य राक्षस का ही अभिन्न हृदय पाटलिपुत्र का सबसे बडा जौहरी चन्दनदास है, जिसके घर में अमात्य राक्षस अपना परिवार सुरक्षित छोडकर नगर से बाहर चला गया है।

Spy—Listen, Noble Sir The foremost supporter of your enemy is the mendicant Jivasiddhi

Chanakya (*To himself, Joyfully*)—The mendicant, the foremost supporter of our enemy (Aloud) What is his name ?

Spy—He is Jivasiddhi by name who employed to king Parvateshwar, the poisoned-girl sent by minister Rakshas

Chanakya (*To himself*)—This Jivasiddhi is but my emissary (Aloud) Good man, who is the next ?

Spy—Arya, the next is Shakatdas Kayastha who is a dear friend of minister Rakshas.

Chanakya (*Laughing to himself*)—A Kayastha is an insignificant thing, still even an ordinary enemy should not be considered to be slight I have set Siddharthak on him in the guise of a friend (Aloud) Gentleman, I wish to hear of the third.

Spy—The third is Chandandas, the jeweller-banker, the resident of Kusumpura and who is, as it were, the second self of minister Rakshas, and in whose house, minister Rakshas has left his family and retired from the city

टिप्पणी

(१) **बद्धपक्षपात**—जिसने मित्रता कर ली है। जो प्रेम करता है। पक्षे पात (सुप्सुपा स०) बद्ध पक्षपात अनेन इति बद्धपक्षपात (ब० स०)। (२) **अमात्यराक्षसप्रयुक्ता विषकन्या**—अमात्येन राक्षसेन प्रयुक्ता इति अमात्य-राक्षसप्रयुक्ता। अमात्यराक्षस द्वारा भेजी गई विषकन्या। इस चर को यह पता नही है कि जीवसिद्धि क्षपणक चाणक्य का ही आदमी इन्दुशर्मा है। चाणक्य ने तो यही बात फैला दी थी कि राक्षस ने विषकन्या को जीवसिद्धि के माध्यम से भेजकर पर्वतक को मरवाया है। (३) **समावेशिता**—नियुक्त किया। सम्—आ+विश्+णिच्+क्त कर्मणि। **प्रणिधि**—गुप्तचर। प्रणिधीयन्ते अस्मिन् इति प्र—नि+धा+कि। (४) **कायस्थ इति लघ्वी मात्रा**—कायस्थ तो छोटी चीज है। चाणक्य का मतलब है कि वह तो लिखने-पढने का काम करते हैं। उनसे लडाई नही हो सकती। अत शकटदास से विशेष भय नही है। (५) **सुहृच्छद्मना**—मित्र के वेष मे। (६) **मणिकारश्रेष्ठी**—सेठ, जौहरी। मणीन् करोतीति मणिकार 'मणिकारश्चासौ श्रेष्ठी च मणिकारश्रेष्ठी। (७) **कलत्रम्**—स्त्री को, परिवार को। (८) **न्यासीकृत्य**—निक्षिप्य। धरोहर रखकर। नि+अस्+घञ् कर्मणि=न्यास। अन्यास न्यास कृत्वा इति न्यास+च्वि+कृ+क्त्वा—ल्यप्। **नगरादपक्रान्त**—नगर से बाहर चला गया है। अप+क्रम्+क्त। अपादाने पञ्चमी है।

चाणक्यः—(आत्मगतम्) नूनं सुहृत्तमः। न अनात्मसदृशेषु राक्षसः कलत्रं न्यासीकरिष्यति। (प्रकाशम्) भद्र, चन्दनदासस्य गृहे राक्षसेन कलत्रं न्यासीकृतमिति कथमवगम्यते ?

चरः—अज्ज, इअं अङ्गुलिमुद्दा अज्जं अवगदत्थं करिस्सदि। (आर्य, इयमङ्गुलिमुद्रा आर्यमवगतार्थं करिष्यति।) (इत्यर्पयति।)

चाणक्यः—(मुद्रामवलोक्य गृहीत्वा राक्षसस्य नाम वाचयति) । (सहर्षं स्वगतम् ।) ननु वक्तव्यं राक्षस एवास्मदङ्गुलिप्रणयी संवृत्त इति । (प्रकाशम्) भद्र, अङ्गुलिमुद्राधिगमं विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि ।

चरः—सुणादु अज्जो । अत्थि दाव अहं अज्जेण पौरजणचरिदअण्णेसणे णिउत्तो परघरप्पवेसे परस्स अणासंकणिज्जेण इमिणा जमपडेण हिण्डन्तो मणिआरसेट्ठिचन्दणदासस्स गेहं पविट्ठोम्हि । तहि जमपडं पसारिअ पडत्तोम्हि गीदाइं गाइदुं । (शृणोत्वार्यः । अस्ति तावदहमार्येण पौरजनचरितान्वेषणे नियुक्तः परगृहप्रवेशे परस्यानाशङ्कनीयेन अनेन यमपटेन आहिण्डमानो मणिकारश्रेष्ठिचन्दनदासस्य गृहं प्रविष्टोऽस्मि । तत्र यमपटं प्रसार्य प्रवृत्तोऽस्मि गीतानि गातुम् ।)

चाणक्यः—ततः किम् ?

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(स्वगत) सचमुच परम मित्र है। (क्योकि) अपने से भिन्न जनो के पास राक्षस (अपनी) स्त्री को नही रखेगा। (प्रकट) भद्र, यह कैसे जानते हो कि चन्दनदास के घर में राक्षस ने अपनी स्त्री को रखा है ?

चर—आर्य, यह अँगूठी आप को बता देगी। (अँगूठी देता है)

चाणक्य—(अँगूठी देखकर) और उसे लेकर राक्षस का नाम पढता है। (हर्ष से अपने मन में) भद्र, अब तो राक्षस हमारी मुट्ठी में आ गया। (प्रकट) अच्छा, पूरे विस्तार से सुनाओ कि यह अँगूठी तुमको कैसे मिली ?

चर—आर्य, सुनिये। मै तो पाटलिपुत्र के लोगो की मनोवृत्ति जानने के लिए आप द्वारा नियुक्त ही किया गया था। लोगो के घरो में इस यमपट के साथ प्रवेश करने में किसी को सन्देह न होने से इधर-उधर ढूँढता-ढाँढता एक बार चन्दनदास के घर में जा पहुँचा और वहाँ यमपट को फैला कर गीत गाने लगा।

चाणक्य—तब क्या हुआ ?

Chanakya (*To himself*)—Really he is his best friend Rakshas will not entrust his wife to one who is not like a second self (Aloud) Good man, how did you know that Rakshas has left his wife in the house of Chandandas

Spy—Noble Sir, this ring will itself tell you (Gives him the ring)

Chanakya—(Seeing the ring and taking it, reads the name of Rakshas and to himself Joyfully) Well, it should be said that Rakshas himself has come in our fingers (Aloud) Good fellow, I wish to hear in detail how you got the ring

Spy—Noble Sir, listen The truth is that employed by you in finding out the minds of the people, I entered the house of the jeweller-banker Chandandas roaming with this board of Yama which cannot create suspicion in entering the house of others There, spreading Yama-board, I began to sing

Chanakya—What next ?

टिप्पणी

(१) **अवगतार्थं करिष्यति**—बतलायेगी। अवगत विदित अर्थं विषय येन तम् अवगतार्थम्। (२) **अस्मदङ्गुलिप्रणयी**—हमारे मुट्ठी मे आ गया। अस्माकम् अङ्गुलय तासु प्रणयी। चाणक्य को राक्षस की अँगूठी पाने से इतना आनन्द हुआ कि उसने यही समझा कि राक्षस हाथ मे आ गया है। (३) **विस्तरेण**—विस्तारपूर्वक। वि+स्तॄ+अप् भावे=विस्तर, तेन। विस्तारशब्दे तु 'प्रथने वावशब्दे' इति सूत्रेण घञ्प्रत्यय । अतएव 'वाक्यस्य विस्तर', 'पटस्य विस्तार' इत्यादि। **चरितान्वेषणे**—चरित का पता लगाने मे। (४) **परस्यानाशकनीयेन**—जिससे दूसरो को शङ्का न हो। (५) **आहिण्डमान**—घूमता हुआ।

चरः—तदो एक्कादो अववरकादो पञ्चवरिसदेसीओ पिअदंसणीअसरीराकिदी कुमारओ बालत्तणसुलहकोदूहलो-प्फुल्लणअणोणिक्कमिदुं पउत्तो। तदो हा णिग्गदो हा णिग्गदो त्ति संकापरिग्गहणिवेदइत्तिओ तस्स एव्व अववरकस्स अब्भन्तरे इत्थिआजणस्स उट्ठिदो महन्तो कलअलो। तदो ईसि दार-देशदाविदमुहीए एक्काए इत्थिआए सो कुमारओ णिक्क-मन्तो एव्व णिब्भच्छिअ अवलम्बिदो कोमलाए बाहुलदाए। तस्साए कुमारसंरोधसंभमप्पचलिदङ्गुलिदो करादो पुरिस-अङ्गुलिपरिणाहप्पमाणघडिआ विअलिआ इअं अङ्गुलिमुद्दिआ देहलीबन्धम्मि पडिआ उट्ठिदा ताए अणवबुद्धा एव्व मम चलणपासं समागच्छिअ पणामणिहुआ कुलबहु विअ णिच्चला

संबुता। मए वि अमच्चरक्खसस्स णामंकिदेत्ति अज्जस्स पादमूलं पाविदा। ता एसो इमाए आअमो। (ततश्च एकस्मादपवरकात्पञ्चवर्षदेशीयः प्रियदर्शनीयशरीराकृति. कुमारको बालत्वसुलभकौतूहलोत्फुल्लनयनो निष्क्रमितुं प्रवृत्तः। ततो हा निर्गतो हा निर्गत इति शङ्कापरिग्रहनिवेदयिता तस्यैवापवरकस्याभ्यन्तरे स्त्रीजनस्योत्थितो महान्कलकलः। तत ईषद्द्वारदेशदापितमुख्या एकया स्त्रिया स कुमारको निष्कामन्नेव निर्भत्स्यावलम्बितः कोमलया बाहुलतया। तस्याः कुमारसंरोधसंभ्रमप्रचलिताङ्गुलेः करात्पुरुषाङ्गुलिपरिणाहप्रमाणघटिता विगलितेयमङ्गुलिमुद्रिका देहलीबन्धे पतिता उत्थिता तया अनवबुद्धैव मम चरणपार्श्वे समागत्य प्रणामनिभृता कुलवधूरिव निश्चला सवृत्ता। मयापि अमात्यराक्षसस्य नामाङ्कितेति आर्यस्य पादमूलं प्रापिता तस्मादेषोऽस्या आगमः।)

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद देखने में बडा सुन्दर लगभग पाँच साल का एक बालक, जिसकी आँखें बालसुलभ कौतूहल से खिल गयी थी, एक कमरे से बाहर निकलने लगा और उसके निकलते ही भीतर रहने वाली स्त्रियो का "हाय कहाँ गया कहाँ गया" इस प्रकार घबराहट से भरा हुआ बडे जोर का होहल्ला मच गया। उसके बाद एक स्त्री ने दरवाजे से थोडा मुँह निकाल कर झाँका और निकलते हुए उस बालक को डाँटकर कोमल बाँहो से पकड लिया। यह अँगूठी जिसकी गढन पुरुष की अँगुली की नाप की है उस बालक को पकडने में घबराहट के कारण उस स्त्री की ही काँपती हुई अँगुली से निकल गई और चौखट पर गिर पडी और उछल कर उस स्त्री के बिना जानें मेरे पैर के पास चुपके से आकर प्रणाम करती हुई कुलवधू के समान निश्चल हो गई। मैंने भी अमात्य राक्षस का नाम इस पर देखकर आपकी सेवा में इसे उपस्थित किया। मेरे हाथ में इस अँगूठी के आने की यही कहानी है।

After that a boy, about five years old, of a very lovely complexion, tried to come out of a room, with eyes shining with curiosity natural in a boy At this, there was a great hubble of ladies crying, "Alas, gone out Alas, gone out," which indicated alarm within the room Then a lady, peeped through the door

and scolding the boy, who attempted to come out, caught him with her tender creeper-like arm This ring, which is made in the size of a man's finger, slipped off from that lady's shaking finger, while she was attempting to catch the boy, and dropped on the threshold, rebounded, and rolled up to the edge of my foot without being seen by her and stopped motionless like a bride while bowing down And, as it bears the name of minister Rakshas, I have brought it to your Noble Sir's foot This is the detail of how it was got

संस्कृत व्याख्या—तत च एकस्मात् अपवरकात् प्रकोष्ठात् पञ्चवर्षदेशीय अतिदर्शनीयशरीराकृति अतिदर्शनीया परममनोहरा शरीराकृति शरीररचना यस्य स कुमारक बालक बालत्वसुलभकौतूहलोत्फुल्लनयन बालत्वसुलभ बालकोचित यत् कौतूहलम् उत्सुकता तेन उत्फुल्ले विकसिते नयने नेत्रे यस्य स निष्क्रमितु बहिरागन्तु प्रवृत्त प्रचक्रमे ननु बहिरागत इति। तत हा निर्गत हा निर्गत हा दु खम् हा कष्टम् अपयात बालक इति शङ्कापरिग्रहनिवेदयिता शङ्कासूचक तस्यैव अपवरकस्य प्रकोष्ठस्य अभ्यन्तरे स्त्रीजनस्य नारीणा महान् कलकल कोलाहल उत्थित अजायत। तत ईषत् किंचित् द्वारदेशदापितमुख्या द्वारदेशे दापित दत्त मुख यया सा तया एकया स्त्रिया नार्या स कुमारक बालक निष्क्रामन् एव बहिरागच्छन् एव निर्भर्त्स्य तिरस्कृत्य कोमलया बाहुलतया निजकरेण अवलम्बित गृहीत निरुद्ध वा तस्या स्त्रिया कुमारसरोधसम्भ्रमचलिताङ्गुले कुमारस्य बालकस्य सरोधे नियमने य सभ्रम शीघ्रता तेन प्रचलिता अङ्गुलय यस्मिन् तस्मात् करात् हस्तात् पुरुषाङ्गुलिपरिणाहप्रमाणघटिता पुरुषस्य अङ्गुले परिणाह माप तस्य प्रमाणेन मात्रया विघटिता निर्मिता इयम् अङ्गुलिमुद्रिका विगलिता पतिता देहलीबन्धे पतिता उत्थिता तथा रमण्या अनवबुद्धा एव अविदिता एव मम चरणपार्श्वं समागत्य प्रणामनिभृता प्रणामे अभिवादनकार्ये निभृता निश्चला कुलवधूरिव निश्चला सवृत्ता गतिरहिता जाता मया अपि अमात्यराक्षसस्य नामाङ्किता नाम्ना अङ्किता चिह्निता इति अस्माद्धेतो आर्यस्य तव चाणक्यस्य पादमूल चरणप्रान्तम् इय प्रापिता आनीता। तत् एष अस्या मुद्राया आगम मुद्राप्राप्तिवृत्तान्त ।

टिप्पणी

(१) **अपवरकात्**—कमरे से, अपव्रियते अनेन अस्मिन् वा इति। अप+

वृ+अप् अधिकरणे करणे वा=अपवर । स एव अपवरक अपवर+कन्, तस्मात् । (२) **पञ्चवर्षदेशीय**—लगभग पाँच वर्ष की आयुवाला। पञ्च वर्षाणि अस्य इति पञ्चवर्ष (ब० स०)। ईषदून पञ्चवर्ष इति पञ्चवर्ष+देशीयर् । (३) **प्रियदर्शनीयशरीराकृति**—जिसके शरीर की आकृति अति प्रिय और सुन्दर थी। प्रिया दर्शनीया च शरीरस्य आकृति यस्य स । (४) **बालत्वसुलभ-कौतूहलोत्फुल्लनयन**—लडको मे स्वाभाविक कुतूहलता के कारण खिले हुए नेत्रवाला। बालत्वसुलभकौतूहलेन उत्फुल्ले नयने यस्य स । उत्फुल्ल—उद्+फल्+क्त कर्तरि 'ति च' इति सूत्रेण उत्वम् 'उत्फुल्लसफुल्लयोरुपसख्यानम्' इति वार्तिकेन लत्वम्। (५) **शङ्कापरिग्रहनिवेदयिता**—भय के आविर्भाव का सूचक, जिससे भय सूचित होता था। यह कोलाहल का विशेषण है। शङ्काया परिग्रह-आविर्भाव तस्य निवेदयिता। परि+ग्रह्+अप्=परिग्रह । (६) **ईषद्द्वारदेश-दापितमुख्या**—जो दरवाजे के भीतर से थोडा-थोडा झाँकती हुई थी। ईषत् अल्प द्वारम् एव देश प्रदेश तत्र दापित निहित मुखम् आनन यया सा तया। (७) **कुमारसरोधसभ्रमप्रचलिताङ्गुले**—लडके को (बाहर जाने से) रोकने मे व्याकुलता के कारण काँपती उँगली वाले हाथ से, कुमारस्य सरोध तस्मिन् सभ्रम तेन प्रचलिता अङ्गुलय यस्य स तस्मात्। यह करात् का विशेषण है। (८) **परिणाह**—विशालता, नाप। (९) **अनवबुद्धा**—उसके बिना जाने अर्थात् अँगूठी का गिरना उसे मालूम न पडा। (१०) **प्रणामनिभृता**—प्रणाम करने मे झुकी हुई या नम्र।

चाणक्यः—भद्र ! श्रुतम्, अपसर। नचिरादस्य परिश्रम-स्यानुरूपं फलमधिगमिष्यसि।

चरः—जं अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्तः।)

चाणक्यः—शार्ङ्गरव ! शार्ङ्गरव !

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! आज्ञापय।

चाणक्यः—वत्स ! मसीभाजनं पत्त्रञ्चोपानय।

शिष्यः—यदाज्ञापयत्युपाध्यायः (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य) उपाध्याय ! इदं मसीभाजनं पत्रञ्च ।

चाणक्यः—(पत्रं गृहीत्वा स्वगतम्) किमत्र लिखामि ? अनेन खलु लेखेन राक्षसो जेतव्यः ।

(प्रविश्य)

प्रतीहारी—जेदु अज्जो (जयत्वार्यः) ।

चाणक्यः—(सहर्षमात्मगतम्) गृहीतो जयशब्दः । (प्रकाशम्) शोणोत्तरे ! किमागमनप्रयोजनम् ?

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—भद्र ! सुन लिया। जाओ बहुत जल्दी ही इस परिश्रम के योग्य पुरस्कार पावोगे।

गुप्तचर—श्रीमान् की जैसी आज्ञा। (बाहर चला जाता है।)

चाणक्य—शार्ङ्गरव ! शार्ङ्गरव !

(प्रवेश करके) शिष्य—गुरुजी, आज्ञा दीजिए।

चाणक्य—वत्स, दावात और कागज तो ले आओ।

शिष्य—आचार्य की जैसी आज्ञा (जाकर फिर आकर) आचार्य, यह दावात और कागज है।

चाणक्य—(कागज लेकर मन ही मन) इसमें क्या लिखूं। इस लेख से तो राक्षस को जीतना है।

(प्रवेश करके) प्रतीहारी—जय हो महाराज ! जय हो।

चाणक्य—(प्रसन्नता से मन में ही) यह जय तो बडा ही अच्छा है। (जय शब्द तो पा लिया) (प्रकट) शोणोत्तरे, कैसे आना हुआ ?

Chanakya—Good man, I have heard everything, now go, presently you will get a reward befitting this toil of yours

Spy—As Noble Sir orders (Exit)

Chanakya—Sharangrava, Sharangrava

(Entering) *Pupil*—Preceptor, order me

Chanakya—My boy, bring me an inkpot and paper

Pupil—As the preceptor commands, (Going out and re-entering) Preceptor, it is the inkpot and paper

Chanakya (*Looking the leaf to himself*)—What shall I write on it Rakshas has to be conquered with this letter

(Entering) *Door-keeper*—Victory to the Noble Sir

Chanakya (*Joyfully to himself*)—"Victory" has been announced (Aloud) Sonottara, how have you come ?

टिप्पणी

(१) **नचिरात्**—शीघ्र। यहाँ 'न' 'नञ्' से भिन्न निषेधार्थक अव्यय है। 'चिरात्' भी दीर्घकालार्थक अव्यय है। न चिरात् (सुप्सुपा स०) अपवर्गे तृतीया। अव्ययत्वात् सुब्लोप। (२) "**अनेन खलु लेखेन राक्षसो जेतव्य**" ज्योंही चाणक्य ऐसा सोचता है त्योंही प्रतीहारी आकर "जय हो" ऐसा कहती है। इसको चाणक्य एक शुभ शकुन मानता है और भावी विजय की आशा उसे प्रतीत होने लगती है इसी से वह कहता है "गृहीतो जयशब्द" इसको नाटकीय भाषा मे "गण्ड" कहते है। "गण्ड प्रस्तुतसबधिभिन्नार्थं सहसोदितम्" प्रस्तुतविषय के सम्बन्ध मे कोई बात सहसा पैदा हो जाना "गण्ड" है। यही इस नाटक का पताका स्थान है। (३) **प्रतीहारी**—राजा के पास के द्वार पर रहने वाली स्त्री प्रतीहारी कहलाती है। प्रतीहारी का लक्षण —'**सधिविग्रहसम्बद्धनानाचार-समुत्थितम्। निवेदयन्ति या कार्यं प्रतिहार्यस्तु ता मता**'॥ प्रति+हृ+घञ्+ङीप्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घ, तदा प्रतीहारी।

प्रतीहारी——अज्ज ! देवो चन्दसिरी सीसे कमलमुउला-आरमञ्जलिं निवेसिअ अज्जं विणवेदि। इच्छामि अज्जेण अब्भणुण्णादो देवस्स पव्वदेसरस्स पारलोइअं कारेदुम्। तेण अ धारिदपुब्बाइं आहरणाइं बह्मणाणं पडिवादेमि त्ति। (आर्य ! देवश्चन्द्रश्रीः शीर्षे कमलमुकुलाकारमञ्जलिं निवेश्य आर्यं विज्ञापयति——'इच्छाम्यार्येणाभ्यनुज्ञातः देवस्य पर्वतेश्वरस्य पारलौकिकं कर्तुम्। तेन च धारितपूर्वाण्याभरणानि ब्राह्मणानां प्रतिपादयामीति।)

चाणक्यः——(सहर्षमात्मगतम्) साधु वृषल ! ममैव हृदयेन सह संमन्त्र्य सन्दिष्टवानसि। (प्रकाशम्) शोणोत्तरे ! उच्यतामस्मद्वचनाद्वृषलः——'साधु वत्स ! अभिज्ञः खल्वसि लोकव्यवहाराणा, तदनुष्ठीयतामात्मनोऽभिप्रायः। किन्तु पर्वतेश्वरधृतपूर्वाणि गुणवन्ति भूषणानि गुणवद्भ्य एव ब्राह्मणेभ्यः प्रतिपादनीयानि। तदहं स्वयमेव परीक्षितगुणान् ब्राह्मणान् प्रेषयामि'।

प्रतीहारी—जं अज्जो आणवेदि (यदार्य आज्ञापयति) (इति निष्क्रान्ता ।)

चाणक्यः—शार्ङ्गरव! उच्यन्तामस्मद्वचनाद्विश्वावसु-प्रभृतयः त्रयो भ्रातरः—'वृषलात् प्रतिगृह्याभरणानि भव-द्भिरहं द्रष्टव्य' इति ।

शिष्यः—यदाज्ञापयत्युपाध्यायः । (इति निष्क्रान्तः ।)

हिन्दी अनुवाद—प्रतिहारी—महाराज सम्राट् चन्द्रगुप्त ने कमल के मुकुल के समान प्रणामाञ्जलि को सिर से लगाकर कहा है "कि यदि आप आज्ञा दें तो महाराज पर्वतेश्वर का श्राद्ध कर दूं और जो आभूषण वे पहले (जीवन-काल में) पहनते थे वे योग्य ब्राह्मणो को दे दिये जायें।"

चाणक्य—(प्रसन्नता से मन में) धन्य हो वृषल, धन्य हो। मानो मेरे ही मन से सलाह लेकर कहलाया हो। (प्रकट) शोणोत्तरे, जाकर मेरी ओर से वृषल से कह दो "कि तुमको तो लोक-व्यवहार का ज्ञान है ही तो जैसा चाहो वैसा करो। परन्तु पर्वतेश्वर के धारण किए हुए मूल्यवान् आभूषणो को गुणी ब्राह्मणो को ही दिए जायें। इसके लिए मैं खुद ही ऐसे ब्राह्मणों को भेजता हूँ, जिनके गुण की परीक्षा हमने कर ली है।"

प्रतिहारी—जो आर्य की आज्ञा (बाहर निकल जाती है)।

चाणक्य—शार्ङ्गरव, जावो और मेरी तरफ से विश्वावसु आदि तीनो भाइयो से कहो कि वे लोग वृषल के पास जाकर उससे आभूषणो को लेकर मुझसे भेंट कर लें।

शिष्य—जैसी आचार्य की आज्ञा (जाता है)।

Door-keeper—Noble Sir, placing on his head his joined palms like a lotus-bud, the king, having the splendour like that of the moon, has sent this message, "By your order I want to perform the shraddha ceremony of king Parvateshwar and wish to give, in gift to Brahmans, the ornaments previously worn by him"

Chanakya—(*with joy to himself*) Bravo, Vrishala, you have said as if you had consulted my own heart (Aloud) Sonottara, go, tell the Vrishal on my behalf, " You are conversant with the ways of the world , so do as you wish But the valuable ornaments previously worn by king Parvateshwar should be given to the worthy alone, so I shall myself send Brahmans of tested merits "

Door-keeper—As Noble Sir commands (Exit)

राज की सेना मे से । म्लेच्छाना राजा म्लेच्छराज तस्य बलस्य म्लेच्छराजबलस्य ।
(३) परया सुहृत्तया—बडे मित्रभाव से ।

कौलूतश्चित्रवर्मा मलयनरपति सिंहनादो नृसिंह
काश्मीर पुष्कराक्ष क्षतरिपुमहिमा सैन्धव सिन्धुषेण ।
मेघाख्य पञ्चमोऽस्मिन् पृथुतुरगबल पारसीकाधिराजो
नामान्येषा लिखामि ध्रुवमहमधुना चित्रगुप्त प्रमार्ष्टु ।।२०।।

अन्वय—कौलूत चित्रवर्मा नसिंह मलयनरपति सिहनाद काश्मीर पुष्कराक्ष क्षतरिपुमहिमा स धव सि धुषेण पथुतुरगबल पारसीकाधिराज मेघारय पञ्चम अस्मिन अहम ध्रुवम अधुना एषा नामानि लिखामि चित्रगुप्त प्रमाष्टु ।

हिदी अनुवाद—उनके नाम ये है—कुलूतराज, चित्रवर्मा, मनुष्यों में श्रेष्ठ मलयनरेश, सिंहनाद, काश्मीर का राजा पुष्कराक्ष, शत्रुनाशक सि धुदेश का राजा सि धुषेण और विशाल घोडो की सेना से युक्त पारसीक देश का राजा मेघ। अभी तो इस पत्र में म इन्हीं का नाम लिखता हूँ। चित्रगुप्त अपनी सूची में से इनका नाम हटा दे (अर्थात जीवितो की सूची में ये अब न रहेंगे)।

They are Chitravarma the king of Kuluta Singhnada the lion like king of Malaya Pushkaraksha the king of Kashmir Sindhusena the king of Sindhu who has destroyed his enemies and Megh the king of Persia with a vast army of cavalry I will surely write their names in my list let Chitragupta remove them out of his (book)

सस्कृत व्याख्या—इमे ते पञ्च राजान ये राक्षसमनुवत ते कौलूत कुलूत-देशाधिप चित्रवर्मा प्रथम मलयनरपति मलयमहाराज नसिंह नरश्रेष्ठ सिंह-नाद द्वितीय काश्मीर कश्मीरदेशनाथ पुष्कराक्ष ततीय, क्षतरिपुमहिमा क्षत विनाशित रिपूणा शत्रुणा महिमा अभिषेणनशक्ति येन स स धव सि धु देशाधिप सि धुषेण चतुथ, पथुतुरगबल प्रभूताश्वादिसन्य पारसीकाधिराज मेघारय पञ्चम । लेखस्य मम पूर्वाथभूता इम एव ते पञ्च राजान । एषा निश्चितमृत्यूना दैवेनाप्यशक्यरक्षाणाम नामानि ध्रुवमहमस्मिन लेखे लिखामि का शक्ति चित्रगुप्तस्य मल्लेखमन्यथाकत्तुम् । यद्यस्ति काचित शक्ति आगच्छतु स प्रमाष्टु येषा नामानि अहम् लिखामि तेऽवश्य यमलोक गमिष्यति ।

टिप्पणी

(१) **कौलूत**—कुलूत देश का राजा। कुलूतानां राजा इति। कुलूत–अञ। आधुनिक कुल्लू प्रदेश को कुलूत माना जाता है। (२) **पथुतुरगबल**—बहुत से घोडो की सेना वाला। तुरगाणा घोटकाना बल स य तुरगबल। पथु विशाल तुरगबल यस्य स (बहुव्रीहि)। **प्रमाष्टु**—मिटा दे। प्र–मज–लोट—ति मजेव द्धि' इत्यनेन वद्धि। जीवो को मारने जिलाने का काम यमराज का है। उनका लेखपाल चित्रगुप्त है। वे जिसको मारना चाहते ह उसका नाम अपनी पजिका से काट देते ह और जिसको जिलाना चाहते ह उसका नाम लिख रखते ह। चाणक्य की ललकार है कि वह भी मेरे द्वारा विनाश करने के लिए लिखे गये नामो को मिटा नही सकता। इस पद्य मे अर्थापत्ति अलकार है पाचाली रीति है ओज गुण है, वीर रस है और स्रग्धरा छद है।

(विचिन्त्य) अथवा न लिखामि, पूवमनभिव्यक्तमेवास्ताम्। (नाट्येन लिखित्वा) शार्ङ्गरव!

(प्रविश्य)

शिष्य —उपाध्याय! आज्ञापय।

चाणक्य —वत्स! श्रोत्रियाक्षराणि प्रयत्नलिखितान्यपि नियतमस्फुटानि भवन्ति। तदुच्यतामस्मद्वचनात्सिद्धार्थक। (कर्णे एवमिव) एभिरक्षरै केनापि कस्यापि स्वय वाच्यमिति अदत्तबाह्यनामान लेख शकटदासेन लेखयित्वा मामुपतिष्ठस्व न चाख्येयमस्मै चाणक्यो लेखयतीति।

शिष्य —तथा। (इति निष्क्रान्त।)

चाणक्य —(स्वगतम्) हन्त जितो मलयकेतु।

(प्रविश्य लेखहस्त)

सिद्धार्थक —जेदु अज्जो। अज्ज! अअ सो सअडदासेण लिहिदो लेह। (जयत्वार्य। आर्य! अयं स शकटदासेन लिखितो लेख।)

चाणक्य —(गृहीत्वा) अहो दर्शनीयान्यक्षराणि। (अनुवाच्य) भद्र! अनया मुद्रया मुद्रयैनम।

सिद्धार्थक —(तथा कृत्वा) अज्ज! अअ मुद्दिदो लेह। किं अवर अणुचिट्ठीअदु? (आर्य! अय मुद्रितो लेख। किमपरमनुष्ठीयताम्?)

चाणक्य —भद्र! कस्मिश्चिदाप्तजनानुष्ठेये कर्मणि त्वा व्यापारयितुमिच्छामि।

सिद्धार्थक —(सहर्षम्) अज्ज! अणुग्गिहीदोह्मि। आणवेदु अज्जो किं इमिणा दासजणेण अज्जस्स अणुचिट्ठिदव्वम्। (आय! अनुगृहीतोऽस्मि। आज्ञापयत्वार्य किमनेन दासजनेनार्यस्यानुष्ठातव्यम्।)

हिन्दी अनुवाद—(कुछ सोचकर) अथवा नाम न लिखू। पत्र का पूवभाग अस्पष्ट ही रहे (लिखने का अभिनय करके) शाङ्गरव।

शिष्य—(प्रवेश करके) आचाय, आज्ञा दीजिए।

चाणक्य—वत्स, श्रोत्रिय के अक्षर बहुत सँभाल कर भी लिखे जाने पर अवश्य ही अस्पष्ट होते ह तो हमारी तरफ से सिद्धाथक से कहो (कान में ऐसा ऐसा) इन अक्षरो के द्वारा कोई व्यक्ति किसी से कुछ कहना चाहता है और इस पर बिना बाहर नाम लिखे हुए एक पत्र शकटदास से लिखवाकर मेरे पास आओ और उसको यह न बताना कि यह पत्र चाणक्य लिखवा रहा है।

शिष्य—ऐसा ही सही (चला जाता है)

चाणक्य—(मन में) अब क्या। मलयकेतु को तो जीत लिया।

सिद्धाथक—जय हो महाराज, जय हो। शकटदास का लिखा हुआ यह लेख है।

चाणक्य—(लेकर) अहा! कितने सुदर अक्षर ह। (बाचकर) भद्र! इसे लो। इस मुद्रा की इस पर छाप लगा दो।

सिद्धाथक—(ऐसा करके) आय, इस पर छाप लगा दी अब और क्या करूँ?

चाणक्य—भद्र, तुम्हें एक ऐसे काम में लगाना चाहता हूँ जो विश्वासपात्र व्यक्ति ही के द्वारा किया जा सकता है।

सिद्धाथक—(हषपूवक) आय, बडी कृपा है। आज्ञा दीजिए यह दास आय की क्या सेवा कर सकता है?

Chanakya (Thinking)—Or I will not write the name let the first part of the letter remain obscure (Acts writing) Sharangrava

Pupil (Entering)—Preceptor command me

Chanakya—My boy the letters of a Srotriya however carefully written are always illegible so tell Siddharthaka on my behalf (In the ear so and so) some one has to be addressed by some one else in those words and without writing anything (name) outside get a letter written by Shakatdas and come to me without telling him that Chanakya is causing this letter to be written

Pupil—Be it so (Exit)

Chanakya (To himself)—Ha ! Now Malayaketu is overcome (Entering with a letter in hand)

Siddharthaka—Victory to the Noble Sir Here is the letter written by Shakatdasa

Chanakya (Taking it)—Ah ! how beautiful are the letters (Reading it) good man seal it with this ring (stamp)

Siddharthaka (Having done so)—Noble Sir I have stamped it What else should I do ?

Chanakya—Good man I want to engage you in a work which has to be done by a trustworthy person

Siddharthaka (joyfully)—Noble Sir I am favoured Noble Sir may order me what has to be done by this slave ?

टिप्पणी

(१) **पूवम**—पहला भाग। (२) **अनभिव्यक्तम**—अस्पष्ट। न अभि-व्यक्तम इति+अनभिव्यक्तम अभि+वि+अञ्ज+क्त। (३) **श्रोत्रियाक्षराणि भवन्ति**—ऐसा कहकर चाणक्य ने शिष्य के मन मे उठने वाली शका का निवारण कर दिया कि चाणक्य क्यो शकटदास से पत्र लिखवाना चाहता है। (४) **प्रयत्न लिखितानि अपि**—बहुत सभालकर लिखे जाने पर भी। (५) **अदत्तबाह्यनामानम लेखम**—वह पत्र जिसके बाहर (पाने वाले का) नाम न लिखा हो। अदत्तम बाह्यनाम अस्मिन्निति अदत्तबाह्यनामानम। (६) **उपतिष्ठस्व**—मुझसे मिलो। स्था धातु परस्मपदी है परन्तु उपाददेवपूजा" नामक वार्तिक से इसका आत्मनेपद हो गया। (७) **आप्तजनानुष्ठेये**—विश्वासपात्र व्यक्ति के द्वारा किया जाने वाला। आप्तजनेन अनुष्ठेयमिति तस्मिन्नाप्तजनानुष्ठेये। **व्यापारयितुम**—नियुक्त करने के लिए। वि+आ+प+णिच+तुमुन।

चाणक्य —प्रथम तावत वध्यस्थान गत्वा घातका सरोषदक्षिणाक्षिसकोचसज्ञा ग्राहयितव्या । ततस्तेषु गृहीत-सज्ञेषु भयापदेशादितस्तत प्रद्रुतेषु शकटदासो वध्यस्था-नादपनीय राक्षस प्रापयितव्य । तस्माच्च सुहृत्प्राणपरिरक्षण-परितुष्टात पारितोषिक ग्राह्यम् । राक्षस एव कञ्चित काल सेवितव्य । तत प्रत्यासन्नेषु परेषु प्रयोजनमिदमनुष्ठेयम । कर्णे एवमिव

सिद्धार्थक —ज अज्जो आणवेदि । (यदार्य आज्ञापयति) ।

चाणक्य —शार्ङ्गरव ! शार्ङ्गरव ! !

(प्रविश्य)

शिष्य —उपाध्याय ! आज्ञापय ।

चाणक्य —उच्यतामस्मद्वचनात्कालपाशिको दण्डपाशि-कश्च यथा वृषल समाज्ञापयति—'य एष क्षपणको जीवसिद्धि-र्नाम राक्षसप्रयुक्तो विषकन्यया पवतक घातितवान् स एनमेव दोष प्रख्याप्य सनिकार नगरान्निर्वास्यताम' इति ।

शिष्य —तथा । (इति परिक्रामति ।)

चाणक्य —वत्स ! तिष्ठ तिष्ठ—'योऽयमपर कायस्थ शकटदासो नाम राक्षसप्रयुक्तो नित्यमस्मच्छरीरमभिद्रोग्धु-मिह प्रयतते स चाप्येन दोष प्रख्याप्य शूलमारोप्यताम् गृह-जनश्चास्य बन्धनागार प्रवेश्यताम्' इति ।

शिष्य —तथा । इति (निष्क्रान्त ।)

हिंदी अनुवाद—चाणक्य—भद्र, तुम्हें वध्यभूमि में जाना है और वहाँ वधिको को यह सकेत समझा देना है कि शकटदास का वध करने के समय ज्योंही तुम उन पर क्रोध करोगे और अपनी दाहिनी आँख को दबाकर इशारा करोगे त्योंही वे (इशारे को समझकर) वहाँ से घबडा कर भाग खडे होगे। इसके बाद तुम वध्यभूमि से शकटदास को भगाकर राक्षस के पास पहुँचा देना और मित्र की प्राणरक्षा से प्रसन्न राक्षस से इनाम लेना और कुछ दिनो तक उसी की सेवा

करना और जब हमारे शत्रु समीप आ जायें तो यह काम करना (कान में सब बातें बताता है)।

सिद्धार्थक—जैसी आप की आज्ञा।

चाणक्य—शाङ्गरव! शाङ्गरव!!

(प्रवेश कर) शिष्य—गुरु जी! आज्ञा दीजिये।

चाणक्य—जाकर मेरी ओर से कालपाशिक और दण्डपाशिक से कहो कि सम्राट चन्द्रगुप्त की आज्ञा है कि जीवसिद्धि नामक क्षपणक जिसने राक्षस द्वारा भेजी गई विषकन्या से पर्वतेश्वर की हत्या करायी वह इसी दोष के कारण अपमान पूर्वक नगर से निकाल दिया जाय।

शिष्य—अच्छा (जाने लगता है)।

चाणक्य—वत्स! रुको, रुको। दूसरा आदमी जो शकटदास कायस्थ है जो राक्षस का भेजा हुआ है और नित्यप्रति हमारे शरीर (चन्द्रगुप्त) से द्रोह करने का प्रयत्न करता रहता है, वह भी इसी अपराध की घोषणा करके शूली पर चढ़ा दिया जाय और उसके बाल बच्चों को कारागार में भेज दिया जाय।

शिष्य—ऐसा ही सही (बाहर चला जाता है)।

Chanakya—First of all go to the execution ground and teach the executioners the meaning of the signal of contracting the right eye in anger then they will having understood the signal run away hither and thither pretending to be afraid Then you will remove Shakatdas from the execution ground and take him to Rakshas there reward has to be accepted by you from Rakshas who will be pleased at the saving of his friend s life Then you should serve Rakshas for sometime and when all our enemies have come close to us you have to do this (whispers in the ear)

Siddharthaka—As your Noble Sir commands

Chanakya—Sharangrava Sharangrava

Pupil (Entering)—Preceptor order me

Chanakya—Go and tell Kalapashika and Dandapashika in my name that Vrishal orders thus He the mendicant known as jivasiddhi who being employed by Rakshas had killed Parvateshwara with a poison girl be turned out from the city with great insult for this very offence

Pupil—Be it so (Prepares to go)

Chanakya—Stop my boy stop And this other a Kayastha named Shakatdasa who being sent here by Rakshas always tries to harm our person be hanged for this offence and the members of his family be sent to the prison

Pupil—So be it (Exit)

संस्कृत व्याख्या—प्रथमम आदौ तावत वधस्थान वधभूमिं गत्वा घातका हिंसका सरोषदक्षिणाक्षिसकोचसज्ञा ग्राहयितव्या क्रोधपूवक त्व दक्षिण नेत्र किञ्चित निमीलय तथा स्वसकेतस्याथ घातकान बोधयेति भाव । तत तेषु घातकेषु गहीतसज्ञेषु ज्ञातसकेतेषु भयापदेशात भयस्य मिष कृत्वा इत तत प्रद्रुतेषु निगतेषु शकटदास वधस्थानात अपनीय राक्षस प्रापयितव्य नेतव्य । तस्मात् राक्षसात सुहृत्प्राणपरिरक्षणपरितुष्टात मित्रप्राणरक्षाप्रसन्नात पारितोषिक पुरस्कार ग्राह्य । कचितकाल तत्र स्थित्वा राक्षस एव सेवितव्य राक्षसस्य सेवा कुरु । तत तदनन्तर प्रत्यासन्नेषु परेषु शत्रुषु समीपमागतेषु इदम् प्रयोजनम कायम अनुष्ठेयम कायम ।

यत आय आज्ञापयति आदिशति । अस्मद्वचनात मम कथनानुसारेण कालपाशिक दण्डपाशिक उच्यताम कथ्यताम यथा वषल चन्द्रगुप्त समाज्ञापयति आज्ञा करोति य एष क्षपणक बौद्धभिक्षु जीवसिद्धि नाम राक्षसप्रयुक्त राक्षसेन नियुक्त विषकन्यया पवतक राजानम घातितवान स एनमेव दोषम अपराधम प्रख्याप्य घोषयित्वा सनिकारम अपमानसहितम नगरात निर्वास्यताम बहिष्क्रियताम । य अयम अपर द्वितीय कायस्थ शकटदासो नाम राक्षसप्रयुक्त राक्षसनियोजित नित्य सततम अस्मच्छरीर राजान वषलम अभिद्रोग्धुम इह अस्मिन्नगरे प्रयतते स चापि एन दोषम अपराध प्रख्याप्य घोषयित्वा शूलमारोप्यताम शूलेन हन्यताम अस्य गहजन च परिवार बन्धनागारम कारागहे प्रवेश्यताम स्थाप्यताम् ।

टिप्पणी

(१) **सरोषदक्षिणाक्षिसकोचसज्ञाम**—क्रोध के साथ दाहिनी आँख के दबाने का इशारा । रोषेण सह वतमानम सरोषम (बहुव्रीहि) दक्षिणम अक्षि दक्षिणाक्षि (कमधारय) तस्य सकोच । सरोष यथा तथा दक्षिणाक्षिसकोच स एव सज्ञासकेत ताम् । तात्पय यह है कि सिद्धाथक घातको को इस प्रकार पहले से ही सकेत कर दे—शकटदास को शूली पर चढाये जाने के अवसर पर जब मैं दाहिनी आख का इशारा करूँ उस समय तुम लोग शकटदास को छोड कर भाग जाना । (२) **ग्राहयितव्य**—समझा दिया जाय—बोधयितव्य । ग्रह+णिच+तव्य । (३) **तेषु प्रद्रुतेषु**—उनके भाग जाने पर । भावे सप्तमी है । (४) **भयापदेशात**—डर के बहाने से । भयम् एव अपदेश छलम भयाप-

देशम तस्मात। घातक लोग भी बनावटी भय का बहाना करके। (५) **तस्मात सुहृत्प्राणपरिरक्षणपरितुष्टात**—मित्र के प्राण की रक्षा हो जाने के कारण प्रसन्न हुए उस (राक्षस) से। (६) **प्रत्यासन्नेषु परेषु**—शत्रु के समीप आ जाने पर। (७) **कालपाशिक दण्डपाशिक**—ये दोनो वधिक है। कालपाश प्रहरणमस्य, दण्डपाशौ प्रहणे अस्य इति कालपाश दण्डपाश+ठञ—इक। (८) **घातितवान**—वध किया हत्या किया या करवाया। हन+णिच+क्तवतु। (९) **सनिकारम**—अपमान के साथ।

चाणक्य—(चिन्ता नाटयित्वा आत्मगतम्) अपि नाम दुरात्मा राक्षसो गृह्येत ?

सिद्धार्थक—अज्ज ! गहीदो। (आय ! गृहीत ।)

चाणक्य—(सहर्षमात्मगतम्) हन्त ! गृहीतो राक्षस। (प्रकाशम्) भद्र ! कोऽय गृहीत ?

सिद्धार्थक—गहीदो मए अज्जस्स सन्देसो, ता गमिस्स अह कज्जसिद्धीए। (गृहीतो मया आर्यस्य सन्देश। तद्गमिष्याम्यह कार्यसिद्ध्यै।)

चाणक्य—(साङ्गुलिमुद्र लेखमर्पयित्वा) गम्यताम्। अस्तु ते कार्यसिद्धि।

सिद्धार्थक—तह। (तथा।) (इति निष्क्रान्त।)

(प्रविश्य)

शिष्य—उपाध्याय ! कालपाशिको दण्डपाशिकश्च उपाध्याय विज्ञापयत—'इदमनुष्ठीयते देवस्य चन्द्रगुप्तस्य शासनम्' इति।

चाणक्य—शोभनम्। वत्स ! मणिकारश्रेष्ठिन चन्दनदासमिदानीं द्रष्टुमिच्छामि।

शिष्य—तथा। (इति निष्क्रम्य चन्दनदासेन सह पुन प्रविश्य) इत इत श्रेष्ठिन् !

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य (चिन्ता का अभिनय करके) क्या यह दुष्ट राक्षस अब भी पकडा नहीं जा सकता (वश में नहीं किया जा सकता)।

सिद्धार्थक—आर्य, पकडा गया।

चाणक्य—(प्रसन्नता से अपने मन में) बस, अब राक्षस वश में आ गया (प्रकट) वत्स, यह कौन पकडा गया?

सिद्धार्थक—मैंने आर्य का सन्देश समझ लिया। अब मैं अपना काम सिद्ध करने जाता हूँ।

चाणक्य—(अँगूठी के छाप से युक्त पत्र सौंपकर) जाओ। तुम्हारा कार्य सिद्ध हो।

सिद्धार्थक—जैसी आज्ञा। (चला जाता है)

(प्रवेश करके) शिष्य—आचार्य कालपाशिक और दण्डपाशिक आपसे निवेदन करते हैं कि देव चन्द्रगुप्त की आज्ञा का पालन हो रहा है।

चाणक्य—अच्छा वत्स, अब मैं सेठ जौहरी चन्दनदास को देखना चाहता हूँ।

शिष्य—जैसी आज्ञा (बाहर जाकर फिर चन्दनदास के साथ प्रवेश कर) सेठ जी, इधर आइए, इधर।

Chanakya (*Acts reflecting to himself*)—Would wicked Rakshas be really caught ?

Siddharthaka—Noble Sir caught

Chanakya (*With joy to himself*)—Ha is Rakshasa caught ? (Aloud) Good man who is it that is caught ?

Siddharthaka—Noble Sir your message is caught by me Now I go for the success of my mission

Chanakya (*Handing over the letter bearing seal*)—Go May you be successful in your mission

Siddharthaka—So be it (Goes away)

Pupil (Entering)—Preceptor Kalapashika and Dandapashika inform you The order of king Chandragupta is being carried out

Chanakya—Very well My boy I wish to see the jeweller banker Chandandasa

Pupil—Very well (Going out and coming with Chandan das)—This way banker this way

टिप्पणी

अपि—यहा सम्भावनार्थक अव्यय है। 'गर्हासमुच्चयप्रश्नशङ्कासम्भावनास्वपि' इत्यमर। ज्यो ही चाणक्य कहता है "अपि राक्षस गृह्येत" त्यो ही आवाज आती है "गृहीत यह एक दूसरा शकुन (गण्ड) है। हन्त—यहाँ हर्ष सूचक अव्यय है।

चन्दनदास —(स्वगतम्)

चाणक्कम्मि अअरुणे सहसा सद्दाविदस्स लोअस्स ।
णिद्दोसस्स वि सङ्का किं उण मह जाददोसस्स ॥२१॥

ता भणिदा मए धणसेणप्पमुहा णिअणिवेससठिआ–कदावि चाणक्कहदओ गेह विचिण्णावेदि । ता अवहिदा णिव्वहध भट्टिणो अमच्चरक्खसस्स घरअणम् । मह दाव ज होदि त होदु त्ति ।

(चाणक्येऽस्मिन्नकरुणे सहसा शब्दायितस्य लोकस्य ।
निर्दोषस्यापि शङ्का किं पुनर्मम जातदोषस्य ॥

तस्माद्भणिता मया धनसेनप्रमुखा निजनिवेशसस्थिता — कदापि चाणक्यहतको गेह विचिनोति । तस्मादवहिता निर्वहत भर्तुरमात्यराक्षसस्य गृहजनम् । मम तावत् यद्भवति तद्भवतु इति ।)

शिष्य —भो श्रेष्ठिन् ! इत इत ।

चन्दनदास —अअ आअच्छामि । (अयमागच्छामि ।)

(उभौ परिक्रामत)

शिष्य —(उपसृत्य) उपाध्याय, अय श्रेष्ठी चन्दनदास ।

चन्दनदास —जेदु अज्जो । (जयत्वार्य) ।

चाणक्य —(नाट्येनावलोक्य) श्रेष्ठिन् ! स्वागतम् । इदमासनमास्यताम् ।

अ वय—अकरुणे अस्मिन चाणक्ये सहसा श दायितस्य लोकस्य निर्दोषस्य अपि शङ्का, जातदोषस्य मम पुन किम ?

हि दी अनुवाद—च दनदास—(मन में) यह चाणक्य भी कसा निदय है कि निर्दोष व्यक्ति भी अचानक इसके सामने बुलाया जाने पर काँप उठता है । फिर मुझ अपराधी का क्या कहना ।

इसलिए अपने घर में रहने वाले धनसेन आदि से मने कह दिया है कि कभी भी जब दुष्ट चाणक्य मेरे घर की तलाशी ले तो सावधानी से अमात्य राक्षस के परिवार को हटा देना। मुझ पर जो बीते सो बीते।

शिष्य—ऐ सेठ जी, इधर से, इधर से।

चन्दनदास—यह म आता हूँ। (दोनो घूमते ह)

शिष्य—(पास जाकर) यह सेठ चन्दनदास ह।

चन्दनदास—महाराज की जय हो।

चाणक्य—(देखने का अभिनय करके) सेठ, स्वागत है। लीजिए इस आसन पर बठिए।

Chandandas (To himself)—Chanakya is cruel and so apprehension arises even in an innocent person when he is summoned all of a sudden what is to be said of me who am guilty Therefore I have instructed Dhansena etc who live in my house thus wretched Chanakya may search my house at any time so remove with care the members of the family of our master minister Rakshas Let come what may unto me

Pupil—This way O banker this way

Chandandas—Here I come (Both go round)

Pupil—(Going near) Preceptor here is Chandandas the banker

Chandandas—Victory to Noble Sir

Chanakya—(Acting seeing) Welcome Banker Here is a seat sit down on it

सस्कृत व्याख्या—अकरुणे दयारहिते चाणक्ये सहसा शब्दायितस्य आहूतस्य निर्दोषस्य अपि दोषरहितस्य अपि जनस्य प्राणिन शङ्का भयम जायते अर्थात न जाने किं करिष्यति इत्यादिरूप भय जायते मम पुनर्जातदोषस्य राक्षसकलत्र-रक्षणादिना कृतराजापराधिन पुन कथव का।

तस्मात्कारणात निजनिवेशसस्थिता मदगहनिवासिन धनसेनप्रमुखा मया भणिता कथिता कदापि चाणक्यहतक क्रूर चाणक्य मद्भवन मम गह विचिनोति निरूयति तस्मात अवहिता सावधानतया निवहत अपनयत भत्तु स्वामिन अमात्यराक्षसस्य गहजनम कुटुम्बम मम तावत एतेन कमणा यद्भवति तद्भवतु।

टिप्पणी

(१) **अकरुणे**—निदये। अविद्यमाना करुणा यस्य स अकरुण (नञ्ब-हुव्रीहि) तस्मिन। (२) **शब्दायितस्य**—बुलाये गए। शब्द+क्यङ+णिच्+

क्त। **जातदोषस्य**—राक्षस के परिवार को अपने घर मे छिपाकर रखने के कारण चन्दनदास अपने को अपराधी समझ रहा है। इस श्लोक मे अर्थापत्ति अलकार तथा आर्या छद है। (३) **चाणक्यहतक**—दुष्ट चाणक्य। हत एव हतक चाणक्यश्चासौ हतकश्चेति चाणक्यहतक कुत्सितानि कुतसन इति समास॥ (४) **विचिनोति**—तलाशी ले। (५) **निवहत**—हटा देना।

चन्दनदास—(प्रणम्य) किं ण जाणादि अज्जो जहा अणुचिदो उवआरो हिअअस्स परिहवादोवि दु खमुप्पादेदि। ता इह ज्जेव उचिदाए भूमीए उवविसामि। (किं न जानात्यार्य यथानुचित उपचारो हृदयस्य परिभवादपि दु खमुत्पादयति। तस्मादिहैवोचितायां भूमावुपविशामि।)

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन्! मा मैवम्। उचितमेवैतत् अस्मद्विधे भवत। तदुपविश्यतामासन एव।

चन्दनदास—(स्वगतम्) उपलक्खिदमणेण दुट्ठेन किंवि। (उपलक्षितमनेन दुष्टेन किमपि।) (प्रकाशम्) ज अज्जो आणवेदि त्ति। (यदार्य आज्ञापयति।) (उपविष्ट।)

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन् चन्दनदास! अपि प्रचीयन्ते सव्यवहाराणा वृद्धिलाभा।

चन्दनदास—(स्वगतम्) अच्चादरो सकणीओ। (अत्यादर शङ्कनीय)। (प्रकाशम) अह इ। अज्जस्स प्पसाएण अखण्डिदा मे वणिज्जा। (अथ किम्। आर्यस्य प्रसादेन अखण्डिता मे वणिज्या।)

चाणक्य—न खलु चन्द्रगुप्तदोषा अतिक्रान्तपार्थिवगुणानधुना स्मारयन्ति प्रकृती?

चन्दनदास—(कर्णौ पिधाय) सन्त पावम्। सारअणिसासमुग्गएण विअ पुण्णिमाचदेन चन्दसिरिणा अहिअ णन्दन्ति पकिदिओ। (शान्त पापम्। शारदनिशासमुद्गतेनेव पूर्णिमाचन्द्रेण चन्द्रश्रियाधिक नन्दन्ति प्रकृतय।)

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास—(प्रणाम करके) क्या आर्य यह नहीं जानते कि अनुचित सत्कार तिरस्कार से भी अधिक दुःखदायी होता है। मेरे लिए तो उचित आसन यही जमीन है, तो इसी पर मैं बैठता हूँ।

चाणक्य—सेठ जी, ऐसा न कहिए। हम लोगों के समान लोगों द्वारा आप को यही उचित है। अतः आसन पर ही बैठें।

चन्दनदास—(मन में) इस दुष्ट को कुछ मालूम हो गया है। (प्रकट) जो आर्य की आज्ञा।

चाणक्य—अजी सेठ चन्दनदास! आपका व्यवसाय तो बढ़ रहा है न?

चन्दनदास—(मन में) बहुत आदर शंका का कारण होता है (अर्थात् मेरा जो इतना आदर हो रहा है, वह शङ्का पैदा कर रहा है)। (प्रकट) हां महाराज, आपकी कृपा से मेरा व्यवसाय ठीक-ठीक चल रहा है।

चाणक्य—क्या कभी कभी चन्द्रगुप्त की त्रुटियां प्रजाओं को स्वर्गीय महाराज के गुणों का स्मरण नहीं करातीं।

चन्दनदास—(कानों पर हाथ रख करके) नहीं नहीं, ऐसा मत कहें। महाराज, जनता तो चन्द्रगुप्त को देखकर ऐसी प्रसन्न है जैसी की शरत पूर्णिमा के चन्द्र को देखकर प्रसन्न होती है।

Chandandas (Bowing)—Noble Sir do not you know that undue honour is more painful than even indignity So I sit here on the ground which is a proper seat for me

Chanakya—Oh Banker do not do so People like me have thought this to be proper place for you So sit on this seat

Chandandas (To himself)—This rogue has known some thing (Aloud) As your Noble self says (Sits)

Chanakya—Oh banker Chandandas ! is your business prospering ?

Chandandas (To himself)—Too much honour is to be dreaded (Aloud) Through your favour my businesss is un interrupted

Chanakya—Do the lapses of Chandragupta ever remind the people of the merits of the deceased king

Chandandas (Shuting his ears)—Do not say so Sir All the subjects are attached to Chandragupta in the same way as they are to the full moon of the Sharat

टिप्पणी

(१) अनुचित उपचार—अनुचित सम्मान। उपचार—उपचयते अनेन इति उप+चर्+घञ्। (२) परिभवात—अपमान से। परि+भू+अप भावे=परिभव, तस्मात। भाव यह है कि जो व्यक्ति जिस सम्मान के योग्य नहीं है

यदि उस व्यक्ति का वसा ही सम्मान किया जाता है तो उससे प्रसन्नता के स्थान पर दु ख ही अधिक होता है। च दनदास चाणक्य के सामने आसन पर बठने का अधिकारी नही है। अत जब चाणक्य उसे आसन पर बठने के लिए कहता है तो उसे प्रसन्नता के स्थान पर तिरस्कार ही मालूम पडता है। (३) **उपलक्षितम**—ताड गया है जान गया है। उप+लक्ष+क्त। (४) **प्रचीयन्ते**—बढ रहे ह। (५) **सव्यवहाराणाम वद्धिलाभा**—खरीद और बिक्री के लाभ (मुनाफा)। (६) **वणिज्या**—वणिग्यापार। वाणिज्य तु वणिज्या स्यात इत्यमर। वणिज कम भावो वा इति वणिज्या वणिज+यत भावे+टाप स्त्रियाम। (ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ् वाणिज्यम इति दीक्षित। माधवस्तु वणिज्याश द स्वभावात स्त्रीलिंग। भावे एव चात्र प्रत्ययो न तु कमणि इत्याह। **अतिक्रा तपार्थिवगुणान**—मतक राजा (नन्द के) गुणो को। अतिक्रा त पार्थिव तस्य गुणान। (७) **स्मारयन्ति**—याद दिलाते ह। (८) **शारदनिशासमुदगतेन इव**—शरद ऋतु की रात के (चाद के) समान। शारदी निशा शारदनिशा (कमधारय) तत्र समुदगत शरद+अण+ङीप स्त्रियाम शारदी।

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन्! यद्येव प्रीताभ्य प्रकृतिभ्य प्रियमिच्छन्ति राजान।

चन्दनदास—आणवेदु अज्जो किं कित्तिअ इमादो जणादो इच्छीअदि त्ति। (आज्ञापयतु आर्य किं कियदस्माज्जनादिष्यत इति।)

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन्! चन्द्रगुप्तराज्यमिद, न नन्द-राज्य, यतो नन्दस्यैवार्थरुचेरथसम्बन्ध प्रीतिमुत्पादयति, चन्द्रगुप्तस्य तु भवतामपरिक्लेश एव।

चन्दनदास—(सहर्षम्) अज्ज! अणुग्गहीदोह्मि। (आर्य! अनुगृहीतोऽस्मि।)

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन्! स चापरिक्लेश कथमाविर्भव-तीति ननु भवता प्रष्टव्या स्म।

चन्दनदास—आणवेदु अज्जो। (आज्ञापयतु आर्य।)

चाणक्य —संक्षेपतो राजनि अविरुद्धाभिवृत्तिभिर्वर्तितव्यम् ।

चन्दनदास —अज्ज ! को उण अधण्णो रण्णा विरुद्धो त्ति अज्जेण अवगच्छीअदि । (आर्य ! क पुनरधन्य राज्ञा विरुद्ध इति आर्येण अवगम्यते ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—हे सेठ, यदि ऐसी बात है तो अपनी प्रसन्न प्रजा से राजा लोग कुछ प्रिय की आशा करते हैं।

चन्दनदास—आर्य, आज्ञा दें इस जन से क्या और कितनी सेवा आप चाहते हैं।

चाणक्य—हे सेठ, यह राज्य अब चन्द्रगुप्त का है न कि नन्द का। धन के लोभी नन्द को ही धन सम्पत्ति से आनन्द हो सकता है। चन्द्रगुप्त को तो आप की सुख समृद्धि ही प्रसन्न कर सकती है।

चन्दनदास—(प्रसन्न होकर) आर्य, यह तो आप की कृपा है।

चाणक्य—हे सेठ, तुमको तो यह हम से पूछना था कि वह दुःख का अभाव (सुख समृद्धि) कैसे रह सकता है।

चन्दनदास—आर्य, आज्ञा दें।

चाणक्य—संक्षेप में, मुझे यही कहना है कि राजा में हम अनुकूल वृत्ति वाले रहें (उसके प्रतिकूल कोई काम न करें)।

चन्दनदास—वह कौन अभागा है जिसे आप राज्य के प्रतिकूल मानते हैं।

Chanakya—O Banker if so the king expects pleasure from his pleased subjects

Chandandas—Noble Sir order what and how much is expected of this person (me)

Chanakya—O Banker this kingdom now does not belong to Nanda it now belongs to Chandragupta The greedy Nanda was pleased with money but Chandragupta is pleased with your want of distress

Chandandas (with joy)—Noble Sir I am favoured

Chanakya—O Banker you ought to have asked of me how that absence of trouble can appear

Chandandas—Noble Sir may tell

Chanakya—In brief I have to say that we should behave in a manner which is unhostile to the king

Chandandas—Noble Sir who is that wretched fellow whom you deem to be hostile to the king

टिप्पणी

(१) **प्रीताभ्य प्रकृतिभ्य**—प्रसन्न हुई प्रजा से। (२) **कियत**—कितना। किं परिमाणमस्य इति। किम+यत। (३) **अर्थरुचे**—रुपये का लोभी। अर्थे रुचि यस्य स तस्य अर्थरुचे। यह नन्दस्य का विशेषण है। नन्द धन के लोभी के रूप मे प्रसिद्ध था। उसके विषय मे कहा जाता है कि वह ९९ करोड सोने की मोहरो का अधिपति था (अक ३ श्लोक २७)। अर्थ-सम्बन्ध—धन लाभ—धन की प्राप्ति। (४) **भवताम अपरिक्लेश एव**—आप (प्रजा) लोगो को कष्ट का न होना। नन्द धन का लोभी था अत उसे यही अच्छा लगता था कि प्रजा उसे धन दे। परन्तु चन्द्रगुप्त की यह इच्छा रहती है कि प्रजा को कष्ट न हो। यही चाणक्य के कहने का तात्पय है। (५) **राज्ञा विरुद्ध**—राजा के खिलाफ। राज्ञा सह कृतविरोध। सहार्थे ततीया। वि+रुध+क्त कतरि= विरुद्ध।

चाणक्य—भवानेव तावत्प्रथमम्।

चन्दनदास—(कर्णौ पिधाय) सन्त पाव, सन्त पावम। कीदिसो तिणाण अग्गिणा सह विरोहो? (शान्त पाप, शान्त पापम्। कीदृश तृणानाम् अग्निना सह विरोध ?)

चाणक्य—अयमीदृशो विरोध यत् त्वमद्यापि राजापथ्यकारिण अमात्यराक्षसस्य गृहजन स्वगृहमभिनीय रक्षसि।

चन्दनदास—अज्ज! अलीअ एद। केणावि अणभिण्णेण अज्जस्स णिवेदिदम्। (आर्य! अलीकमेतत् केनाप्यनभिज्ञेन आर्यस्य निवेदितम्।)

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन्! अलमाशङ्कया। भीता पूर्वराजपुरुषा पौराणामनिच्छतामपि गृहेषु गृहजन निक्षिप्य देशान्तर व्रजन्ति। ततस्तत्प्रच्छादन दोषमुत्पादयति।

चन्दनदास—एव ण्णेदम्। तस्मि समए आसि अह्मघरे अमच्चरक्खसस्स घरअणो त्ति। (एव नु इदम्। तस्मिन् समये आसीदस्मद्गृहे अमात्यराक्षसस्य गृहजन इति।)

चाणक्य—पूर्वमनृतमिदानीमासीदिति परस्परविरोधिनी वचने।

चन्दनदास—एत्तिअ ज्जेव अत्थि मे वाआच्छलम्। (एतावदेवास्ति मे वाक्छलम्।)

चाणक्य—भो श्रेष्ठिन्! चन्द्रगुप्ते राजनि अपरिग्रह-शङ्कलानाम्। तत् समर्पय राक्षसस्य गृहजनम्। अच्छल भवतु भवत।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—सबसे पहले तो आप ही ह।

चन्दनदास—(कानो को बन्द करके) ऐसा न कहें, ऐसा न कहें। आग के साथ तिनके का कैसा विरोध?

चाणक्य—यह विरोध ऐसा है कि तुम आज भी राजा का अहित करने वाले अमात्य राक्षस के परिवार को लाकर अपने घर में रख रहे हो (छिपा रहे हो)।

चन्दनदास—आर्य, यह असत्य है। किसी अनभिज्ञ व्यक्ति ने आपसे कह दिया है।

चाणक्य—सेठ जी, डरिये नहीं। डरे हुए पहले के राजपुरुष न चाहते हुए भी नागरिको के घर में अपने परिवार को रखकर दूसरे देश को चले जाते हैं। इस हालत में उनको छिपाना अपराध है।

चन्दनदास—ऐसा है कि उस समय मेरे घर में अमात्य राक्षस का परिवार था।

चाणक्य—चन्दनदास पहले तुम झूठ बोले "नही छिपा था" अब कहते हो "छिपा था" इस प्रकार की परस्पर विरोधी बातो से क्या लाभ।

चन्दनदास—मेरी बातो में इतना ही दोष (छल) है। अर्थात कहने में भूल हो गई।

चाणक्य—सेठ जी, चन्द्रगुप्त के राजा रहते हुए छल को स्थान नहीं है। इसलिए राक्षस के परिवार को सौप दो। और आप छलहीन हो जायें।

Chanakya—You are the first

Chandandas (closing the ears)—Begone sin, begone sin What enmity can be of straw with fire

Chanakya—The enmity is of this type that even to day you are taking over to your house giving shelter to the family of minister Rakshas who is doing harm to the king

Chandandas—Noble Sir some one who does not know the truth, must have told you this untruth

Chanakya—O Banker do not be afraid Terrified servants of the previous king go to other countries after keeping the

members of their family in the house of even unwilling citizens. To hide them afterwards amounts to guilt

Chandandas—This is so The members of the family of Rakshas were in my house at that time

Chanakya—At first (you said) untruth now (you say) were These two statements are self contradictory

Chandandas—There is only this fraud of words in me

Chanakya—O Banker there is no place for fraud during the reign of Chandragupta So surrender the members of the family of Rakshas and you become totally fraudless

टिप्पणी

(१) **राजापथ्यकारिण** —राजा का नुकसान करने वाले का। पथोऽनपेत पथ्यम पथिन+यत्। न पथ्यम अपथ्यम (नञ्तत०)। राज्ञ अपथ्यम (षष्ठी-तत)। तत करोति तच्छील राजापथ्य+कृ+णिनि=राजापथ्यकारी तस्य। (२) **अलमाशङ्कया**—अत्र गम्यमानापि क्रिया कारकविभक्तौ प्रयोजिका इत्यनेन ततीया। (३) **अनिच्छतामपि**—न चाहते हुए का भी। चाणक्य के कहने का मतलब है कि तुमने कोई अपराध नही किया है क्योकि राजा के कमचारी न चाहने वाले लोगा के घर मे उनकी इच्छा के विपरीत भी अपना परिवार उनके यहा छोड जाते ह। अत तुम डरो मत। अपराध तो तब होगा जब मागने पर भी तुम उनको छिपावोगे। (४) **प्रच्छादनम**—छिपाना। यह अपराध है। (५) **परस्परविरोधिनी**—एक दूसरे के विपरीत। (६) **वाकछलम**—वचन से छल। वाचि छलम (सुप्सुपा स०)। इसका लक्षण यह है—अविशेषाभिहितेऽर्थे वक्तुरभिप्रायादर्थान्तरकल्पन वाक्छलम न्यायसूत्र। (७) **परिग्रह** —स्थान शरण। परि+ग्रह+अप। (८) **अच्छलम**—छल का न होना। छलस्य अभाव। अव्ययीभाव स०।

चन्दनदास—अज्ज! ण विण्णवेमि तस्सिं समए आसि अह्मघरे अमच्चरक्खसस्स घरअणो त्ति। (आर्य! ननु विज्ञापयामि तस्मिन् समये आसीदस्मद्गृहे अमात्यराक्षसस्य गृहजन इति।)

चाणक्य—अथेदानी क्व गत ?

चन्दनदास—ण जाणामि। (न जानामि।)

चाणक्य—(स्मित कृत्वा) कथ न ज्ञायते नाम? भो श्रेष्ठिन्! शिरसि भयमतिदूरे तत्प्रतीकार।

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास—आर्य, कहता तो हूँ कि उस समय अमात्य राक्षस का परिवार मेरे यहा था।

चाणक्य—अब कहाँ गया?

चन्दनदास—मालूम नहीं।

चाणक्य—(मुस्कुराकर) कसे नहीं मालूम? सेठ जी सिर पर भय है और उसका प्रतीकार बहुत दूर है।

Chandandas—Noble Sir I say that at that time family of minister Rakshas was (in my house)

Chanakya—Where is it gone?

Chandandas—I do not know

Chanakya (smiling)—How do you not know? Oh Banker the danger is on your head and its remedy is very far

चन्दनदास—(स्वगतम्)

उवरि घण घणरडिअ दूरे दइदा किमेददावडिअम।
हिमवदि दिव्वोसहिओ सीसे सप्पो समाविट्ठो ॥२२॥
(उपरि घन घनरटित दूरे दयिता किमेतदापतितम्।
हिमवति दिव्यौषधय शीर्षे सर्प समाविष्ट ॥)

अन्वय—एतत किम आपतितम? उपरि घन घनरटित दूरे दयिता हिमवति दिव्यौषधय शीर्षे सर्प समाविष्ट।

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास (मन में) क्या हुआ (मेरी दशा तो ऐसी है कि) सिर पर साँप सवार हो और सजीवनी बूटी हो हिमालय पर, ऊपर तो बादल गरजता हो और प्यारी दूर हो।

Chandandas (To himself)—What has this happened The snake is sitting on the head and the divine herbs are on the Himalaya the deep roar of the clouds above and the beloved is away

सस्कृत व्याख्या—एतत किम आपतितम समायातम्। व्याकुलात्माहं कर्त्तव्य न जाने। उपरि मस्तकाग्रे घनरटितम मेघगर्जनम् दयिता स्त्री दूरे, हिमवति

हिमाद्रौ दिव्यौषधय विषहरा ओषधय किन्तु शीर्षे मस्तके सप अहि समाविष्ट आरूढ ।

टिप्पणी

शिरसि भयम तात्पय यह है कि आपको भय है राजा से जो बिलकुल निकट है और प्रतीकार की आशा है राक्षस से जो अत्य त दूर है। यहा अप्रस्तुत प्रशसा अलकार है।

चाणक्य —अन्यच्च नन्दमिव विष्णुगुप्त —(इत्यर्धोक्ते लज्जा नाटयित्वा) चन्द्रगुप्तममात्यराक्षस समुच्छेत्स्यतीति मैव मस्था ।

पश्य—

विक्रान्तैर्नयशालिभि सुसचिवै श्रीर्वक्रणासादिभि
नन्दे जीवति या तदा न गमिता स्थैर्यं चलन्ती मुहु ।
तामेकत्वमुपागता द्युतिमिव प्रह्लादयन्ती जगत्
कश्चन्द्रादिव चन्द्रगुप्तनृपते कर्तुं व्यवस्येत् पृथक् ॥२३॥

अपि च। ('आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्'—इति पूर्वोक्त पठति।)

चन्दनदास —(स्वगतम्) फलेण सवादिद से विकत्थिदम्। (फलेन सवादितमस्य विकत्थितम्।)

(नेपथ्ये कलकल ।)

अ वय—तदान दे जीवति मुहु चलन्ती या श्री विक्रान्त नयशालिभि वक्रणासादिभि सुसचिव स्थय न गमिता द्युतिमिव एकत्वमुपागता जगत प्रह्लाद यन्ती ताम च द्रादिव च द्रगुप्तनपते पृथक कतु क यवस्येत।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—और भी। न द को चाणक्य की तरह (आधा कहकर लज्जा का अभिनय करता है) यह मत समझो कि अमात्य राक्षस च द्रगुप्त को नष्ट कर देगा देखो—वह कौन है जो उस राजलक्ष्मी को, जिसे न द के जीवित रहने पर उसके बडे बडे वक्रनास ऐसे राजनीतिज्ञ शूर महाम त्री भी उसके साथ स्थिर न बना सके, अब सम्राट च द्रगुप्त से अलग करना चाहता है, जब कि वह

(लक्ष्मी) उससे ऐसी अभिन्न है और सारे ससार को सुख दे रही है जसे चद्रमा से चादनी। और भी "आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम" इस पूर्वोक्त श्लोक को पढ़ता है।

चदनदास—(मन में) इसकी आत्मप्रशसा तो (नदविनाश रूप) फल के अनुरूप ही है। (नेपथ्य में कलकल)

Chanakya—Moreover as Vishnugupta did Nanda (blushes at this half utterance) so minister Rakshas will annihilate Chandragupta do not think so See—

Who is it that wants to separate from king Chandragup a the Sri which even the eminent reliant and diplomatic minis ters like Vakranas and others could not make steady with Nanda while he was alive —the Sri which is now delighting the world like moonlight and united with him (Chandragupta)

Moreover—(Recites the verse आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम)

Chandandas (*To himself*)—His bragging is in accordance with the result (Noise in the dressing room)

सस्कृत व्याख्या—चाणक्य चदनदास तजयन्नाह—चदनदास राक्षस चद्रगुप्तम समुत्छेत्स्यति इति मैव मस्था। या श्री राजलक्ष्मी तदा तस्मिन्न श्वयसमये विक्रान्त विक्रमशालिभि नयज्ञ नीतिनिपुणर्वा सुसचिव राजसेवा लग्न अमात्य वक्रणासादिभि अपि जीवति नदे तद वये वा कस्मिन चित स्थय न गमिता निश्चलस्थितिं न प्रापिता अथ च वार वार चलन्ती चञ्चला एव स्थिता ताम श्रीमद्य समुद्योतमानचद्रगुप्तविभवे प्रनष्टे च नन्दश्वर्ये कोऽस्ति यश्चद्रगुप्तनपतावेकत्वमुपगता जगत ससारं प्रह्लादयन्तीम प्रजाजनमनोरञ्जन कारिणी चद्रात चद्रमस तदभिन्ना द्युति कौमुदीमिव चद्रगुप्तनपते पथक्कतु दूरस्था विधातु शक्नुयादिति न कोऽपीति भाव।

टिप्पणी

(१) **मा मस्था**—मत समझो। मन+लुङ—थास माङि लुङ इत्यनेन भविष्यति लुङ। 'न माङ्योगे इत्यनन अडागमप्रतिषेध। **विक्रात**—बलशाली। यह सचिव का विशेषण है। वि+क्रम्+क्त वतमाने। (२) **नयशालिभि**—नीतिज्ञो से। नीतिज्ञ। नयति राजानम इति नी+अच कत्तरि=नय। तेन शालते तै नयशालिभि। (३) **वक्रणास**—नद के मत्री। वक्रा नासा यस्य स वक्रणास (बहुव्रीहि स०) अच्प्रत्यय, नासिकाया नसादेश णत्वम।

(४) **एकत्वमुपगताम्**—चन्द्रगुप्त से जो हिल मिल गई है। भाव यह है कि जैसे चन्द्रमा से चादनी नही अलग की जा सकती उसी प्रकार अब राज्य-श्री चन्द्रगुप्त से नही अलग की जा सकती। इस श्लोक मे उपमा अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है। (५) **विकत्थन**—आत्मप्रशसा। इसका डीग हाँकना ठीक ही है क्योकि इसने नन्द वश का नाश कर दिया है।

चाणक्य—शार्ङ्गरव! ज्ञायता किमेतत्।

शिष्य—तथा (इति निष्क्रम्य, पुन प्रविश्य) उपाध्याय! एष राज्ञश्चन्द्रगुप्तस्य आज्ञया राजापथ्यकारी क्षपणको जीवसिद्धि सनिकार नगरान्निर्वास्यते।

चाणक्य—क्षपणक, अहह!! अथवा अनुभवतु राजापथ्यकारित्वस्य फलम। भो श्रेष्ठिन चन्दनदास! एवमय राजापथ्यकारिषु तीक्ष्णदण्डो राजा। तत् क्रियता पथ्य सुहृदवच। समर्प्यता राक्षसगृहजन। अनुभूयता चिर विचित्रो राजप्रसाद।

चन्दनदास—णत्थि मे गेहे अमच्चघरअणो (नास्ति मे गेहे अमात्यगृहजन।)

(नेपथ्ये पुन कलकल।)

चाणक्य—शार्ङ्गरव! ज्ञायता किमेतत्।

शिष्य—तथा। (इति निष्क्रम्य, पुन प्रविश्य) उपाध्याय! अयमपि राजापथ्यकारी एव कायस्थ शकटदास शूलमारोपयितु नीयते।

चाणक्य—स्वकर्मफलमनुभवतु। भो श्रेष्ठिन्! एवमय राजा अपथ्यकारिषु तीक्ष्णदण्डो न मर्षयिष्यति राक्षसकलत्रप्रच्छादन भवत। तद्रक्ष परकलत्रेण आत्मन कलत्र जीवितञ्च।

चन्दनदास—अज्ज! किं मे भअ दसेसि? सन्त वि गेहे

अमच्चरक्खसस्स घरअण ण समप्पेमि, कि उण असन्तम् । (आर्य ! किं मे भय दर्शयसि ? सन्तमपि गेहे अमात्यराक्षसस्य गृहजन न समर्पयामि, कि पुनरसन्तम् ।)

हिदी अनुवाद—चाणक्य—शाङ्गरव, मालूम करो यह क्या है ?

शिष्य—जो आज्ञा (निकल कर और पुन प्रवेश कर) आचाय, यह राजा चद्रगुप्त की आज्ञा से राजा का अहित करने वाला जीवसिद्धि क्षपणक अपमान के साथ नगर से निकाला जा रहा है ।

चाणक्य—अहा ! क्षपणक ! ! अथवा राजद्रोह का फल भोगे । सेठ चदनदास जी ! इस प्रकार राजद्रोहियो को राजा कठोर दण्ड देता है । इसलिये मित्र की बात जो हितकारी है मानो । राक्षस के घर वालो को सौंप दो और बहुत दिन तक राजा के अपूव अनुग्रह का फल भोगो ।

चदनदास—मेरे घर में अमात्य (राक्षस) के बाल-बच्चे नही है ।

(नेपथ्य में फिर कलकल की आवाज)

चाणक्य—शाङ्गरव, पता लगाओ यह क्या है ?

शिष्य—जो आज्ञा (बाहर जाकर और फिर प्रवेश कर) आचाय जी, यह भी राजा का शत्रु कायस्थ शकटदास शूली पर चढाये जाने के लिये ले जाया जा रहा है ।

चाणक्य—अपने कम का फल भोगो । सेठ जी इस प्रकार यह राजा द्रोहियो को कठोर दण्ड देने वाला है और आपके द्वारा राक्षस के परिवार का छिपाया जाना वह बर्दास्त नहीं करेगा । इसलिये दूसरे के परिवार से अपने प्राण और परिवार को बचाओ ।

चदनदास—आय, मुझे डर क्यो दिखा रहे ह ? घर में अमात्य राक्षस का परिवार रहते हुए भी समपण न करूगा, फिर न रहने पर तो बात ही निराली है ।

Chanakya—Sharangrava find out what it is ?

Pupil—Very well (Going out and coming back) Preceptor it is the mendicant Jivasiddhi who has harmed the king and is being turned out of the city with indignity by the king s order

Chanakya—Oh ho the mendicant or let him reap the fruit of his being enemically disposed to the king O banker Chan dandas thus the king inflicts severe punishment to evil doers so listen to the wholesome advice of a friend handover the family of Rakshas and enjoy the unique royal favour for a long time

Chandandas—The family of the minister is not in my house (Hubbub agin in the dressing room)

Chanakya—Sharangrava see what it is ?

Pupil—So be it (Going out and coming back) Preceptor this too is an enemy of the king—Kayastha Sakatdas is being led to be hanged

Chanakya—Let him reap the fruits of his deeds Oh banker thus a grim punisher of evil doers this king will not tolerate your hiding of the wife of Rakshas so save your own life and family at the cost of another s wife

Chandandas—Noble Sir why do you frighten me (with danger)? I would not hand over the family of minister Rakshas even if it were in my house what to say when it is not here (in my house)

सस्कृत व्याख्या—ज्ञायताम जानीहि किमेतत जनरव कस्मात्कारणात अयम कोलाहल । उपाध्याय आचाय एष राज्ञ नपते च द्रगुप्तस्य आज्ञया राजापथ्यकारी राजापराधी क्षपणको जीवसिद्धि सनिकारम सापमानम नगरात पाटलिपुत्रात निर्वास्यते बहि क्रियते । राजापथ्यकारित्वस्य राजापराधकरणस्य फलम परिणाम अनुभवतु ग ह्णातु राजापथ्यकारिषु राजद्रोहिषु तीक्ष्णदण्डो राजा कठोरशासन नपति तत तस्मात कारणात तथ्य हितकारि सुहृद्वच मित्रवचन क्रियताम पालय । राक्षसगहजनम समप्यताम राक्षसस्य परिवारम देहि । चिर बहुकाल विचित्र अपूव राजप्रसाद राजानुग्रह अनुभूयताम् ।

एवमयम राजा नप अपथ्यकारिषु राजद्रोहिषु तीक्ष्णदण्ड उग्रशासन न मषयिष्यति न सहिष्यते भवत तव राक्षसकलत्रप्रच्छादन राक्षसपरिवारगोपनम । तत तस्मात कारणात परकलत्रेण अ यकुटुम्बेन आत्मान कलत्र परिवारम जीवितञ्च प्राणान च रक्ष । आय, किं मे भय दशयसि कस्मात कारणात माम भीषयसि । अमात्यराक्षसस्य गहजन कलत्र सन्तमपि वतमानमपि न समपयामि न प्रदास्यामि किं पुन अस तम अविद्यमानम ।

टिप्पणी

(१) **राजापथ्यकारी**—राजा का अहित करने वाला । राजद्रोही । अपथ्य करोतीति अपथ्यकारी । राज्ञ अपथ्यकारीति राजापथ्यकारी । (२) **सनिकारम**—बेइज्जती के साथ । (३) **निर्वास्यते**—निकाला जा रहा है । निर्+वस्+णिच+लट—ते कमणि । प्राचीन काल मे स यासी तथा ब्राह्मण

को मृत्युदड के बदले केवल निर्वासन (देश निकाला) दिया जाता था— वपन द्रविणादान स्थानान्निष्क्रामण तथा। एष हि ब्रह्मब धूना वधो नान्योऽस्ति दैहिक'।। **तीक्ष्णदण्ड**—कडा दण्ड देने वाला। (४) **विचित्र राजप्रसाद**—हर प्रकार की राजा की कृपा। राज्ञ प्रसाद इति राजप्रसाद। चाणक्य च दनदास को लालच दे रहा है ताकि वह राक्षस के कुटुम्ब को सौप दे। (५) **भवत राक्षस कलत्रप्रच्छादनम**—आपका राक्षस के परिवार को छिपाना। (६) **स तमपि न समपयामि**—(च दनदास निभयता से कहता है) कि अगर राक्षस का परिवार होगा भी तो म न दूगा।

चाणक्य—चन्दनदास, एष ते निश्चय ?

चन्दनदास—बाढ एसो धीरो मे निच्चओ। (बाढ़म् एष धीरो मे निश्चय)।

चाणक्य—(स्वगतम्) साधु चन्दनदास साधु।

हि दी अनुवाद—च दनदास क्या यही तुम्हारा निश्चय है?
च दनदास—हाँ, यही मेरा दढ निश्चय है।
चाणक्य—(मन मे) शाबास, च दनदास, शाबास।

Chanakya—Chandandas is that your resolve ?
Chandandas—Certainly this is my firm resolve
Chanakya (*To himself*)—Bravo Chandandas Bravo

सुलभेष्वर्थलाभेषु परसवेदने जन।
क इद दुष्कर कुर्यादिदानी शिविना विना ।।२४।।

अ वय—इदानी शिविना विना क जन परसवेदने सुलभेषु अथलाभेषु इद दुष्कर कुर्यात ।।२४।।

हि दी अनुवाद—चाणक्य—इस समय (कलियुग में) महाराज शिवि को छोडकर तुम्हारे समान कौन ऐसा यक्ति है जो अपने स्वाथ के सिद्ध हो सकने पर भी पराए की रक्षा के लिए ऐसा दुष्कर काम (जसा तुम राक्षस के परिवार के लिए कर रहे हो) कर सकता है।

Chanakya—Who else but Shivi can do this difficult thing now in this Yuga as you are doing at another s distress, not minding his own gifts of wealth which is easily accessible

सस्कृत व्याख्या—इदानीम अस्मिन काले शिविना विना शिविं राजान विहाय क जन परस्य अन्यस्य सवेदने दु खे सुलभेषु सुप्राप्येषु अथलाभेषु राजप्रसादादिलाभेषु समीहितसिद्ध्यादिषु इद दुष्कर कठिन स्वजीवनस्य सशयापादनादिरूपम परोपकारकृत्यम राक्षसकलत्ररक्षणादि कुर्यात कतु शक्नुयात न कोऽपीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **शिविना विना**—राजा शिवि को छोडकर। सतयुग मे उशीनर देश मे शिवि नाम के एक राजा थे। उनके धम की परीक्षा करने के लिए इन्द्र ने बाज का रूप धारण किया और अग्नि ने कबूतर पक्षी का। बाज ने खाने के वास्ते उस पक्षी का पीछा किया। वह पक्षी भागकर राजा शिवि की गोद मे छिप गया। बाज ने राजा से कहा कि मेरा भोजन आप वापिस कर दे। परन्तु राजा ने कहा कि यह शरणागत है म इसे न दूगा बल्कि इसके बराबर अपना मास तुम्हें दे दूगा । उस माया के बाज ने यह बात मान ली। राजा अपना मास काटता गया और वह माया का कबूतर वजन मे भारी होता गया। अन्त मे राजा स्वय तुला पर चढ गये। इसके बाद दोनो देवताओ ने अपना रूप प्रकट कर दिया और राजा को आशीर्वाद देकर चले गये। राजा शिवि का इतना महान त्याग था। यहा पर शिविना मे ततीया पथक विना नानाभि ततीया से हुई है। (२) **परसवेदने**—पराये के दु ख मे। परस्य सवेदने इति। सम+विद+ल्युट। चन्दनदास का यह त्याग स्तुत्य है। वह राजा के अनुग्रह को ठुकराता है और राक्षस के परिवार को समपण नही करना चाहता। यहा व्यतिरेक अलकार है और अनुष्टुप छन्द है। श्लोके षष्ठ गुरु ज्ञेय सवत्र लघु पञ्चमम। द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्व सप्तम दीघमन्ययो ॥

(प्रकाशम्) चन्दनदास ! एष ते निश्चय ?

चन्दनदास —बाढम।

चाणक्य —(सक्रोधम्) दुरात्मन् ! तिष्ठ दुष्टवणिक ! अनुभूयता तर्हि नरपतिक्रोध ।

चन्दनदास —(बाहू प्रसाय) सज्जोह्मि। अणुचिट्ठदु अज्जो अत्तणो अहिआरसरिसम (सज्जोऽस्मि। अनुतिष्ठतु आर्य आत्मनोऽधिकारसदृशम्।)

चाणक्य —(सक्रोधम्) शाङ्गरव ! उच्यतामस्मद्वचनात् कालपाशिको दण्डपाशिकश्च—शीघ्रमय दुष्टवणिक् निगृह्यताम् । अथवा तिष्ठतु, उच्यता दुर्गपालो विजयपालश्च—गृहीतगृहसारमेन सपुत्रकलत्र सयम्य तावद्रक्ष यावन्मया वृषलाय कथ्यते । वृषल एवास्य प्राणहर दण्डमाज्ञापयिष्यति ।

शिष्य —यदाज्ञापयत्युपाध्याय । श्रेष्ठिन् ! इत इत ।

चन्दनदास —अज्ज ! अअमाअच्छामि (स्वगतम्) दिट्ठिआ मित्तकज्जेण मे विणासो ण पुरिसदोसेण । (आर्य ! अयमागच्छामि । दिष्टया मित्रकार्येण मे विनाशो न पुरुषदोषेण ।) (परिक्रम्य शिष्येण सह निष्क्रान्त ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(प्रकट) चन्दनदास, क्या यही तुम्हारा निश्चय है?

चन्दनदास—हा ।

चाणक्य—(क्रोध से) दुरात्मा, नीच बनिये, तो राजा के क्रोध का अनुभव करो ।

चन्दनदास—(हाथ फैलाकर) तयार हूँ । आप अपने अधिकार का प्रयोग करें ।

चाणक्य—(क्रोध से) शाङ्गरव, मेरी ओर से कालपाशिक और दण्डपाशिक से जाकर कहो कि शीघ्र यह दुष्ट बनिया कद कर लिया जाय । अथवा ठहरो दुगपाल विजयपाल से कहो कि इसके घर की सारी सम्पत्ति छीन लें और इसे स्त्री पुत्र सहित तब तक बाध कर रखें जब तक म चन्द्रगुप्त से कहूँ । चन्द्रगुप्त ही इसको मौत की सजा देगा ।

शिष्य—आचाय की जो आज्ञा । सेठ जी, इधर आइये ।

चन्दनदास—आय, लो यह म आ रहा हूँ (मन में) मेरा तो सौभाग्य है कि मित्र के काय में मेरा प्राण जा रहा है न कि मेरे किसी अपराध में (घूमकर शिष्य के साथ बाहर जाता है ।)

Chanakya (Aloud)—Chandandas is it your resolve?

Chandandas—Surely

Chanakya (Angrily)—Evil hearted wicked banker then reap the result of the king s anger

Chandandas (Spreading his arms)—Arya I am ready Let Noble Sir act as befits his authority

Chanakya (With anger)—Sharangrava tell Kalpashik and

Dandpashık ın my words Let thıs wıcked Banıa be arrested forthwıth or waıt tell Vıjayapal the keeper of the fort Keep thıs fellow wıth hıs son and wıfe bound and the property of hıs house be confiscated untıl I ınform the Vrıshal who wıll pronounce hıs death sentence

Pupıl—As preceptor commands Thıs way Banker thıs way

Chandandas—Noble Sır here I come (To hımself) Luckıly I am losıng my lıfe ın the cause of a frıend and not for any guılt of mıne (Walks round and goes out wıth the pupıl)

टिप्पणी

(१) **दुरात्मन**—दुष्ट। दुष्ट आत्मा यस्य स दुरात्मा तत्सम्बुद्धौ दुरात्मन। (२) **अनुतिष्ठतु**—करे। (३) **गहीतगहसारम**—जिसके घर की उत्तम सामग्री (धन आदि) ले ली गई है। गहीत गहस्य सार यस्य स तम (ब० व्री०)। (४) **सयम्य**—बाधकर कैद कर। सम+यम+क्त्वा—ल्यप। (५) **सपुत्रकलत्रम**—स्त्री और पुत्र के साथ। पुत्राश्च कलत्र च इति पुत्रकलत्राणि त सह वत्तते इति सपुत्रकलत्र (बहुव्रीहि स०) त तथाविधम। (६) **दिष्टया**—भाग्य से चन्दनदास को इस बात मे प्रसन्नता है कि उसे मित्र के काय के लिए यह सजा मिल रही है न कि अपने किसी अपराध (चोरी आदि) के कारण। **पुरुषदोषेण**—पुरुष के दोष से अर्थात चोरी या अ य कोई दुष्कम करने से। यहा पर करणे ततीया है। इस वाक्य मे परिसख्या अलकार है।

चाणक्य —(सहर्षम्) हन्त, लब्ध इदानी राक्षस। कुत —

त्यजत्यप्रियवत्प्राणान्यथा तस्यायमापदि।
तथैवास्यापदि प्राणा नून तस्यापि न प्रिया ॥२५॥

(नेपथ्ये कोलाहलम्)

अ वय—यथा अयम तस्य आपदि अप्रियवत प्राणान त्यजति तथैव अस्य आपदि तस्यापि प्राणा नूनम प्रिया न।

हि दी अनुवाद—चाणक्य—(प्रसन्नता से) बडी प्रसन्नता की बात है कि अब राक्षस मिल गया।

जसे यह (चन्दनदास) उस (राक्षस) की विपत्ति में अपने प्राणो को त्याग रहा है उसी प्रकार उसकी विपत्ति में उसके (राक्षस के) भी प्राण निश्चित रूप से प्रिय नही होगे। (नेपथ्य में कोलाहल)।

Chanakya (Joyfully)—Ha now Rakshas is caught How—As this (Chandandas) is giving up his life like an undesired thing in the adversity of Rakshas so he (Rakshas) will give up his life in his adversity (Lit his life will also be not agreeable to him)—(Hubbub in the dressing room)

सस्कृत व्याख्या—यथा अय चन्दनदास तस्य राक्षसस्य आपदि विपदि अप्रियवत अप्रियान पदार्थान इव प्राणान जीवन त्यजति जहाति तथा एव नून निश्चितमिद यदस्य चन्दनदासस्यापदि विपत्तिकाले तस्य राक्षसस्यापि प्राणा न प्रिया जीवन नाभिलषणीय सम्पत्स्यते इति। अर्थात चन्दनदास मोचयितु राक्षसोऽप्यवश्यमेवात्मानमपयिष्यतीति भाव ।

टिप्पणी

अप्रियवत—अप्रिय वस्तुओ की तरह। अप्रियै तुल्यम इति अप्रिय+वति। इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा तथा उपमा अलकार एव अनुष्टुप छन्द है।

चाणक्य —शार्ङ्गरव, शार्ङ्गरव !

(प्रविश्य)

शिष्य —उपाध्याय ! आज्ञापयतु।

चाणक्य —ज्ञायता किमेतत्।

शिष्य —(निष्क्रम्य विभाव्य पुन प्रविश्य सम्भ्रान्त) उपाध्याय ! एष खलु शकटदास वध्यमान वध्यभूमेरादाय समपक्रान्त सिद्धाथक ।

चाणक्य —(स्वगतम्) साधु सिद्धार्थक ! साधु, कृत कार्यारम्भ । (प्रकाशम्) प्रसह्य किमपक्रान्त ? (सक्रोधम्) वत्स ! उच्यता भागुरायणो यथा त्वरित सम्भावयेति।

(निष्क्रम्य प्रविश्य च)

शिष्य —(सविषादम्) उपाध्याय! हा धिक् कष्टम्। अपक्रान्तो भागुरायणोऽपि।

चाणक्य —(स्वगतम्) व्रजतु कार्यसिद्धये। (प्रकाशम्। सक्रोधमिव।) वत्स! उच्यन्तामस्मद्वचनाद्भद्रभटपुरुषदत्तहिङ्गुरातबलगुप्तराजसेनरोहिताक्षविजयवर्माणः शीघ्रमनुसृत्य गृह्यतां दुरात्मा भागुरायणः।

शिष्य —तथा। (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य सविषादम्) हा धिक् कष्टम्। सर्वमेव तन्त्रमाकुलीभूतम्। तेऽपि खलु भद्रभटप्रभृतयः प्रथमतरमुषस्येवापक्रान्ताः।

हिन्दी अनुवाद—(नेपथ्य में शोरगुल)

चाणक्य—शार्ङ्गरव, शार्ङ्गरव!

शिष्य (प्रवेश करके)—आचार्य! आज्ञा दीजिए।

चाणक्य—मालूम करो यह कैसा शोरगुल है।

शिष्य—(बाहर जाकर और पता लगाने पर घबडाया हुआ भीतर आकर) आचार्य, अनर्थ हो गया। वध किए जाने वाले शकटदास को वध्यभूमि से हटाकर सिद्धार्थक कहीं भाग गया।

चाणक्य—(मन में) शाबाश, सिद्धार्थक शाबाश। कार्य का प्रारम्भ हो गया। (प्रकट) क्या जबर्दस्ती भाग गया (क्रोध से) वत्स, भागुरायण से जाकर कहो कि शीघ्रातिशीघ्र इसे पकड़ने का प्रबंध करे।

शिष्य (बाहर जाकर और प्रवेश कर)—(दुःख के साथ) आचार्य, बड़े कष्ट की बात है कि भागुरायण भी भाग गया है।

चाणक्य—(मन में) काम साधने के लिए जाने दो (प्रकट, क्रोध प्रकट करते हुए) वत्स हमारी ओर से भद्रभट, पुरुषदत्त, हिङ्गुरात, बलगुप्त राजसेन, रोहिताश्व और विजयवर्मा इत्यादि से कहो कि जल्दी से जल्दी इस दुष्ट भागुरायण का पीछा करें और पकड़कर यहां ले आयें।

शिष्य—जैसी आज्ञा (बाहर जाकर, फिर भीतर आकर दुःख के साथ) अनर्थ, महान अनर्थ, पूरे राजतंत्र में गड़बड़ी मच गई है, वे भद्रभट आदि भी बहुत पहले तड़के ही भाग गये।

Chanakya—Sharangrava Sharangrava

Pupil (entering)—Preceptor order me

Chanakya—Find out what it is

Pupil (Going out and finding out and re entering)—

Preceptor Siddharthaka has run away taking out Shakatadas from the execution ground when he was to be executed

Chanakya (To himself)—Bravo Siddharthaka The beginning of the work has been made (Aloud) Has he gone away forcibly ? (Angrily) Tell Bhagurayan to go soon and arrest him

Pupil (Going out and re entering)—(Sorrowfully) Preceptor Ah fie great sorrow Bhagurayan too has run away

Chanakya (To himself)—Let him go for success in the work (Aloud as if in anger) My boy tell Bhadrabhatta Purushdatta Hingarath Balagupta Rajsena Rohitaksha and Vizayvarman to march out at once and get hold of the wicked Bhagurayan

Pupil—Be it so (Going out and re entering sorrowfully) Ah fie The whole administration is in confusion They also Bhadrabhatta and others ran away much earlier even at dawn

टिप्पणी

(१) **ज्ञायताम**—मालूम किया जाय। (२) **विभाव्य**—पता लगाकर। ज्ञात्वा। वि+भू+णिच+क्त्वा—ल्यप। (३) **समपक्रान्त**—भाग गया। पलायित। सम+अप+क्रम+क्त। (४) **प्रसह्य**—जबदस्ती। यह एक अ यय है। (५) **सम्भावय**—पकड ले। यहाँ पीछा करके सिद्धाथक को पकड लाओ—यह प्रकट अथ है और तुम भी उसके पीछे पीछे जाकर अपना काय सिद्ध करो—यह गुप्त भाव है। (६) **शीघ्रमनुसत्य**—जल्दी पीछा करके। (७) **तत्र**—राष्ट्र।

चाणक्य —(स्वगतम्) सर्वेषामेव शिवा पन्थान सन्तु। (प्रकाशम्) वत्स ! अल विषादेन। पश्य—

ये याता किमपि प्रधार्य हृदये पूर्वं गता एव ते
ये तिष्ठन्ति भवन्तु तेऽपि गमने काम प्रकामोद्यमा ।
एका केवलमर्थसाधनविधौ सेनाशतेभ्योऽधिका
नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम ।।२६।।

अ वय—ये हृदये किमपि प्रधाय याता ते पूवम् एव गता। ये तिष्ठ ति ते अपि काम गमने प्रकामोद्यमा भवन्तु। अथसाधनविधौ एका सेनाशतेभ्य अधिका न दो मूलनदृष्टवीयमहिमा मम बुद्धिस्तु केवल मा गात ।।२६।।

हि दी अनुवाद—चाणक्य (मन में) सबका माग कल्याणकारी हो (प्रकट)

बेटा, विषाद मत करो। सबके सब चले जायें। जो अपने मन में कुछ सोच कर पहले ही चले गए वे तो गए ही किन्तु जो नहीं गए अच्छा है वे भी चले जाय। काम को पूरा करने में सकडो सेनाओ से अधिक तथा नन्दो का विनाश करने में अतिशय प्रभाव दिखाने वाली मेरी बुद्धि केवल रह जाय।

Chanakya (To himself)—May the journey of all be safe (Aloud) My boy do not be dejected See—those that have gone desiring something at heart are really gone already but those who have not gone they too should better go Only that wonderful wit of mine the majesty of whose power was seen in the destruction of the Nandas and which in fulfilling its aims alone excels hundreds of armies may remain

संस्कृत व्याख्या—ये जना हृदये मनसि किमपि प्रधाय चिन्तयित्वा याता गता ते पूर्वम् एव गता अपक्रान्ता । ये तिष्ठन्ति न गता ते अपि कामं गमने अस्मत्पक्षं विहाय स्वाभिलषितसाधनाय परस्याश्रयणे प्रकामोद्यमा विपुलोत्साहवन्तो भवन्तु। अर्थसाधनविधौ अर्थस्य समस्तस्यापि राजतन्त्रस्य साधनविधौ सम्पादने एका केवला सेनाशतेभ्य अधिका बहुसेनाभ्य अधिका बहुला नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा नन्दानाम उन्मूलने विनाशने दृष्ट अवलोकित वीर्यमहिमा प्रभावातिशय यस्या सा मम बुद्धि तु केवल मा गात तिष्ठतु मा विहाय शत्रून कथमपि न भजतामिति भाव ।

टिप्पणी

(१) **शिवा**—कल्याणकारी। शिवं कल्याणम् अस्ति एषाम् इति शिव+ अच अर्श आदित्वात। (२) **प्रकामोद्यमा**—अतिशय उद्यमशील । प्रकाम उद्यम येषा ते। (३) **नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा**—नन्दो का नाश करने मे जिसके वीर्य की महिमा देख ली गई है। नन्दानाम उन्मूलने दृष्ट वीर्यमहिमा यस्या सा। यह बुद्धि का विशेषण है। चाणक्य के कहने का तात्पर्य है कि सब गए तो गए पर मेरी बुद्धि न जाय। अगर मेरी बुद्धि दुरुस्त रहेगी तो मैं कितने ही बडे काम कर लूगा। (४) **मा गात**—इ+लुङ माङि लुङ इत्यनेन लुङस्तिप, न माङ्योगे इति सूत्रेण अडागमनिषेध । इस श्लोक मे काव्यलिंग तथा व्यतिरेक अलकारो की ससृष्टि है। यहा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(उत्थाय प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्य बद्ध्वा) एष खलु दुरा-

त्मनो भद्रभटप्रभृतीनाहरामि । (आत्मगतम्) दुरात्मन् राक्षस ! क्वेदानीं यास्यसि ? एषोऽहमचिरात् भवन्त,—

स्वच्छन्दमेकचरमुज्ज्वलदानशक्ति-
मुत्सेकिना मदबलेन विगाहमानम् ।
बुद्ध्या निगृह्य वृषलस्य कृते क्रियाया-
मारण्यक गजमिव प्रगुणीकरोमि ॥२७॥

(इति निष्क्रान्ता सर्वे ।)

॥ इति मुद्रालाभो नाम प्रथमोऽङ्कः ॥

अन्वय—उज्ज्वलदानशक्तिम एकचरम उत्सेकिना मदबलेन स्वच्छन्द विगाहमानम आरण्यक गजमिव बुद्ध्या निगृह्य वषलस्य कृते क्रियाया प्रगुणीकरोमि ॥२७॥

हिन्दी अनुवाद—(उठकर आकाश में सामने उपस्थित की तरह देखते हुए) अभी म दुष्ट भद्रभट आदि को पकडता हू । (मन में) दुष्ट राक्षस, अब कहा जाओगे। म तुम्हें अविलम्ब एक जगली हाथी के समान इस प्रकार मनमाना करने वाले निरकुश, राज विप्लव के लिए धन का अपव्यय करने वाले (अथवा दानशक्ति वाले) और सत्य-मद से उन्मत्त होकर हमारा अनिष्ट करने वाले तुम्हें चन्द्रगुप्त का काम करने के लिए अपनी बुद्धि से पकड मगाता हूँ ।

(सभी पात्र रगमच पर से चले जाते ह)

॥ मुद्रालाभ नामक प्रथम अङ्क समाप्त ॥

(Rising and gazing at the sky as if at someone who is present) Here I bring back vile Bhadrabhatta and others (To himself) Wicked Rakshas where can you go now ? I will without any delay secure you with my wit and make you work for Vrishala—you who have excellent powers of gift and are like a wild elephant willfully keeping aloof and roaming proudly here and there (Exeunt all)

[End of the first Act known as getting of ring]

संस्कृत व्याख्या—एष अहम उज्ज्वलदानशक्तिम् उज्ज्वला प्रशस्या दान शक्ति वदान्यता मदकारिता च यस्य तादृशम एकचर परित्यक्तनिजवगम उत्सेकिना गवहेतुना मदबलेन दपप्रभावेण दानवारिप्रभावेण च स्वच्छन्द यथेच्छ निरकुश यथा तथा विगाहमान भ्रमन्तम भवन्तम आरण्यकम वनचरम गजमिव

बुद्धया बुद्धिबलेन निगह्य सयम्य वषलस्य कृते चन्द्रगुप्तार्थे अचिरात झटिति क्रियायाम अमात्यकमणि भारवहनकमणि च प्रगुणीकरोमि न्यापारयामि उद्योगवन्त कारयामि ।

टिप्पणी

(१) **स्वच्छन्दम**—मनमाना। स्व छन्द यस्मिन कमणि तत यथा तथा। यह विगाहमानम का विशेषण है। निरकुशम विगाहमानम । ढुण्ढिराज ने इसका अथ किया है। स्वपक्षमनाश्रित्य विजातीय परपक्ष कथम आश्रितोऽसि इति तव कोऽपि नियन्ता नास्ति इत्यथ । राक्षस की उपमा चाणक्य ने एक स्वच्छन्द भ्रमण करने वाले हाथी से दी है। दुष्ट हाथी भी अपने समूह को छोडकर मनमानी इधर उधर घूमता है। राक्षस भी अपना पक्ष छोडकर परपक्ष को ग्रहण किए है। (२) **विगाहमानम**—घूमते हुए। वि+गाह+शानच कतरि मुगागम। (३) **उज्ज्वलदानशक्तिम**—(राक्षस पक्ष मे) जिसकी दानशक्ति प्रकाशमान हो या सब को विदित हो। गज पक्ष मे दान का अथ है मद (वह हाथी जिसकी मदशक्ति खूब हो)। (४) **एकचरम**—अकेले घूमने वाले को। एक चरतीति एकचर एक+चर+अच। भाव यह है कि नन्द से सम्बद्ध हम लोग सभी एक साथ ह और तुम ही अकेले ऐसे हो जो अपने परिवार आदि को भी छोडकर इधर उधर अर्थात मलयकेतु के पास रह रहे हो। (५) **विगाहमानम**—घूमते हुए को। वि+गाह+शानच। अस्मतअपकाराय चेष्टमानम इत्याशय। (६) **उत्सेकिना**—अत्यन्त मदजल बहाने वाले। उद+सिच+घञ=उत्सेक । स अस्ति अस्य इति उत्सेक+इनि=उत्सेकिन घञ। (७) **आरण्यकम**—जगली। अरण्य भव इति अरण्य+वुञ। इस श्लोक मे उपमा अलङ्कार है और वसन्ततिलका छन्द है।

द्वितीयोऽङ्क

(तत प्रविशत्याहितुण्डिक ।)

आहितुण्डिक —

जाणन्ति तन्तजुत्ति जहट्ठिअ मण्डल अहिलिहन्ति
जे मन्तरक्खणपरा ते सप्पणराहिवे उवअरन्ति ॥१॥
(जानन्ति तन्त्रयुक्ति यथास्थित मण्डलमभिलिखन्ति ।
ये मन्त्ररक्षणपरास्ते सर्पनराधिपावुपचरन्ति ॥)

अन्वय—ये तन्त्रयुक्ति यथास्थित जानन्ति मण्डलम अभिलिखन्ति (च) मन्त्ररक्षणपरा सपनराधिपौ उपचरन्ति ॥१॥

हिन्दी अनुवाद—(सपेरे का प्रवेश) सँपेरा—जो लोग (साप की) ओषधि के प्रयोग को भली भाति जानते ह और माहेन्द्र आदि मण्डल को ठीक से बनाते हैं और जिसे झाड फूक आदि मत्रो की गुप्त सिद्धि है वही साँप की सेवा कर सकता है। (राजा पक्ष में) राजा की सेवा वही कर सकता है जो स्वराष्ट्र चिन्तन के उपायो को जानता है, जो राजमण्डल का मम समझता है और जो मत्रणाओ को गुप्त रख सकता है।

ACT II

(Now enters a snake charmer) *Snake Charmer*—Only they can control a kingly snake who know the application of herbs can draw magic circles correctly and rely for safety on Mantras

सस्कृत व्याख्या—ये जनास्तत्रयुक्ति तत्रस्य विषौषधिविशेषस्य प्रयोगस्त जानन्ति विदन्ति मण्डल मण्डलाकारतयालेख्य माहेन्द्रादिदवत च यथास्थित याथातथ्येनाभिलिखन्ति सपग्रहणवशीकरणाद्यथम निर्मान्ति अथ च मत्ररक्षण परा मत्राणाम गारुडादि मत्राणाम रक्षणपरा योग्याऽयोग्यसम्प्रदानाऽसम्प्रदानादि कमनिपुणास्त एव सपनराधिपौ अहि राजान सेवितुमहन्तीत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **आहितुण्डिक**—सँपेरा। यह राक्षस का गुप्तचर है और इसका नाम विराधगुप्त है। अहि सप तस्य तुण्डम् मुखम अहितुण्डम् तेन दीव्यति इति आहितुण्डिक । अहितुण्ड+ठक (ठस्येक से ठक का इक हो गया) यहाँ

से गर्भसन्धि प्रारम्भ होती है और चौथे अङ्क तक चलती है। प्रत्याशा नामक अवस्था और अर्थप्रकृति नामक पताका के बीच की स्थिति को गर्भसन्धि कहते हैं। प्रथम अङ्क मे यह दिखाया गया है कि राक्षस को पकडने के वास्ते चाणक्य क्या करने जा रहा है। द्वितीय अङ्क मे बताया गया है कि राक्षस कौन-सी चाल चलेगा। द्वितीय अङ्क का दृश्य मलयकेतु की राजधानी मे और राक्षस के घर के समीप एक गली है। यह श्लोक द्व्यर्थक है। राजा के पक्ष मे और सर्प के पक्ष मे भिन्न भिन्न अर्थ वाला है। (२) **तन्त्र**—राजा पक्ष मे—अपने राष्ट्र की चिन्ता। सर्प पक्ष मे—औषध। युक्ति—उपाय। तन्त्र स्वराष्ट्रचिन्तायाम शास्त्रौषधात्मुख्येषु तन्त्रम इति वैजयन्ती। (३) **यथा स्थितम**—शास्त्र के अनुसार ठीक ठीक। स्थितम अनतिक्रम्य इति अव्ययीभाव समास। (४) **मण्डलम**—सर्प पक्ष मे—मन्त्रो से अभिमन्त्रित घेरा। राजा पक्ष मे—राष्ट्रमण्डल। यहा अभिरभागे सूत्र से कर्म प्रवचनीयसंज्ञा—द्वितीया हुई। (५) **अभिलिखन्ति**—बनाते हैं (घेरा)। (६) **मन्त्ररक्षणपरा**—मन्त्रो से (अपने को) बचाते हैं। राजा पक्ष मे—मन्त्रणाओ को गुप्त रखते हैं। मन्त्रै गारुडादिमन्त्र रक्षणे आत्मगोपने परा आसक्ता। राजपक्षे—मन्त्राणा रक्षणे गोपने परा। (७) **सर्पनराधिपौ**—सर्पश्च नराधिपश्च इति सर्पनराधिपौ साप और राजा (द्वन्द्व तत्पुरुष) अथवा सर्परूपी राजा। किन्तु जहा सर्पनराधिपौ पाठ है वहा द्वन्द्व समास ही होगा और जहा सर्पनराधिपम पाठ है वहाँ कर्मधारय होगा। इसमे आर्या छन्द है और श्लेषानुप्राणित तुल्ययोगिता अलकार है।

(आकाशे) अज्ज ! किं तुम भणासि—'को तुम' त्ति। अज्ज ! अहं क्खु आहितुण्डिओ जिण्णविसो णाम। (पुनराकाशे) किं भणासि—'अहं वि अहिणा खेलिदुं इच्छामि' त्ति। अह कदरं उण अज्जो वित्तिं उवजीवदि ? (पुनराकाशे) किं भणासि—'राअउलसेवकोम्हि' त्ति। णं खेलदि एव्व अज्जो अहिणा। अहं विअ ? अमन्तोसहि-कुसलो वालग्गाही मत्तमतङ्गआरोहि लद्धाहिआरो जिदकासी राअसेवओ त्ति एदे तिण्णि वि अवस्सं विणासमणुहोन्ति। कहं दिट्ठमेत्तो अदिक्कन्तो एसो। (पुनराकाशे) अज्ज ! किं

तुम भणासि—'किं एदेसु पेडालसमुग्गएसु' त्ति। अज्ज! जीविआए सपादआ सप्पा। (पुनराकाशे) किं भणासि—'पेक्खिदुमिच्छामि' त्ति। पसीददु अज्जो। अठठाण खु एदम। ता जइ कोदूहल, एहि एदस्सि आवासे दसेमि। कि भणासि—'एद खु भट्टिणो अमच्चरक्खसस्स गेहम। णत्थि अम्हारिसाण इह पवेसो' त्ति। तेण हि गच्छदु अज्जो। मम उण जीविआए पसादेण अत्थि एत्थ पवेसो। कध एसो वि अतिक्कन्तो? (आय? कि त्व भणसि—'कस्त्वम्' इति। आय! अह खलु आहितुण्डिको जीणविषो नाम। कि भणसि—'अहमपि अहिना खेलितुमिच्छामि' इति। अथ कतरा पुनरार्यो वृत्तिमुपजीवति? कि भणसि—'राजकुलसेवकोऽस्मि' इति। ननु खेलति एव आर्योऽहिना। कथमिव? अमन्त्रौषधिकुशलो व्यालग्राही मत्तमतङ्गजारोही लब्धाधिकारो जितकाशो राजसेवक इत्येते त्रयोऽप्यवश्य विनाशमनुभवन्ति। कथ दृष्टमात्रोऽतिक्रान्त एष। आर्य! कि त्व भणसि—'किमतेषु पेटकसमुद्गकेष' इति। आय! जीविकाया सम्पादका सर्पा। कि भणसि—'प्रेक्षितुमिच्छामि इति प्रसीदत्वार्य। अस्थान खलु एतत्। तद्यदि कौतूहलम्, एहि एतस्मिन्नावासे दशयामि। किं भणसि—'इद खलु भर्तुरमात्यराक्षसस्य गृहम्। नास्त्यस्मादृशानामिह प्रवेश। तेन हि गच्छत्वाय। मम पुनर्जीविकाया प्रसादेन अस्तीह प्रवेश। कथमेषोऽप्यतिक्रान्त?)

(स्वगतम्। सस्कृतमाश्रित्य) अहो! आश्चर्यम। चाणक्यमतिपरिगृहीत चन्द्रगुप्तमवलोक्य विफलमिव राक्षसप्रयत्नमवगच्छामि। राक्षसमतिपरिगृहीत मलयकेतुमवलोक्य चलितमिवाधिराज्याच्चन्द्रगुप्तमवगच्छामि। कुत—

हिन्दी अनुवाद—(आकाश में देखकर) महाराज, क्या कहा, "तुम कौन हो" महाराज, म जीणविष नामक सँपेरा हूँ। (फिर आकाश की ओर देखकर)

seeing Chandragupta following the advice of Chanakya I think that all the efforts of Rakshas are futile but when I see Malayaketu acting upon the counsels of Rakshas I think Chandragupta to be thrown away from his paramount position

सस्कृत व्याख्या—आय, किं त्व भणसि कथयसि क अहम मम किं नाम जीणविषो नाम आहितुण्डिक सपग्राही किं भणसि अहमपि अहिना सर्पेण खेलितुमिच्छामि क्रीडितुम इच्छामि अथ कतरा का वत्ति जीविकाम भवान उपजीवति। अर्थात भवत क व्यवसाय राजकुलसेवक नपकुलभत्य आर्योऽहिना कालेन खेलति क्रीडा करोति। अमत्रोषधिकुशल मत्रेषु तथा ओषधिषु अकुशल अदक्ष व्यालग्राही सपग्राही मत्तमतङ्गजारोही मत्तहस्त्यारोहणशील लब्धाधिकार जित काशी जयोद्धत राजसेवक राजकमचारी इति एते त्रयोऽपि अवश्य नून विनाशम अनुभवन्ति प्राप्नुवति। कथ दष्टमात्र अवलोकित सन एव अतिक्रात गत किमेतेषु पेटकसमुदगकेषु किम वत्तते जीविकाया वत्ते सम्पादका साधना सर्पा प्रेक्षितुम द्रष्टुम इच्छामि प्रसीदतु आय कृपा करोतु। अस्थान खलु एतत इदम उपयुक्त स्थान न। तत यदि कौतूहल दशनस्य उत्कटेच्छा वतते एहि आगच्छ एतस्मिन पुरोवर्तिनि आवासे गहे दशयिष्यामि किं भणसि वदसि इद खलु भतु स्वामिन अमात्यराक्षसस्य गहम निकेतनम अस्मादशानाम पुरुषाणामत्र प्रवेश नास्ति मम प्रवेश अत्र न भविष्यति इति तेन तस्मात कारणात गच्छतु आय मम पुन जीविकाया वत्ते प्रसादेन कारणेन इह अत्र प्रवेश अस्ति कथ कुत एषोऽपि अतिक्रात गत। (सस्कृतम आश्रित्य सस्कृतभाषायाम) अहो आश्चयम चाणक्यमतिपरिगहीत चाणक्यस्य उपदेशानुसारेण काय कुवन्त यदा चद्रगुप्त पश्यामि विफलमिव राक्षसप्रयत्नम असफलमिव राक्षसोपाय जानामि। राक्षस मतिपरिगहीतम राक्षसस्योपदेशानुसारेण काय कुवत मलयकेतुम अवलोक्य दृष्टवा चलितम इव भ्रष्टम इव आधिराज्यात चद्रगुप्तम अवगच्छामि जानामि।

टिप्पणी

(१) **आकाशे**—इसे 'आकाशभाषित कहते ह। इसमे वक्ता आकाश की ओर देखकर अकेले ही इस प्रकार बात करता है मानो उससे कोई कुछ कह रहा है। इस विधि से एक ही पात्र के द्वारा अनेक पात्रो का काम चल जाता है। (२) **अमत्रौषधिकुशल**—मत्र और ओषधि को न जानने वाला। मत्रेषु

श्रोषधिषु च य कुशल न भवति तादृश । मन्त्राश्च श्रोषधयश्च इति मन्त्रौषधय (द्वन्द्व स०), तेषु कुशल (सुप्सुपा स०) न मन्त्रौषधिकुशल (नञ्तत०)। (३) **व्यालग्राही**—सपेरा। (४) **मत्तमतङ्गजारोही**—मतवाले हाथी पर चढने वाला। (५) **लब्धाधिकार**—अधिकार पाने वाला। लब्ध अधिकार येन स । (६) **जितकाश**—विजय से प्रकाश करने वाला। अर्थात विजय के कारण अभिमानी। जितेन जयेन काशते दीप्यते स जितकाश । (७) **दष्ट मात्र**—देखते देखते। (८) **अस्थानम**—अनुचितस्थान। दिखाने का उचित स्थान नही। (९) **पेटकसमुदगकेषु**—ढकी हुई पिटारियो मे। पेटक=पिटारी। पिटक पेटक पेटा मञ्जूषा इत्यमर । समुदगक=ढक्कन। समुदगक सम्पुटक इत्यमर । **चाणक्यमतिपरिगहीतम**—चाणक्य की सलाह के अनुसार काम करने वाला। (१०) **राक्षसमतिपरिगहीतम**—राक्षस की सलाह के अनुसार काम करने वाला। (११) **आधिराज्यात**—बडे राज्य से। अधिष्ठितो राजा अधिराज तस्य भाव कम वा आधिराज्यम अधिराज=ष्यञ् ।

कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्तिं मन्ये स्थिरा मौर्यनृपस्य लक्ष्मीम ।
उपायहस्तैरपि राक्षसेन निकृष्यमाणामिव लक्षयामि ।।२।।

अन्वय—मौयनपस्य लक्ष्मी कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्ति स्थिरा मन्ये राक्षसेन उपायहस्त निकृष्यमाणाम इव लक्षयामि अपि ।।२।।

हिन्दी अनुवाद—म मानता हूँ कि चाणक्य ने (चञ्चल) मौय राजा की लक्ष्मी को स्थिर करने के लिए बुद्धि रूपी डोरी से बाध दिया है तथापि राक्षस अनेक षडयन्त्र के उपाय रूपी हाथों से उसे (अपनाने को अपनी ओर) खींच रहा है।

I know that the fortune of king Maurya is made secure with her person firmly tied by the rope of Kautilay s wit I also see that she is being dragged along by Rakshasa with his hands of plans

संस्कृत व्याख्या—मौयनपस्य सम्राज चन्द्रगुप्तस्य लक्ष्मी राज्यश्रिय कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्ति कौटिल्यस्य कुटिलनयमूर्ते चाणक्यस्य धी राजनीति रेव रज्जुस्तया निबद्धा सुदढ नियत्रिता मूर्ति आकृति यस्यास्ता तथाभूता सती स्थिरा मन्ये (तथापि) राक्षसेन उपायहस्त उपाया सामदानदण्डभेदास्त एव हस्ता तै विकृष्यमाणाम इव बलात कृतश्लथयधनामिव लक्षयामि तकयामीत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्तिम**—कौटिल्य के बुद्धि रूपी रस्सी से बाँधी गई। कौटिल्यस्य धीरूपा या रज्जु तया निबद्धा सयता मूर्ति यस्या सा ताम। (२) **उपायहस्त**—उपाय रूपी हाथो से उपाया एव हस्ता (मयूर-व्यसकादित्वात समास) त। उपाय चार ह। भेदोदण्ड सामदानमित्युपाय चतुष्टयम इसमे करण ततीया है। (३) **निकृष्यमाणाम**—खीची जाती हुई। नि+कृष+शानच। विराधगुप्त के कहने का भाव यह है चाणक्य के द्वारा बाधी गई राजलक्ष्मी को राक्षस चार हाथो से खीच रहा है। बाधने का बधन तो एक ही है पर खीचने वाला चार है। अत लक्ष्मी का मौयकुल मे रहना सशययुक्त है। यहा इस श्लोक मे निरगरूपक और वाच्योत्प्रक्षा अलकारो का साकय है। इसमे उपजाति छद है। छद का लक्षण—अनतरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ता।

तदेवमनयोर्बुद्धिशालिनो सुसचिवयोर्विरोधे सशयितेव नन्दकुललक्ष्मी। कुत—

विरुद्धयोर्भृशमिह मन्त्रिमुख्ययो-
र्महावने वनगजयोरिवान्तरे।
अनिश्चयादगजवशयेव भीतया
गतागतैर्ध्रुवमिव खिद्यते श्रिया॥३॥

अन्वय—इह महावने वनगजयो इव भश विरुद्धयो मन्त्रिमुरययो अन्तरे अनिश्चयात भीतया गजवशाया इव श्रिया गतागतै ध्रुव खिद्यते इव॥३॥

हिन्दी अनुवाद—इन दो महानीतिज्ञ मन्त्रियो के विरोध से तो नन्दवश की राजलक्ष्मी ही खटाई में पड गई। जिस प्रकार जगल में लडते हुए दो हाथियो के बीच में पडी हुई हथिनी सशय और डर के साथ इधर उधर धक्का खाती है उसी प्रकार दोनो विरोधी मन्त्रियो के बीच में विचलित होकर राजश्री भी खींचा तानी में पडी धक्के खा रही है।

So in the conflict of these two worthy ministers the fortune of the Nanda s race looks undecided Here as in a thick forest Fortune like a female elephant terrified due to uncer tainty seems to be wavering in loyalty between these two ministers who are fully antagonistic to each other like two wild intoxicated elephants

सस्कृत व्याख्या—इह अस्मिन राज्ये महावने महाकानने वनगजयो इव काननमतङ्गजयो इव भशम् अत्यथम् विरुद्धयो विवदमानयो प्रारधविरोधयो वा मन्त्रिमुरययो अमात्यवय्ययो चाणक्यराक्षसयो अ तरे मध्ये अनिश्चयात जयपराजययो अस्थिरत्वात भीतया त्रस्तया गजवशया इव करिण्या इव श्रिया लक्ष्म्या गतागत यातायात एकदा चाणक्य प्रतिगमनम अयदा तत आगतम् त विहाय राक्षस प्रति उपसपणम इति एव रूप यद गतागतम तै ध्रुवम निश्चितम खिद्यते इव खेदमनुभवति इव।

टिप्पणी

(१) **बुद्धिशालिनो**—बुद्धिमानो के। बुद्धया शालेते शोभेते इति बुद्धि+शाल+णिनि। यह मन्त्रिमुरययो का विशेषण है। (२) **सशयिता**—सशय मे। सम+शी+अच भावे=सशय। सशय जात अस्या इति सशय+इतच। (३) **मन्त्रिमुख्ययो**—दो मुरय मन्त्रियो का। (४) **वनगजयो इव**—जगली हाथी के समान। (५) **गजवशया**—हथिनी की तरह। वशा नार्यां व ध्यागव्या हस्निया दुहितयपि इति हैम। वशा गजी गजवशा (कमधारय स०) पोटा युवतिस्तोक—इत्यादिना पुवद्भाव पूवनिपातश्च। (६) **भीतया**—डरी हुई। (७) **गतागत**—आने जाने से। जिस प्रकार दो मतवाले हाथी लडते ह और जब विजय अनिश्चित रहती है तो हथिनी कभी इधर कभी उधर आती जाती है और दु ख पाती है उसी प्रकार राजलक्ष्मी लडते हुए दो मन्त्रियो के बीच अनिश्चित है। वह लक्ष्मी कभी चाणक्य के पास जाती है और कभी राक्षस के पास। यहा उत्प्रेक्षा दो उपमा अलकारो से अनुप्राणित अलकार है और रुचिरा छन्द ह। जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहै '।

तद्यावदमात्यराक्षस पश्यामि। (इति परिक्रम्य स्थित।)

(तत प्रविशत्यासनस्थ पुरुषेणानुगम्यमान सचिन्तो राक्षस।)

राक्षस—(सवाष्पम) कष्ट भो! कष्टम्।

वृष्णीनामिव नीतिविक्रमगुणव्यापारशान्तद्विषा
नन्दाना विपुले कुलेऽकरुणया नीते नियत्या क्षयम्।
चिन्तावेशसमाकुलेन मनसा रात्रिन्दिव जाग्रत
सैवेय मम चित्रकमरचना भित्ति विना वतते॥४॥

अन्वय—वृष्णीनामिव नीतिविक्रमगुण्यापारशान्तद्विषा नन्दाना विपुले कुले अकरुणया नियत्या क्षय नीते चिन्तावेशसमाकुलेन मनसा रात्रिन्दिव जाग्रत मम सा एव इय चित्रकमरचना भित्ति विना वतते ।।४।।

हिन्दी अनुवाद—तो तब तक अमात्य राक्षस से भेंट करता हूँ (घूमकर बठता है)

(आसन पर आसीन एक अनुचर के साथ चिंतामग्न राक्षस का प्रवेश)

राक्षस—(आखो में आसू भर कर) बडे कष्ट की बात है कि नीति, पराक्रम और गुणो के प्रयोग से शत्रुओ को नष्ट करने वाले नन्दो के यदुवशियो के समान महान वश के निदय भाग्य द्वारा विनष्ट कर दिए जाने पर म चिन्ता-ग्रस्त होकर दिन रात जागरण करता रहता हूँ। ऐसा मालूम पडता है कि मेरी सारी क्रिया (उपाय) उसी प्रकार स्तब्ध है जसे कि किसी आधार (चित्र-फलक) के न रहने से किसी चित्रकार की चित्रकला।

Meanwhile I shall see minister Rakshas (goes around and sits) (Now enters Rakshas seated on a seat absorbed in medi tation and attended by a male servant)

Rakshas (with tears in his eyes)—What a calamity ? Like the vrishnis the vast family of Nandas which destroyed the enemies by means of policy virtue and valour has been driven to extinction by cruel fate and I with my mind troubled by a touch of care keep wakeful day and night and it seems as if all my activities are becoming useless like the painting of a painter without there being a paint board

संस्कृत व्याख्या—वृष्णीनामिव यदूनाम इव नीतिविक्रमगुण्यापारशान्तद्विषाम नीति मन्त्रशक्ति विक्रम प्रभुशक्ति गुणा त शान्ता प्रशमितोपद्रवसजाता द्विष शत्रवो यषा तथाविधाना नन्दानाम विपुले कुले अकरुणया नियत्या दारुणन दुर्भाग्यदुर्विलसितेन क्षय नीते प्रणाश प्रापिते चिन्तावेशसमाकुलेन चिन्ताना ये आवेशा आघातास्त कृत्वा समाकुलेन अत्यथमुद्विग्नेन मनसा अन्त करणेन हेतुना रात्रिदिव जाग्रत गतनिद्रस्य मम सा एव इय चित्रकम-रचना चित्रकमण चित्रस्य रचना इव चित्राणामाश्चयकारिणाम कमणाम तत्रा वापादीना सविधानप्रतिभा या हि पुरा जीवत्सु नन्देषु किं तद यन्न कृतवती किन्तु तेषु नष्टेषु अधुना भित्ति विना वतते निराधार किमपि कतुमसमर्था हृदयमेव अवसीदति इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **वृष्णीनाम**—यदुवशियो का। वृष्णि एक यदुवशी राजा था। यहाँ

लक्षणा से उसके वशजो का ग्रहण किया गया है। इसलिए बहुवचन का प्रयोग हुआ है। जसे रघूणामन्वय वक्ष्ये —रघुवश। (२) **नीतिविक्रमगुणव्यापारशान्तद्विषाम**—नीति विक्रम और गुणो से शत्रुओ को शान्त करने वालो का। यह नन्दानाम का विशेषण है। नीति विक्रम गुणाश्च त शान्ता द्विष येषा ते तेषा। (३) **विपुले कुले**—महान कुल के (क्षय होने पर) यहा भावे सप्तमी है। (४) **चिन्तावेशसमाकुलेन**—चिन्ताया आवेश तेन समाकुलम इति। तेन चिन्तावेशसमाकुलेन। यह मनसा का विशेषण है। (५) **रात्रिंदिवम**—रात्रौ च दिवा च इति रात्रिंदिवम। (द्वन्द्व स०) अचतुरविचतुर— इत्यादि सूत्रेण निपातनात सिद्धम। (६) **जाग्रत**—जागरण करने वाले का। जागृ+शतृ। (७) **चित्रकमरचना**—विचित्र काय अथवा अनेक प्रकार के उपाय। दूसरा अथ इसका है—चित्र खीचना। राक्षस के कहने का तात्पय यह है कि जिस प्रकार किसी चित्रकार की चित्ररचना बिना किसी आधार के व्यथ हो जाती है उसी प्रकार नन्दकुल के नष्ट हो जाने पर मेरे सब विचित्र उपाय आधारहीन होने से व्यथ हो गये। (८) **भित्ति**—आधार, सहारा। इसमे उपमालकार के साथ विशेषालकार और विभावनालकार की ससष्टि है और शादूलविक्रीडित छन्द है।

अथवा—

नेद विस्मृतभक्तिना न विषयव्यासङ्गमूढात्मना
प्राणप्रच्युतिभीरुणा न च मया नात्मप्रतिष्ठार्थिना।
अत्यथ परदास्यमेत्य निपुण नीतौ मनो दीयते
देव स्वगगतोऽपि शात्रववधेनाराधित स्यादिति॥५॥

अन्वय—मया परदास्यमेत्य अत्यथ निपुण नीतौ मनो दीयते इद विस्मृतभक्तिना न, विषयव्यासङ्गमूढात्मना न प्राणप्रच्युतिभीरुणा न आत्मप्रतिष्ठार्थिना न, स्वगगत अपि देव शात्रववधेन आराधित स्यात इति॥५॥

हिन्दी अनुवाद—म दूसरे (मलयकेतु) की दासता स्वीकार करके भी जो राजनीति में भाग ले रहा हू वह इसलिए है कि दिवगत महाराज नन्द अपने शत्रुओ के वध से किसी प्रकार प्रसन्न हो, इसलिए नहीं कि नन्दवश के प्रति म अपनी भक्ति भूल गया हूँ, जीवन के सुखभोग की वासनायें भी मुझे मोह

नहीं रही ह। इसलिए भी नहीं कि मुझे प्राणनाश का डर है, इसलिए नहीं कि म अपनी प्रतिष्ठा को पुन पाने का इच्छुक हूँ।

Accepting the slavery of another I am engaged in politics not b cause that I have no devotion to (Nanda) not that I want to enjoy the pleasures of the world not that I am afraid of losing my life not that I desire any personal glory but be cause I wish that the soul of the king departed to heaven may feel some consolation by the destruction of his enemies

सस्कृत व्याख्या—मया परदास्यमेत्य परस्य मलयकेतोरित्यथ दास्यमेत्य सेवामङ्गीकृत्य अत्यथ निपुण परमप्रयत्नेन नीतौ नयव्यवाहरे उपायप्रयोगे मनो दीयते तत विस्मतभक्तिना न नन्दभक्तिम् विस्मत्य न विषयव्यासङ्गमूढात्मना न विषयेषु भोगेषु यो व्यासङ्ग आसक्ति तेन मूढ विवेकविकल आत्मा यस्य तादशेन सता न प्राणच्युतिभीरुणा न वा परिरक्षणीया स्वस्य प्रिया प्राणा एव इति समरमुखात भीतत्रस्तेन वा न मया क्रियते आत्मप्रतिष्ठार्थिना न हृत पुनरप्यात्मान महामात्यपदे प्रतिष्ठापयेयमिति वा न मनसि कृत्य मया क्रियते किन्तु स्वगत अपि लोकान्तरित च देव स्वामी नन्द शात्रववधेन रिपुविनाशेन आराधित स्यात सेवितो भवेत इति हेतोरहम मलयकेतुमाश्रित ।

टिप्पणी

इस श्लोक मे राक्षस बतला रहा है कि नन्दो के नाश हो जाने पर भी वह क्यो राजनीति मे इतना सक्रिय भाग ले रहा है। (१) **विस्मतभक्तिना न**—नन्दवश की भक्ति को भूल गया हूँ सो भी कारण नही है। विस्मत भक्ति येन स विस्मृतभक्ति (बहुव्रीहि स०)। यहा विग्रहवाक्य मे सामान्ये नपुसकम से नपुसकलिंग हो जाने के कारण विस्मत भक्ति ऐसा विग्रह किया है। यदि विस्मता भक्ति येन स एसा विग्रह करे तो विस्मृताभक्तिना प्रयोग हो जाएगा। देखिए—सामान्ये नपुसकम' इस वार्तिक पर दढ भक्तियस्य स दढभक्ति। स्त्रीत्वविवक्षाया तु दृढाभक्ति'—सिद्धान्तकौमुदी। (२) **विषय व्यासङ्गमूढात्मना न**—विषयभोग की लालच से नही। (३) **प्राणप्रच्युतिभीरुणा न**—नकि प्राण जाने के भय से। (४) **आत्मप्रतिष्ठार्थिना न**—अपने गौरव के पाने की लालच से नही। आत्मन या प्रतिष्ठा ता कामयते इति तादशेन न। (५) **परदास्यमेत्य**—दूसरे (मलयकेतु) की गुलामी स्वीकार करके। (६) **स्वग गतोऽपि देव**—स्वग मे जाने पर भी महाराज को शान्ति मिले। (७) **शात्रववधेन**—

शत्रुओ के नाश से। राक्षस का उद्देश्य इस राजनीति मे भाग लेने का यही है कि वह नन्द के शत्रुओ का वध करके स्वग मे नन्द को तप्ति दिला सके। इसमे परिसरया अलकार तथा शादूलविक्रीडित छन्द है।

(आकाशमवलोकयन् सास्रम) भगवति कमलालये! भृशमगुणज्ञासि। कुत —

आनन्दहेतुमपि देवमपास्य नन्द
सक्तासि किं कथय वैरिणि मौर्यपुत्रे।
दानाम्बुराजिरिव गन्धगजस्य नाशे
तत्रैव किं न चपले प्रलय गतासि ॥६॥

अन्वय—चपले! कथय आनन्दहेतुमपि देव नन्दम अपास्य वैरिणि मौयपुत्रे किं सक्तासि गन्धगजस्य नाशे दानाम्बुराजिरिव तत्रैव किं न प्रलय गतासि ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—(आकाश की ओर देखता हुआ आख में आसू भर कर) भगवति लक्ष्मि तुम बिलकुल गुण का ख्याल नही करती हो। हे चञ्चले, आनन्द के कारण भूत भी महाराज नन्द को छोडकर तुम वरी चन्द्रगुप्त में कसे आसक्त हो गई। गधगज के नाश (मतवाले हाथी) के मरते ही तुम (उसके) मदजल की धारा की तरह वही क्यो न विलीन हो गई।

(Looking at the sky—with tears in his eyes) Oh the dweller in the lotus you are totally unregardful of merit How— O fickle one why forsaking Nanda the source of your delight you have transferred your love to Chandragupta an enemy? Why did not you perish then and there (with him) like the line of temporal fluid at the death of the scent elephant

सस्कृत व्यारया—अयि चपले भ्रष्टपातिव्रत्ये स्वरिणि कथय किमथम कथ वा आनन्दहेतुमपि सवविधसुखसभोगदातारमपि देव नन्दम अपास्य त्यक्त्वा वैरिणि शत्रौ मौयपुत्रे चन्द्रगुप्ते रक्तासि प्रेमयुक्ता भूता? अये गन्धगजस्य नाशे उपरते गन्धहस्तिनि दानाम्बुराजिरिव तदीयमदधारा इव तत्रव नन्दे नष्टे मते एव किं प्रलय न गतासि तेनव सह कथ न मता असि इत्यथ।

टिप्पणी

(१) **कमलालये**—लक्ष्मी। कमलानि आलय अस्या इति कमलालया तत्सम्बुद्धौ कमलालये। (२) **अगुणज्ञा**—गुणो का रयाल न करने वाली।

गुण+ज्ञा+क कर्तरि=गुणज्ञा, न गुणज्ञा अगुणज्ञा (नञ्तत०)। (३) आनन्द हेतुम—आनन्द के कारण लोक मे देखा जाता है कि स्त्रियाँ उसी व्यक्ति को अधिक पसन्द करती ह जो उन्हें अधिक आनन्द प्रदान कर सके। राक्षस लक्ष्मी से कह रहा है कि यद्यपि तुम्हारे लिए नन्द अधिक आनन्दप्रद थे तो भी तुम उनके शत्रु के पास चली गई। ऐसा क्यो ? यह तो लोक विपरीत बात है। (४) अपास्य—छोडकर। अप+अस्+ल्यप। (५) सक्ता—प्रेम करने लगी। (६) गन्धगज—वह हाथी जिससे मद चूता है। जब हाथी मर जाता है तो मद चूना भी बन्द हो जाता है। राक्षस के कहने का तात्पय यही है कि जिस प्रकार मदगज के मरने पर मदधारा बन्द हो जाती है उसी प्रकार नन्दकुल के क्षय होने पर तू भी (लक्ष्मी) क्यो नही नष्ट हो गई। यहा उपमा अलकार परिकर अलकार से ससृष्ट है। इसमे वसन्ततिलका छन्द है।

अपि च अनभिजाते !

पृथिव्या किं दग्धा प्रथितकुलजा भूमिपतय
पतिं पापे मौर्यं यदसि कुलहीन वृतवती।
प्रकृत्या वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला
पुरन्ध्रीणा प्रज्ञा पुरुषगुणविज्ञानविमुखी ॥७॥

अन्वय—पापे ! पृथिव्या प्रथितकुलजा भूमिपतय दग्धा किं (यत त्व) कुलहीन मौय पतिं वतवती असि। वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला पुरन्ध्रीणा प्रज्ञा प्रकृत्या पुरुषगुणविज्ञानविमुखी (भवति) ॥७॥

हिन्दी अनुवाद—अरी तू कितनी कुलटा है। (तेरा जीवन ही पापमय है) नहीं तो क्या इस इतनी बडी धरती पर राजे महाराजे जो प्रतिष्ठित वश वाले हं जल मरे थे जो तूने इस कुलहीन मौय को वरण कर लिया। (अथवा इसमें तेरा दोष ही क्या है) क्योंकि काशपुष्प के अग्रभाग के समान चचल, रमणियो की बुद्धि स्वभावत पुरुषो के गुणो के विवेचन से विमुख रहती है।

Besides oh ill born and wicked lady are all the kings of illustrious family on earth reduced to ashes that you have chosen the Maurya of the low family for your master ? Or (you are innocent for) the mind of woman which is fickle like the end of the kasa flower is incapable of appreciating the merits of men

संस्कृत व्याख्या—अयि पापे पापाचरे पृथिव्या ससारे प्रथितकुलजा विपुलेषु प्रसिद्धेषु वा राजवशेषु जाता भूमिपतय नृपतय किं दग्धा विनष्टा यत कुलहीन नीचकुले जात मौर्य चन्द्रगुप्तम पति भर्तार वतवती कृतवती अथवा पुरन्ध्रीणा नारीणा प्रज्ञा बुद्धि प्रकृत्या स्वभावेन काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला काशातप्रभवो यस्य तस्य कुसुमस्य पुष्पस्य प्रान्त अग्रभाग इव चपला चलायमाना पुरुषगुणविज्ञानविमुखी पुरुषाणा यद गुणविज्ञान सत्कुलत्वदुष्कुलत्वादि विवेचन तत्र विमुखी नितरा निरपेक्षा खलु भवतीति। नारीणा बुद्धि स्वभावत एव चपला ता इद ज्ञातुमसमर्था यत क कुलीन क अकुलीन।

टिप्पणी

(१) **अनभिजाते**—अकुलीन कुलटा। (२) **प्रथितकुलजा**—विशाल वश मे पदा होने वाले। (३) **किं दग्धा**—क्या नष्ट हो गये। क्या भस्म हो गए। (४) **कुलहीन मौर्यम**—चन्द्रगुप्त मुरा से पदा हुआ था। यह नन्द का अवैध पुत्र था। अत इसे कुलहीन कहा। (५) **काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला**—काश प्रभव यस्य स काशप्रभव तस्य कुसुमस्य प्रान्त इव चपला इति काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला। (६) **पुरन्ध्रीणाम**—स्त्रियो की। पुर धारयति इत पुर+ध+णिच+खच कतरि+ङीष स्त्रियाम पषोदरादित्वात साधु। (७) **पुरुषगुणविज्ञानविमुखी**—पुरुषो के गुणो को पहचानने मे असमथ। इस श्लोक मे उपमा अलकार से ससष्ट अर्थान्तरन्यास अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

अपि च, अविनीते! तदहमाश्रयोन्मूलनेनैव त्वामकामा करोमि। (विचिन्त्य) मया तावत्सुहृत्तमस्य चन्दनदासस्य गृहे गृहजन निक्षिप्य नगरान्निर्गच्छता न्याय्यमनुष्ठितम। कुत? कुसुमपुराभियोग प्रति अनुदासीनो राक्षस इति तत्रस्थानामस्माभि सहैककार्याणा दैवपादोपजीविना नोद्यम शिथिलीभविष्यति। चन्द्रगुप्तशरीरमभिद्रोग्धुमस्मत्प्रयुक्ताना तीक्ष्णरसदायिनामुपसग्रहाथ परकृत्योपजापार्थञ्च महता कोशसञ्चयेन स्थापित शकटदास। प्रतिक्षणमरातिवृत्तान्तोपलब्धये तत्संहतिभेदनाय च व्यापारिता सुहृदो जीवसिद्धिप्रभृतय। तत् किमत्र बहुना—

हिन्दी अनुवाद—अरी उद्दण्ड, म भी तेरा आधार ही नष्ट करके तेरे मनोरथ को चकनाचूर किए देता हू। (कुछ सोचकर) नगर से निकलते समय अपने मित्र च दनदास के घर में अपने परिवार को छोडकर ठीक ही किया। क्योंकि जब हमारे कधे के साथ कधा मिलाने वाले महाराज न द के भक्त यह जान जायँगे कि राक्षस पाटलिपुत्र पर आक्रमण करने में उदासीन नही है तो उनके भी प्रयत्न ढीले नहीं पडेंगे। वहा विषादिक से च द्रगुप्त को नाश करने के लिए और सब प्रकार से शत्रु के दाव पेंच को यथ करने के लिए बहुत सा धन देकर शकटदास को छोड दिया है और साथ ही साथ शत्रु के क्षण क्षण की कायगति को जानने के लिए और उनके गुट्ट को तोडने के लिए जीवसिद्धि ऐसे लोगो को नियुक्त कर दिया है।

Oh immodest girl I will make you disappointed by destroying your shelter itself (Thinking) I have done the right thing by keeping my family in the house of my best friend Chandandas while coming out of the town Why? Because when the dependants of revered sire (Nanda) who are staying there with a common object with us will come to know that Rakshas is not indifferent to an attack on Kusumpura their efforts will not be slackened Shakatdasa has been stationed there with a large sum of money to make the measures of the enemy futile and also to win over those who would administer poison to Chandragupta Friends such as Jiwasiddhi and others have been employed to get the full news of the foe every moment and to cause dissension in their (enemies) allies

सस्कृत याख्या—अपि च अविनीते विनयरहिते तत तस्मात कारणात अहम आश्रयो मूलनेनव आश्रयस्य त्वदवलम्बनस्य मौयस्य उ मूलनेन एव विनाशेनव त्वाम अकामाम असफलमनोरथाम करोमि। नगरात कुसुमपुरात निगच्छता बहि आगच्छता मया तावत सुहृत्तमस्य प्रगाढमित्रस्य च दनदासस्य गहे गहजनम् परिवारम निक्षिप्य सस्थाप्य याय्यम उचितम अनुष्ठितम कृतम। कुत कुसुमपुराभियोग प्रति कुसुमपुरोपरि आक्रमण प्रति अनुदासीन न उपायरहित राक्षस इति तत्रस्थानाम कुसुमपुरस्थितानाम अस्माभि सह एककार्याणाम तुल्यप्रयोजनानाम देवपादाना राज्ञ न दस्य ये उपजीविन सेवका तेषाम उद्यम उपाय न शिथिलीभविष्यति ते प्रयत्नपरा भविष्यन्तीति भाव च द्रगुप्तशरीरम अभि द्रोग्धुम त विनाशयितुमित्यथ अस्मत्प्रयुक्तानाम मया नियुक्तानाम तीक्ष्ण रसदायिनाम् विषदायिनाम उपसग्रहाथम वशीकरणाथम सम्यगग्रहणाथम वा परकृत्योपजापाथ च परस्य शत्रो कृत्याना कार्य्याणाम उपजपाथम भेदाथमपि

महता कोषसञ्चयेन अधिकेन धनराशिना अधिक धन दत्त्वेत्यथ स्थापित शकटदास प्रतिक्षण सवथा अरातिवत्तान्तोपल धये शत्रुसमाचारप्राप्तये तेषा शत्रूणाम सहते समूहस्य भेदनाय नाशाय यापारिता नियुक्ता सुहृद मित्राणि जीवसिद्धिप्रभतय ।

टिप्पणी

(१) **आश्रयोन्मूलनेन**—आश्रय (सहारा) को नष्ट करके। आश्रयस्य उ मूलनम इति तेन। आश्रय—आ+श्री+अच (आश्रीयते इति)। (२) **अकामाम**—मनोरथहीन। अनाप्त काम अथवा असिद्ध काम अस्या इति अकामा (बहुव्रीहि स०) ताम। (३) **अभियोग**—आक्रमण। (४) **देव पादोपजीविनाम**—महाराज (न द) के आश्रित लोग। पूज्यो देव देवपादा नित्यसमास प्रशसावचनश्च इत्यनेन। गौरवे बहुवचनम। देवपादान आश्रित्य वतय ति इति। देवपाद+उप+जीव+णिनि। (५) **उपसग्रहाथम**—अपनी ओर मिलाने के लिए। (६) **परकृत्योपजापाथम**—शत्रु के कार्यों का पता लगाने के लिए। परस्य शत्रो कृत्याना कार्याणाम उपजापाथमिति भेदाथमिति। (७) **महता कोषसञ्चयेन**—बहुत-सी धनराशि के साथ (बहुत धन देकर)। (८) **अरातिवत्तान्तोपल धये**—शत्रु के वत्ता त को जनाने के वास्ते। (९) **तत्सहतिभेदनाय**—उनके समूह (गुट्ट) को तोडने के लिए। अत्र तादर्थ्ये चतुर्थी। सम+हन+क्तिन भावे=सहति। (१०) **जीवसिद्धिप्रभतय**—जीवसिद्धि आदि। राक्षस को इस विषय मे धोखा हुआ। जीवसिद्धि वास्तव मे चाणक्य का गुप्तचर था पर राक्षस ने गलती से उसे अपना आदमी समझ लिया था। यह बात प्रथम अङ्क मे आ चुकी है कि जीवसिद्धि चाणक्य का सहपाठी था। वह क्षपणक बनकर राक्षस के पास रहने लगा था।

तत् किमत्र बहुना ?—

इष्टात्मज सपदि सान्वय एव देव
शार्दूलपोतमिव य परिपोष्य नष्ट ।
तस्यैव बुद्धिविशिखेन भिनद्मि मर्म
वर्मीभवेद्यदि न दैवमदृश्यमानम् ।।८।।

अ वय—इष्टात्मज देव शादूलपोतमिव य परिपोष्य सा वय एव सपदि नष्ट तस्य एव मम बुद्धिविशिखेन भिनद्मि यदि अदृश्यमान दव न वर्मीभवेत ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—यदि अदृश्य दव (भाग्य) कवच बनकर रक्षा न करेगा तो म अपनी नीति रूपी तीर से उस चन्द्रगुप्त का ममस्थान छिन्न भिन्न कर दूगा जिस (चन्द्रगुप्त) ने एक सिंह शिशु के समान पालित पोषित होकर सतान वत्सल महाराज नन्द और उनके वश का ही सवनाश कर डाला।

What is the use of saying much in this matter If fate with its invisible form will not protect as a shield I with the arrow of my wit will cut the vitals of Chandragupta who being brought up like a tiger cub destroyed the whole family of sire (Nanda) whom the son was dear

सस्कृत व्याख्या—इष्टात्मज इष्टा प्रिया आत्मजा सुता यस्येति देव नन्द शार्दूलपोतमिव सिंहशावकमिव य चन्द्रगुप्तम परिपोष्य परिपाल्य सान्वय एव सवश एव सपदि शीघ्रम नष्ट नाश गत तस्य चन्द्रगुप्तस्य एव मम ममस्थानीय मत्रदातारम चाणक्यमेव बुद्धिविशिखेन कूटनीतिव्यापारेण भिनद्मि क्षिप्रम भेत्स्यामि यदि अदश्यमान गूढदेह दव भाग्यम न वर्मीभवेत न तस्य रक्षक भवेत स्यादित्यथ ।

टिप्पणी

(१) **इष्टात्मज**—पुत्रप्रेमी। इष्टा आत्मजा यस्येति स। (२) **शार्दूल पोतमिव**—बाघ के बच्चे के समान। पोत पाको ऽभको डिम्भ पृथुक शावक शिशु इत्यमर। बाघ अपने बच्चे को स्नेह से पालता है। वही बच्चा बडा होने पर अपने बाप को ही मारकर खा जाता है। इसी प्रकार नन्द ने चन्द्रगुप्त को प्रेम से पाला था किन्तु मौका मिलने पर वही चन्द्रगुप्त नन्द के नाश का का कारण बना। (३) **सान्वय**—वश समेत। अन्वयेन सहित सान्वय। (४) **बुद्धिविशिखेन**—बुद्धि रूपी बाणो से। (५) **अदश्यरूपम**—जिसका रूप दिखाई नही पडता। (६) **वर्मीभवेत**—रक्षक न बने। राक्षस के कहने का मतलब है कि म अपने बुद्धिबल स चन्द्रगुप्त के मम स्थान को अवश्य नष्ट कर दूगा अगर भाग्य ने उसका साथ न दिया तो। इस श्लोक मे उपमा एव परिणाम अलकार ह तथा वसन्ततिलका छन्द है। 'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौग'।

(तत प्रविशति कञ्चुकी)

कञ्चुकी—

काम नन्दमिव प्रमथ्य जरया चाणक्यनीत्या यथा
धर्मो मौर्य इव क्रमेण नगरे नीत प्रतिष्ठा मयि।

**त सम्प्रत्युपचीयमानमनु मे लब्धान्तर सेवया
लोभो राक्षसवज्जयाय यतते जेतु न शक्नोति च ।।६।।**

अ वय—चाणक्यनीत्या यथा जरया न दमिव काम प्रमथ्य नगरे मौर्ये इव मयि धम क्रमेण प्रतिष्ठा नीत । सम्प्रति सेवया लब्धा तरो मे लोभ राक्षस वत उपचीयमान तम अनु जयाय यतते च जेतु शक्नोति ।।६।।

हि दी अनुवाद—(तब कचुकी प्रवेश करता है) कञ्चुकी—जिस प्रकार चाणक्य की नीति ने न द का नाश कर च द्रगुप्त को कुसुमपुर में स्थापित किया उसी प्रकार वद्धावस्था ने मेरी कामवासना का नाश करके मुझ में धम स्थापित किया है। यद्यपि अवसर पाकर राक्षस च द्रगुप्त को विजय करने जायगा और उसी प्रकार (मेरा) लोभ भी यद्यपि (राजसेवारूपी अवसर पाकर) धम को दबाना चाहता है पर शिथिल होने के कारण दोनो ही (राक्षस तथा लोभ) जयी नहीं हो सकते।

(Now enters Chamberlain) *Chamberlain*—Old age has by destroying Desire established Piety (धम) in me just as Chana kya s diplomacy killing Nanda placed Chandragupta in the city of (Kusumpura) Now with a foot hold secured through service Avarice like Rakshas wants to be successful in con quering it (so Rakshas will also not be able to overthrow Chandragupta)

सस्कृत व्याख्या—चाणक्यनीत्या चाणकस्य कूटनयनपुण्येन यथा इव जरया वद्धावस्थया न दम इव तदाख्यराजानमिव काम भोगविलास प्रमथ्य परिभूय नगरे पाटलिपुत्रे मौर्ये च द्रगुप्ते इव मयि धम क्रमेण प्रतिष्ठाम नीत प्रतिष्ठापित । सम्प्रति इदानी सेवया राज्ञ सेवया शुश्रूषया ल धा तर प्राप्तावकाश मे लोभ तष्णा राक्षसवत राक्षस इव उपचीयमान वद्धि गच्छन्त त धम च द्रगुप्त च अनुजयाय जेतु यतते प्रयत्न करोति च पर जेतु न शक्नोति पराभवितु न शक्ष्यतीति भाव ।

यथा पाटलिपुत्रे चाणक्यनीत्या राजमण्डल वशीकृत्य प्रतिष्ठापित च द्रगुप्त राक्षस पराभवितु यतते तथव लोभ मे धमम दूरी कतुमिच्छति पर मन्येऽहम यत उभावपि स्वप्रयत्ने असफलौ भविष्यत ।

टिप्पणी

(१) कञ्चुकी की परिभाषा भूमिका मे देखिये (२) **जरया**—वृद्धावस्था से। (३) **प्रमथ्य**—नष्ट करके। प्र+मन्थ+क्तवा—ल्यप। (४) **सेवया**—

राजा की सेवा से। (५) लन्धान्तर —अवसर पाकर। लन्ध अन्तर येन स लब्धान्तर । यहा पर चाणक्यनीति की तुलना जरा से धम की तुलना चन्द्रगुप्त से लोभ की राक्षस से नन्द की काम से की गई है। जिस प्रकार चाणक्य की राजनीति से साम्राज्य पद पर स्थापित चन्द्रगुप्त को राक्षस मौका पाकर दबाना चाहता है उसी प्रकार वद्धावस्था के कारण मुझमे आई हुई धमभावना को लोभ राजा की सेवा का अवसर पाकर दबाना चाहता है। पर न तो लोभ धम को दबा सकता है और न राक्षस चन्द्रगुप्त को जीत सकता है। (६) **जयाय**—अत्र 'तुमर्थाच्च भाववचनात इति सूत्रेण चतुर्थी। इस श्लोक मे समासोक्ति तथा उपमा अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(दृष्ट्वा) अयममात्यराक्षस । (परिक्रम्योपसृत्य च) इदममात्यराक्षसस्य गृहम्। प्रविशामि। (प्रविश्यावलोक्य च) अमात्य! स्वस्ति भवते।

राक्षस —आर्य जाजले! अभिवादये। प्रियवदक! आसनम् अत्रभवत उपनय।

पुरुष —एद आसणम्। उपविसदु अज्जो। (इदमासनम्। उपविशत्वार्य ।)

कञ्चुकी—(उपविश्य) अमात्य! कुमारो मलयकेतुरमात्य विज्ञापयति—'चिरात्प्रभृत्यार्य परित्यक्तोचितशरीरसस्कार इति पीड्यते मे हृदयम्। यद्यपि सहसा स्वामिगुणा न शक्यन्ते विस्मतु तथापि मद्विज्ञापना मानयितुमहत्यार्य (इत्याभरणानि प्रदश्य) अमात्य! इमान्याभरणानि कुमारेण स्वशरीरादवतार्य प्रेषितानि, धारयितुमर्हत्याय ।

राक्षस —आय! जाजले! विज्ञाप्यता मद्वचनात् कुमार । विस्मृता मया स्वामिगुणा भवद्गुणपक्षपातेन। किन्तु—

हिन्दी अनुवाद—(देखकर) यह तो अमात्य राक्षस ह। (घूमकर और निकट जाकर) यह तो मन्त्री राक्षस का घर है। म इसमें प्रवेश करता हूँ। (प्रवेश कर और देखकर) अमात्य, आपका कल्याण हो।

राक्षस—आय जाजलि, म आपका अभिवादन करता हूँ। प्रियवदक, आय जाजलि के लिये आसन लाओ।

पुरुष—यह आसन है। आय बठें।

कञ्चुकी—(बठकर) अमात्य, कुमार मलयकेतु ने कहा है कि बहुत दिनों से आय ने शरीरोचित सस्कार करना छोड दिया है। इससे मेरा हृदय दु खी हो रहा है। यद्यपि स्वामी (न द) के गुण सहसा भुलाये नहीं जा सकते तथापि आय मेरी प्राथना मान लें। (आभूषणो को दिखाकर) अमात्य, कुमार ने ये आभूषण अपने शरीर से उतार कर भेजा है, आय इन्हें धारण करें।

राक्षस—आय जाजले मेरी तरफ से कुमार से कहो कि आप के गुणो के कारण मने स्वामी के गुणो को भुला दिया है। कि तु

(*Seeing*) It is minister Rakshas (Going round and advancing) This is the house of minister Rakshas I enter (Entering and noticing) Blessings unto you

Rakshas—Noble Jajali I bow to you Priyamvadak bring a seat (for Noble Jajali)

Servant—This is the seat Let Noble Sir sit down

Chamberlain—(Sitting down) Prince Malayaketu says thus to minister Your Noble Sir has renounced from a long time the proper decoration of his person and so it pains me Though master s virtues cannot be forgotten so soon still Your Noble Sir behoves to accept my request (Showing the ornaments) These ornaments have been taken off by the prince from his own body and sent (to you) Your Noble Sir may kindly wear them

Rakshasa—Noble Jajali let the prince be told on my behalf Due to an appreciation of your virtues masters virtues are indeed forgotten but—

टिप्पणी

(१) **चिरात प्रभति**—बहुत दिनो से। (२) **परित्यक्तोचितसस्कार**—उचित शारीरिक सस्कार (सजावट) को छोड दिया है। परित्यक्त उचित सस्कार येन स (ब० व्री०)। सम+कृ+घञ करणे भावे वा, सम्परिभ्या करोतौ भूषणे इत्यनेन सुडागम=सस्कार। (३) **शरीरात अवताय**—शरीर से उतार कर। अव+त+णिच्+ल्यप। (४) **जाजले**—जाजलिन नाम के एक मुनि थे। उनकी सतान जाजलि कहलाती है। जाजलिन अपत्य पुमान इति जाजलिन्+अण जाजल तस्य गोत्रापत्य पुमान जाजल+इञ=जाजलि तत्सम्बोधने जाजले। (५) **विज्ञाप्यताम**—निवेद्यताम। वि+ज्ञा+णिच् पुक+लोट कमणि। (६) **भवदगुणपक्षपातेन**—आपके गुणो मे पक्षपात होने के कारण। भवत गुणेषु पक्षपात तेन। यहा हतौ ततीया है।

न तावन्निर्वीर्यैं परपरिभवाक्रान्तिकृपणै-
र्वहाम्यङ्गैरेभि प्रतनुमपि सस्कारररचनाम् ।
न यावन्नि शेषक्षपितरिपुचक्रस्य निहित
सुगाङ्गे हेमाडक नृवर तव सिंहासनमिदम् ।।१०।।

अन्वय—नवर ! यावत नि शेषक्षपितरिपुचक्रस्य तव हेमाङ्कम इद सिंहासन सुगाङ्गे न निहित तावत परपरिभवाक्रान्तिकृपण निर्वीर्यैं एभि अङ्ग प्रतनुमपि सस्काररचना न वहामि ।।१०।।

हिंदी अनुवाद—जब तक समस्त शत्रुसघ का नाश करके कुमार का स्वण सिंहासन सुगाङ्गप्रासाद में स्थापित नही कर दिया जाता तब तक अपने इस निर्वीय और शत्रुद्वारा किए गए अपमानो से घायल दीन हीन शरीर पर किसी प्रकार का आभूषण म नहीं धारण करूँगा।

O best of men so long as I do not place your throne of gold in the Suganga Palace by totally destroying the cricle of enemies I will not put on any ornament on (or try to decorate) these limbs which are miserable through the heaping of indignities by the enemy and therefore devoid of courage

सस्कृत व्याख्या—हे नृवर नरश्रेष्ठ यावत नि शेषक्षपितरिपुचक्रस्य नि शेष यथा स्यात्तथा क्षपित विनाशितम रिपुचक्रम शत्रुमण्डलम यस्य तस्य तव इद हेमाङ्क सिंहासनम हिरण्मयम् राजासनम सुगाङ्गे महाराजस्य नन्दस्य प्रासादे न निहित न प्रतिष्ठापितम तावत तत्कालपर्यन्तम परपरिभवाक्रान्तिकृपण पर शत्रुभि कृता या परिभवाक्रान्ति अस्मत्तिरस्क्रियारूपमाक्रमण तेन कृपणै दीनै अत एव निर्वीर्यैं शक्तिहीनै अङ्ग प्रतनुमपि स्वल्पामपि सस्काररचनाम अलङ्कार विकल्पम न वहामि नव धारयामीत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **नवर**—पुरुषो मे श्रेष्ठ। नष वर इति नवर तस्य सम्बोधने। (२) **नि शेषक्षपितरिपुचक्रस्य**—पूणरूप से नाश कर दिए गए ह शत्रु जिसके। नि शेष क्षपितम रिपुचक्रम यस्य स तस्य (ब० व्री०)। (३) **सुगाङ्गे**—सुगाङ्ग प्रासाद। यह नन्द का महल था। (४) **परपरिभवाक्रान्तिकृपण**—शत्रुओ द्वारा किए गए अपमान के कारण दुखी (शरीर से) परै कृता या परिभवाक्रान्ति तैन कृपण । आ+क्रम+क्तिन भावे=आक्रान्ति। कृपण=दीन।

कदर्ये कृपणक्षुद्रकिम्पचानमितम्पचा । नि स्वस्तु दुर्विधो दीनो दरिद्रो दुगतोऽपि स ।। इत्यमर । (५) **प्रतनुमपि**—थोडा सा भी। राक्षस के कहने का तात्पय यह है कि मैने स्वामिभक्ति के कारण आभूषणो को त्यागा नही है बल्कि शत्रुकृत वेदना मुझे पीडा दे रही है। इसलिए मने आभूषणो का परित्याग कर दिया है। इसमे परिकर अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

कञ्चुकी—अमात्य ! त्वयि नेतरि सुलभमेतत् कुमारस्य। तत् प्रतिमान्यता कुमारस्य प्रथम प्रणय ।

राक्षस—आर्य ! कुमार इवानतिक्रमणीयवचनो भवानपि। तदनुष्ठीयते कुमारस्याज्ञा।

कञ्चुकी—(नाट्येन भूषणानि परिधाप्य) स्वस्ति भवते। साधयाम्यहम्।

राक्षस—आर्य ! अभिवादये। (कञ्चुकी निष्क्रान्त ।) प्रियंवदक ! ज्ञायता कोऽयमस्मद्दर्शनार्थी द्वारि तिष्ठति।

प्रियंवदक—ज अज्जो आणवेदि त्ति । (परिक्रम्याहितुण्डिक दृष्टवा) ण अज्ज ! को तुम ? (यदार्य आज्ञापयतीति। ननु आर्य ! कस्त्वम्) ?

आहितुण्डिक—भद्द ! अह् क्खु आहितुण्डिओ जिण्णविसो णाम। इच्छामि अमच्चरक्खसस्स पुरदो सप्पेहि खेलिदु। (भद्र ! अह खल्वाहितुण्डिको जीर्णविषो नाम। इच्छाम्यमात्यराक्षसस्य पुरत सर्पै खेलितुम्।)

प्रियंवदक—चिटठ, जाव अमच्चस्स णिवेदेमि। (राक्षसमुपसृत्य) अज्ज ! एसो क्खु सप्पोवजीवी इच्छदि सप्पेहि अमच्चस्स पुरदो खेलिदु। (तिष्ठ, यावदमात्यस्य निवेदयामि। आर्य ! एष खलु सर्पोपजीवी इच्छति सर्पैरमात्यस्य पुरत खेलितुम्।)

हिन्दी अनुवाद—कञ्चुकी—अमात्य, आपके महामत्री रहते हुए कुमार के लिए यह सब सुलभ है। इसलिए कुमार की यह प्रथम प्रार्थना तो स्वीकार ही कर लीजिए।

राक्षस—आय, मेरे लिए तो जसे कुमार की आज्ञा मान्य है वसे ही आप की। लीजिए मैं कुमार की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ।

कञ्चुकी—(आभूषणो के पहनाने का अभिनय करते हुए) आपका कल्याण हो। म जाता हूँ।

राक्षस—आय, म आपका अभिवादन करता हूँ (कञ्चुकी चला जाता है।) प्रियवदक, मालूम करो कि कौन व्यक्ति मुझसे मिलने के लिए दरवाजे पर खडा है।

प्रियवदक—जसी आय की आज्ञा (जाते हुए सँपेरे को देखकर) आप कौन ह ?

सँपेरा—म जीणविष नाम का सँपेरा हूँ। अमात्य राक्षस को म कुछ साप का खेल दिखाना चाहता हूँ।

प्रियवदक—ठहरो, म अमात्य को तब तक सूचित कर दू (राक्षस के पास जाकर) आय, एक सँपेरा आया है जो आपके सामने साप का खेल दिखाना चाहता है।

Chamberlain—Minister while you are the guide this is easily accomplished unto prince so let the first request of the prince be accepted

Rakshas—Nobe Sir to me your words are as acceptable as those of the prince so the order of the prince is being carried out

Chamberlain—(Acting the putting on of ornaments) Blessings unto thee now I go

Rakshas—Noble Sir I bow (Chamberlain goes out) Priyamvadak see who is waiting at the door desirous of seeing me

Priyamvadak—As your Noble Sir commands (Going round and seeing the snake charmer) Noble Sir who are you ?

Snake Charmer—I am a snake charmer named Jirnavisha I wish to play with snakes before the minister

Priyamvadak—Stop till I inform the minister (Going to Rakshas) Noble Sir here is a snake charmer who wants to play with snakes in the Minister s presence

टिप्पणी

(१) **प्रतिमान्यताम**—स्वीकार किया जाय। प्रति+मन्+णिच+लोट। (२) **त्वयि नेतरि**—आप के नेता होते। यहा पर यस्य च भावेन भावलक्षणम्" से सप्तमी है। (३) **अनतिक्रमणीयवचन**—जिसकी आज्ञा का उल्लघन न किया जाय। (४) **परिधाप्य**—पहनाकर। परि+धा+णिच्+ल्यप। मलयकेतु के द्वारा प्रदत्त जिन आभूषणो को राक्षस पहन रहा है इन्ही आभूषणो को आगे

चलकर वह प्रसन्न होकर सिद्धार्थक को पुरस्कार के रूप मे दे देगा। षष्ठ अक मे इन्ही आभूषणो का प्रयोग किया जाएगा। स्मरण रहे कि सिद्धार्थक चाणक्य का गुप्तचर है और खासकर इसी प्रयोजन से आया भी है। (५) **साधयामि**—जाता हूँ। ण्यन्त साध धातु गमनार्थक है—प्रायेण ण्यन्तक साधिगमे स्थाने प्रयुज्यते दर्पण। (६) **सर्पोपजीवी**—सपेरा। सर्पै उपजीवतीति। सर्प+उप+जीव+णिनि।

राक्षस—(वामाक्षिस्पन्दन सूचयित्वा आत्मगतम्) कथ प्रथममेव सर्पदर्शनम्! (प्रकाशम्) प्रियवदक! न न कुतूहलमस्ति सर्पदर्शने। तत परितोष्य विसर्जयैनम।

प्रियवदक—ज अज्जो आणवेदि। (परिक्रम्याहितुण्डिकमुपसृत्य) भद्द! एसो क्खु दे अमच्चो अदसणेण प्पसाद करेदि। ण उण दसणेण। (यदाय आज्ञापयति। भद्र! एष खलु ते अमात्योऽदर्शनेन प्रसाद करोति न पुनर्दर्शनेन।

आहितुण्डिक—भद्द। विण्णवेहि मम वअणेण अमच्च—'ण केवल अह सप्पोवजीवी, पाउअकवी क्खु अह, ता जइ मे दसणेण अमच्चो प्पसाद ण करेदि, ता एद पि पत्तअ वाचेदु प्पसीददु त्ति। (पत्रमर्पयति।) (भद्र! विज्ञापय मम वचनेनामात्य—'न केवलमह सर्पोपजीवी, प्राकृतकवि खल्वह, तस्माद् यदि मे दर्शनेनामात्य प्रसाद न करोति, तदा एतदपि पत्रक वाचयितु प्रसीदतु इति।)

प्रियवदक—(पत्र गृहीत्वा राक्षसमुपसृत्य) अमच्च! एसो क्खु आहितुण्डिओ विण्णवेदि—'ण केवल अह सप्पोवजीवी, पाउअकवी क्खु अह, ता जइ मे दसणेण अमच्चो प्पसाद ण करेदि, ता एद पि तअ वाचेदु प्पसीददु' त्ति। (अमात्य! एष खलु आहितुण्डिको विज्ञापयति—'न केवलमह सर्पोपजीवी, प्राकृतकवि खल्वह, तस्माद यदि मे दर्शनेनामात्य प्रसाद न करोति, तदा एतदपि पत्रक वाचयितु प्रसीदतु' इति।)

हिंदी अनुवाद—राक्षस—(बाइं आख का फडकना देखकर आप ही आप) अरे आज तो पहले ही साप का दशन हुआ। (प्रकट) प्रियवदक, मेरी साप देखने की इच्छा नहीं हो रही है। इसे कुछ देकर बिदा कर दो।

प्रियवदक—जसी आय की आज्ञा (घूमकर और सँपेरे के पास जाकर), लो, मत्री तुम्हारा तमाशा बिना देखे ही तुमसे प्रसन्न ह।

सँपेरा—महाशय मेरे कहने से अमात्य से कहो कि म केवल सँपेरा ही नहीं हूँ। म प्राकृत का कवि भी हू। इससे अगर मत्री मुझसे भेंट करने की कृपा न करें तो यह पत्र ही बाचने की कृपा करें।

प्रियवदक—(पत्र लेकर राक्षस के पास जाकर) मत्री जी, सँपेरा कह रहा है कि म केवल सँपेरा ही नहीं हूँ बल्कि प्राकृत कवि भी हूँ। यदि अमात्य मुझे दशन नही देना चाहते तो कम से कम इस पत्र को ही पढ़ लें।

(Acting the throbbing of the left eye to himself)—How so the first thing that I see to day is snake (Aloud) Priyamva daka I am not feeling inclined to see snakes so satisfy him and dismiss

Priyamvadaka—As your Noble Sir commands (Going round and approaching the snake charmer) Gentleman here the minister favours you (with a gift) without seeing you not with a look (at the snakes)

Snake Charmer—Gentle Sir inform the minister that I am not only a snake charmer but a Prakrit poet also so if minister will not have the grace of seeing me let him read this paper

Priyamvadaka (Taking the letter and going to minister Rakshas)—Noble Sir this man tells minister thus I am not merely a snake charmer but a Prakrit poet also so if minister will not favour me by seeing me let him at least read this piece of paper

टिप्पणी

(१) **वामाक्षिस्पन्दनम्**—बायी आख का फडकना। स्पन्द+ल्युट=स्पन्दन। (२) **प्रथममेव**—पहले ही पहल। इससे यह सूचित होता है कि प्रात काल का समय था और राक्षस के लिए पहले अपशकुन मिला। (३) **परितोष्य**—कुछ देकर उसे सतुष्ट कर। परि+तुष+णिच+ल्यप। (४) **प्राकृतकवि**—प्राकृत भाषा का कवि। काव्यादश के अनुसार सस्कृत से निकली हुई अनेक भाषाओं का नाम सामान्यतया प्राकृत है। प्राकृतेषु कवि प्राकृतकवि (सुप्सुपा स०)। (५) **प्रसाद करोति**—कृपा करते ह। अथवा इनाम देते ह।

(राक्षस पत्र गृहीत्वा वाचयति।)

पाऊण णिरवसेस कुसुमरस अत्तणो कुसलदाए।
ज उग्गिरेइ भमरो त अण्णाण कुणइ कज्ज ।।११।।

(पीत्वा निरवशेष कुसुमरसमात्मन कुशलतया।
यदुद्गिरति भ्रमरस्तदन्येषा करोति कार्यम् ।।)

अन्वय—आत्मन कुशलतया निरवशेष कुसुमरस पीत्वा भ्रमर यद उदिगरति तत अन्येषा काय करोति ।।११।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस (पत्र लेकर बाचता है।) "यद्यपि अपनी चतुरता से कुसुमरस का पान भ्रमर स्वय किया करता है किन्तु उसके उगले हुए मधु की कुछ ऐसी महिमा है जो अन्य जन का ही काय सिद्ध किया करती है। इस श्लोक का गुप्त अथ यह भी है—यद्यपि अपनी निपुणता से सारे कुसुमपुर का समाचार जानकर गुप्तचर जो कुछ कहता है वह कथन दूसरे का अथ सिद्ध करता है।

Rakshas (Taking up the piece of paper reads)—Whatever the black bee disgoiges after having totally drunk through his skill the honey of flowers (कुसुम) (that) serves the purpose of others

सस्कृत व्याख्या—भ्रमर इतस्तत सवत्र च गमनशील दूत आत्मन कुशलतया स्वस्य नपुण्येन निरवशेष ममग्र कुसुमरस पुष्परस कुसुमपुरस्य पाटलिपुत्रस्य वा उदन्तसार पीत्वा हृदयेऽवस्थाप्य निर्धार्य वा यदुदिगरिति वक्ष्यति तदन्येषा मन्त्रिप्रवराणा केषाञ्चन काय करोति साधयति शत्रविजया-दिरूप प्रयोजन सम्पादयिष्यतीत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **निरवशेषम**—पूरी तौर से। नास्ति अवशेषो यत्र तत निरवशेषम। यह पीत्वा क्रिया का विशेषण है। (२) **भ्रमर**—भौंरा अर्थात भौंरे की तरह इधर उधर विचरण करने वाला गुप्तचर। भ्रम+करन्=भ्रमर भौंरा या मधुमक्खी। भ्रमर इव आचरति इति भ्रमरति। तत पचाद्यचि=भ्रमर भ्रमरसदशाचरणकर्ता गुप्तचर। (३) **उदिगरति**—कहता है, उगलता है। (४) **अन्येषाम**—दूसरो का अर्थात गुप्तचरो को नियुक्त करने वालो का॥

गुप्तचर जो कुछ कहेगा उससे मन्त्रियो का काम पूरा होगा। यहा आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार है।

राक्षस —(आत्मगतम्) अये कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञ अह भवत्प्रणधिश्चेति गाथाथ। आ कार्यव्यग्रत्वात् मनस प्रभूतत्वाच्च प्रणिधीना विस्मृतम्, इदानीं विस्मृतिरुपलब्धा। व्यक्तम आहितुण्डिकच्छद्मना कुसुमपुरादागतेन विराधगुप्तेनानेन भवितव्यम (प्रकाशम्) प्रियवदक। प्रवेशय एनम्। सुकवि एष। श्रोतव्यमस्मात् सुभाषितम्।

प्रियवदक —ज अज्जो आणवेदित्ति (आहिततुण्डिक-मुपसृत्य) उवसप्पदु अज्जो (यदाय आज्ञापयतीति। उप-सर्पत्वाय।)

आहितुण्डिक —(नाट्येनोपसृत्यावलोक्य च सस्कृतमा-श्रित्य स्वगतम) अये ! अयममात्यराक्षस्तिष्ठति। स एष —

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(आपही आप) "अरे म कुसुमपुर का वत्तान्त जानने वाला आपका गुप्तचर हूँ" यही इस पद्य का अर्थ है। काम में मन लगा रहने के कारण तथा गुप्तचरो की अधिकता से भूल गया था, अब याद आया। यह सपेरे के वेश में कुसुमपुर से आया हुआ विराधगुप्त होगा। (प्रकट) प्रियवदक, इसे अन्दर आने दो। यह अच्छा कवि है। इससे सुन्दर कविता सुननी चाहिये। प्रियवदक—जसी आय की आज्ञा हो (सँपेरे के पास जाकर) आय चलिये।

सँपेरा—(समीप जाने का अभिनय करके और देखकर, सस्कृत भाषा में आप ही आप।) अरे, यही अमात्य राक्षस ह। वही यह

Rakshas (To himself)—The implied meaning of the verse is I am your emissary who knows the news of Kusum pura Due to being absorved in work and because of large ness of the number of spies I have forgotten all Now I have remembered This must be Viradhgupta in the guise of a snake charmer who must have come from Kusumpura (Aloud) Priyamvadaka admit him He is a good poet we must hear some of his good sayings

Priyamvadaka—As your Noble Sir commands (Approa ching the snake charmer) Let Noble Sir proceed

Snake charmer—(Acts advancing and observing to himself in Sanskrit) He is Minister Rakshas He who—

संस्कृत व्याख्या—कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञः कुसुमपुरस्य समाचारज्ञाता अहम् भवत्प्रणिधिः भवतः चरः इति गाथार्थः गाथायाः पद्यस्य अर्थः भावः । मनसः चित्तस्य कार्यान्तरव्यग्रत्वात् कार्यसंलग्नत्वात् प्रभूतत्वाच्च प्रणिधीनाम् आधिक्यात् चाराणाम् विस्मृतम् इदानीम् अधुना स्मृतिः स्मरणम् उपलब्धा प्राप्ता । व्यक्तम् स्पष्टम् आहितुण्डिकच्छद्मना व्यालोपजीविरूपेण अनेन विराधगुप्तेन कुसुमपुरेण आगतेन भवितव्यम् अयम् विराधगुप्तनामा चरः कुसुमपुरादागतः इत्यर्थः । प्रियंवदक एनं प्रवेशय अयं सुकविः अस्मात् सुभाषितम् सुकविता श्रोतव्यम् ।

टिप्पणी

कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञः—पाटलिपुत्र का समाचार जानने वाला । कुसुमपुरस्य वृत्तान्तः (षष्ठीतत०) तम् जानाति इति कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञः ज्ञा+क 'आतोऽनुपसर्गे कः' इत्यनेन ।

वामां बाहुलतां निवेश्य शिथिलं कण्ठे निवृत्तानना
स्कन्धे दक्षिणया बलान्निहितयाप्यङ्के पतन्त्या मुहुः ।
गाढालिङ्गनसङ्गपीडितमुखं यस्योद्यमाशङ्किनी
मौर्यस्योरसि नाधुनाऽपि कुरुते वामेतरं श्रीः स्तनम् ॥१२॥

अन्वय—यस्य उद्यमाशङ्किनी श्रीः वामां बाहुलतां कण्ठे शिथिलं निवेश्य निवृत्तानना बलात् स्कन्धे निहितया अपि मुहुः अङ्के पतन्त्या दक्षिणया गाढालिङ्गनसङ्गपीडितमुखं वामेतरम् स्तनम् अधुनापि मौर्यस्य उरसि न कुरुते ।

हिन्दी अनुवाद—जिन (राक्षस) के पराक्रमों से राजलक्ष्मी इतनी भयभीत है कि उसकी बाईं बाँह चन्द्रगुप्त के गले में ढीली-ढाली ही डाली गई है, उसका मुँह चन्द्रगुप्त की तरफ से फिरा ही रहता है। आलिङ्गन करने की इच्छा से दाहिने हाथ को भी उसके कंधे पर रखती है पर वह भी नीचे को गिर जाता है। उसका दक्षिण स्तन अभी भी चन्द्रगुप्त के गाढालिङ्गन और उसके आनन्द की आशा नहीं कर सकता।

He it is in fear of whose rush Shri has loosely thrown her left arm round the neck of Chandragupta she (Shri) is always turning away her face from him (Chandragupta) Though being desirous of embracing him yet she wants to place her right hand on his shoulders yet it falls down even now Shri can not lie close to Maurya's chest to enjoy the happiness of his embrace

सस्कृत व्याख्या—यस्य राक्षसस्य उद्यमाशङ्किनी यस्य सधिविग्रहादि प्रयत्नत्रस्ता सती श्री लक्ष्मी वामा बाहुलता स्वीया वामभुजवल्ली च द्रगुप्तस्य कण्ठे शिथिल यथा स्यात्तथा यथा कथचित निवेश्य सस्थाप्य अपि निवत्तानना मुख परावत्त्य एव तिष्ठ ती तत्कामिना च द्रगुप्तेन च बलात बलपूवकमेव नतु स्वेच्छया स्वस्य च द्रगुप्तस्य दक्षिणे स्क धे निहितया स्थापितया अपि मुहु वार वारम अङ्के पत त्या स्खलितया दक्षिणया भुजलतया उपलक्षिता सती मौयस्य च द्रगुप्तस्योरसि वक्ष स्थले अधुनापि इदानीमपि वामेतर दक्षिण स्तनम गाढा लिङ्गनसङ्गपीडितमुख गाढालिङ्गनस्य दढपरिष्वङ्गस्य सङ्गेन आसक्त्या पीडित मुखम कुचाग्रम यस्य तादश न कुरुते ।

टिप्पणी

यह श्लोक कुछ अश्लील है। यहा पर राजलक्ष्मी को एक अविवाहिता स्त्री के रूप मे कल्पित किया गया है। विवाहिता स्त्री का स्थान पति के वाम भाग मे है। न दवश की राज्यश्री पर च द्रगुप्त का नीतियुक्त अधिकार नही था प्रत्युत उस पर बलात अधिकार किया गया था। इसलिए वह पत्नी के उपयुक्त वाम स्थान को छोडकर च द्रगुप्त के दक्षिण ओर बठी थी। न दराज्य के उद्धाराथ राक्षस के प्रयत्नो को देखकर लक्ष्मी यद्यपि च द्रगुप्त के कण्ठ को बाइ बाहु से वेष्टित करती है पर वह हाथ गिर गिर पडता है। आलिङ्गन करने की इच्छा से दाहिने हाथ को भी उसके कधो पर रखती है पर वह भी गोद मे गिर पडता है और उसकी बुद्धि राक्षस की नीति से सशकित हो रही है। इससे वह अभी तक च द्रगुप्त के वक्ष स्थल पर अपनी छाती रखकर गाढ आलिङ्गन नही करती। **बाहुलताम**—बाहु लता इव इति बाहुलता (उपमित स०), ताम्। लता का वेष्टनधम भुजा मे पाया जाता है, इसलिए भुजा मे लतात्व का आरोप करते है। इस श्लोक मे समासोक्ति अलकार तथा शादूलविक्रीडित छ द है।

(प्रकाशम्) जअदु जअदु, अमच्चो ! (जयतु जयत्वमात्य ।)

राक्षस —(विलोक्य) अये विराध ! (इत्यर्धोक्ते) ननु विरूढश्मश्रु । प्रियवदक ! भुजगैरिदानी विनोदयितव्यम् । तद्विश्रम्यतामित परिजनेन। त्वमपि स्वाधिकारमशून्य कुरु।

प्रियवदक —ज अमच्चो आणवेदि त्ति। (यदमात्य आज्ञापयतीति।) (सपरिवारो निष्क्रान्त ।)

राक्षस —सखे विराधगुप्त ! इदमासनमास्यताम्।

विराधगुप्त —यदाज्ञापयत्यमात्य इति। (नाटयेनोपविष्ट ।)

राक्षस —(सखेद निर्वर्ण्य) अहो ! देवपादपद्मोपजीविनो जनस्येयमवस्था। (इति रोदिति।)

विराधगुप्त —अमात्य ! अल शोकेन। नातिचिरादमात्योऽस्मान् नून पुरातनीमवस्थामारोपयिष्यति।

राक्षस —सखे विराधगुप्त ! वर्णय इदानीं कुसुमपुरवृत्तान्तम्।

विराधगुप्त —अमात्य ! विस्तीर्ण कुसुमपुरवृत्तान्त । तदाज्ञापय कुत प्रभृति कथयामि।

राक्षस —सखे ! चन्द्रगुप्तस्य तावत् नगरप्रवेशात्प्रभृति अस्मत्प्रयुक्तैस्तीक्ष्णरसदायिभि किमनुष्ठितमित्यादित श्रोतुमिच्छामि।

विराधगुप्त —एष कथयामि। अस्ति तावत् शकयवनकिरातकाम्बोजपारसीकवाह्लीकप्रभृतिभिश्चाणक्यमतिपरिगृहीतैश्चन्द्रगुप्तपर्वतेश्वरबलैरुदधिभिरिव प्रलयकालचलितसलिलै समन्तादुपरुद्ध कुसुमपुरम्।

हिदी अनुवाद—(प्रकट) अमात्य की जय हो।

राक्षस—(देखकर) अरे विराध (आधा कहकर) तुम्हारी दाढी और मूछ बढ़ी हुई है। प्रियवदक, इस समय सॉपो से मनोविनोद करना है। इसलिए परिचारक गण यहा से जाकर विश्राम करें। तुम भी अपना काम करो।

प्रियवदक—जो अमात्य की आज्ञा। (परिजनो के साथ निकल जाता है)।

राक्षस—मित्र विराधगुप्त। यह आसन है, इस पर बठो।

विराधगुप्त—जो अमात्य की आज्ञा (अभिनय के साथ बठ जाता है)।

राक्षस—(खेद के सहित देखकर) हा! महाराज नन्द के आश्रित लोगों की यह अवस्था (रोता है)।

विराधगुप्त—आप दुःख न करें। शीघ्र ही अमात्य हम लोगों को पुरानी अवस्था में कर देंगे।

राक्षस—मित्र विराधगुप्त, कुसुमपुर का वत्तान्त कहो।

विराधगुप्त—अमात्य, कुसुमपुर का वत्तान्त बहुत लम्बा चौडा है। अत आज्ञा दीजिए, जहाँ से कहिए वहाँ से कहूँ।

राक्षस—मित्र, चन्द्रगुप्त के नगर में प्रवेश करने के बाद हमारे भेजे हुए विष देने वालो ने क्या किया। यह म आदि से सुनना चाहता हूँ।

विराधगुप्त—कहता हूँ। चाणक्य की बुद्धि से सचालित चन्द्रगुप्त और पर्वतेश्वर की शक, यवन, किरात, काम्बोज, पारसीक और बाह्लीक आदि सेनाओं ने प्रलयकाल में लहराते हुए जल वाले समुद्रो की तरह चारो ओर से कुसुमपुर को घेर लिया।

(Aloud) victory to minister

Rakshasa (Seeing)—Ha Viradh (After uttering half) with beards grown indeed Priyamvadaka I have to amuse (my self) with snakes so let the attendants go from here you too go and do your duty

Priyamvadaka—As the minister commands (Departs with attendants)

Rakshasa—Friend Viradhagupta sit down here is a seat

Viradhagupta—As the minister says (Acts sitting)

Rakshasa—(Observing sorrowfully)—Alas such is the condition of the dependant of the lotus feet of sire (Weeps)

Viradhagupta—Minister enough of sorrow Before long minister will restore us to the old condition

Rakshasa—Friend Viradhagupta now tell me the news of Kusumpura

Viradhagupta—Minister the story of Kusumpura is long so tell me from where I should relate

Rakshasa—Friend I wish to know from the very beginning what has been done by those who were sent by me to administer poison at the entry of Chandragupta into the city

Viradhagupta—Here I narrate Kusumpura was besieged on all sides by the forces of Chandragupta and Parvateshwar led by the advice of Chanakya by Sakas Yavanas Kiratas Kambojas, Parasikas Vahlikas and others as by the seas with the waters overflown at the time of universal destruction

टिप्पणी

(१) विराध—विकृतो राधो वेष आकार इति यावत् यस्य स विराध ।

राक्षस के मुह से विराधगुप्त का नाम निकल ही रहा था कि उसे स्मरण हो आया कि यहाँ प्रियवदक तथा अन्य परिजन भी है। वे लोग सब कुछ जान जाएगे। अत वाक्य बदलकर ननु प्ररूढश्मश्रु ऐसा कहकर समाप्त किया। (२) **विरूढश्मश्रु**—बढी हुई दाढी मछवाला। विरूढानि श्मश्रूणि यस्य स। (३) **स्वाधिकारम**—काय का स्थान अर्थात दरवाजा। अधिक्रियते व्यापायते अस्मिन इति। अधि+कृ+घञ। (४) **निवर्ण्य**—देखकर निरूप्य। निर+वर्ण+णिच+ल्यप। (५) **सपरिवार**—नौकरो के सहित। (६) **देवपादपद्मोपजीविन**—महाराज नन्द के आश्रित। देवस्य पादपद्मम उपजीवतीति। उप+जीव+णिनि। (७) **चाणक्यमतिपरिगृहीत**—चाणक्य की नीति के अनुसार चलने वाले। (८) **प्रलयकालचलितसलिल**—प्रलयकाल मे चचल (लहराता) हुआ है जल जिनका प्रलयकाल मे लहराते हुए जलवाले यह 'उदधिभि" का विशेषण है। प्रलयस्य काल प्रलयकाल प्रलयकाले चलितम् सलिल येषा ते त। (९) **समन्तात उपरुद्धम**—चारो तरफ से घेर लिया गया है। उप+रुध+क्त।

राक्षस—(शस्त्रमाकृष्य ससम्भ्रमम्) मयि स्थिते क कुसुमपुरमुपरोत्स्यति? प्रवीरक! प्रवीरक! क्षिप्रमिदानीम्।

प्राकार परित शरासनधरै क्षिप्र परिक्रम्यता
द्वारेषु द्विरद प्रतिद्विपघटाभेदक्षमै स्थीयताम्।
त्यक्त्वा मृत्युभय प्रहर्तुमनस शत्रोर्बले दुर्बले
ते निर्यान्तु मया सहैकमनसो येषामभीष्ट यश ।।१३।।

अन्वय—शरासनधर प्राकार परित क्षिप्र परिक्रम्यताम। प्रतिद्विपघटा भेदक्षम द्विरद द्वारेषु स्थीयताम। येषा यश अभीष्टम ते मत्यभय त्यक्त्वा दुबले शत्रोबले एकमनस प्रहतुमनस (सन्त) मया सह निर्यान्तु ।।१३।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस (शस्त्र खींचकर हडबडी के साथ) मेरे रहते हुए कौन कुसुमपुर को घेरेगा। प्रवीरक, प्रवीरक, शीघ्र ही इस समय बुर्जों तथा दीवारो पर धनर्धारी सेना शीघ्र चलकर चक्कर लगावे, शत्रु के हाथियो को तितर बितर करने में समथ मस्त हाथियो को फाटको पर खडा कर दो, यश को चाहने वाले, मत्यु का ख्याल न करने वाले, दुबल शत्रु सेना पैर एक मन से आक्रमण करने वाले (वीर) मेरे साथ (शत्रु से लडने के लिए) बाहर निकलें।

Rakshasa (Drawing his sword in haste)—Who will besiege Kusumpura while I am alive Praviraka Praviraka now quickly let archers patrol round the wall let big elephants worthy of destroying the enemy elephants be placed at the gates let those warriors who love fame and are not afraid of death go out with me with a view to strike with one mind at the weak forces of the foe

सस्कृत याख्या—शरासनधर धनुधर प्राकार परित प्राचीरस्य सम तात क्षिप्र शीघ्रम् परिक्रम्यताम परिभ्रम्यताम। द्वारेषु कुसुमपुरस्येति शेष प्रति द्विपघटाभेदक्षमै प्रतिद्विपघटानाम शत्रुहस्तिसेनाना भेदे विघाते सहारे वा क्षमै समर्थै द्विरद गज स्थीयताम द्वारसरक्षणाय सनह्यताम येषा वीराणा यश कीर्ति अभीष्टम प्रिय ते मत्युभय त्यक्त्वा दुबले प्रहृतुमनस परित्यक्तस्वदेह भङ्गभया शत्रुबल च तणाय मत्वा एकमनस एकचित्ता भूत्वा विरता यभावा शत्रुनाशकपरायणा ते मया सह निर्यान्तु युद्धाय चलन्तु।

टिप्पणी

(१) **प्राकारम**—दीवाल। नगर की सुरक्षा के लिए प्राचीन काल मे उसके चारो तरफ दीवाल बनी रहती थी। प्राकार मे द्वितीया परित के योग से हुई है। अभित परित समया निकषा हा प्रतियोगेऽपि । (२) **प्रतिद्विपघटा भेदक्षम**—शत्रुओ की गजघटा को भेदन करने मे समथ। प्रतिपक्षिणा द्विपाना घटया भेदने क्षमा तै। (३) **दुबले बले**—दुबल सेना। दु स्थितानि बलानि अस्य इति दुबलम तस्मिन। अपने सनिको का मनोबल बढाने के लिए शत्रुसेना को दुबल कहना मनोवज्ञानिक दष्टि से आवश्यक है। वस्तुत शत्रुसेना दुबल नही अतिप्रबल थी। (४) **प्रहृतुमनस**—प्रहार करने की इच्छा रखने वाले। प्रहृतु मन एषाम इति प्रहृतुमनस। (५) **एकमनस**—एकचित्त होकर। अर्थात एक साथ। (६) **येषाम यश अभीष्टम**—जिनको यश प्यारा है। यहा स्वभावोक्ति तथा का यलिंग अलकारो की ससष्टि है और शादूलविक्रीडित छद है।

विराधगुप्त—अमात्य! अलमावेगेन। वृत्तमिद वण्यते।

राक्षस—(नि श्वस्य) कष्ट वृत्तमिदम्। मया पुनर्ज्ञात स एव कालो वतत इति। (शस्त्रमुत्सृज्य सास्त्रम्) हा

देवनन्द ! स्मरामि ते राक्षसम्प्रति प्रसादातिशयम्। यस्तु एवविधकाले—

यत्रैषा मेघनीला चरति गजघटा राक्षसस्तत्र याया-
देतत् पारिप्लवाम्भ प्लुति तुरगबल वार्यता राक्षसेन।
पत्तीना राक्षसोऽन्त नयतु बलमिति प्रेषयन्मह्यमाज्ञा-
मज्ञासी स्नेहयोगात् स्थितमिव नगरे राक्षसाना सहस्रम् ॥१४॥

अन्वय—यत्र एषा मेघनीला गजघटा चरति तत्र राक्षस यायात पारिप्लवाम्भ प्लुति एतत तुरगबल राक्षसेन वायताम पत्तीना बल राक्षस अन्त नयतु इति मह्यम आज्ञा प्रेषयन स्नेह-योगात नगरे राक्षसाना सहस्रम इव स्थितम अज्ञासी ॥१४॥

हिंदी अनुवाद—विराधगुप्त—अमात्य ! आवेग में न आइये। यह तो म वत्तान्त का वणन कर रहा हूँ।

राक्षस—(लम्बी सास लेकर) यह समाचार कष्टदायक है। मुझे तो मालूम पडा कि वही समय है (हथियार छोडकर आसू के साथ) हाय, देवनन्द ! राक्षस के प्रति आपकी अत्यन्त कृपा मुझे याद है जो ऐसे समय में (आप ऐसा कहते) जहा पर यह ऐसी बादल की सी नीली गजघटा (हाथियो का दल) घूम रही है वहा पर राक्षस (उसे नाश करने के लिए जावे), जहा पर शत्रुओ की अश्वसेना समुद्र की लहरो की भाति लहरा रही हो उसे राक्षस रोके, जहा कही भी शत्रुओं की पदल सेना सन्नद्ध खडी हो राक्षस उसे मार भगावे। इस प्रकार मुझे आज्ञा देते हुए प्रेम के कारण राक्षस को एक रूप में नहीं बल्कि अनेक रूपो में मानते थे।

Viradhagupta—Minister do not be agitated it is the past which is being described

Rakshasa—(Sighing)—This story is very unpleasant I knew that this was the very time (laying down the weapon) Alas ! sire Nanda Rakshasa remembers the favours you showed to him At the time of fighting you sent out orders to me such as Rakshasa should hurriedly march where this host of elephants blue like cloud is marching Let Rakshasa check this cavalry which is bounding like rushing water Let Rakshasa destroy this infantry You on account of affection thought as if a thousand of Rakshasa were present in the city Then what

सस्कृत व्याख्या—अत्र सग्रामकाले अस्मिन युद्धसमये त्व यत्र एषा पुरो दृश्यमाना मेघनीला जलदश्यामला गजघटा हस्तिसमूह चरति धावति तत्र राक्षस

यायात गच्छेत् नान्य एताय समथ पारिप्लवाम्भ प्लुति पारिप्लव चञ्चल यत अम्भ जल तस्य प्लुति उत्प्लवनमिव प्लुति यस्य तादृशम एतत् दृश्यमानम तुरगबलम अश्वसेना राक्षसेन वायताम रुध्यताम पत्तीना पदातीना बलम साग्रामिक पराक्रम राक्षस एवा त नयतु नाशयतु इत्येव रीत्या मह्यम आज्ञा प्रेषयन मामेव तत्र तत्र सवत्र नियोजयन स्नेहयोगात प्रीतिवशात इह नगरे पाटलिपुत्रे स्थितम् विराजमानम राक्षसानाम् सहस्रम अज्ञासी सवविधकायसम्पादक मामेव अमस्था इत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **आवेगेन**—क्रोधेन। (२) **पारिप्लवाम्भ प्लुति**—चञ्चल जल के समान उछल कूद करने वाली। (घुडसवारो की सेना) यह तुरगबल का विशेषण है। (३) **पत्तीनाम**—पदल सेना का। पद्य ते इति पद+क्तिच वा औणादिक क्ति कतरि=पत्तय तेषाम। पदातिपत्तिपदगपादातिकपदाजय इत्यमर । (४) **अज्ञासी**—मानते थे समझते थे। राक्षस को कई काम राजा न द करने को कह डालते थे यह उनकी कृपा थी। मानो एक नही हजारो राक्षस वतमान ह। एक यक्ति एक ही काम कर सकता है पर न द राक्षस को सभी काय करने के लिए कह डालते थे मानो कई राक्षस ह। इसमे लुप्तोपमा तथा वाच्योत्प्रेक्षा अलकार है और स्रग्धरा छ द है।

विराधगुप्त —तत समन्तादुपरुद्ध पुष्पपुरमवलोक्य, बहुदिवसप्रभृति महदुपरोधवशसमुपरि पौराणा परिवर्तमानमसहमाने, तस्यामप्यवस्थाया पौरजनापेक्षया सुरङ्गामेत्यापक्रान्ते तपोवनाय देवे सर्वार्थसिद्धौ, स्वामिविरहात् सुशिथिलीकृतप्रयत्नेषु युष्मद्बलेषु, जयघोषणाव्याघातादिसाहसानुमितान्तर्नगरवासिषु, पुनरपि नन्दराज्यप्रत्यानयनाय सुरङ्गया बहिरपगतेषु युष्मासु, चन्द्रगुप्तनिधनाय युष्मत्प्रयुक्तया विषकन्यया घातिते तपस्विनि पर्वतेश्वरे—

हि दी अनुवाद—विराधगुप्त—पाटलिपुत्र के चारो ओर घिर जाने पर महाराज सर्वार्थसिद्धि के बहुत दिनो तक चलने वाले इस घेरे से अपनी प्रजाओ पर पड़ने वाली दारुण विपत्ति को न सह सकने पर इसी अवस्था में पौरजनों का ख्याल करके उनके सुरग के रास्ते से तपोवन में भाग जाने पर और स्वामी

के विरह से आप की सेना के शिथिल हो जाने पर नागरिकों द्वारा चन्द्रगुप्त की विजय घोषणा में की गई विघ्नबाधाओ से उनके मन का भाव मालूम हो जाने पर और फिर भी नन्द राज्य को वापिस लाने के लिए (पुन स्थापित करने के वास्ते) सुरङ्ग के द्वारा आप लोगो के बाहर चले आने पर चन्द्रगुप्त के मारने के वास्ते आपकी भेजी हुई विषकन्या के द्वारा तपस्वी पर्वतेश्वर के मारे जाने पर।

Viradhagupta—When Pataliputra was beseiged on all sides sire Sarvarthsiddhi being unable to bear the hardships of the people that was due to the long continuance of the seige left for the hermitage by reaching a tunnel in the same condition out of regard for the citizens and your forces greatly relaxed their efforts due to the absence of their master when you having guessed the minds of the residents in the city from such darings as obstruction to the proclamation of (Chandragupta s victory) went out by means of the tunnel to re establish the kingdom of Nanda and when poor Parvateshwar was killed by the poison girl employed by you for the destruction of Chandragupta—

संस्कृत व्याख्या—तत तदनन्तरम समन्तात चतुर्दिक्षु उपरुद्धम आक्रान्तम कुसुमपुरमवलोक्य दृष्ट्वा बहुदिवसप्रभृति अनेकदिवसान यावत पौराणाम नगर निवासिनाम उपरि महत अधिक परिवर्तमानम उपरोधवैशसम आक्रमणकष्टम असहमाने अमृष्यमाणे तस्यामप्यवस्थायाम दु खपूर्णायामवस्थाया पौरजनापेक्षया पौरजनेषु या अपेक्षा आदर तया सुरङ्गम एत्य प्राप्य तपोवनाय देवे सर्वार्थसिद्धौ अपक्रान्ते गते स्वामिविरहात प्रभुविरहात सुशिथिलीकृतप्रयत्नेषु मन्दीकृत उद्योगेषु भवत्सैन्येषु जयघोषणाव्याघातादिसाहसानुमितान्तनगरवासिषु जयस्य घोषणा तस्या व्याघात अकरणम स आदिर्येषा त साहस साहसयुक्तकार्यै अनुमितेषु नन्दानुरक्ता एते इति ज्ञाने जाते अन्तनगरवासिषु नगरनिवासिषु पुनरपि भूय अपि नन्दराज्यप्रत्यानयनाय नन्दराज्य पुन स्थापयितु सुरङ्गया बहिरपगतेषु भवत्सु युष्मासु चन्द्रगुप्तनिधनाय चन्द्रगुप्तवधाय युष्मत्प्रयुक्तया भवत्प्रेषितया विषकन्यया तपस्विनि पर्वतेश्वरे घातिते नाशिते सति।

टिप्पणी

(१) **उपरुद्धम**—घिरा हुआ। उप+रुध्+क्त। (२) **बहुदिवसप्रवृत्तम**—बहुत दिनो से चलता हुआ। यह उपरोधवैशसम का विशेषण है। (३) **उपरोध वैशसम**—उपरोध (घेरे) का दु ख नगर के घेरे जाने से होने वाला कष्ट। उपरोधस्य वैशसम इति उपरोधवैशसम। उप+रुध्+घञ भावे=उपरोध।

विशस+अण=वशसम। (४) **पौरजनापेक्षया**—पुरवासियो का ख्याल करके पुरवासियो के दु ख का विचार करके। पौरजनस्य अपेक्षया। हेतौ ततीया है। (५) **सर्वार्थसिद्धौ**—सर्वार्थसिद्धि न द का अतिनिकट का जातीय था। वह उस समय वृद्ध हो चला था। न द की मत्यु होने पर राक्षस ने उसे ही राजा बनाकर शत्रु सेना का प्रतिरोध करना शुरू कर दिया था। (६) **अपक्रान्ते**—चले जाने पर। (७) **जयघोषणाव्याघातादिसाहसानुमितेषु**—जयध्वनि मे याघात (रुकावट आदि) साहस के कामो से अनुमान कर लिए जाने पर। नगरवासियो के मन की परिस्थिति का पता जयघोष मे विघ्न डालने से ही चल गया।

राक्षस —सखे ! पश्याश्चर्यम्—

कर्णेनेव विषाङ्गनैकपुरुषव्यापादिनी रक्षिता
हन्तु शक्तिरिवार्जुन बलवती या चन्द्रगुप्त मया।
सा विष्णोरिव विष्णुगुप्तहतकस्यात्यन्तिकश्रेयसे
हैडिम्बेयमिवेत्य पर्वतनृप तद्वध्यमेवावधीत् ।।१५।।

अ वय—कर्णेन इव मया अजुनम इव च द्रगुप्तम हन्तुम बलवती एक पुरुष यापादिनी शक्ति (इव) या विषाङ्गना रक्षिता सा विष्णों इव विष्णु गुप्तहतकस्य आत्य तिकश्रेयसे तद्वध्यम हैडिम्बेयमिव पवतनपम एव एत्य अवधीत् ।।१५।।

हि दी अनुवाद—राक्षस—मित्र, देखो कसे आश्चय की बात है—च द्रगुप्त को मारने के लिए मने विषक या को उसी प्रकार सुरक्षित रखा था जिस प्रकार अजुन को मारने के लिए कण ने अमोघशक्ति को जो एक ही पुरुष को मार सकती थी सुरक्षित रख छोडा था। परन्तु वह शक्ति अजुन को न मारकर विष्णु (कृष्ण) के वध्य हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच को मारने में प्रयुक्त की गई। उसी प्रकार वह विषक या च द्रगुप्त को न मारकर विष्णुगुप्त चाणक्य के वध्य (पवतेश्वर) को मारने में प्रयुक्त हुई।

Rakshasa—See what a wonder The poison girl which could kill a single individual was reserved to kill Chandragupta like the Javelin by Karna to kill Arjuna but for the lasting benefit of the wicked Vishnugupta, it was used in killing Parvatak as the Javelin (of Karna) was used in killing Hidimba s son that was but his (Vishnu s or Krishna s) victim

सस्कृत व्याख्या—मया कर्णेनेव च द्रगुप्तमजुनमिव हन्तु यापादयितु या बलवती समर्था चकपुरुष यापादिनी प्रधानतमपुरुषविनाशयित्री विषाङ्गना विष

कन्या शक्तिरिव इन्द्रप्रदत्तहेतिरिव रक्षिता महता मनोरथेन निपुणं निगूढं स्थापिता सा खलु विष्णुगुप्तहतकस्य दुष्टचाणक्यस्य विष्णोरिवात्यन्तिकश्रेयसे महते कल्याणाय चाणक्यपक्षे परिपणितराज्यार्धप्रदानाय कृष्णपक्षे च अर्जुनरक्षणाय तद्वध्यं चाणक्यघात्यमेव पर्वतनृपं पर्वतकं हैडिम्बेयमिव घटोत्कचमिवत्यं प्राप्य अवधीत् विनाशितवतीत्यर्थः ।

टिप्पणी

(१) **एकपुरुषव्यापादिनी**—एक (प्रधान) पुरुष को मारने वाली। एकः पुरुषः एकपुरुषः (कर्मधा०) तम् व्यापादयति इति एकपुरुषव्यापादिनी । एक पुरुष+वि+आ+पद+णिच+णिनि कर्तरि साधु कारिणि आवश्यके वा। यह विषाङ्गना तथा शक्ति का विशेषण है। (२) **विष्णुगुप्तहतकस्य**—पापी विष्णुगुप्त चाणक्य का। हत एव हतकः स्वार्थे कन्। विष्णुगुप्तश्चासौ हतकश्च। कुत्सितानि कुत्सनैः इति समासः । तस्य विष्णुगुप्तहतकस्य। (३) **आत्यन्तिक**—परम अथवा नित्य। (४) **हैडिम्बेयम्**—हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच को। हिडिम्बायाः अपत्यं पुमान् इति हिडिम्बा+ढक। हिडिम्बा भीमसेन की स्त्री थी। उसका पुत्र घटोत्कच था। (५) **तद्वध्यम्**—उसका वध्य पर्वतक चाणक्य का वध्य था और घटोत्कच कृष्ण का। तेन वध्यः अथवा तस्य वध्यः पर्वतक को आधा राज्य देने का प्रलोभन देकर चाणक्य ने बुलाया था वह उसे आधा राज्य कभी न देता बल्कि किसी प्रकार वह उससे छुटकारा पाना चाहता था। अतः विषकन्या का प्रयोग उसने उसी पर करवाया। इसी से पर्वतेश्वर चाणक्य का वध्य था। घटोत्कच राक्षस होने के नाते कृष्ण का वध्य था। इन्द्र ने कर्ण को एक अमोघ शक्ति दी थी। उसमें यह गुण था कि वह जिसके ऊपर चलाई जाती अवश्य वध कर देती कर्ण ने उसे अर्जुन के मारने के वास्ते सुरक्षित रखा था। पर कृष्ण को यह बात मालूम हो गई। उन्होंने घटोत्कच को भेज कर कौरव सेना में इतना उपद्रव मचाया कि लाचार होकर कर्ण ने वह शक्ति घटोत्कच पर प्रहार किया जिससे घटोत्कच मारा गया और अर्जुन बच गया। उसी प्रकार विषकन्या तो चन्द्रगुप्त के नाश के लिए भेजी गई थी पर चाणक्य की चातुरी से वह पर्वतेश्वर पर प्रयुक्त की गई जिससे पर्वतेश्वर की हत्या हुई और चाणक्य का परम कल्याण हो गया। क्योंकि उसे पर्वतेश्वर को आधा राज्य नहीं देना पड़ा। इस श्लोक में विषमालंकार एवं उपमालंकार हैं और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विराधगुप्त —अमात्य ! दैवस्यात्र कामचार , किमत्र क्रियते ?

राक्षस —ततस्तत ?

विराधगुप्त —तत पितृवधपरित्रासादपक्रान्ते कुसुमपुरात् कुमारे मलयकेतौ, विश्वासिते च पर्वतकभ्रातरि वैरोचके, प्रकाशिते च चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशे, चाणक्यहतकेनाहूयाभिहिता कुसुमपुरनिवासिन सर्वे एव सूत्रधारा यथा— 'सावत्सरिकवचनादद्यैवाधरात्रसमये एवाभिमत चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशो भविष्यतीति, तत प्रथमद्वारात्प्रभृति सस्क्रियता राजभवनम्' इति । तत सूत्रधारैरभिहितम— 'आय ! प्रथममेव देवस्य चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशमुपलभ्य सूत्रधारेण दारुवर्मणा कनकतोरणन्यासादिभि सस्कारविशेषै सस्कृत प्रथमराजद्वारम् । इदानीमस्माभिरभ्यन्तरे सस्कारो विधेय ' इति । ततश्चाणक्यवटुना, अनादिष्टेनैव दारुवर्मणा सस्कृत राजभवनद्वारमिति परितुष्टेनेव, दारुवमण सुचिर दाक्ष्यमभिनन्द्याभिहितम—'अचिरादस्य दाक्ष्यस्यानुरूप फलमधिगमिष्यसि दारुवमन् !'

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—अमात्य, यह तो भाग्य की विडम्बना है इसमें किया ही क्या जाय।

राक्षस—तब

विराधगुप्त—तब पिता के वध से भयभीत होकर मलयकेतु के कुसुमपुर से भाग जाने पर, पवतेश्वर के भाई वरोचक को किसी प्रकार शात कर दिए जाने पर, सम्राट नन्द के प्रासाद में चन्द्रगुप्त के प्रवेश की सूचना दे दिए जाने पर दुष्ट चाणक्य ने सभी कुसुमपुर निवासी कारीगरो को बुलाकर कहा कि ज्योतिषियो के कथनानुसार आज ही आधी रात को चन्द्रगुप्त का नन्दभवन में प्रवेश करना इष्ट होगा। अत प्रथम द्वार से लेकर राजभवन को सुसज्जित कर दो। तब कारीगरो ने कहा कि आय पहले ही से महाराज चन्द्रगुप्त का नन्दभवन में प्रवेश सुनकर कारीगर दारुवर्मा ने सोने का तोरण आदि स्थापित कर अनेक विशेष सजावटों से राजप्रासाद का पहला दरवाजा सुसज्जित कर दिया है। इस समय भवन का भीतरी भाग सजाना बाकी रह गया है। तदनन्तर बिना कहे

ही दारुवर्मा ने राजभवन के द्वार को सजा दिया। इससे मानो सन्तुष्ट होकर दुष्ट चाणक्य ने बहुत देर तक दारुवर्मा के कौशल की प्रशंसा करते हुए कहा "दारुवर्मा शीघ्र ही इस कौशल के योग्य फल को प्राप्त करोगे"।

Next Prince Malayaketu having sceded through fright from the murder of his father Vairochaka the brother of Parvataka having been lured into confidence and Chandragupta s intended entry into the palace of Nanda having been made known all carpenters living at Kusumpura were summoned by cursed Chanakya and informed thus— As under instruction from the astrologers Chandragupta s entry into the palace of Nanda comes off at mid night so let the palace be decorated commencing with the eastern gate It was then remarked by the carpenters— Noble Sir the first gate of the palace is already decorated by the carpenter Daruvarman by placing golden gateways and the like he having previously known of Sire Chandragupta s entry into the palace of Nanda Decorations have now to be put up by us in the interior Then the wicked Chanakya as if pleased that the palace gate had been decorated by the Carpenter Daruvarman even before ordered long belauding the skill of Daruvarman said this Daruvarman you will ere long get the reward suiting this keenness

संस्कृत व्याख्या—तत तदनन्तरम पितवधत्रासात जनकवधभयात अपक्रान्ते पलायमाने कुसुमपुरात पाटलिपुत्रात कुमारे मलयकेतौ विश्वासिते आश्वासिते च पवतकभ्रातरि पवतकसोदरे वरोचके प्रकाशिते प्रख्यापिते च चन्द्रगुप्तस्य मौयस्य नन्दभवनप्रवेशे नन्दभूपगृहसन्निवेशे चाणक्यहतकेन आहूय आकाय अभिहिता कथिता कुसुमपुरनिवासिन पाटलिपुत्रवास्तव्या सर्वे समे एव सूत्रधारा शिल्पिन सावत्सरिकवचनात दवज्ञवाक्यात अद्यैव अस्मिन्नेव अधरात्रसमये निशाधसमये एव अभिमत अभीष्ट चन्द्रगुप्तस्य मौयस्य नन्दभवनप्रवेश नन्दगहसन्निवेश भविष्यति। तत तदनन्तरम प्रथमद्वारात प्रभति पूवद्वारमारभ्य राजभवनम् राजप्रासाद सस्क्रियताम सस्कारयुक्त विधीयताम। तत तत्पश्चात सूत्रधारै शिल्पिभि अभिहितम कथितम आय पूज्य प्रथमम एव प्रागेव देवस्य महाराजस्य चन्द्रगुप्तस्य मौयस्य नन्दभवनप्रवेशम नन्दभूपगहसन्निवेशनम उपलभ्य ज्ञात्वा सूत्रधारेण शिल्पिना दारुवमणा तदार्येन कनकतोरणन्यासादिभि कनकस्य सुवणस्य तोरण बहिर्द्वार तस्य न्यास सन्निवेश स आदि येषा तै सस्कार विशेष वृषलोपरि बहिर्द्वारपातनोद्योगात्मकरित्यथ प्रथमराजद्वारम पूवनपद्वारम्

सस्कृत सस्कारास्पद कृतम। इदानीम अधुना अस्माभि शिल्पिभि अभ्यन्तरे अतराले सस्कारो परिष्कार विधेय कर्त्तव्य। तत तदनन्तरम अनादिष्टेनैव आदेशम अप्राप्तवता एव दारुवमणा सस्कृतम सुसज्जीकृतम राजभवनद्वारम भूपगृहबहिर्द्वारम इति अस्मात हेतो परितुष्टेन सतुष्टेन इव चाणक्यवटुना विष्णुगुप्तेन सुचिर बहुकाल दारुवमण दाक्ष्य निपुणताम अभिनन्द्य प्रशस्य अभिहितम कथितम अचिरात शीघ्रम अस्य दाक्ष्यस्य अनरूप सदश फलम् अधिगमिष्यसि प्राप्स्यसि हे दारुवमन"।

टिप्पणी

(१) **सावत्सरिक**—ज्योतिषी। सवत्सर कथयति बोधयन्ति वा इति सवत्सर+ठञ शेषे कालात ठञ इति सूत्रेण तस्य इकादेश। सावत्सरिक ज्योतिषी के लिए साधारण सज्ञा है। सावत्सर पारिभाषिक शब्द है। इस प्रकार 'सावत्सरो ज्योतिषिको दवज्ञगणकावपि। स्यु मौहूर्तिक मौहूतज्ञानिकार्त्तान्तिका अपि इत्यमर। (२) **अद्धरात्रसमये**—अद्ध रात्रे इति अद्धरात्रि+अच समासान्त अद्धरात्र अद्धरात्रि। स एव समय इत्यादि अच का नियम अह सर्वैकदेशसख्यातपुण्याच्च रात्रे। रात्राह्लाहा पुसि इत्यनेन पुस्त्वम। कालाधिकरणे सप्तमी। (३) **प्रथमद्वारात**—अत्र प्रभतिअथयोगे पञ्चमी। (४) **सस्कारविशेष**—विशेष प्रकार की सजावटो से। इसका गूढाथ है—चन्द्रगुप्त के ऊपर तोरण गिराने के प्रयत्नो से। (५) **अभ्यन्तरे सस्कार**—भीतर मे सजावट। इसका गूढाथ है—चन्द्रगुप्त को विष देना तथा शयन कक्ष मे वध करना। विधेय—वि+धा+यत कमणि। (६) **चाणक्यवटुना**—अल्पमति या क्षुद्रबुद्धि चाणक्य के द्वारा। चाणक्यश्चासौ वटुश्च इति चाणक्यवटु तेन। (७) **अनुरूप फलम**—उचित फल। इसका गूढाथ है कि जसी करनी वसी भरनी अर्थात बुरे काम का बुरा परिणाम—मृत्यु—मिलेगी।

राक्षस—(सोद्वेगम्) सखे! कुतश्चाणक्यवटो परितोष? अफलमनिष्टफल वा दारुवर्मण प्रयत्नमवगच्छामि। यदनेन बुद्धिमोहादथवा राजभक्तिप्रकर्षान्नियोगकालमप्रतीक्षमाणेन जनितश्चाणक्यवटोश्चेतसि बलवान् विकल्प। ततस्तत?

विराधगुप्त—ततश्चाणक्यहतकेनानुकूललग्नवशादद्याध-

Viradhagupta—Now by accursed Chanakya who made the artisans and citizens understand that in subservience to the auspicious moment Chandragupta s entry into the palace of Nanda will come off at the time of mid night that very moment (mid night) a division of the world empire was made by making Parvataka s brother Vairochaka sit on the same seat with Chandragupta

Rakshasa—Did he really relinquish unto Parvataka s brother Vairochaka the previously promised half share of the kingdom ?

Viradhagupta—What else (Yes)

Rakshasa (To himself)—Surely after having planned some sort of secret murder of that poor fellow too this publicity in the world has been secured by that very wily wicked Chanakya to wipe out the infamy caused by the murder of Parvataka (Aloud) Next What next

सस्कृत व्याख्या—राक्षस (सोद्वेगम—उद्वेगेन उत्कण्ठया सहित यथा स्यात तथा आहेति शेष) सखे मित्र चाणक्यवटो अल्पमतिचाणक्यस्य परितोष सन्तोष कुत कस्मात ? दारुवमण प्रयत्नम प्रयासम असफलम निष्फलम वा अथवा अनिष्टफलम अशुभफलम अवगच्छामि जानामि। यत यस्मात बुद्धिमोहात मतिभ्रमात अथवा राजभक्तिप्रकर्षात राज्ञि सर्वार्थसिद्धौ भक्त्याधिक्यप्रदशनात नियोगकालम आदेशसमयम अप्रतीक्षमाणेन असहिष्णुना अनेन दारुवमणा चाणक्यवटो चेतसि मनसि बलवान प्रबल विकल्प स देह जनित उत्पादित । तत तत तत्पश्चात किम अभवत। तत तदन तरम, चाणक्यहतकेन अनुकूल लग्नवशात शुभमुहूतकारणात अद्य अद्धरात्रसमये च द्रगुप्तस्य मौयस्य न दभवन प्रवेश न दगहानुप्रवेश भविष्यति इति शिल्पिन, पौराश्च, गहीतार्थान अवगताभिप्रायान कृत्वा विधाय तस्मिन्नेव क्षणे न दभवनप्रवेशसमय एवेत्यर्थ पवतेश्वरभ्रातर पवतकसोदर वरोचकम एतदाख्यम एकासने एकोपवेशने, च द्रगुप्तेन सह साकम उपवेश्य सस्थाप्य पथ्वीराज्याधभाग पृथ्वी वसुधा एव राज्य तस्य अधभाग कृत विहित । किं वरोचकाय पूवप्रतिश्रुत प्राक्प्रतिज्ञातम राज्यम अतिसष्टम दत्तम। अथ किम अवश्यम। (स्वगतम स्वमनसि) नियतम निश्चयम अतिधूतवटुना अतिशठेन चाणक्येन इति शेष तपस्विन वराकस्य तस्यापि पवतेश्वरभ्रातुरपि कमपि अनिवचनीयमपि उपाशुवधम रहस्यमारणम आकलय्य अवधाय पवतेश्वरविनाशजनितस्य पवतेश्वरहत्योत्पन्नस्य अयश

अकीर्तेः परिहारार्थम् निवारणार्थम्, एषा लोकप्रतिपत्तिः लोकाना जनानाम प्रतिपत्ति अवबोध उपचरिता परिकल्पिता।

टिप्पणी

(१) **चाणक्यवटो** —वटु का अर्थ होता है—ब्राह्मण ब्रह्मचारी। किन्तु यहाँ 'वटु' का प्रयोग नीच या मन्दमति के अर्थ मे हुआ है। (२) **अफलम**—अविद्यमानम फलमस्मिन प्रयत्नम' की विशेषता प्रकट करता है। (३) **अनिष्ट**—न इष्टम अनुचितम अनिष्ट फलमस्य इति अनिष्टफल बहुव्रीहि स० तम्। अनुकूललग्नवशात—√लग+क्त कर्तरि लग्नम। अनुकूल लग्न कर्मधा०। तस्य वशम—आयत्तता षष्ठी तत्पु०। तस्मात। (४) **गहीतार्थान**—जिन्हें बात मालूम हो गई हो। गहीत अर्थ विषय य ते गहीतार्था तान। (५) **प्रतिसष्ट** —दे दिया। प्रति√सज्+क्त कर्मणि। (६) **उपांशुवधम**—एकान्त मे की जाने वाली हत्या को। उपांशु यह एक अव्यय है। उपांशुजपभेदे स्यादुपांशु विजनेऽव्ययम इति विश्वकोश। उपांशु वध सुप्सुपा स०, तम। उपांशु का अर्थ विजने गुप्त रीति से या गुप्त। (७) **आकलय्य**—आ+कल+णिच स्वार्थे+ल्यप—उपाय करके। (८) **परिहारार्थम**—दूर करने के लिए। परि+हृ+घञ परिहार तस्मै इदम इति परिहारार्थम अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम इति वार्तिकसहकारेण 'चतुर्थी तदर्थार्थ—इति सूत्रेण चतुर्थी तत्पुरुष स०। (९) **लोकप्रतिपत्ति** —लोक मे प्रसिद्धि। प्रति√पद+क्तिन भावे प्रतिपत्ति लोके प्रतिपत्ति —लोक मे प्रसिद्धि। (१०) **उपचरिता**—फला दी है। उप√चर+क्त कर्मणि। यहा राक्षस यह समझ रहा है कि वरोचक को आधा राज्य देकर चाणक्य पर्वतेश्वर की हत्या के कलक को धोना चाहता है किन्तु राक्षस को यह ज्ञात नही है कि चाणक्य की कूटनीति ने जनता मे यह किंवदन्ती प्रसारित कर दी है कि पर्वतेश्वर की हत्या का कारण राक्षस ही है।

विराधगुप्त —तत प्रथममेव प्रकाशिते चन्द्रगुप्तस्यार्धरात्रे नन्दभवनप्रवेशे कृताभिषेके च वैरोचके विमलमुक्तागुणपरिक्षेपोपरचितपटवारवाणप्रच्छादितशरीरे मणिमयमुकुटनिविडनियतरुचिरतरमौलौ सुरभिकुसुमदामवैकक्षकाव-

भासितविपुलवक्ष स्थले परिचिततमैरप्यनभिज्ञायमानाकृतौ चाणक्यहतकादेशाच्चन्द्रगुप्तोपवाह्या चन्द्रलेखा नाम गज-वशामारुह्य चन्द्रगुप्तानुयायिना राजलोकेन अनुगम्यमाने जवेन देवस्य नन्दस्य भवन प्रविशति वैरोचके युष्मत्प्रयुक्तेन सूत्रधारेण दारुवमणा चन्द्रगुप्तोऽयमिति मत्वा वैरोचकस्योपरि निपातनाय सज्जीकृत यन्त्रतोरणम्। अत्रान्तरे बहिर्निगृहीतवाहनेषु स्थितेषु चन्द्रगुप्तानुयायिषु भूमिपालेषु युष्मत्प्रयुक्तेनैव चन्द्रगुप्तनिषादिना ववरकेण कनकदण्डान्तर्निहितामसिपुत्रिकामाकर्ष्टुकामेन अवलम्बिता करेण कनकभृखलावलम्बिनी कनकदण्डिका।

राक्षस—उभयोरप्यस्थाने यत्न। ततस्तत ?

हिदी अनुवाद—विराधगुप्त—और जबकि सब लोग अद्धरात्रि में ही चद्रगुप्त के नद भवन प्रवेश से अवगत हो चुके, वरोचक का राज्याभिषेक कर दिया गया, वह, कुछ तो निमल मोतियो की लम्बी लटकती मालाओं से खचित रग बिरगे कञ्चुक से सम्पूण शरीर के ढक जाने के कारण या मणियों से बने मुकुट से कसकर जकडे हुए अपने मस्तक की एक विचित्र सुदरता के कारण या साथ ही साथ दोनो कधो से लटकने वाले सुगधित पुष्पहारो से अपन विशाल वक्ष स्थल की एक अदभुत चमक के कारण, ऐसा लगने लगा कि प्रतिदिन के मिलने-जुलने वाले भी न पहचान सके और जब कि उसने उस दुष्ट चाणक्य की अनुमति से चद्रगुप्त की सवारी चद्रलेखा नामक हथिनी पर बठकर चद्रगुप्त के ही पीछे-पीछे चलने वाले राजागण के आगे आगे चलते हुए नद भवन में प्रवेश करना प्रारम्भ किया कि आपके द्वारा नियुक्त शिल्पकार दारुवर्मा ने उसे "यही चद्रगुप्त है" ऐसा समझकर उसी पर गिराने के लिए स्वणतोरण रूपी अपने (घातक) यत्र को सँभाल लिया और जसे ही चद्रगुप्त के अनुगामी राजागण ने ऐसा देखा तो वे अपने अपने वाहनों को बाहर ही रोकने लगे कि आपके द्वारा चद्रगुप्त को मारने के लिए नियुक्त चद्रगुप्त के महावत बबरक ने सोने की छडी के भीतर छिपी कटार निकालने के लिए सोने की जजीर से लटकती उस सोने की छडी की मूठ पकड ली और—

राक्षस—ओह! दोनों का प्रयत्न अनुचित स्थान पर है। तब तब ?

Viradhagupta—Now Chandragupta s entry into the palace of Nanda at night having been previously announced Vairo chaka with coronation performed with his person covered

by an armour of speckled plates formed of pure pearls and gems set in circles with his knotted (braitded ?) locks rendered very attractive on being tightly restrained by a crown of jewels with his broad chest lighted up by two garlands of strings of fragrant flowers laid across and with his features unrecognizable (Lit not being recognised) by even the most intimate—going to enter the palace of Sire Nanda having under instructions from cursed Chanakya mounted the female elephant Chandra lekha which is Chandragupta s mount and being followed by the body of princes that usually follow Chandragupta the gate way with the mechanism (of a catch) was held ready by Daruvarman the carpenter employed by you to let down on him thinking that this was Chandragupta At this stage the princes that followed Chandragupta having stopped outside with their mounts checked the golden staff hanging by the golden chain (from the neck of the elephant was taken up in his hand by Varvaraka the driver of Chandragupta who was really employed by you with a desire to draw the knife that was secreted within the golden staff

Rakshasa—The attempts of both were in the wrong place

सस्कृत व्याख्या—तत तत्पश्चात प्रथममेव पूवमेव प्रकाशिते प्रचारिते च द्रगुप्तस्य कृताभिषेके च—विहितराज्यप्राप्तिप्राक्कालिकस्नपने च, वरोचके, विमलमुक्तागुणपरिक्षेपोपरचितपटवारवाणप्रच्छादितशरीरेविमलाना निमलाना मुक्तागुणाना मुक्ताहाराणा य परिक्षेप मण्डलाकारेण विन्यास तेन उपरचित कल्पित य चित्र अनेकविधवण पट तन्निर्मित य वारवाण कञ्चुक तेन प्रच्छादितम आच्छादितम शरीर यस्य तादृशे मणिमयमुकुटनिविडनियतरुचिर तरमौलौ मणिमयेन मुकुटेन निविड यथा स्यात् तथा नियत बद्ध रुचिरतर मनोज्ञ मौलि सयत कच यस्य तादृशे, सुरभिकुसुमदामवैकक्षकावभासितविपुलवक्ष स्थले सुरभि सुगधि यत कुसुमदाम पुष्पमाल्य तदेव वकक्षक यज्ञोपवीतवत्तियग्ल म्बिस्रक तेन अवभासित सुशोभित विपुल महत वक्ष स्थलम् उर स्थल यस्य तादृशे परिचिततम अपि—अतिशयेन सस्तुतै अपि अनभिज्ञायमानाकृतौ—न अभिज्ञायमाना अवगम्यमाना आकृति आकार यस्य तादशे चाणक्यहतका-देशात्—नि दितविष्णुगुप्तनिदेशात च द्रगुप्तोपवाह्या—च द्रगुप्त उपवाह्य वहनीय यस्या ताम च द्रगुप्तवाहिनीमिति यावत च द्रलेखा नाम—च द्रलेखेत्य भिधाना, गजवशा—करिणीम आरुह्य—तदुपरि स्थित्वा च द्रगुप्तानुयायिना —च द्रगुप्तस्य मौयस्य अनुयायिना अनुगामिना, राजलोकेन भूपजनेन, अनु-

गम्यमाने—अनुस्रियमाणे वरोचके, जवेन वेगेन देवस्य महाराजस्य नन्दस्य भवन गृह, प्रविशति अभ्य तर गच्छति सति युष्मत्प्रयुक्तेन—भवत्प्रेरितेन, सूत्र धारेण शिल्पिना, दारुवमणा, अयम एष च द्रगुप्त वषल इति मत्वा इत्य वगत्य वैरोचकस्य उपरि निपातनाय प्रक्षेपणाय य त्रतोरण—तोरणरूपेण निर्मित य त्र सज्जीकृतम समुद्यतम। अत्रा तरे एतस्मिन्नवसरे बहिर्निगहीतवाह नेषु—बहि निगहीतानि निय त्रितानि वाहनानि अश्वादयो य तादशेषु स्थितेषु च द्रगुप्तानुयायिषु भूमिपालेषु राजसु युष्मत्प्रयुक्तेनव च द्रगुप्तनिषादिना—व षलहस्तिपकेन, ववरकेण कनकदण्डान्तर्निहताम—कनकस्य स्वणस्य दण्डो यष्टी तस्य अन्त अभ्य तरे निहिता स्थापिताम असिपुत्रिकाम छुरिकाम आकृष्टुकामेन—बहिर्नि सारणेच्छुना, करेण हस्तेन, कनकशृङ्खलावलम्बिनी—कनकस्य सुवणस्य शृङ्खला ब धनरज्जु ताम अवलम्बते तच्छीलेति कनक दण्डिका सुवणयष्टि अवलम्बिता धता। उभयो दारुवमववरकयो अस्थाने अयुक्तस्थाने यत्न उद्योग।

टिप्पणी

(१) **तत किल**—तब और इसमे एक ऐसी गाँठ थी जिसके खीच लेने पर सम्पूण तोरण गिरकर नीचे बैठे हुए लोगो को नष्ट कर देता। दारुवर्मा ने वैरोचक के ऊपर गिराने के लिए इसे तयार किया था। क्यो? च द्रगुप्तँ अयम् इति मत्वा। यह गलती कहा से हुई? प्रथममेव रात्रौ च द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशे प्रकाशिते प्रचारिते सति तत वरोचके देवस्य न दस्य भवन प्रविशति सति (वह जानता था कि इस समय च द्रगुप्त महल मे प्रवेश करेंगे, इसलिए जब उसने वैरोचक को प्रवेश करते देखा, उ होने उसे च द्रगुप्त समझा।) यह एक भारी गलती थी। चाणक्यहतकस्य आदेशात च द्रगुप्त उपवाह्य वहनीय यस्य च द्रगुप्तस्य वाहनमित्यथ च द्रलेखा नाम गजवशाम आरुह्य च द्रगुप्तस्य अनुयायिना राजलोकेन अनुगम्यमाने सति वरोचके। यह सब काय चाणक्य ही का था। उसने वरोचक को च द्रगुप्त के वाहन पर सवार कराया और उसके साथ उन राजकुमारो को अनुचर रूप मे लगा दिया जो अक्सर च द्रगुप्त के पीछे-पीछे चलते थे। इसी से दारुवर्मा को धोखा हुआ। परन्तु वह वैरोचक और च द्रगुप्त दोनो ही को जानता था —'परिचिततमरपि अनभिज्ञाय-माना अपरिगह्यमाणा 'आकृति यस्य तादशे सति वैरोचके। (२) **कृताभिषेके**—

कृत अभिषेक यस्य असौ कृताभिषेक तस्मिन। (३) **वकक्षक**—विशिष्ट कक्ष अस्मात विकक्षम (बहुव्रीहि स०)। विकक्षे भवम इति विकक्ष+अण+कन स्वार्थे वकक्षकम। जनेऊ की तरह पहिना हुआ हार। (४) **उपवाह्याम**—सवारी। उप√वह्+ण्यत कमणि। यह गजवशाम का विशेषण है। (५) **गज-वशाम**—वशा—स्त्रीलिंग वशा नार्य्यां ब ध्यग या हस्ति या दुहितर्य्यपि इति हैम। वशा गजी गजवशा—हथिनी। जातिवाचक श द गजी का पूवनिपात पुवदभाव के साथ कमधा० नियम पोटायुवतिस्तोक धूतजाति। (६) **य त्रतोरणम**—य त्रकलित य त्रयुक्त वा तोरणम मध्यमपदलोपी स०। (७) **ववरकेण**—ववरक च द्रगुप्त के महावत का नाम है। वस्तुत यह राक्षस का खास आदमी था। उसने च द्रगुप्त के वध के लिए इसकी नियुक्ति कर रखी थी। **कनकदण्डिका**—दण्ड एव इति दण्ड+कन स्वार्थे+टाप स्त्रियाम दण्डिका—महावतो के द्वारा काम मे लाया जाने वाला छोटा डडा। कनकस्य दण्डिका। तस्या अ त तस्मिन निहिता। अथवा अ त मध्ये निहिता इति अ तर+नि+धा+क्त कमणि अन्तर्निहित। कनकदण्डिकायाम अन्तर्निहिता। (८) **अस्थाने**—अनुचित स्थान पर। च द्रगुप्त उचित स्थान था।

विराधगुप्त—अथ जघनाभिघातमुत्प्रेक्षमाणा गजवधूरतिजवनतया गत्यन्तरमारूढवती। तत प्रथमगत्यनुरोधप्रत्याकलितमुक्तेन प्रभ्रष्टलक्ष्य पतता यन्त्रतोरणेन आकृष्टकृपाणीव्यग्रपाणिरनासादयन्नेव चन्द्रगुप्तप्रत्याशया वैरोचक, हतस्तपस्वी वर्वरक। ततो दारुवर्मणा, यन्त्रतोरणनिपातनादात्मवधमाकलय्य शीघ्रमेवोत्तुङ्गतोरणस्थानमारूढेन, यन्त्रघटटनबीजलोहकीलकमादाय हस्तिनीगत एव हतस्तपस्वी वैरोचक।

हिदी अनुवाद—विराधगुप्त—और जसे ही अपनी जाघों पर चोट पडने की आशङ्का से उस हथिनी ने बहुत शीघ्रता में अपनी चाल बढायी कि उसकी पहली चाल के अनुमान से उस पर गिराए जाने वाले उस स्वण-तोरण के यत्र ने अपना निशाना चूक कर, च द्रगुप्त पर तो दूर रहे वरोचक पर भी न गिरकर, उस बेचारे ववरक के ही प्राण समाप्त कर दिए जिसके दोनो हाथ कटार निकालने और खींचने में ही फँसे हुए थे। अब दारुवर्मा ने यह सब

देखते सोच लिया कि तोरण यन्त्र के गिरने के अपराध में प्राण दण्ड अवश्यभावी है, उसने शीघ्रता के साथ ऊंचे तोरण के ऊपर पहुंचकर उसकी जड में लगी लोहे की कील उखाड ली और हाथी पर आसीन बेचारे वरोचक की ही हत्या कर डाली।

Viradhagupta—Thereat the female elephant anticipating a heavy blow because of going too fast adopted a different pace Poor Varvaraka by whom the knife was drawn and whose hand was busy was by the gate way that was worked by mechanism and was loosened and released with reference to the previous speed and hence fell wide of the mark was killed even before he reached Vairochaka in expectation of Chandragupta Now Daruvarman who stood already mounted on the site of the lofty gate way and expected his own death for letting the gate way down killed poor Vairochaka even as he was seated on the very elephant having taken up the iron bolt which was the key to start the mechanism

संस्कृत व्याख्या—अथ अनन्तरम अतिजवनतया अतिद्रुतधावनाद्धेतो, जघनाभिघातम—जघने नितम्बे अभिघातम आघातम उत्प्रेक्षमाणा सम्भावयन्ती गजवधू हस्तिनी गत्यन्तरम मन्दगतिम आरूढवती अवलम्बितवती। तत तदनन्तरम प्रथमगत्यनुरोधप्रत्याकलितमुक्तेन प्रथमा पूर्वा या गति द्रुतगतिरित्यर्थ तस्या अनुरोधेन अपेक्षया प्रत्याकलित विघट्टित मुक्त च तादृशेन प्रभ्रष्टलक्ष्यम प्रभ्रष्टम च्युत लक्ष्य शरव्य यत्र तद्यथा स्यात तथा पतता यन्त्रतोरणेन तोरणरूपेण निर्मितयन्त्रविशेषेण आकृष्टकृपाणीव्यग्रपाणि—आकृष्टा कनकदण्डिकाया मध्यात निष्कासिता या कृपाणी छुरिका तस्या तया वा व्यग्र व्यापृत पाणि कर यस्य तथाविध तपस्वी वराक ववरक चन्द्रगुप्तप्रत्याशया वृषलधिया, वैरोचकम अनासादयन्नेव (हननार्थम) अप्राप्नुवन्नेव हत विनाशित। तत तत्पश्चात यन्त्रतोरणनिपातनात यन्त्रतोरण प्रहरणात आत्मवध स्वविनाशम, आकलय्य तर्कयित्वा शीघ्रमेव झटिति उत्तुङ्गतोरणस्थानम उच्चैस्तरबहिर्द्वारस्थलम आरूढेन प्राप्तवता, यन्त्रघट्टनबीजलोहकीलकम—यन्त्रस्य यत घट्टनम चालन तस्य बीज कारण यत लोहकीलकम अय शङ्कु तत, आदाय गृहीत्वा, हस्तिनीगत एव करिणीपृष्ठसमारूढ एव तपस्वी वरोचक हत।

टिप्पणी

(१) **जघनाभिघातम्**—जाँघ पर प्रहार। (२) **उत्प्रेक्षमाणा**—उद्+

प्र+ईक्ष+शानच कर्तरि—सम्भावना करती हुई। जानवरों को आने वाले खतरे की पहले से ही जानकारी हो जाती है। अन वह हथिनी अपने कूल्हे पर तोरण गिरने को पहले ही भाप गयी थी। (३) **अतिजवनतया**—जु+ल्युट भावे जवनम—तेज चाल से। अतिशयित जवनमस्या अतिजवनम—बडी तज चाल से चलती हुई। सामान्ये नपुसकम। तस्य भाव तया। हेतौ ततीया। अभिघात का कारण—अत्य त तेज गति से चलने के कारण उस पर प्रहार किया जायगा। तल के कारण यहा पर पुवद्भाव नही होगा। (४) **गत्यन्तरम**—अ या गति मयूर यसकादि। यहा यह कहना सामा य है कि उसने अपनी गति बढाई लेकिन तब द्वार उसके पीछे गिर जायगा और महावत को तनिक भी चोट नही लगेगी। (५) **प्रथमगति**—प्रति+आ+कल+णिच+क्त+कमणि प्रत्याकलित। आकलन का अथ है यवस्थित करके रखना। आदौ प्रत्याकलित पश्चात मुक्त प्रत्याकलितमुक्तम। प्रथमगत्यनुरोधेन प्रत्याकलितमुक्तम। प्रथमगति—तेजगति। हथिनी की चाल को देखकर दारुवर्मा न यह अनुमान लगाया था कि इतने क्षणो मे हथिनी का कूल्हा—जहा राजा बठा है—इस तोरण के नीचे आ जाएगा। कि तु ऐसा न हो सका। फलस्वरूप ववरक मारा गया न कि राजा (वैरोचक)। (६) **कृपाणी**—एक छोटी तलवार। (७) **च द्रगुप्तप्रत्याशया**—च द्रगुप्त-सम्बधिनी इत्यथ आशा तया। हेतौ ततीया। च द्रगुप्त से सम्बधित आशा उसे मार डालने की आशा। (८) **आकलय्य**—आ+कल+णिच+ल्यप—समझकर। (९) **पूवमेव**—द्वार की ओर भीड के प्रस्थान हाने के पूव ही। (१०) **तोरणस्थलम**—**तोरणस्य स्थलम**—वह स्थान जहा कि द्वार था।

राक्षस—कष्टम ! अनर्थद्वयमापतितम्। न हतश्चन्द्रगुप्तो हतौ वैरोचकवर्वरकौ !! (सावेगमात्मगतम्) नैतावुभौ हतौ, दैवेन वयमेव हता। (प्रकाशम) अथ स सूत्रधारो दारुवर्मा क्व ?

विराधगुप्त—वैरोचकपुर सरेण पदातिलोकेन लोष्टघात हत।

राक्षस—(सास्रम्) कष्टम् ! अहो ! वत्सलेन सुहृदा दारुवर्मणा वियुक्ता स्म। अथ तत्रत्येन भिषजाऽभयदत्तेन किमनुष्ठितम् ?

विराधगुप्त ——अमात्य ! सर्वमनुष्ठितम् ।

राक्षस ——(सहर्षम्) किं हतो दुरात्मा चन्द्रगुप्त ?

विराधगुप्त ——अमात्य ! दैवान्न हत ।

राक्षस ——(सविषादम्) तत् किमिदानी कथयसि परितुष्ट 'सवमनुष्ठितम्' इति ।

विराधगुप्त ——अमात्य ! कल्पितमनेन योगचूर्णमिश्रमौषध चन्द्रगुप्ताय । तच्च प्रत्यक्षीकुर्वता चाणक्यहतकेन कनकभाजने वर्णान्तरमुपगतमुपलभ्याभिहितश्चन्द्रगुप्त ——'वृषल ! सविषमिवौषध, न पातव्यम्' इति ।

राक्षस ——शठ खल्वसौ वटु । अथ स वैद्य कथम् ?

विराधगुप्त ——स खलु वैद्यस्तदेवौषध पायित उपरतश्च ।

राक्षस ——(सविषादम्) अहह ! महान् विज्ञानराशिरुपरत । भद्र ! अथ तस्य शयनाधिकृतस्य प्रमोदकस्य किं वृत्तम ?

विराधगुप्त ——यत् इतरेषाम् ।

राक्षस ——(सोद्वेगम) कथमिव ?

हिन्दी अनुवाद——राक्षस——दु ख की बात है। दो अनर्थ हो गए——चन्द्रगुप्त तो नहीं मरा, मर गए वरोचक और ववरक। (घबराहट के साथ मन में) वे दोनों नहीं मारे गए बल्कि भाग्य ने हमें ही मार दिया। (प्रकट) वह कारीगर दारुवर्मा कहा है ?

विराधगुप्त——वरोचक के पीछे पदल चलने वाले लोगो ने ढेले मार-मार कर उसे मार दिया।

राक्षस——(आँसू भरी आखो से) ओह ! दारुवर्मा ऐसा परम स्नेही अब कहा प्राप्त होगा ? अच्छा, यह बताओ कि वद्य अभयदत्त ने वहा पर पडे पडे कुछ किया अथवा नहीं ?

विराधगुप्त——अमात्य ! सब कुछ किया।

राक्षस——(प्रसन्न होकर) क्या वह नीच चन्द्रगुप्त मार डाला गया ?

विराधगुप्त——अमात्य ! भाग्य से वह नहीं मारा गया।

राक्षस——(दु खित होकर) तब क्या इतनी खुशी से कह रहे हो कि सब कुछ कर दिया ?

विराधगुप्त——अमात्य ! इसने तो चन्द्रगुप्त को मारने के लिए ऐसी ओषधि बना डाली थी जिसमें विष ही पडा हुआ था, किन्तु उस दुष्ट चाणक्य

ने जसे ही उस ओषधि को देखा और स्वण-पात्र में रखते ही उसका रग बदलते हुए पाया कि चद्रगुप्त से कह दिया कि "चद्रगुप्त"! इस विष भरी ओषधि को न पीना।'

राक्षस—वह मूख दुष्ट है। अच्छा, उस वद्य पर क्या बीती?

विराधगुप्त—उस वैद्य को ही वह ओषधि पिला दी गई और वह वद्य मर गया।

राक्षस—(दु ख के साथ) ओह! बडा भारी वज्ञानिक समाप्त हो गया। अच्छा, महाशय! शयन कक्ष के अधिकारी प्रमोदक का क्या हुआ?

विराधगुप्त—जो दूसरों का हुआ।

राक्षस—(उद्वेग के साथ) कसे?

Rakshasa—How hard! A double misfortune has befallen Chandragupta is not killed Vairochaka and Varvaraka are killed by fate How did the carpenter Daruvarman fare?

Viradhagupta—Hit with brick bats and killed by the very footmen who preceded Vairochaka

Rakshasa (With tears)—How hard! Alas! we are bereft of the loving friend Daruvarman Well what was done by the physician Abhayadatta of that palace?

Viradhagupta—All was done

Rakshasa (With joy)—Is the vile hearted Chandragupta killed?

Viradhagupta—Minister through luck he was not killed

Rakshasa (Sorrowfully)—Then why do you say now All was done

Viradhagupta—Minister a draught mixed with a treachaerous powder was offered by him to Chandragupta But Chanakya inspecting it having noticed change of the colour in a golden cup said this to Chandragupta Vrishala this medicine is poisoned it must not be taken

Rakshasa—The fellow is cunning indeed Well how did the physician fare?

Viradhagupta—He was forced to swallow that very draught and died

Rakshasa (Sorrowfully)—Alas! A vast mass of expert knowledge has disappeared Well what became of Pramodaka who was employed in his bed room?

Viradhagupta—The same as of others

Rakshasa (Anxiously)—How is that?

सस्कृत व्याख्या—कष्टम! अनर्थद्वय द्वौ अनर्थौ आपतितम सम्भूतम्। न हत चद्रगुप्तो मौर्य हतौ वैरोचकववरकौ (सावेगम सविषादम स्वमनसि)

न एतौ इमौ हतौ दवेन भाग्येन वयम् एव हता नष्टा (प्रकाशम प्रकटरूपेण) अथ अथ स सूत्रधार शिल्पी दारुवर्मा क्व कुत्र ? वरोचकपुर सरेण वैरोचकअग्रगामिना पदातिलोकेन पादचारिणा जनेन लोष्टघात लोष्ट हत्वा हत प्राणरहित कृत । (सास्रम अश्रुभि सह) कष्टम दु खम। अहो ! वत्सलेन स्नेहिजनेन सुहृदा मित्रेण दारुवमणा वियुक्ता विरहिता स्म । अथ तत्रत्येन तस्य स्थानस्य निवासिना भिषजा वद्येन अभयदत्तेन इति नाम्ना किम अनुष्ठितम कृतम ? अमात्य मत्रिन ! सवम सम्पूण कायम अनुष्ठितम सम्पादितम। (सहषम हर्षेण सह) किं कथ हत दुरात्मा दुष्ट चद्रगुप्त ? अमात्य मत्रिन दवात भाग्यात न हत । (सविषादम विषादेन सहितम) तत किम कथम इदानीम अस्मिन समये कथयसि वदसि परितुष्ट प्रसन्न सवम समग्र कायम अनुष्ठितम कृतम' इति। मत्रिन ! कल्पितम निर्मितम अनेन वद्येन योगचूणमिश्रम विषचूणयुक्तम औषध भेषज चद्रगुप्ताय मौर्याय। तच्च भेषज प्रत्यक्षीकुवता विलोकयता चाणक्यहतकेन दुरात्मना चाणक्येन कनकभाजने स्वणपात्रे वर्णान्तरम उपगतम उपलभ्य ज्ञात्वा अभिहित कथित चद्रगुप्त मौय वृषल सविषम विषमिश्रितम औषधम भेषजम न पातव्यम पेयम शठ दुष्ट खलु निश्चयम असौ अयम वटु दुष्टात्मा अथ स वद्य भिषक कथम ? स खलु वैद्य तद एव औषध भेषज पायित उपरत मृत च। (सविषादम दु खपूवकम) अहह ! महान वरीयान विज्ञानराशि विज्ञानवेत्ता उपरत मृत । भद्र महाशय ! अथ तस्य शयनाधिकृतस्य शयनाधि-कारिण प्रमोदकस्य किं वत्तम सजातम। यत इतरेषाम अन्येषाम। (सोद्वेगम आकुलतापूवकम) कथमिव ?

टिप्पणी

(१) **कथम**—कथम्भूत क्या हुआ ? (२) **वरोचकपुर सरेण**—पुर अग्रे सरति गच्छति इति पुरस+स+ट कतरि वरोचक पुर सर यस्य—बहु०। 'पदातिलोकेन' की विशेषता प्रकट करता है—वरोचक जिसके आगे आगे था अर्थात् वरोचक के पीछे चलने वाले लोगो ने। (३) **पदातिलोकेन**—लोक-समूह—चरणचारिलोकेन—पदल चलने वाले लोगो ने। पदातीना लोक षष्ठी त० तेन। (४) **लोष्टघातम**—ढेलो से मारकर। लोष्टै हत्वा इति लोष्ट √हन् णमुल भावे। (५) **भिषजा**—वद्येन—वैद्य के द्वारा। भिषज्यति रोगान जयति इति भिषज+यक् स्वार्थे (कण्डादि)+क्विप कतरि भिषक तेन। अनुक्ते

कर्तरि तृतीया। (६) प्रत्यक्षीकुर्वता—निरीक्षमाणेन—देखने वाले के द्वारा। (७) वटु—ईषद्विद्य—अल्पज्ञ। (८) पायित—पा+णिच+क्त कर्मणि—पिलाया गया। (९) योगचूर्ण—योग—विश्रम्भघातिन अर्थात विश्वास मे पडे हुए को मारने वाले योगो विश्रम्भघातिनि इत्यादि हैम। योगश्चासौ चूर्णश्च—एक चूर्ण है जो अहानिकर मालूम पडता है लेकिन मार डालता है—उससे मिला हुआ। औषधम की विशेषता प्रकट करता है। (१०) वर्णान्तरम—सुवर्ण के पात्र मे जब विषली चीजें रखी जाती ह तब उस पात्र का रग बदल जाता है। इससे उनके विषली होने की बात आसानी से मालूम हो जाती है। (११) उपरत—उप+रम+क्त कर्तरि—मर गया है। (१२) शयनाधिकृतस्य—शी+ल्युट अधिकरणम शयनम शयने अधिकृत। शयन-कक्ष मे नियुक्त।

विराधगुप्त—स खलु मूर्खस्त युष्माभिरतिसृष्ट महान्तमर्थराशिमवाप्य महता व्ययेनोपभोक्तुमारब्धवान। तत 'कुतोऽय भूयान् धनागमस्तव' इति पृच्छ्यमानोऽय यदा वाक्यभेदान बहूनकथयत तदा चाणक्यहतकादेशाद् विचित्रेण वधेन व्यापादित।

राक्षस—(सोद्वेगम्) कथमत्रापि वयमेवोपहता दैवेन? अथ शयितस्य चन्द्रगुप्तस्य शरीरे प्रहर्तुमस्मत्प्रयुक्ताना नरपतिशयनगृहस्यान्त सुरङ्गाया निवसता बीभत्सकादीना को वृत्तान्त?

विराधगुप्त—अमात्य! दारुणो वृत्तान्त।

राक्षस—(सावेगम्) कथ दारुणो वृत्तान्त? न खलु विदिता ते तत्र निवसन्त चाणक्यहतकेन?

विराधगुप्त—अथ किम्?

राक्षस—कथमिव?

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—उस मूर्ख ने आपकी दी हुई उस महान धनराशि को पाकर बडे खर्च के साथ उसका उपभोग करना शुरू किया। पीछे जब यह पूछा गया कि तुम्हें इतना अधिक धन कहा से प्राप्त हुआ और वह बहुत सी उलटी बातें कहने लगा तब दुष्ट चाणक्य की आज्ञा से विचित्र प्रकार के वध द्वारा मरवा डाला गया।

राक्षस—(घबडाहट के साथ) क्या यहा भी हमीं भाग्य द्वारा मारे गए ? अच्छा, सोये हुए चन्द्रगुप्त के शरीर पर चोट करने के लिए हमारे द्वारा नियुक्त किए हुए, राजा के शयन कक्ष के भीतर सुरग में निवास करने वाले बीभत्सक आदि का क्या समाचार है ?

विराधगुप्त—मत्री ! भयानक समाचार है।

राक्षस—(घबडाहट के साथ) कसा भयानक समाचार है ? वहाँ रहते हुए वे दुष्ट चाणक्य के द्वारा समक्ष तो नहीं लिए गए।

विराधगुप्त—और क्या ?

राक्षस—कसे ?

Viradhagupta—Fool as he was he having come by the vast amount of money given by you commenced enjoying at great expense Then on being asked whence is this accession of immense wealth when he made several divergent statements he was killed by cursed Chanakaya by an indescribable cruel death

Rakshasa (With agitation)—How here too we are hit by fate ? Well what news of Bibhatsaka and others who were employed by us to strike at the person of Chandragupta when asleep and having previously got in were living in a hole within the walls of the palace ?

Viradhagupta—Terrible news minister

Rakshasa (With agitation)—How terrible news ? Really they were not found living there by cursed Chanakya

Viradhagupta—Yes really it is so

Rakshasa—How ?

सस्कृत व्याख्या—स खलु निश्चयमेव मूख अज्ञानी युष्माभि अतिसृष्ट दत्त महान्तम बहु धनराशिम अथजातम अवाप्य लब्ध्वा महता भूयसा व्ययेन उप भोक्तुम आरब्धवान प्रारभत। तत तदनन्तरम कुत कस्मात स्थानात अयम एष धनागम सम्पत्तिलाभ तव इति पच्छ्यमानोऽय पष्ट अयम यदा यस्मिन समये वाक्यभेदान भिन्नानि भिन्नानि वाक्यानि बहूनि अकथयत अवदत तदा तस्मिन समये चाणक्यहतकादेशात दुष्टचाणक्यस्य निर्देशात विचित्रण वधेन व्यापादित हत । (सोद्वेगम आकुलतापूवकम्) कथम किम अत्रापि अस्मिन्नपि विषये वयम् एव उपहता नष्टा दवेन भाग्येन ? अथ शयितस्य शयानस्य चन्द्रगुप्तस्य मौयस्य शरीरे काये प्रहतुम हन्तुम् अस्मत्प्रयुक्ताना अस्माभि नियोजिताना नरपतिगहस्य अन्त सुरङ्गाया राज्ञ गहस्य अन्त अभ्यन्तरवर्तिबिले निवसताम् तिष्ठताम बीभत्सकादीनाम बीभत्सक इत्यादिनाम्ना को वृत्तान्त समाचार ? अमात्य

मन्त्रिन् दारुणो कष्टकारक वृत्तान्त समाचार । (सावेगम सचिन्त) कथ कस्मात् दारुण कष्टकारक वृत्तान्त समाचार ? न खलु निश्चयेन विदिता ज्ञाता ते तत्र तस्मिन प्रदेशे निवसन्त तिष्ठन्त चाणक्यहतकेन दुष्टचाणक्येन ? अथ किम एवमस्तु । कथमिव कस्मात ?

टिप्पणी

(१) पच्छ्यमान—प्रच्छ+कमणि लट स्थाने शानच चाणक्य के द्वारा पूछे जाने पर। (२) वाक्यभेदान—वाक्यस्य भेदा भिन्नानि वाक्यानि इत्यथ । भावानयने द्रयानयनम इति न्यायात। अगमत का कम। बयानो की भिन्नताओ को । उन उन समयो मे परस्पर विरोधी बयान दिया। (३) अगमत—गम+लुङ तिप। पहुँचा, ग्रहण किया । उसने भिन्न भिन्न समय मे भिन्न भिन्न बाते कही। (४) विचित्रवधेन—विशेषेण चित्र विचित्रो वध । हाथ पर एक साथ बाध देना आदि बहुत ही विशेष प्रकार की मत्यु। (५) उपहता — उप+हन+क्त कमणि—विनाशिता —नष्ट कर दिए गए । (६) अ तर्भित्ति—भित्तौ इति अन्तर्भित्ति—दीवाल मे। अन्तर्भित्ति सुरङ्गा सुप्सुपा, ताम । (७) प्रथममेव—भीड के बाहर निकलने के भी पहले। (८) खलु—अत्र वाक्यालकारे प्रयुक्त ।

विराधगुप्त—प्राक् चन्द्रगुप्तप्रवेशात् प्रविष्टमात्रेणैव शयनगृहे चाणक्येन दुरात्मना समन्तादवलोकित । ततस्तु एकस्माद् भित्तिच्छिद्राद् गृहीतभक्तावयवा निष्क्रामन्तीं पिपीलिकापक्तिमवलोक्य पुरुषगर्भमेतद् गृहमिति गृहीतार्थेन दाहित तदन्त शयनगृहम्। तस्मिंश्च दह्यमाने धूमावरुद्ध-दृष्टय बीभत्सकादयस्तत्रैव ज्वलनमुपगता उपरताश्च।

राक्षस—(सास्रम्) सखे ! पश्य, चन्द्रगुप्तस्य दैवसम्पदा सर्वं एव उपरता । (सचिन्तम) सखे ! दैवसम्पद पश्य दुरात्मनश्चन्द्रगुप्तहतकस्य !! कुत ?—

कन्या तस्य वधाय या विषमयी गूढ प्रयुक्ता मया
दैवात् पर्वतकस्तया स निहतो यस्तस्य राज्यार्धभाक ।

ये यन्त्रेषु रसेषु च प्रणिहितास्तैरैव ते घातिता
मौयस्यैव फलन्ति पश्य विविधश्रेयासि मे नीतय ॥१६॥

अवय—मया तस्य वधाय या विषमयी कन्या गूढ प्रयुक्ता तया दवात स पवतक निहत य तस्य राज्याधभाक। ये यत्रेषु रसेषु च प्रणिहिता ते तै एव घातिता । पश्य मे नीतय मौयस्य एव विविधश्रेयासि फलति ॥१६॥

हिदी अनुवाद—विराधगुप्त—चद्रगुप्त के प्रवेश करने से पहले दुष्ट चाणक्य ने शयन-गृह में प्रवेश करते ही चारो ओर देखा। तब दीवार के एक छेद से अन्न के कणो को लिए हुए बाहर निकलती हुई चीटियो की पक्ति को देखकर इस घर के भीतर '(कुछ) लोग छिपे पडे ह'—ऐसा समझकर उस भीतरी शयन कक्ष को जलवा दिया। जलते हुए उस (घर) में धुए के कारण रुकी हुई दष्टि वाले बीभत्सक आदि सभी (जन) पहले बद किए हुए बाहर निकलने के रास्ते को न पा करके जलकर मर गए।

राक्षस—(आसू भरे हुए) मित्र! देखो, चद्रगुप्त की भाग्य सम्पत्ति से सभी मर गए। (चितित होकर) मित्र! दुष्ट पापी चद्रगुप्त की भाग्य-विभूति तो देखो। क्योकि मने उस (चद्रगुप्त) की हत्या के लिए जिस विषकया को गुप्त रूप से लगाया था, उसने भाग्यवश उस पवतक का वध कर डाला जो उस (चद्रगुप्त) के आधे राज्य का अधिकारी था। जो (मनुष्य चद्रगुप्त को मारने के लिए) यत्रो और विषो के प्रयोग (करने) में लगाए गए थे, वे उन्हीं (यत्रो और विषो) से मारे गए। देखो, नीतिया चद्रगुप्त के ही अनेक प्रकार के कल्याणो को पदा कर रही ह।

Viradhagupta—Before Chandragupta s entry the bed room was caused to be burnt down by the vile hearted and accursed Chanakya with the truth guessed that the house had people within On noticing a row of ants issuing through a certain hole in a wall with fragments of boiled rice held (in the mouth) immediately on entering the room and watching closely While it was being burnt Bibhatsaka and others with eyes closed (or sight obstructed) by smoke and not having reached the previously constructed door which was the way out but having got into the fire all perished there

Rakshasa (with tears)—Terrible O terrible! friend mark the profusion of luck of the vile hearted and accursed Chandragupta Whence (do you ask) ? Through fate Parvataka claimant to half his kingdom was killed by the girl of poison whom I secretly employed for his (Chandragupta s) destruc tion those who were employed in the matter of weapons and

poisons were themselves killed by those very things You see my measures mature or bestow blessings of all sorts unto Maurya himself

संस्कृत व्याख्या—चन्द्रगुप्तप्रवेशात वृषलसन्निवेशात प्राक पूर्वम प्रविष्ट-मात्रेणैव सन्निवेशमात्रेणैव दुरात्मना दुष्टेन चाणक्येन विष्णुगुप्तेन समन्तात चतुर्दिक्षु अवलोकित दृष्ट । तत तदनन्तरम एकस्मात भित्तिच्छिद्रात कुड्यरन्ध्रात गृहीतभक्तावयवा गृहीता मुखे धृता भक्तस्य अन्नस्य अवयवा खण्डा यया तादृशी निष्क्रामन्ती निर्गच्छन्ती पिपीलिकापङ्क्ति पिपीलिकाश्रेणीम अवलोक्य दृष्ट्वा एतत गृहम सदनम पुरुषगर्भम पुरुषा गर्भे यस्य तादृशम (अस्ति) इति अस्मात गृहीतार्थेन गृहीत विज्ञात अर्थ तत्त्व येन तादृशेन चाणक्येन इति शेष तदन्त शयनगृहम तत पूर्वोक्तम अन्त शयनगृहम अन्तर्निद्रा भवन दाहितम भस्मसात्कृतम । तस्मिंश्च शयनगृहे दह्यमाने भस्मसात्कृते सति, धूमावरुद्धदृष्टय धूमेन अवरुद्धा दृष्टि येषा तथाविधा बीभत्सकादय सर्वे एव प्रथमम पूर्वम अपिहितनिर्गमनमार्गम निरुद्धबहिर्नि सरणपथम अनधिगम्य अप्राप्य ज्वलनम अग्निम उपगता प्राप्ता उपरता मृताश्च । सास्रम सरोदनम । सखे मित्र ! पश्य अवलोकय, चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य दैवसम्पदा भाग्यसम्पदा सर्व एव उपरता मृता । (सचिन्तम चिन्तया सहितम) सखे मित्र ! दैवसम्पद भाग्यसम्पत्तिम पश्य अवलोकय दुरात्मन दुष्टस्य चन्द्रगुप्तहतकस्य मौर्यस्य । कुत कस्मात ?

मया राक्षसेन तस्य चन्द्रगुप्तस्य वधाय नाशाय या विषमयी विषनिर्मिता कन्या गूढ गुप्त यथा स्यात तथा प्रयुक्ता प्रेरिता तया विषकन्यया दैवात् भाग्यवशात स पर्वतक निहत विनाशित य तस्य चन्द्रगुप्तस्य राज्यार्धभाक अर्धराज्यस्य हर्ता । ये जना यन्त्रेषु प्राणविघातसाधनपदार्थेषु रसेषु च विषेषु च प्रणिहिता व्यापारिता ते त एव यन्त्र विष एव च घातिता हिंसिता । पश्य—विभावय, मे मम नीतय प्रयोगा मौर्यस्य एव वृषलस्यैव विविधश्रेयांसि बहुविधकल्याणानि फलन्ति समुत्पादयन्ति ।

टिप्पणी

(१) **चन्द्रगुप्तप्रवेशात**—यहा अन्यारादितरर्ते दिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहि युक्ते सूत्र से पञ्चमी हुई । (२) **प्रविष्टमात्रेण**—प्रविष्ट एव इति प्रविष्ट-मात्रम मयूरव्यंसकादि स० तेन । (३) **पुरुषगर्भम**—पुरुषा गर्भे यस्य तत

बहुव्रीहि स०। यहाँ 'सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ' सूत्र के बल से 'गभ' का पूव प्रयोग होना चाहिए, किन्तु गडवादे परा सप्तमी' इस वार्तिक के बल से उसका पर प्रयोग ही हुआ। (४) गहीतार्थेन—जिसने रहस्य को समझ लिया है। गहीत अथ येन स गहीताथ (बहुव्रीहि स०), तेन। (५) अपिहितम—बद। अपि√धा+क्त कमणि दधातेर्हि इत्यनेन धा इत्यस्य हि आदेश। यहा भागुरि आचाय के मत से अपि के अकार का लोप हो जाने पर पिहित' भी प्रतिपादित होता है। (६) निगमन—निकलना। (७) विषमयी—विष सवथा प्रकृत प्रचुरमित्यथ अस्याम इति विष+मयट+ङीप। (८) दवसम्पदम—दव—भाग्य। सम+पद्+क्विप भावे सम्पद—समद्धि। दवस्य सम्पत ताम, पश्य का कम है। (९) गूढम—गुह्+क्त कमणि गूढम तत यथा तथा। गुप्त रीति से। (१०) राज्याद्ध—राज्यस्य अद्धम ष० तत्पु०—एकदेशिसमास से अद्धराज्यम होता है तत भजति इति राज्याध+भज+ण्वि कतरि+राज्याधभाक। (११) प्रणिहिता—प्र+नि+धा+क्त कमणि नेगदनद' नियम से नि का णि हो जाता है। (१२) तरेव—एव ते के साथ जायगा। त का शस्त्र तथा रस से अभिप्राय है। (१३) घातिता—हन+णिच+क्त कमणि। मया त ते घातिता—अह त तान घातितवान। ते का तात्पय है—ववरक दारुवर्मा अभयदत्त प्रमोदक और बीभत्सक। यह शादूलविक्रीडित छद है। इस छद का लक्षण है—'सूर्याश्वियदि म सजौ सततगा शादूलविक्रीडितम।

विराधगुप्त—अमात्य! तथापि प्रारब्धमपरित्याज्यमेव। पश्यतु—

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचै
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्या।
विघ्नै पुन पुनरपि प्रतिहन्यमाना
प्रारब्धमुत्तगुणास्त्वमिवोद्वहन्ति ॥१७॥

अ वय—नीचै विघ्नभयेन न खलु प्रारम्यते। मध्या प्रारम्य विघ्नविहता (सन्त) विरमन्ति। त्वमिव उत्तमगुणा विघ्न पुन पुन प्रतिहन्यमाना अपि प्रार धम् उद्वहन्ति ॥१७॥

हिदी अनुवाद—विराधगुप्त—मत्री जी! अब तो चाहे जो कुछ भी हो, प्रारम्भ किया हुआ काय तो छोडने योग्य नही है। देखिए—नीच पुरुष तो

विघ्नो के भय से काय को शुरू ही नहीं करते, मध्यम श्रेणी के लोग काय को प्रारम्भ करके विघ्नों के पडने से (काय के बीच में ही) रुक जाते ह। परन्तु आप ऐसे श्रेष्ठ पुरुष काय को प्रारम्भ कर लेने पर विघ्नो से बार बार परेशान किए जाने पर भी शुरू किए हुए काय को पूरा करके ही छोडते ह।

Viradhagupta—Still Minister what is begun is not surely to be abandoned See—By people of inferior merit nothing indeed is begun on account of fear of obstructions Average sort of people leave the work undone after commencing if stopped by obstructions People of high merit like thyself carry to completion what is undertaken even when being hindered again and again by obstructions

सस्कृत व्याख्या—अमात्य मत्रिन तथापि विघ्ने उपस्थिते सत्यपि प्रारब्ध कायम अपरित्याज्यम एव न त्याज्यम एव। पश्यतु अवलोकयतु—

नीच अधमपुरुषै विघ्नभयेन बाधाभीत्या न खलु नैव प्रारम्यते कम प्रस्तूयते। मध्या मध्यमप्रकारपुरुषा प्रारम्य काय हस्ते गहीत्वा विघ्नविहता प्रत्यूहै बाधिता सन्त विरमन्ति निवतन्ते। त्वमिव भवानिव उत्तमगुणा श्रेष्ठगुणयुक्ता पुरुषा विघ्न अन्तराय पुन पुन वार वार प्रतिहन्यमाना अपि बाध्यमाना अपि प्रारब्ध प्रस्तुत कायम उद्वहन्ति पूणरूपेण सम्पादयन्तीत्यथ।

टिप्पणी

(१) **प्रारब्धम**—प्रक्रान्तम प्रस्तुतम—प्र—आ√रभ+क्त कमणि। शुरू किया हुआ। (२) **अपरित्याज्यम**—परि+त्यज्+ण्यत कमणि परित्याज्य—त्याग देने योग्य। न परित्याज्यम अपरित्याज्यम (नञ्तत०)। (३) **विघ्न भयेन**—वि√हन्+क करणे घञर्थे विघ्न तस्मात भयम पचमी तत्पु० तेन। हेतौ त०—विघ्न के भय से। (४) **विरमन्ति**—व्याङ्परिभ्यो रम नियम से परस्मपद हुआ। (५) **त्वमिव उद्वहन्ति**—उद+वह+लट अन्ति—पूण करते ह। तेलग के अनुसार+ परित्यजन्ति नही छोडते ह ऐसा पाठ होना चाहिए। परन्तु त्वमिवोद्वहन्ति ही अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। यह पाठ दशरूपक से लिया गया है। सन्दभ के अनुसार दोनो ही पाठ उपयुक्त ह। इस श्लोक मे पूर्णोपमा व्यतिरेक और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार ह। वसन्ततिलका छन्द है।

अपि च—

किं शेषस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मा न क्षिपत्येष यत्
किं वा नास्ति परिश्रमो दिनपतेरास्ते न यन्निश्चल ।

किन्त्वङ्गीकृतमुत्सृजन् कृपणवच्छ्लाघ्यो जनो लज्जते
निर्व्यूढ प्रतिपन्नवस्तुषु सतामेतद्धि गोत्रव्रतम ।।१८।।

अन्वय—शेषस्य वपुषि किं भरव्यथा न यदेष क्ष्मा न क्षिपति ? किं वा दिनपते परिश्रमो नास्ति यत निश्चलो न आस्ते ? किन्तु श्लाघ्यो जन अङ्गीकृत कृपणवत उत्सजन लज्जते। हि प्रतिपन्नवस्तुषु निव्यूढम एतत सता गोत्रव्रतम ।।१८।।

हिन्दी अनुवाद—और भी—क्या शेषनाग के शरीर पर पथ्वी के भार से क्लेश नहीं होता है जो वे पथ्वी को अपने सिर से उतार कर नहीं फेंक देते ह ? अथवा दिन रात चलने से सूय को क्या परिश्रम नहीं होता जो ये स्थिर नही होते हैं ? कितु उत्तम पुरुष अपने हाथ में लिए हुए काय को नीच के समान छोडते हुए शर्माता है। क्योकि स्वीकृत वस्तुओ के सम्बध में निर्वाह करना अर्थात उसका विधिपूवक पालन करना महापुरुषो के कुल का धम है।

Moreover is there no pain of burden in the body of Shesha that he does not throw down the earth ? Or is there no fatigue for the sun that he does not stand motionless ? But (the fact is) a worthy man blushes by throwing up like a coward what is once undertaken Achievement in matters taken up is the family vow of the worthy

संस्कृत व्याख्या—शेषस्य नागराजस्य वासुके वपुषि देहे कि भरव्यथा पथ्वी भारवहनपीडा न भवति यत यस्मात एष शेष क्ष्मा पथ्वी न क्षिपति शिरसा न अवतारयति ? अस्ति एव पथ्वीभारवहनपीडा इत्याशय । किं वा दिनपते सूयस्य अविरतगमनात 'परिश्रमो न' न भवति यत' एष निश्चल अचल त्यक्तगमन सन 'न आस्ते एकतो न तिष्ठति, अस्त्येव परिश्रम इत्यथ । किन्तु वस्तुतस्तु 'श्लाघ्यो जन ' प्रशसनीय पुरुष शेष इव सूय इव वा स्तुत्यो महापुरुष 'अङ्गीकृत' स्वीकृत कम कृपणवत कापुरुष इव उत्सजन परित्यजन' लज्जते जिह्रेति प्रतिपन्नवस्तुषु अङ्गीकृतवस्तुविषयेषु निव्यूढम् निर्वाह (भावे क्त) एतद्धि एतदेव सता साधूना गोत्रव्रतम् कुलधम । सन्त प्रारधम अवश्यमेव समापयन्ति इत्यथ । तत यतता भवान मा भूत्ते विघ्ननिर्वेद ।

टिप्पणी

(१) **शेष**—पाताल मे सर्पों के राजा ह जिनके सिर पर पृथ्वी का भार रक्खा हुआ है। यह बात पुराणो से विदित होती है। (२) **दिनपते परिश्रम**—

सूय को परिश्रम। ऐसा भाव अन्यत्र भी है—शेष सदैवाहितभूमिभारो भानु सकृद युक्ततुरङ्ग एव । (३) उत्सजन—उद√सज+शत हेतौ लक्षणहेत्वो क्रियाया । (४) श्लाघ्य —प्रशसनीय । श्लाघ+ण्यत कमणि—योग्य पुरुष। (५) नियूढम—निर+वि+वह +क्त भावे पूण करना। इस श्लोक मे अर्थान्तर न्यास अलकार उपमा अलकार से सकीण है। शादूलविक्रीडित छन्द है।

राक्षस —सखे! प्रारब्धमपरित्याज्यमिति प्रत्यक्षमेवैत- द्भवताम्। ततस्तत ?

विराधगुप्त —तत प्रभृति चाणक्यहतकश्चन्द्रगुप्तस्य शरीरे सहस्रगुणमप्रमत्त, एभ्य एव ईदृश भवतीत्यन्विष्य निगृहीतवान कुसुमपुरनिवासिनो युष्मदीयानाप्तपुरुषान्।

राक्षस —(सोद्वेगम्) वयस्य! कथय कथय के के निगृहीता ?

विराधगुप्त —अमात्य! आदावेव तावत् क्षपणको जीव- सिद्धि सनिकार नगरान्निर्वासित ।

राक्षस —(आत्मगतम्) एतावत् सह्य, न निष्परिग्रह स्थानपरिभ्रश पीडयिष्यति। (प्रकाशम्) सखे! कमपराध- मुद्दिश्य निर्वासित एष ?

विराधगुप्त —एष दुरात्मा राक्षसप्रयुक्तया विषकन्यया पवतेश्वर घातितवानिति।

राक्षस —(स्वगतम्) साधु कौटिल्य! साधु।

परिहृतमयश पातितमस्मासु च घातितोऽर्धराज्यहर ।
एकमपि नीतिबीज बहुफलतामेति यस्य तव ।।१६।।

अन्वय—अर्धराज्यहर घातित, अयश परिहृतम अस्मासु पातितम च। यस्य तव एकमपि नीतिबीजम बहुफलताम एति ।।१६।।

हिंदी अनुवाद—राक्षस—मित्र, आप तो यह प्रत्यक्ष रूप से देख रहे हैं कि शुरू किया हुआ काय मेरे द्वारा अपरित्याज्य है अर्थात मने उसे नहीं छोडा है अर्थात पूरा करके ही रहूगा।

विराधगुप्त—उसी समय से वह दुष्ट चाणक्य चन्द्रगुप्त की शरीर रक्षा में इतना सावधान है कि कुछ पूछिये मत। इसीलिए तो इन लोगो से ऐसा ऐसा हो सकता है—यह समझ कर कुसुमपुर के निवासी आपके विश्वासपात्र पुरुषो को उसने पकड रखा है।

राक्षस—(उद्विग्न होते हुए) मित्र बताओ, कौन कौन से लोग पकड लिए गए ह?

विराधगुप्त—मत्री! प्रारम्भ में ही तो क्षपणक जीवसिद्धि को लीजिए जो अपमान के साथ पाटलिपुत्र से बाहर निकाल दिया गया है।

राक्षस—(अपने मन में) यह तो किसी प्रकार सहा जा सकता है। बिना बाल-बच्चे वाले जीवसिद्धि को निष्कासन से क्या कष्ट होगा? (सुना कर) किस अपराध के कारण यह देश से निकाल दिया गया है?

विराधगुप्त—इसी ने राक्षस द्वारा नियुक्त की गई विषकन्या से पवतेश्वर का वध कराया था।

राक्षस—(अपने मन में) अच्छा, चाणक्य! अच्छा। अपने ऊपर से अपयश हटाकर हम लोगो के ऊपर लाद दिया, दूसरी ओर आधे राज्य के अधिकारी का भी प्राण ले लिया। उसकी कूटनीति के एक ही बीज से अनेक प्रकार के फल निकलते जा रहे ह।

Rakshasa—Friend that what is undertaken is not to be abandoned is indeed before your eyes Next what next?

Viradhagupta—Cursed Chanakya a thousand fold more vigilant regarding the person of Chandragupta since then has punished your trusted agents residing in the city by turning them out thinking that such things are happening through them alone

Rakshasa (with concern)—Tell me Oh tell me who are punished?

Viradhagupta—First of all the mendicant Jivasiddhi was expelled from the city with indignities

Rakshasa (To himself)—This much is bearable Expulsion from residence will not pain one who owns nothing (Aloud) Friend for what offence is he banished

Viradhagupta—That he killed Parvateshvara with the poison-girl employed by Rakshasa

Rakshasa (To himself)—Bravo! you Kautilya Bravo! You of whom even a single germ of polity attains the capacity to bear many fruits—The sharer of half the kingdom is dispensed with the infamy odged and cast upon me too

सस्कृत व्याख्या—सखे मित्र प्रारब्धम अपरित्याज्यम न त्याज्यम् इति प्रत्यक्षम् चक्षुर्विषयम एव एतत् इदम् भवताम्। तत तत एतस्मिन्नन्तरे किम

अभवत। तत प्रभृति तस्मात कालात एव चाणक्यहतक दुरात्मा चाणक्य चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य शरीरे काये सहस्रगुणम अप्रमत्त सावधान एभ्य एव ईदृश भवति सजायते इति अविष्य ज्ञात्वा निगृहीतवान दण्डितवान कुसुमपुर निवासिन पाटलिपुत्रजनान युष्मदीयान आत्मपुरुषान विश्वस्तजनान (सोद्वेगम) वस्य सखे कथय कथय वद वद के के निगृहीता दण्डिता ? अमात्य मन्त्रिन आदौ एव प्रारम्भे एव तावत तु क्षपणक जीवसिद्धि इति नाम सनिकार अपमान-पूर्वकम नगरात निर्वासित निष्कासित। (आत्मगतम स्वमनसि) एतावत सह्य सहनयोग्यम न निष्परिग्रह विभवहीन पीडयिष्यति क्लेशयिष्यति (प्रकाश सर्वान श्रावयित्वा) कम अपराधम उद्दिश्य कस्मात दोषात निर्वासित निष्कासित एष क्षपणक जीवसिद्धि। एष अय दुरात्मा दुष्ट राक्षसप्रयुक्तया राक्षस नियुक्तया विषकन्यया पर्वतेश्वर घातितवान इति हतवान इति। (स्वगतम स्वमनसि) साधु सुष्ठु कौटिल्य चाणक्य! साधु सुष्ठु। परिहृतम नष्टम अयश कलङ्क पातितम आरोपितम च अस्मासु। घातित व्यापादित अर्धराज्यहर अर्धराज्यस्य भागी। यस्य तव एकमपि अद्वितीयमपि नीतिबीज जीवसिद्धि निष्कासनात्मको नीतिहेतु बहुफलताम एति गच्छति। प्रायश —एकेन प्रयोगेण त्वया त्रीणि फलानि साधितानि वयन्तु बहूनि अपि प्रयुज्य चन्द्रगुप्तवधरूपम एकमपि न साधयाम। तत श्लाघ्योऽसि त्व हताश्च वयम इति निर्वेद।

टिप्पणी

(१) **प्रत्यक्षम**—अक्ष—इन्द्रिय। अक्षाणि प्रतिगत प्रत्यक्षम अक्ष्णो आभिमुख्यम इत्यर्थे (अव्ययीभाव स०) प्रतिपरसमनुभ्यो ऽक्ष्ण इति सूत्रेण समासान्तटच्प्रत्यय। (२) **सहस्रगुणम**—सहस्र गुणा यस्मिन कर्मणि तत यथा तथा। सहस्र का अर्थ ठीक हजार ही नही है। (३) **युष्मदीयान**—युष्माकम इमे इति युष्मद+छ—ईय। (४) **निष्परिग्रहम**—परिगृह्यते इति परि+ग्रह्+अप कर्मणि परिग्रह—सामान। निरस्त परिग्रह अनेन बहु व्री०—जिसके पास कुछ वस्तु न हो। इदुदुपधस्य इति षत्वम। आप्तपुरुषान—विश्वस्त जनान। (५) **अर्धराज्यहर**—आधा राज्य का अधिकारी। अर्द्धञ्च तत राज्यम् अर्धराज्यम (कर्म० धा०), हरतीति हर हृ+अच कर्तरि, अर्धराज्यस्य हर षष्ठी तत्पु०। (६) **बहुफलताम**—बहूनि फलानि यस्य स बहुफल बहुव्रीहि स०। तस्य भाव तत्ता ताम। यहा पर चाणक्य की नीति के बीज से

तीन प्रकार के फलो की प्राप्ति हुई। (१) आधे राज्य का पाने वाला मार डाला गया। (२) बदनामी दूर हो गई। (३) बदनामी हम लोगो के ऊपर डाली गई। इस श्लोक मे कार्यलिंग अलकार है, और आर्या छद है।

(प्रकाशम) ततस्तत ?

विराधगुप्त —ततश्चन्द्रगुप्तशरीरमभिद्रोग्धुमनेन व्यापारिता दारुवर्मादय इति नगरे प्रख्याप्य शकटदास शूलमारोपित ।

राक्षस —(सास्रम्) हा सखे ! शकटदास ! अयुक्तस्तवायमीदृशो मृत्यु !! अथवा, स्वाम्यर्थमुपरतो न शोच्यस्त्वमसि, वयमेवात्र शोच्या —ये नन्दकुलविनाशेऽपि जीवितुमिच्छाम ।

विराधगुप्त —अमात्य ! स्वाम्यर्थ एव साधयितव्य इति प्रयतसे ।

राक्षस —सखे ! —

अस्माभिरमुमेवार्थमालम्ब्य न जिजीविषाम् ।
परलोकगतो देव कृतघ्नैर्नानुगम्यते ।।२०।।

अन्वय—अमुमेव अर्थ न जिजीविषाम आलम्ब्य, कृतघ्न अस्माभि परलोक गतो देवो न अनुगम्यते ।।२०।।

हिन्दी अनुवाद—(सब को सुनाकर) इसके बाद क्या हुआ ?

विराधगुप्त—तब चन्द्रगुप्त की हत्या के लिए दारुवर्मा इत्यादि को ठीक करना इसी का काय था, इस प्रकार की ख्याति पाटलिपुत्र भर में कराकर शकटदास को शूली पर चढ़ा दिया गया।

राक्षस—(आँखो में आँसू भरे हुए) हाय मित्र ! शकटदास ! तुम्हारी इस प्रकार की मृत्यु उचित नही है। अथवा स्वामी के लिए तुमने अपने प्राण समपण कर दिए, तुम शोक करने योग्य नहीं हो, हम लोग यहाँ शोक करने योग्य ह, जो नन्दकुल के नष्ट हो जाने पर भी जीवित रहना चाहते ह।

विराधगुप्त—मन्त्री ! स्वामी का ही प्रयोजन सिद्ध हो, इसलिए आप प्रयत्न कर रहे ह।

राक्षस—मित्र ! जीने की इच्छा से नहीं बल्कि इसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए अकृतज्ञ हम लोग मरे हुए स्वामी का अनुसरण नहीं कर रहे ह।

(Aloud) Next what next

Viradhagupta—Next Shakatadas was put to the stake (by Chanakya) proclaiming in the city that Daruvarman and others had been employed by him to injure the person of Chandragupta

Rakshasa (With tears)—Alas ! Friend Shakatadas such a death is extremely unfit for you Or dead in master s cause you are not to be pitied We who long to live even at the extinction of the Nanda family are alone to be pitied

Viradhagupta—Minister you are exerting solely because master s cause has to be served

Rakshasa—Friend Sire gone to the other world is not being followed by us ungrateful as we are clinging not to a desire to live but to this very object

सस्कृत व्याख्या—(प्रकाशम सर्वान श्रावयित्वा) तत तत एतस्मिन्नन्तरे किम ? तत एतस्मिन्नन्तरे च द्रगुप्तशरीरम मौयकायम् अभिद्रोग्धुम नाशयितुम अनेन अमुना यापारिता नियुक्ता दारुवर्मादय दारुवर्माप्रभतय इति नगरे नगर्यां प्रख्याप्य उदघोष्य शकटदास शूलम आरोपित स्थापित । (सास्रम अश्रुभि सह) हा मित्र शकटदास ! अयुक्त अनुचित तव अयम् एष ईदश एतादक मत्यु प्राणनाश । अथवा स्वाम्यथम स्वामिकार्यार्थम उपरत मत न शोच्य शोचनीय त्वम असि वयम एव अत्र अस्मिन ससारे शोच्या. शोचनीया —ये नन्दकुलविनाशेऽपि विनष्टेऽपि नन्दवशे जीवितुम प्राणधारण कतुम इच्छाम वाञ्छाम । अमात्य मत्रिन स्वाम्यथ स्वामिकायम एव साधयित य सम्पादनीय इति प्रयतसे प्रयत्न करोषि। सखे मित्र अमुम एव उक्तरूपमेव अथ प्रयोजनम, न जिजीविषाम प्राणधारणेच्छाम आलम्ब्य आश्रित्य कृतघ्न कृतोपकारानभिज्ञ अस्माभि परलोकगत लोकान्तरे प्राप्त देव स्वामी नन्द इत्यथ न अनुगम्यते न अनुस्रियते ।

टिप्पणी

(१) **शूलमारोपित**—शूलम आरोपित—शूली पर चढा दिया गया। (२) **अभिद्रोग्धुम**—अभिजिघासितुम—मारने की इच्छा से। अभि+द्रुह्+तुमुन। (३) **अयुक्तरूप**—अतिशयेन अयुक्त इति अयुक्त+रूपप प्रशसायाम। (४) **शोच्य**—अवश्यम शोचनीय इति शुच+ण्यत कमणि ण्य आवश्यक इति कुत्व न। (५) **स्वाम्यथ**—स्वाम्यथ साधयित य इति एव प्रयतसे—स्वामी का

काय सिद्ध होगा इसलिए प्रयत्न कर रहे हो (अन्यथा जीवन त्याग देते)। (६) जिजीविषाम—जीवितुमिच्छा इति जीव+सन अ भावे जिजीविषा जीने की इच्छा—ताम। आलम्ब्य का कम है। (७) कृतघ्न —कृ+क्त कमणि कृतम—की गई सेवा अर्थात किया गया उपकार तत हन्ति विस्मरणेन इति कृत+हन+क कतरि मूलविभुजादिभ्य क इत्यनेन+कृतघ्ना। उपकार न मानने वाले, अकृतज्ञ। इस श्लोक मे कार्यलिग और परिसरया अलकारो की ससृष्टि है, अनुष्टुप छद है।

विराधगुप्त —अमात्य! नैतदेवम। (अस्माकममुमेवाथ-मित्यादि पुन पठति।)

राक्षस —सखे! कथ्यतामपरस्यापि सुहृदव्यसनस्य श्रवणे सज्जोऽस्मि।

विराधगुप्त —तत एतदुपलभ्य चन्दनदासेनोपारूढसाध्व-सेनापवाहितममात्यकलत्रम।

राक्षस —सखे! क्रूरस्य चाणक्यवटो विरुद्धमयुक्तमनु-ष्ठित चन्दनदासेन।

विराधगुप्त —ननु अयुक्ततर सुहृद्द्रोह।

राक्षस —ततस्तत ?

विराधगुप्त —ततो याच्यमानेनापि यदा न समर्पितम-नेनाऽमात्यकलत्र तत कुपितेन चाणक्यवटुना।

राक्षस —(सोद्वेग) स खलु व्यापादित ?

विराधगुप्त —अमात्य! न खलु व्यापादित, किन्तु गृहीतगृहसार सपुत्रकलत्र सयम्य बन्धनागारे निक्षिप्त।

राक्षस —तत किं परितुष्ट कथयसि—'अपवाहितमनेन राक्षसकलत्रम्' इति। ननु वक्तव्य 'सयत सकलत्रो राक्षस' इति।

हिदी अनुवाद—विराधगुप्त—मत्री। ऐसी बात नहीं है। 'अस्माकम मुमेवार्थमित्यादि' श्लोक फिर पढ़ता है।

राक्षस—बताओ, दूसरे मित्र की भी विपत्ति सुनने को प्रस्तुत हूँ।

विराधगुप्त—तब शकटदास की घटना का समाचार सुनकर चन्दनदास ने भयभीत होकर अमात्य के परिवार को कहीं दूसरी जगह भेज दिया।

राक्षस—चन्दनदास ने उस दुष्ट चाणक्य के विरुद्ध यह अनुचित काय किया।

विराधगुप्त—निश्चय ही मित्रता का न निभाना इससे भी अधिक अनुचित होता।

राक्षस—इसके बाद ?

विराधगुप्त—जब इसके द्वारा मागे जाने पर भी अमात्य का परिवार न सौंपा गया तो दुष्ट चाणक्य ने क्रुद्ध होकर।

राक्षस—(उद्विग्न होकर) क्या वह मार डाला गया ?

विराधगुप्त—मन्त्री ! मार तो नहीं डाला गया, किन्तु उसकी सारी धन सम्पत्ति छीन ली गई और वह जेल में डाल दिया गया।

राक्षस—तब बहुत खुश होकर क्यो कह रहे हो 'कि इसके द्वारा राक्षस का परिवार दूसरी जगह हटा दिया गया', ऐसा कहना चाहिए कि 'परिवार सहित राक्षस पकड लिया गया' ऐसा।

Minister—(This is not so gone to Rakshas the other world to this very object—repeats) Speak I am prepared to listen to other disasters also to friends

Viradhagupta—Hearing of this Minister s wife was sent away by Chandandasa

Rakshasa—What is done by him is improper being adverse to the cruel Chanakya

Viradhagupta—But Minister injury to a friend is still more improper

Rakshasa—Next what next

Viradhagupta—Next when he did not give up minister s wife even on being requested then by the enraged brat Chanakya he was—

Rakshasa (In alarm)—Not surely killed !

Viradhagupta—Indeed not cast into prison with son and wife and with all valuables in the house seized

Rakshasa Then why do you say with satisfaction that Rakshas s wife was sent away ? Really you should say Rakshasa is restrained with wife and children

टिप्पणी

(१) सज्ज—तयार। सस्ज+अच, विभक्तिकायम्। (२) एतदुपलभ्य—एतत का आशय शूलारोपणम नही बल्कि शूलारोपणाथ—ग्रहणम। (३) अप वाहितम—अप+वह+णिच क्त कमणि—हटाया गया। (४) सुहृदद्रोह—

मित्र के विरुद्ध आचरण। सुष्ठु हृदयमस्य इति सुहृत् (बहुव्रीहि स०), हृदयस्य हृदादेश । तस्म द्रोह (सुप्सुपा स०)। (५) गहीतगहसार —गहस्य सार श्रेष्ठवस्तु गहसारम गृहीत गहसारमस्य। (६) ब धनागारे—ब ध+ल्युट अधिकरणे ब धनञ्च तदगारञ्च (द्व द्व स०)। (७) प्रतीहारभूमिम—फाटक। (८) स्यात —सम्भावनाया लिङ। (९) भ यम—भवति इति भू+यत् कतरि 'भव्यगेय — इत्यादिसूत्रेण निपातनात सिद्धम्। (१०) उपारूढसाध्वसेन—उपारूढ समुत्पन्न साध्वस भय यस्य स उपारूढसाध्वस बहुव्रीहि स० तेन। (११) अयुक्ततर — अतिशयेन अनुचित । (१२) अस्माकममुमेवाथम—इसका तात्पय है कि स्वामी का काय सम्पन्न किए बिना उसका अनुगमन करने वाले कृतघ्न होते ह, आप तो स्वामी का काय सम्पन्न करने के लिए जीवित ह अत आप कृतघ्न नही ह।

(प्रविश्य पटाक्षेपेण पुरुष) जेदु अमच्चो। अज्ज! एसो क्खु सअडदासो पडिहारभूमिमुबत्थिदो (जयत्वमात्य । आय! एष खलु शकटदास प्रतिहारभूमिमुपस्थित ।)

राक्षस —प्रियवदक! अपि सत्यम्?

प्रियवदक —किं अलिअ अमच्चपादेसु विणिवेदेमि? (किमलीकममात्यपादेषु विनिवेदयामि?)

राक्षस —सखे! विराधगुप्त! कथमेतत?

विराधगुप्त —अमात्य! स्यादेतदेव यतो भव्य रक्षति भवितव्यता।

राक्षस —प्रियवदक! यद्येव, तत कि चिरयसि? क्षिप्र प्रवेशय तम्।

प्रियवदक —ज अमच्चो आणवेदि त्ति। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्त ।)

(तत प्रविशति सिद्धाथकेनानुगम्यमान शकटदास ।)

शकटदास —(दृष्ट्वा स्वगतम्)—

दृष्ट्वा मौयमिव प्रतिष्ठितपद शूल धरित्र्यास्तले
तल्लक्ष्मीमिव चेतस प्रमथनीमुन्मुच्य वध्यस्रजम्।

श्रुत्वा स्वाम्युपरोधरौद्रविषमानाध्माततूर्यस्वनाद्
न ध्वस्त प्रथमाभिघातकठिन मन्ये मदीय मन ।।२१।।

अन्वय—मन्ये प्रथमाभिघातकठिन मदीय मन मौर्यमिव धरित्र्यास्तले प्रतिष्ठितपद शूल दष्टवा तल्लक्ष्मीमिव चेतस प्रमथनी वध्यस्रजम उन्मुच्य स्वाम्युपरोधरौद्रविषमान आध्माततूयस्वनान श्रुत्वा न ध्वस्तम ।।२१।।

हिदी अनुवाद—(पर्दे को हटाते हुए एक सेवक का प्रवेश) अमात्य की जय हो, आर्य, यह शकटदास दरवाजे पर उपस्थित ह ।

राक्षस—प्रियवदक, क्या यह बात सत्य है ?

प्रियवदक—क्या अमात्य के आगे असत्य बोलूगा ?

राक्षस—सखे विराधगुप्त, यह कसी बात है ?

विराधगुप्त—अमात्य ! सभवत यह ऐसा हो कि भाग्य ने उन्हें बचा दिया हो।

राक्षस—प्रियवदक—अगर ऐसी ही बात है तो देर क्यों कर रहे हो ? जल्दी अदर ले आओ।

प्रियवदक—जसी अमात्य आज्ञा दें। (ऐसा कहकर बाहर निकलता है) (तब सिद्धार्थक के द्वारा अनुगमन किया जाता हुआ शकटदास अदर प्रवेश करता है।)

शकटदास—देखकर (अपने मन में) म समझता हूँ कि पहले की चोटो से कठोर बना हुआ मेरा हृदय चन्द्रगुप्त के समान पृथ्वी के अदर गडे हुए मूल भाग वाले शूल दड को देखकर और उस चन्द्रगुप्त की लक्ष्मी की तरह हृदय को नष्ट करने वाली वध सूचक माला को पहन कर स्वामी की हत्या के समान भयकर तथा कानों को कठोर लगने वाली बजाई गई तुरही के शब्दो को सुन कर टुकडे-टुकडे नहीं हो गया।

(Entering) Let minister prosper Here is Shakatadasa come at the site of the gate

Rakshasa—Is that true my good man ?

Priyamvadak—Should I report an untruth unto revered minister ?

Rakshasa—Friend Viradhagupta how is this ?

Viradhagupta—Minister it might be so for fate guards the blessed

Rakshasa—Priyamvadaka if it so why are you making delay even now ? Bring him in quickly

Priyamvadaka—What orders the minister (exit)

(Now enter Shakatadas followed by Siddharthaka)

Shakatadasa (Seeing to himself)—I think that my mind hardened by the previous blows was not unnerved on seeing

the stake like Maurya with its foot firmly planted on the surface of the earth suspending from the head the garland that takes away sense like the fortune of the same (Maurya) and hearing the beating of the drums of execution grim and discordant like the news of Master s death

सस्कृत व्याख्या—मये तकयामि प्रथमाभिघातकठिन प्रथमा पूवप्राप्ता ये अभिघाता प्रहारा त कठिन घनीभूत मदीय मम मन हृदय मौयमिव चद्रगुप्तमिव धरित्र्या वसुधराया तले पष्ठे प्रतिष्ठितपद बद्धमूल शूल वधाथलौहदण्ड दष्टवा अवलोक्य तल्लक्ष्मीमिव चद्रगुप्तश्रियमिव चेतस हृदयस्य प्रमथनी विदारणी वध्यस्रज वध्यचिह्नभूता रक्तकुसुममाला उमुच्य परिधाय स्वाम्युपरोधरौद्रविषमान स्वामिन प्रभो नदस्य य उपरोध हिंसा तदिव रौद्रान घोरान विषमान ककशान आध्माततूयस्वनान ताडितडिण्डिमशब्दान श्रुत्वा आकण्य न विदीणम न द्विधा भूतम्।

टिप्पणी

(१) **शकटदास**—प्रियवदक राक्षस का प्राचीन सेवक था जो शकटदास को अच्छी तरह से जानता था। इसीलिए वह यह नाम लेकर सूचित करता है। (२) **प्रतिहारभूमिम**—दरवाजे पर द्वाद्वार प्रतीहार इत्यमर। (३) **चिरयसि**—चिर बहुत देर। चिर करोषि इति चिर+णिच (नाम धातु)+लट तिप 'चिरायते खलु आवत्त। (४) **प्रमथनीम**—कुचलने वाली। प्रमथ्यते अनया इति प्र+मथ+ल्युट करणे प्रमथनी। प्रमथितु शीलम अस्या इति प्र+मथ+घिनुण कतरि प्रमाथिनी शुद्ध है, परन्तु इससे छद भग हो जाता है। मेरा सिर चक्कर खाता है मौय के भाग्य को देखकर मेरी चेतना नष्ट हो जाती है। मुझे इसका प्रतिदिन सामना करना पडता है इसलिए मत्यु की माला पहन कर मै प्रतिदिन स्थिर खडा रहता हूँ। (५) **भवितव्यता**—होनी भाग्य। भू+तयत+क्त+टाप (६) **सखे विराधगुप्त**—आश्चय तथा आनद के सागर मे हिलोरें लेता हुआ भावुक राक्षस यह भूल गया है कि जिस प्रियवदक के सामने अभी कुछ क्षण पूव विराधगुप्त के असलियत को छिपाने का ढोग किया था उसी के सामने अब सब प्रकट हो जाने दे रहा है। यह है राक्षस की दुबलता। (७) **स्रजम**—वध के पूव अपराधी को माला पहना दी जाती है। (८) **स्वाम्युपरोध**—उप+रुध+घञ भावे उपरोध—रुकावट घेरा, यहाँ इसका अर्थ 'हिंसा'—

मत्यु है। विभिन्ना समेभ्य विषमा सुविनिदुम्य सुपिसूतिसमा इति षत्वम, रौद्र—देखने मे, विषम मे। रौद्राश्च ते विषमाश्च कमधा—स्वाम्युपरोधेन रौद्रविषमा —स्वामी की हिंसा से भयकर और विषम। उप√रुध+घञ भावे उपरोध। (९) ध्वस्तम—नष्ट, ध्वस+क्त कतरि (१०) प्रथमाभिघात—पहले की चोटें (११) मौयप्रतिष्ठा मौयलक्ष्मीस्थिरता स्वामिनाश। (१२) आघात—आ सम्यक हननम् इति आ+हन+घञ भावे आघात। तस्य तूय, तस्य स्वनान श्रुत्वा का कम। इस पद्य मे काव्यलिंग उत्प्रेक्षा और उपमा अलकारो की ससष्टि है इसमे शादूलविक्रीडित छ द है।

(नाट्येनावलोक्य सहर्षम) अयममात्यराक्षसस्तिष्ठति। य एष,—

अक्षीणभक्ति क्षीणेऽपि न दे स्वाम्यथमुद्वहन्।
पृथिव्या स्वामिभक्ताना प्रमाणे परमे स्थित ॥२२॥

अ वय—नन्दे क्षीणेऽपि अक्षीणभक्ति स्वाम्यथम उद्वहन पथिव्या स्वामिभक्ताना परमे प्रमाणे स्थित ॥२२॥

हि दी अनुवाद—(अभिनय के साथ देखकर प्रसन्नतापूवक) यह मत्री राक्षस ह, जो कि न द के नष्ट हो जाने पर भी स्वामी के प्रति पूण भक्ति रखते हुए तथा स्वामी के काय को करते हुए पथ्वी पर स्वामिभक्तो के प्रथम श्रेणी में स्थित ह।

(Advancing and noticing with joy) Here is Minister Rakshasa who even at the demise of Nanda upholding the master s cause with unabated devotion stands in the world at the supreme measure of those who are devoted to their masters

सस्कृत याख्या—य एष न दे क्षीणे अपि मते अपि स्वयम अक्षीणा अपरिहीना भक्ति यस्य तादश सन 'स्वामिनो न दस्य अथ कायम उद्वहन धारयन पथि या जगति स्वामिनि प्रभौ ये भक्ता अनुरक्ता तेषा परमे सर्वाधिके 'प्रमाणे मात्राया स्थित वतमानो दश्यते। आत्मदष्टान्तेन इय हि स्वामिभक्ते परमा मात्रा इत्युपदिशति इव इत्यथ।

टिप्पणी

(१) **अक्षीण**—क्षि+क्त कतरि क्षीण —नष्ट हुआ। न क्षीणम अक्षीणम, सामान्ये नपुसकम, तादश भक्तियस्य। (२) **क्षीणे**—क्षि+क्त कतरि क्षीण.

स्थित—मरा हुआ। (३) उद्वहन—धारण करता हुआ। उद्+वह्+शत। (४) प्रमाणे—प्रमीयते अनेन इति प्र+मा+ल्युट करणे प्रमाणम। (५) परमे प्रमाणे—सबसे ऊँची कोटि मे राक्षस प्रथमश्रेणी का स्वामिभक्त था। इस श्लोक मे विभावना अलकार तथा अनुष्टुप छद है।

(उपसृत्य) जयत्वमात्य ।

राक्षस—(विलोक्य सहर्षम्) सखे शकटदास ! दिष्ट्या कौटिल्यगोचरगतोऽपि दृष्टोऽसि, तत् परिष्वजस्व माम्।

(शकटदासस्तथा करोति)

राक्षस—(त परिष्वज्य) इदमत्रासनमास्यताम्।

शकटदास—यदाज्ञापयत्यमात्य । (इति नाट्येनोपविष्ट ।)

राक्षस—सखे शकटदास। अथ कोऽयमीदृशस्य मे हृदयानन्दस्य हेतु ?

शकटदास—(सिद्धार्थक निर्दिश्य) अमात्य ! प्रियसुहृदा सिद्धाथकेन घातकान् विद्राव्य वधस्थानादपवाहितोऽस्मि।

राक्षस—(सहषम्) भद्र सिद्धाथक ! कामसमपर्याप्तमिदमस्य प्रियस्य, तथापि गृह्यताम। (इति स्वगात्रादवतार्य भूषणानि प्रयच्छति।)

सिद्धार्थक—(गृहीत्वा पादयोर्निपत्य स्वगतम्) अअ क्खु अज्जोबदेसो। होदु। तह करिस्सम्। (प्रकाशम्) अमच्च ! एत्थ मे पढमप्प बिट्ठस्स णत्थि कोबि परिच्चिदा, जहिं पद अमच्चस्स प्पसाद णिक्खिबिअ णिब्बुदो भविस्स, ता इच्छामि अह इमाए मुद्दिआए मुद्दिद अमच्चस्स ज्जेब भाण्डागारे णिक्खिबिदु। जदा मे एदिणा प्पओअण भविस्सदि, तदा गेहिणस्स। (अयं खलु आर्योपदेश । भवतु। तथा करिष्यामि। अमात्य ! अत्र मे प्रथमप्रविष्टस्य नास्ति कोऽपि परिचित,

यत्रेममत्यस्य प्रसाद निक्षिप्य निवृत्तो भविष्यामि, तदिच्छाम्यमेतया मुद्रया मुद्रितममात्यस्यैव भाण्डागारे निक्षेप्तुम् । यदा मे एतेन प्रयोजन भविष्यति, तदा ग्रहीष्यामि ।)

हिन्दी अनुवाद—(पास जाकर) मत्री की जय हो।

राक्षस—(देखकर खुशी के साथ) मित्र शकटदास, भाग्य से चाणक्य की दृष्टि में पड जाने पर भी दिखाई पडे हो, तो मुझे छाती से लगाओ। (शकटदास वसा करता है।)

राक्षस—(उसे छाती से लगाकर) यह यहा पर आसन है, बठिए।

शकटदास—मत्री जी जो आज्ञा देते ह (इस प्रकार अभिनय के साथ बठ जाता है।)

राक्षस—मित्र शकटदास! तो यह कौन है जो इस प्रकार मेरे हृदय के आनन्द का कारण है?

शकटदास—(सिद्धायक की ओर इशारा करके) अमात्य, प्यारे मित्र सिद्धाथक ने बधिको को डरा धमका कर मुझे वध स्थान से दूर कर दिया।

राक्षस—(प्रसन्नता के साथ)! महाशय सिद्धाथक, यद्यपि मेरी खुशी के समान यह जो कुछ तुम्हें दे रहा हूँ, नही है, फिर भी इसे ग्रहण कर लो। (इस प्रकार कहकर अपने शरीर से उतार कर आभूषण देता है)

सिद्धाथक—(आभूषणो को लेकर, राक्षस के पर पर गिरकर) (अपने मन में) यह निश्चय ही आय चाणक्य की आज्ञा है। अच्छा, वसा ही करूँगा। (सुनाकर) मत्री जी, म पहिली ही बार यहा आ रहा हूँ कोई मेरा परिचित नहीं है, जिस जगह अमात्य का दिया हुआ यह पारितोषिक धरोहर के तौर पर रख दू और शान्त हो जाऊँ। म तो यही चाहता हूँ कि अमात्य के ही खजाने में यह इस मुद्रा से मुद्रित कर दिया जाय और रख दिया जाय। जब मुझे इसकी जरूरत पडेगी तो म इसे ले लूगा।

(Approaching) Let Minister prosper

Rakshasa (Noticing with joy)—Friend Shakatadasa luckily you are seen again though you fell into the clutches of Kautilya so embrace me (Shakatadasa does as told)

Rakshasa (Embracing long)—Here is a seat sit down (Shakatadasa acts sitting) Well friend Shakatadasa who is the author of such delight to my heart ?

Shakatadasa (Pointing to siddharthak)—I have been led away from the place of execution by this dear friend Siddharthaka who put the executioners to flight

Rakshasa (With joy)—Good Siddharthaka this is not enough for such pleasure ? Still let it be accepted (offers jewellery taking them off from his own person)

Siddharthaka (Accepting and falling down at his feet to himself)—Such are noble master s instructions Well I will act accordingly (Aloud) Minister a new comer here I have no acquaintance with whom having deposited this gift of minister I may feel relieved So I wish to have it placed in minister s treasury stamped with his seal I shall take back when I need it

टिप्पणी

(१) **परिष्वजस्व**—परि+स्वञ्ज+लोट—स्व— उपसर्गात सुनोति—इति षत्वम । (२) **कोऽय मे**—हेतु—कर्ता है, तुम्हे फिर से देखने के लिए म किसका ऋणी हू। (३) **घातकान**—घ्नन्ति इति हन+ण्वुल कतरि घातका—प्राण लेने वाले। (४) **विद्रा य**—वि+द्रु+णिच+ल्यप—भगाकर। (५) **अपहृत**—दूर ले जाया गया। (६) **कौटिल्यगोचरगत**—कौटिल्यस्य गोचर त गत—चाणक्यसमीपम प्राप्त इत्यथ—चाणक्य के पास जाकर। (७) **आर्योपदेश**—आय (चाणक्य) का उपदेश है। ध्यान रहे कि सिद्धाथक वस्तुत चाणक्य का मित्र एव गुप्तचर है। इस कथन का सम्ब ध प्रथम अङ्क मे उस स्थल से है जहा चाणक्य उससे कहता है—तस्माच्च सुहृत्प्राणपरितुष्टात पारितोषिक ग्राह्यम । (८) **प्रसादम**—कृपा प्र+सद+घञ भावे+प्रसाद तम। (९) **निव त्त**—प्रसन्न। निर वत+क्त कतरि। (१०) **भाण्डागारे**—खजाने मे भाण्डस्य आगारम् तस्मिन ।

राक्षस —भद्र ! भवतु, को दोष ? शकटदास ! एव क्रियताम ।

शकटदास —यदाज्ञापयतीति । (मुद्रा विलोक्य जनान्तिकम्) अमात्य ! भवन्नामाङ्कितेय मुद्रा ।

राक्षस —(विलोक्य सविषाद सवितर्कमात्मगतम्) सत्य नगरात निष्क्रामतो मम हस्ताद् ब्राह्मण्या उत्कण्ठाविनोदार्थ गृहीता, तत कथमस्य हस्तमुपगता ? (प्रकाशम) भद्र सिद्धाथक ! कुतस्त्वयेयमधिगता ?

सिद्धार्थक —अमच्च ! अत्थि कुसुमपुरणिवासी मणिआरसेठी चन्दणदासो णाम । तस्स गेहदुआरे भूमिए पडिदा,

मए समासाहिदा। (अमात्य ! अस्ति कुसुमपुरनिवासी मणिकारश्रेष्ठी चन्दनदासो नाम। तस्य गेहद्वारे भूमौ पतिता, मया समासादिता।)

राक्षस —युज्यते।

सिद्धार्थक —अमच्च ! किं एत्थ जुज्जदि? (अमात्य ! किमत्र युज्यते?)

राक्षस —भद्र ! यतो महाधनानां गृहे पतितस्यैवंविध-स्योपलब्धिरिति।

शकटदास —सखे सिद्धार्थक ! अमात्यनामाङ्कितेयं मुद्रा। तदितो बहुतरेणार्थेन भवन्तममात्यस्तोषयिष्यति। तद् दीयतामेषा मुद्रा।

सिद्धार्थक —अज्ज ! एसो मे परितोसो, जं अमच्चो इमाए मुद्दाए परिग्गहप्पसादं करेदि त्ति। (आर्य ! एष मे परितोषो, यदमात्योऽस्या मुद्राया परिग्रहप्रसादं करोतीति।) (इति मुद्रां समर्पयति।)

हिंदी अनुवाद—राक्षस—महाशय ! हां, इसमें क्या दोष है? शकटदास, इस प्रकार किया जाना चाहिए।

शकटदास—जो आज्ञा हो। (मुद्रा को देखकर धीरे से कान में) मंत्री, आपके नाम से अंकित की गई यह मुद्रा है।

राक्षस—(देखकर चिन्ता और संदेह के साथ मन में) सचमुच, नगर से बाहर निकलते हुए मेरे हाथ से ब्राह्मणी ने सान्त्वना के लिए (यह मुद्रा) ले ली थी। तो इसके हाथ में कैसे आ गई? (प्रकट) महाशय, सिद्धार्थक, तुमने इसे कहां से प्राप्त किया?

सिद्धार्थक—मंत्री, पाटलिपुत्र का निवासी सेठ जौहरी चंदनदास है। उसके घर के दरवाजे पर गिरी हुई थी, मैंने (वहीं) पाई।

राक्षस—ठीक है।

सिद्धार्थक—मंत्री, इसमें क्या ठीक है?

राक्षस—महाशय धनसेठों के घर में गिरी हुई ऐसी चीज मिल सकती है।

शकटदास—मित्र सिद्धार्थक ! यह मुद्रा मंत्री के नाम से अंकित है। इसलिए इससे बहुत ज्यादा धन से अमात्य आपको संतुष्ट करेंगे। इसलिए यह मुद्रा उन्हें दे दीजिए।

सिद्धार्थक—आय, म इसी से सन्तुष्ट हूँ कि मत्री जी इस मुद्रा को स्वीकार करने की अनुकम्पा कर रहे ह, (ऐसा कहकर मुद्रा दे देता है)।

टिप्पणी

(१) जनान्तिकम—अन्तिक—समीप। जनानाम् अन्तिकम् तत यथा तथा—इस प्रकार से कि और जो दूसरे लोग मौजूद हो वे न सुन सकें। (क्रिया विशेषण) इसका लक्षण यह है 'जनान्तिके तु तत्प्रोक्त यत्ततीयाद्यगोचरम'। साहित्यदपण मे इसकी परिभाषा इस प्रकार है—'त्रिपताककरेणान्यानपवार्यान्तरा कथाम। अन्योन्याम त्रण यत्स्यात्तज्जनान्ते जनान्तिकम्॥' (२) उत्कण्ठा विनोदाथम—उद+कण्ठ+अ भावे उत्कण्ठा तस्या विनोद तस्म इदम, नित्य चतु० तत्पु० अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता च वक्तव्या'—बेचनी दूर करने के लिए। (३) अधिगता—प्राप्ता—मिली। (४) समासादिता—प्राप्ता। सम—आ√सद+णिच+क्त टाप। (५) महाधनानाम—बहुत अधिक धनी लोगो के। महान्ति धनानि एषाम इति महाधना बहुव्रीहि स० तेषाम। (६) उपलब्धि—प्राप्ति—उप+लभ+क्तिन भावे—उपलब्धि। (७) इत—अस्मात अङ्गुलीयकात। (८) बहुतरेण—इससे ज्यादा।

राक्षस—सखे शकटदास! अनयैव मुद्रया स्वाधिकारे व्यवहतव्य भवता।

शकटदास—यदाज्ञापयत्यमात्य।

सिद्धार्थक—अमच्च! विणवेमि किं पि। (अमात्य! विज्ञापयामि किमपि।)

राक्षस—भद्र! विश्रब्ध ब्रूहि।

सिद्धार्थक—जाणादि ज्जेव अमच्चो जधा चाणक्कहद-अस्स विप्पिअ कदुअ, णत्थि मे पुणो पाडलिउत्ते प्पवेसो त्ति, ता इच्छामि अह अज्जस्स ज्जेव सुप्पसणे पादे सेविदु। (जानात्येवामात्यो यथा चाणक्यहतकस्य विप्रिय कृत्वा, नास्ति मे पुन पाटलिपुत्रे प्रवेश इति, तदिच्छाम्यहममात्य-स्यैव सुप्रसन्नौ पादौ सेवितुम्।)

राक्षस —भद्र ! प्रिय न, किन्तु त्वदभिप्रायपरिज्ञानेनाऽन्तरितोऽस्माकमनुनय । तदेव क्रियताम् ।

सिद्धार्थक —(सहर्षम्) अणुग्गहिदोह्मि । (अनुगृहीतोऽस्मि ।)

राक्षस —सखे शकटदास ! विश्रामय सिद्धार्थकम् ।

शकटदास —यदाज्ञापयत्यमात्य ।

(इति सिद्धार्थकेन सह निष्क्रान्त ।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—मित्र शकटदास, आप इसी मुद्रा के द्वारा अपने अधिकार को प्रयोग में लावें।

शकटदास—अमात्य जसी आज्ञा दें।

सिद्धार्थक—अमात्य, म कुछ निवेदन कर रहा हूँ।

राक्षस—हा हा, निश्चिन्त होकर कहो।

सिद्धार्थक—अमात्य ! आप तो स्वय जानते ह कि इस हत्यारे चाणक्य की बुराई करके म पाटलिपुत्र में नहीं घुस सकता हूँ। तो अब यहीं अमात्य के आनन्ददायक चरणो की सेवा करना चाहता हूँ।

राक्षस—हमारे लिए प्रसन्नता की बात है। (म ऐसा ही चाहता था, किन्तु) तुम्हारे इस अनुरोध से मेरे मन की बात मेरे मन में ही रह गई। तो ऐसा ही किया जाय।

सिद्धार्थक—(प्रसन्न होकर) म अनुगृहीत हो गया हूँ।

शकटदास—मत्री जी, जसी आज्ञा (ऐसा कहकर सिद्धार्थक के साथ बाहर निकलता है।)

Rakshasa—Friend Shakatadasa with this very seal business will have to be conducted by you in your own office

Shakatadasa—As minister commands

Siddharthaka—Minister may I speak (i e make a request) ?

Rakshasa—Speak unreservedly

Siddharthaka—Minister indeed knows that serving an unpleasant turn to the wicked Chanakya one has no entrance into Pataliputra again so I wish to serve at Minister s feet

Rakshasa—Good man this is a pleasure to us But this is our request suppressed through ignorance of your wishes So do so

Siddharthaka—(With joy)—I am favoured

Rakshasa—Shakatadasa let Siddharthaka rest

Shakatadasa—Be it so (Departs with Siddharthaka)

टिप्पणी

(१) **स्वाधिकारे**—स्वनियोगे—अपने अधिकार मे अधिक्रियते अस्मिन् इति अधि+कृ+घञ अधिकरणे अधिकार—राक्षस के प्रबन्धक का पद है। (२) **व्यवहर्तव्यम्**—व्यवहार कार्य—व्यवहार मे लाया जाय। वि—अव√हृ+तव्य भावे। (३) **विप्रियम**—विरोधम, विभिन्न प्रियेभ्य या विरुद्ध प्रियं विप्रियम। (४) **कृत्वा नास्ति**—यहा स्थितस्य का अध्याहार करके कृत्वा स्थितस्य जनस्य प्रवेशो नास्ति ऐसा वाक्य समझना चाहिए, अन्यथा समानकर्त्तृकयो पूर्वकाले सूत्र से कृत्वा मे क्त्वा प्रत्यय नही होगा। (५) **पाटलिपुत्रे**—कुसुमपुर का प्राचीन नाम। (५) **त्वदभिप्रायपरिज्ञानेन**—भाव यह है कि तुम्हारे कथन से पहले ही मुझे तुमसे इस तरह का अनुरोध करना चाहिए था, किन्तु ऐसा म इसलिए न कर सका कि तुम्हारी भावना मुझे ज्ञात न थी। (७) **विश्रामय**—वि+श्रम+णिच+लोट—आराम दो।

राक्षस—सखे विराधगुप्त। वर्णयेदानी कुसुमपुरवृत्तान्त-शेषम्। अपि क्षमन्ते कुसुमपुरनिवासिनोऽस्मदुपजाप चन्द्र-गुप्तप्रकृतय ?

विराधगुप्त—अमात्य! बाढ क्षमन्ते, ननु यथाप्राधान-मनुगच्छन्त्येव।

राक्षस—सखे! किं तत्र कारणम ?

विराधगुप्त—अमात्य! इद तत्र कारणम्—मलयकेतो-रपक्रमणात् प्रभृति पीडितश्चन्द्रगुप्तेन चाणक्य इति। चाणक्योऽपि जितकाशितयाऽसहमानस्तैस्तैराज्ञाभङ्गैश्चन्द्र-गुप्तस्य चेतस पीडामुपचिनोति, अयमपि ममानुभव।

राक्षस—(सहर्षम) सखे विराधगुप्त! तद्गच्छ त्वम् अनेनैव आहितुण्डिकच्छद्मना पुन कुसुमपुरमेव। तत्र हि मे सुहृत् वैतालिकव्यञ्जन स्तनकलसो नाम प्रतिवसति। स त्वया मद्वचनात वाच्य, यथा चाणक्येन क्रियमाणे-ष्वाज्ञाभङ्गेषु चन्द्रगुप्तस्त्वया समुत्तेजनसमर्थै श्लोकैरुप-

Rakshasa (With joy)—Friend Viradhagupta you go back to Kusumpura in this very guise of a snake charmer There my dear friend Stanakalasa lives in the garb of a bard He has to be told by you this in my words Whenever supercession of orders is made by Chanakya Chandragupta has to be lauded in verses capable of rousing him thoroughly and (the progress of) the work has to be reported very secretly through the hand of Karabhak

Viradhagupta—As minister commands (Exit)

टिप्पणी

(१) **अस्मदुपजापम**—अस्माकम् उपजापम—भेदम त्रम । भेदम त्रम—'अपि क्षमन्ते सहन्ते किम ? भेदवचन शृण्वन्ति उत न शृण्वन्ति । (२) **अपि**—यहा प्रश्नवाचक अ यय है। (३) **बाढम**—असशयम उपजाप क्षमन्ते। (४) **अनुगच्छन्त्येव**—भाव यह है कि चाणक्य ने मलयकेतु की उपेक्षा की। अत च द्रगुप्त का प्रजावग उसे कृतघ्न समझने लगा है। परिणामस्वरूप भद्रभट आदि च द्रगुप्त को छोडकर मलयकेतु के पास चले आये ह। यह हमारे उपजाप का ही परिणाम है। (५) **किं तत्र**—तत्र—कुसुमपुरे। (६) **जितकाशितया**—अत्यन्त गर्वित होने के कारण। जितेन काशते स्पधते इति जितकाशी, तस्य भाव जितकाशिता तया। (७) **अनुभव**—अनु+भू+अप कमणि अनुभव। (८) **वतालिक यञ्जन**—स्तुतिपाठकस्य मागधस्य लिङ्गधारीत्यथ । (९) **समुत्तेजनसमर्थं**—मन्युदीपनयोग्य, सम—उद√तिज+णिच+ल्युट—अन+समुत्तेजनम तत्र समर्था सुप्सुपा त । (१०) **उपश्लोकयितव्य**—स्तुति किया जाना चाहिए, उप√श्लोक+णिच+त य कमणि (नामधातु)।

पुरुष—(प्रविश्य) जेदु अमच्चो। अमच्च ! सअडदासो बिणबेदि, एदे क्खु तिणि अलङ्कारबिसेसा बिक्की अन्ति, ता पच्चक्खीकरेदु अमच्चो। (जयत्वमात्य। अमात्य ! शकटदासो विज्ञापयति, एते खलु त्रयोऽलङ्कारविशेषा विक्रीयन्ते, तत् प्रत्यक्षीकरोत्वमात्य।)

राक्षस—(विलोक्यात्मगतम्) अहो ! महार्हाण्याभरणानि। (प्रकाशम्) भद्र ! उच्यता शकटदास, परितोष्य विक्रेतार गृह्यन्तामिति।

पुरुष —ज अमच्चो आणवेदि । (यदमात्य आज्ञापयति ।)
(इति निष्क्रान्त)

राक्षस —(स्वगतम्) यावदहमपि कुसुमपुराय करभक प्रेषयामि । (उत्थाय) अपि नाम दुरात्मनश्चाणक्याच्चन्द्रगुप्तो भिद्येत, अथवा सिद्धमेव समीहित पश्यामि । कुत —

हिन्दी अनुवाद—सेवक (भीतर आकर) जय हो अमात्य की । अमात्य ! शकटदास ने कहला भेजा है कि ये तीन बहुमूल्य आभूषण बिकने के लिए आए ह । अमात्य इन्हें देख लें ।

राक्षस—(देखकर अपने मन में) अरे ! ये आभूषण तो सचमुच बहुमूल्य ह । (सुनाकर) सुनो, जाओ और शकटदास से कहो कि इन्हें ले लिया जाय और बेचने वाले को पूरी तौर से इनाम भी दे दिया जाय ।

सेवक—अमात्य की जो आज्ञा (बाहर निकल जाता है ।)

राक्षस—(अपने मन में) तब तक म भी करभक को कुसुमपुर भेज रहा हूँ । (उठते हुए) क्या ही अच्छा होता यदि उस दुष्ट चाणक्य से चन्द्रगुप्त अलग कर दिया जाता, अथवा अपना काय तो सिद्ध हुआ ही देख रहा हूँ ।

Servant (Entering in)—Victory to the minister O minister Shakatadasa has sent words that these precious ornaments have come for being sold and if the minister sees them—

Rakshasa (seeing to himself)—These ornaments are really very precious (Aloud) Listen go and tell Shakatadasa that they should be bought and the seller should be amply rewarded

Servant—As the minister bids (Exit)

Rakshasa (To himself)—By that time I am sending Karabhak to Kusumpura (Rising up) It would be better if Chandragupta is separated from that rogue Chanakya otherwise I see my object fulfilled

मौर्यस्तेजसि सर्वभूतलभुजामाज्ञापको वतते
चाणक्योऽपि मदाश्रयादयमभूद्राजेति जातस्मय ।
राज्यप्राप्तिकृतार्थमेकमपर तीर्णप्रतिज्ञाणव
सौहार्दात कृतकृत्यतैव नियत लब्धान्तरा भेत्स्यति ।।२३।।

(इति निष्क्रान्ता सर्वे ।)

।।इति राक्षसविचारनामकद्वितीयोऽङ्कः ।।

अन्वय—मौर्य सर्वभूतलभुजाम् आज्ञापक तेजसि वर्तते, चाणक्योऽपि मदाश्रयात अयं राजा अभूत इति जातस्मय, राज्यप्राप्तिकृतार्थम एक तीर्ण प्रतिज्ञार्णवम् अपर कृतकृत्यता एव लब्धान्तरा नियत सौहार्दात भेत्स्यति ।।२३।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—एक तरफ तो चन्द्रगुप्त ऐसा है जो अपने राजतेज के कारण अन्य समस्त राज गण का एक शासक बन बठा है और दूसरी ओर चाणक्य ऐसा है जो चन्द्रगुप्त को राजा बनाने के कारण गर्वीला हो गया है। जहाँ एक राज्य पा लेने से कृतार्थ हो रहा है वहा दूसरा अपने प्रतिज्ञा सागर के पार कर लेने से कृतकृत्य हो चुका है। अब तो वह समय आ ही पहुँचा है जब इन दोनों को अपनी अपनी कृतकृत्यता एक दूसरे से अलग करके शान्त हो सकेगी। (सभी पात्र रङ्गमञ्च से चले जाते ह)

।। द्वितीय अङ्क समाप्त ।।

On one hand Chandragupta is so that he has become the ruler of all the kings on account of his royal lustre and on the other hand Chanakya is so that he is mad with pride on account of making Chandragupta the emperor Where one is gratified by attaining kingdom the other is blessed by crossing his sea of vow Now the time has come when the gratitude of both will be satisfied by separating them from one another (Exeunt)

संस्कृत व्याख्या—मौर्य चन्द्रगुप्त सर्वभूतलभुजाम आज्ञापकास्सर्वे च ते भूतलभुजश्च तेषा सकलभूपतीना शासनकर्ता स तेजसि वर्तते राजमदपरिपूर्णस्तिष्ठति, यश्चासौ चाणक्य सोऽपि मदाश्रयात् मम साहाय्यादय चन्द्रगुप्त राजाऽभूदिति जातस्मयो जातगर्वो वर्तते अत एवैक चन्द्रगुप्त राज्यप्राप्तिकृतार्थ साम्राज्यप्रतिष्ठितसुखितमपर चाणक्यञ्च तीर्णप्रतिज्ञार्णव पूर्णनन्दविनाशप्रतिज्ञमत एव गर्वित कृतकृत्यता कृतार्थता स्वस्वकार्ये सफलतेति यावत् एव हि लब्धान्तरा उभयोस्स्वार्थसिद्धया प्राप्तावसरा सौहार्दात् परस्पर सौमनस्यात नियत निश्चित यथा स्यात्तथा भेत्स्यति विघटयिष्यतीत्यर्थ । इति राक्षसविचाराख्यो द्वितीयोऽङ्क ।

टिप्पणी

(१) अलङ्कारविशेषा —अलङ्क्रियते एभि इति अलम्√कृ+घञ् करणे+अलङ्कारा, तेषा विशेषा । (२) महार्हाणि—बहुमूल्यानि, बहुमूल्यक । अर्ह्यते पूज्यते इति√अर्ह+घञ कर्मणि अर्ह महान अर्ह एषाम्—बहुत मूल्य के। (३) कुसुमपुराय—कुसुमपुरम् अभिलक्ष्य—पाटलिपुत्र के लिए, क्रियार्थोपपदस्य" नियम से चतुर्थी। (४) भिद्येत—वैमनस्य प्राप्नुयात् इति अथ

√भिद+लिङ ईत कमणि। सम्भावना मे लिङ होगा यहा च द्रगुप्त और चाणक्य मे फूट पड जाने की सम्भावना करके राक्षस आशा बलवती राजन शल्यो जेष्यति पाण्डवान इस याय से च द्रगुप्त की हत्या के प्रति प्रयत्नशील हो जाता है। (५) **समीहितम**—अभिलषितम सम√ईह+क्त भावे पश्यामि का कम है। (६) **सवभूतलभुजाम**—सभी राजाओ का। भूतल भुञ्जन्ति रक्षन्ति इति भूतल√भुज+क्विप कतरि भूतलभुज सर्वे च ते भूतलभुज तेषाम कृद्योगे कमणि षष्ठी। (७) **आज्ञापक**—आज्ञा देने वाला। आ√ज्ञा+णिच पुक आगम+ण्वुल—अक। (८) **कृतकृत्यता**—कृताथता, निरपेक्षता। कृत कृत्यम अनन इति कृतकृत्य तस्य भाव इति कृतकृत्य+तल—टाप। (९) **सौहार्दात**—शोभनम हृदयमस्य इति सुहृत। सुहृदो भाव इति सुहृत+अण हायनान्त युवादिभ्य अण सुहृद युवादि की श्रेणी मे है। इसके पश्चात उभयपदवृद्धि। इस श्लोक मे यथासरय नामक अलकार है और शादूलविक्रीडित छद है। इस प्रकार प्राप्त्याशा अवस्था और पताका अथप्रकृति के बीच की स्थिति रूप गभसधि के बारह अगो का निरूपण हुआ और गभसधि समाप्त हुई।

तृतीयोऽङ्क

(तत प्रविशति कञ्चुकी)

कञ्चुकी—(सनिर्वेदम)

रूपादीन् विषयान् निरूप्य करणैर्यैरात्मलाभस्त्वया
लब्धस्तेष्वपि चक्षुरादिषु हता स्वार्थावबोधक्रिया ।
अङ्गानि प्रसभ त्यजन्ति पटुतामाज्ञाविधेयानि ते
न्यस्त मूर्ध्नि पद तवैव जरया तृष्णे ! मुधा माद्यसि ।।१।।

अन्वय—तृष्णे मुधा माद्यसि आज्ञाविधेयानि ते अङ्गानि प्रसभ पटुता त्यजन्ति । यै करणै रूपादीन विषयान निरूप्य त्वया आत्मलाभो लब्ध तेषु चक्षुरादिषु अपि स्वार्थावबोधक्रिया हता । जरया तव मूर्ध्नि एव पद न्यस्तम ।

हिन्दी अनुवाद—(कञ्चुकी का प्रवेश) कञ्चुकी—(निराशा के साथ)—हे तृष्णे ! तुम व्यर्थ ही प्रसन्न हो रही हो ! तुम्हारी आज्ञा का पालन करने वाली मेरी इन्द्रिया काम करने में असमर्थ हो रही है । जिन इन्द्रियो से उन उन विषयो का आनन्द उठाती हुई तुम पाली पोषी गई उन उन आख आदि कर्मेन्द्रियो में भी अपने विषय का ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति कहा । हे तृष्णे ! इतना ही नहीं बुढापे ने तुम्हारे सिर पर ही पर रख दिया है ।

ACT III

(Then enter the Chamberlain) *Chamberlain* (With despondency)—Oh desire you are in vain being pleased old age has placed its foot on your head itself the limbs that obeyed you are rapidly becoming weak the eyes and the other limbs with which forms and other objects were discriminated have lost the function of perceiving their own objects

सस्कृत व्याख्या—हे तृष्णे ! भोगाभिलाष ! त्व मुधा व्यर्थम माद्यसि यतो हि आज्ञाविधेयानि भवन्नियोगानुष्ठानकराणि प्रसभ हठात द्रुतमित्यर्थ पटुता शक्ति त्यजन्ति जहति भूय भवदाज्ञापालनसामर्थ्यम भृशम त्यजन्तीत्यर्थ य करण मदीय चक्षुरादीन्द्रियै हेतुभूत रूपादीन विषयान निरूप्य अवधार्य त्वया आत्मलाभ लब्ध स्वजन्म गृहीतम तेष्वपि चक्षुरादिषु अपि तत्तद्विषयानुभवशक्तय हता नष्टा एव जरया वृद्धावस्थया तव मूर्ध्नि शिरसि पदम् चरणम न्यस्तम् स्थापितम त्वमेव वार्धक्येनाक्रान्ता मम कस्यापि वस्तुन इच्छा नास्तीति शेष ।

टिप्पणी

(१) **सनिर्वेदम**—निराशा के साथ। निर्वेदेन खेदेन सहित यथा स्यात्तथा इति। निर+विद+घञ=निर्वेद। (२) **करण**—इद्रियो द्वारा। जिनसे किया जाय। क्रियते एभि इति कृ+ल्युट। ज्ञानेद्रिया। (३) **आत्मलाभ**—अपने रूप का लाभ। आत्मन निजरूपस्य लाभ। ईप्सित वस्तु के देखने के बाद ही उस वस्तु के पाने की इच्छा होती हे। इसलिए इच्छा की उत्पत्ति करण अर्थात इद्रियो से होती है। आख ने रूप को देखा तो रूप देखने की इच्छा पदा हो गई। (४) **अङ्गानि**—कर्मेद्रियो से तात्पय है। (५) **प्रसभम**—जबदस्ती तेजी से। प्रसभम त्यजन्ति पटुता—अपनी शक्ति शीघ्रतापूवक खो रही ह। (६) **आज्ञाविधेयानि**—आज्ञाकारी। वि+धा+यत कमणि=विधेयानि। आज्ञाया विधेयानि (षष्ठीतत०)। (७) **मुधा**—व्यथ मे। इस पद्य मे विभावना अलङ्कार तथा शादूलविक्रीडित छन्द है। यहा से राक्षस के अभिलषित चाणक्य और च द्रगुप्त के बीच के विरोध को दिखलाने के लिए विमश सधि का आरम्भ होता है। यह चौथे अक तक जायगा। राक्षस के अ य उपायो के निष्फल हो जाने से केवल मौय कौटिल्य विरोध रूपी उपाय से फल प्राप्ति की निश्चय आशा अर्थात नियताप्ति का और कौमुदी महोत्सव निषेधादि कारणो का वणन ततीय अङ्क मे है। चौथे अङ्क मे राक्षस और दूत के सवाद रूप मे प्रकरी अर्थात प्रयोजन सिद्धि के साधन आदि का वणन दिया है। पहले च द्रगुप्त और चाणक्य के बीच विरोध होने के मुख्य कारण कौमुदी महोत्सव के निषेध का वणन कचुकी के द्वारा कराया गया है। कचुकी पहले अपनी वद्धावस्था पर चिन्ता करता है।

(परिक्रम्याकाशे) भो भो सुगाङ्गप्रासादाधिकृता पुरुषा ! सुगृहीतनामा देवश्चन्द्रगुप्तो व समाज्ञापयति। यथा—'प्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवरमणीयतर कुसुमपुरमवलोकयितुमिच्छामि, तत् सस्क्रियन्तामस्मद्दशनयोग्या सुगाङ्गप्रासादस्योपरिभूमय' इति। तत् किं चिरयन्ति भवन्त ? (आकाशे आकर्ण्य) कि ब्रूथ 'आर्य ! किमविदित एवाय देवस्य चन्द्रगुप्तस्य कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेध' इति ? आ दैवोपहता ! किमनेन व प्राणहरेण कथोदघातेन ? शीघ्रमिदानीम्—

हिंदी अनुवाद—(इधर उधर घूमकर आकाश की ओर) अरे सुगाङ्गप्रासाद के अधिकारियो ! सुनो प्रात स्मरणीय महाराज चन्द्रगुप्त की आज्ञा है कि "कौमुदी महोत्सव के अवसर पर म कुसुमपुर को परमसुशोभित देखना चाहता हूँ। प्रासाद की ऊची ऊची अट्टालिकाओ को ऐसा सजा दो कि देखने योग्य हो जायें।" तब आप लोग देर क्यो कर रहे ह ? (आकाश की ओर देखकर और सुनकर) क्या कहते हो कि महाराज को पता नहीं है कि कौमुदी महोत्सव का मनाया जाना मना कर दिया गया है। अरे भाग्य के मारे हुए ! तुम्हें इस प्राण नाशक बात से क्या। जल्दी करो देखो—

(*Going round the stage and looking at the sky*)—Oh men employed at the Suganga Palace sire Chandragupta of auspicious name orders you thus I want to see Kusumpura more decorated on the eve of Kaumudi festival so let the upper floors of the Suganga Palace be so decorated that they may be worth seeing (*Again in the sky*) Do you say Is the prohibi tion of the Kaumudi festival unknown to the King Ah ! you ill fated fellows what is the use of referring to this subject which may cause instant loss of life

सस्कृत व्याख्या—परिक्रम्य इतस्तत भ्रमण कृत्वा आकाशे गगने दृष्टि दत्त्वाह इति शेष सुगाङ्गप्रासादाधिकृता सुगाङ्गाख्ये गहे अधिकृता नियुक्ता पुरुषा सुगृहीतनामा देव चन्द्रगुप्त व युष्मान समाज्ञापयति आदेश ददाति यथा प्रवृत्त कौमुदीमहोत्सवरमणीयतर प्रवृत्त आरब्ध य कौमुदीमहोत्सव तेन रमणीयतरम अधिकसुन्दरम् कुसुमपुरम अवलोकयितुम द्रष्टुम इच्छामि तत तस्मात कारणात अस्मद्दर्शनयोग्या मदवलोकनयोग्या सुगाङ्गप्रासादस्य उपरिभूमय सस्क्रियन्ताम शोभायुक्ता क्रियन्ताम तत कि चिरयन्ति विलम्ब कुर्वन्ति भवन्त आकाशे आकर्ण्य श्रुत्वा कि ब्रूथ कथयथ यत आय किम अविदित अज्ञात एव देवस्य चन्द्रगुप्तस्य कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेध कौमुदीमहोत्सवनिषध दवोपहता दवेन भाग्येन उपहता नष्टा अनेन प्राणहरेण जीवननाशकेन कथोदघातेन वार्ताकथनेन व किम् न किमपीत्यथ यदा राजा इमा वार्ता श्रोष्यति तदा स युष्माकम प्राणान हरिष्यति अत इदानीम अधुना शीघ्रम द्रुतम।

टिप्पणी

(१) **सुगाङ्गप्रसादाधिकृता पुरुषा**—सुगाङ्गप्रासाद (यह महल का नाम है) मे नियुक्त अधिकारी वग। सुगाङ्गाख्य प्रासाद तत्र अधिकृता। (२) **प्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवरमणीयतरम**—कौमुदी महोत्सव के अवसर पर अधिक

सुसज्जित। यह कार्तिक पूर्णिमा को मनाया जाता था। कौ पथिया मोदते इति कु+मुद+क कत्तरि कुमुदम तस्य इयम इति कौमुदी। कुछ लोग कहते हैं कि यह आश्विन की पूर्णिमा को मनाया जाता था कुछ का कहना है कि यह कार्त्तिक की पूर्णिमा को मनाया जाता था। (३) **कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेध**—कौमुदी महोत्सव का मना हो जाना। प्रति+सिध+घञ=प्रतिषेध। चाणक्य ने कौमुदीमहोत्सव मना कर दिया था। इसी से गाङ्गप्रासाद के लाग कहते ह कि क्या च द्रगुप्त को यह बात नही मालूम है। कौमुदी महोत्सव का निषेध चाणक्य की कूटनीति है। उसने च द्रगुप्त से बनावटी कलह करने की योजना बना रखी है। इससे राक्षस तथा उसके गुप्तचर धोखे मे पडेगे। (४) **दवोपहता**—अभागे लोग। (५) **सद्य प्राणहरेण कथोदघातेन**—प्राण नाशक की इस बात को कहने से क्या लाभ। अर्थात राजा यदि यह बात सुन लेगा तो तुर त तुम्हे प्राणदण्ड होगा। अत ऐसी बाते मत करो।

आलिङ्गन्तु गृहीतधूपसुरभीन् स्तम्भान पिनद्धस्रज
सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचा सच्चामराणा श्रिय।
सिंहाङ्कासनधारणाच्च सुचिर सञ्जातमूर्च्छामिव
क्षिप्र चन्दनवारिणा सकुसुम सेकोऽनुगृह णातु गाम ॥२॥

अ वय—सम्पूर्णे दुमयूखसहतिरुचा सच्चामराणा श्रिय गहीतधूपसुरभीन् पिनद्धस्रज स्तम्भान आलिङ्गन्तु सकुसुम च दनवारिणा सेक सुचिर सिंहाङ्कासनधारणात सञ्जातमूर्च्छामिव गा क्षिप्रम अनुगह णातु च ॥२॥

हि दी अनुवाद—खभो में पूणच द्र की कान्ति वाली मालायें लपेट दी जायँ तथा सुगधित द्रव्य जलाए जाय जिससे प्रासाद सुगधित हो जायँ और पूणच द्र की काति वाले चवर भी लटका दो। इतना ही नहीं फूलो की सुवास से भी च दन जल का छिडकाव ऐसा सवत्र हो जाय जसे सिंह के पजे की भाति पडे राजसिंहासन के बोझ से मूछित यह गाय सदश धरती एक बार होश में आ जाय अर्थात इसे खूब सुगधित करो।

Let the glow of fine chowries which shine like the enmassed beams of the full moon quickly be wrapped with the pillars that are scented on account of being fumigated with myrrh and have garlands attached to them let there be sprinkling of sandal water and supply of flowers so that the ground (floor) which is in a swoon as it were by the long upholding of the seat marked with lions be soothed at once

सस्कृत व्याख्या—सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचा सम्पूर्णेदो पूर्णिमाचद्रस्य या मयूखसहतय सपिण्डिता किरणकान्तय तासा रुगिव रुक कान्ति येषामेव भूताना सच्चामराणा बालयजनाना श्रिय शोभासम्पत्तय गृहीतधूपसुरभीन् धूपितसुरभितशरीरान पिनद्धस्रज पिनद्धा बद्धा स्रज मालिका येषु तान स्तम्भान शीघ्रम आलिङ्गन्तु उपश्लिष्यन्तु चदनवारिणा चन्दनजलेन सकुसुम-सेक पुष्पपरिमिलितेन सेक सुचिरम दीघकालात सिंहाङ्कासनधारणात सिंह अङ्क चिह्न यस्य तच्च तदासनम च तस्य भारवहनात सञ्जातमूर्च्छामिव सञ्जाता समुत्पन्ना मूर्च्छा वकल्य यस्या तादशीम गा पाटलिपुत्रभुव काचिद सिंहक्रोडीकृताम धेनुमिव विगतसज्ञा क्षिप्रम सत्वरम अनुगह णातु सभावयतु इति प्रसादभूमय राजमागरथ्यावीथिभूमयश्च जलसेकेन सुमृष्टा नपसञ्चारयोग्या भवन्तु इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **गहीतधूपसुरभीन**—धूपो के सेवन से सुवासित। गहीता ये धूपा तै सुरभीन। यह स्तम्भान का विशेषण है। (२) **पिनद्धस्रज**—बधी हुई मालाओ वाले, मालायें जिसमे बँधी ह। पिनद्धा स्रज येषु ते तान। अपि+नह+क्त=अपिनद्ध वा पिनद्ध वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसगयो । आपञ्चव हलताना यथा वाचा निशा दिशा ॥' इति कारिकया विकल्पेन अपे अकारलोप । (३) **सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचाम**—पूरे चद्रमा की किरण-समूह के समान चमक वाले। यह सच्चामराणा का विशेषण है। सम्पूण य इदु तस्य ये मयूखा तेषा या सहति इति सम्पूर्णेदुमयूखसहति तस्या रुक इव रुक येषा तादृशानाम सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचाम । (४) **सिंहाङ्कासनधारणात**—सिहासन के धारण करने से। गाय के पक्ष मे सिंह की गोद रूप आसन पर धारण किए जाने से। (५) **गाम**—पृथ्वी, गाय। जिस प्रकार सिंह की गोद मे पडी हुई गाय मूर्च्छित हो जाती है तो उसे पानी का छीटा देकर होश मे लाने का प्रयत्न किया जाता है उसी प्रकार सिंहासन के बोझ को धारण करने से पाटलिपुत्र की धरती बेहोश सी हो गई है इससे उसे फूलयुक्त चन्दन जल से सीचा जाय ताकि उसे होश आ जाय।

पूर्वाध मे पूर्णेदु की किरणो के चामर के साथ साम्य से समासोक्ति अलङ्कार हुआ। सिंह के वश मे हुई गाय से श्लेष और मूर्च्छा की सम्भावना से उत्प्रेक्षालकार है। छन्द शादूलविक्रीडित है।

(आकाशे) कि कथयन्ति भवन्त 'एते त्वरामह' इति । भद्रा ! त्वरध्वम्, अयमागत एव देवश्चन्द्रगुप्त । य एष ,—

सुविश्रब्धैरङ्गै पथिषु विषमेष्वप्यचलता
चिर धुर्येणोढा गुरुरपि भुवो याऽस्य गुरुणा ।
धुर तामेवोच्चैनववयसि वोढु व्यवसितो
मनस्वी दम्यत्वात् स्खलति न च दु ख वहति च ।।३।।

अन्वय—विषमेषु अपि पथिषु अचलता धुर्येण अस्य गुरुणा सुविश्रब्ध अङ्ग भुव गुरु अपि या चिरम ऊढा तामेव उच्च धुर नववयसि वोढु व्यवसित मनस्वी दम्यत्वात दु ख वहति च न स्खलति च ।।३।।

हिन्दी अनुवाद—(आकाश में) क्या आप लोग यह कह रहे ह कि 'हम लोग जल्दी कर रहे ह। भद्र पुरुषो ? जल्दी करो जल्दी करो। लो यह महाराज चन्द्रगुप्त आ गए ह जो कि—

विषम परिस्थितियो में भी विचलित न होने वाले तथा भार उठाने में समथ इनके पिता ने अपने विश्वासपात्र मन्त्रियो की सहायता से जिस कठिन राज्यभार को धारण किया, उसी भारी बोझ को नई अवस्था में वहन करने के लिए उद्यत मनस्वी चन्द्रगुप्त अनुभव न होने के कारण दु खो को सह रहा है किन्तु गिरता (डिगता नहीं)। भाव यह है कि अभी चन्द्रगुप्त को राज्य करने का अनुभव नही है। उसकी नई जवानी है। कभी कभी त्रुटिया भी हो जाती ह पर वह मनस्वी उस भार को वहन करने के लिए उद्यत है और डिगता नहीं।

(In the sky) Do you say that we are making haste Gentlemen make haste Sire Chandragupta has indeed arrived He it is who—In his attempt to bear in young age the very same heavy burden of the earth which though heavy was borne by his father with the help of well trusted ministers bears it with difficulty due to inexperience yet does not falter for he is a man of strong will

सस्कृत व्याख्या—विषमेषु अपि पथिषु उन्नतावनतेषु अपि मागसक्रमेषु इव अचलता अनिष्क्रम्यगतिना अतएव धुर्येण धूवहनसमर्थेन धुग्धरेण अस्य चन्द्रगुप्तस्य गुरुणा तातेन महाराजनन्देन सुविस्रब्ध अङ्ग विश्वसनीयै शरीरावयव राज्यतन्त्रावयव मन्त्रिभिरित्यथ भुव पथिव्या गुरु अपि दु शक्यवहनापि धू चिरम् बहुकालपयन्तम ऊढा धता तामेव उच्च धुरम भारम वोढुम धारयितुम नववयसि तारुण्ये एव वयसि उद्यत मनस्वी महासाहसिक दम्यत्वात भारवहनाऽनभ्यस्त-

त्वादेव न तु न्यूनबलप्रकषत्वात दु ख वहति क्लेश प्राप्नोति न स्खलति च भ्रश्यति न। बालत्वादय राज्यरक्षा कमणि क्लिश्यते सत्य किन्तु महोत्साहतया किञ्चिदपि नासौ हीयते इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **सुविस्र ध**—विश्वासपात्र, वि+स्रम्भ+क्त। अतिशयेन विस्र धा इति। यह अङ्ग का विशेषण है बलशाली। (२) **अङ्ग**—राज्यकाय चलाने के लिए आवश्यक अङ्ग—स्वामी, अमात्य सुहृत कोष राष्ट्र दुग बल'। बल पक्ष मे शरीर। न द राज्य का कायभार इसलिए वहन कर सका कि उसके उपरोक्त अङ्ग प्रबल थे। (३) **पथिषु**—माग मे अर्थात काम करने के माग मे। (४) **विषमेषु**—कठिन, ऊँचा नीचा। विभिन्ना समेभ्य इति विषमा (सुप्सुपा स०) तेषु। (५) **धुर्येण**—धुरा धारण करने वाले से। धुरि साधुता वहति वा इति धुर+यत तेन धुर्येण। राज्य का भार धारण करने मे अभ्यस्त। वषभ पक्ष मे भार वहन करने वाला। (६) **गुरुणा**—पिता से न द के वास्ते यह शब्द आया है। (७) **नववयसि**—नई उम्र (जवानी मे) भाव यह है कि अभी च द्रगुप्त को राज्य करने का अनुभव नही है। (८) **्यवसित**—उद्यत तैयार। वि+अव+सो+क्त। (९) **मनस्वी**—महामना उत्साही। प्रशस्त मन अस्य इति मनस+विनि। (१०) **दम्यत्वात**—शिक्षा समाप्त न होने के कारण। च द्रगुप्त को दम्य इसलिए कहा गया कि अभी राजकाय सचालन मे उसकी शिक्षा पूण नही हुई थी। बल पक्ष मे—नौजवान होने के कारण। च द्रगुप्त को अनुभव न होन से कभी-कभी दु ख होता था पर वह मनस्वी होने के कारण डिगता नही था। कायभार को वहन करने का प्रयत्न करता था। हेतौ पञ्चमी है। दम्+यत कमणि=दम्य। तस्य भाव इति दम्य+त्व तस्मात्। हेतौ पञ्चमी। (११) **स्खलति**—गलती करता है। बैल पक्ष मे—इधर उधर लडखडाता नही।

यह श्लोक दो अथ वाला है। च द्रगुप्त की तुलना एक बलवान बल से की गई है। बलवान बल जसे अपने मजबूत अङ्गो से बोझ को धारण करता है और विषम (ऊची-नीची) जगहो मे भी नही गिरता। उसी प्रकार च द्रगुप्त राज्य काय को सभाल रहा है और विषम (कठिन) परिस्थितियो मे भी घबडाता नही क्योकि वह मनस्वी है।

यहाँ पर भारी राज्यभार वहन मे क्लेश आदि का होना नही होता। इसलिए यतिरेकालकार हुआ। दढगात्र के कारण दुगम मागरूपी राज्यभार वहन के लिए प्रस्तुत युवा चद्रगुप्त का अप्रस्तुत नववषभ के साथ साम्य है इसलिए समासोक्ति अलङ्कार है। शिखरिणी छद है।

(नेपथ्ये) इत इतो देव ।

(तत प्रविशति राजा प्रतीहारी च)

राजा—(स्वगतम) राज्य हि नाम राजधर्मानुवृत्तिपरस्य नृपतेमहदप्रीतिस्थानम् । कुत —

परार्थानुष्ठाने रहयति नृप स्वार्थपरता
परित्यक्तस्वार्थो नियतमयथाथ क्षितिपति ।
पराथश्चेत् स्वार्थादभिमततरो हन्त परवान्
परायत्त प्रीते कथमिव रस वेत्ति पुरुष ।।४।।

अन्वय—परार्थानुष्ठाने स्वाथपरता नृपं रहयति। परित्यक्तस्वाथ क्षितिपति नियतम अयथाथ । पराथ स्वार्थात अभिमततरश्चेत हन्त परवान। परायत्त पुरुष प्रीते रस कथमिव वेत्ति ।।४।।

हिदी अनुवाद—(नेपथ्य में) इधर आवें महाराज!

(प्रतीहारी के साथ महाराज चद्रगुप्त का प्रवेश)

राजा—(स्वगत) राजा तो कभी भी स्वतन्त्र नहीं। राज्यधम का पालन उसे परतत्र बनाए है। यह राज्य भी कसी दु खद वस्तु है। राजा यदि प्रजा के स्वार्थों को सिद्ध करता है तो स्वाथपरता उसे त्याग देती है। (अर्थात वह अपने स्वाथ से वञ्चित रह जाता है।) वह राजा ही क्या जो अपने स्वाथ से ही सवथा विमुख रहकर नाम का ही राजा कहलाता रहे। यदि दूसरे का हित अपने हित से अधिक वाछनीय है तो दु ख की बात है कि (वह राजा) पराधीन है। और भला जो पराधीन है उसे कौन-सा सुख कौन-सा आनद।

(*In the dressing room*) This way Maharaj this way (*Then enter the king and the warder*)

King (*to himself*)—A kingdom is indeed a great source of trouble to the king who is always engaged in doing good to the people If the king looks after the interest of other self interest forsakes him He is verily not a king in the real sense if self interest leaves him If others interest is preferable to self interest then alas he (the king) is not independent How can a man, controlled by another enjoy pleasure

सस्कृत व्याख्या—परार्थानुष्ठाने स्व्यतिरिक्तस्य अमात्यजनपदादिप्रकृति वगस्य ये अर्था अभिलषितानि कार्याणि तेषा सम्पादने क्रियमाणे स्वाथपरता स्वाभिलषितसिद्धि नपम् राजानम रहयति परित्यजति। परकाय्यकरणेन राज्ञ स्वकायनाश इत्यथ। परित्यक्तस्वाथ परित्यक्त उत्सष्ट स्वार्थ येन तादृश क्षितिपति राजा नियतम् अयथाथ नास्त्येव सत्यभूत राजेति। पराथ पर प्रयोजनम स्वार्थात आत्मप्रयोजनात अभिमततर ईप्सिततर अर्थात यदि पराथ एव कत्त यबुद्धया साधनीय हन्त यो वा नपस्स तु परवान परवश पराधीन एव न स्ववश स्वतत्रो वा परायत्त पराधीन पुरुष प्रीते सुखस्य रसम स्वादम् कथमिव केन वा प्रकारेण वेत्ति जानाति अर्थात न केनापि।

टिप्पणी

(१) **परार्थानुष्ठाने**—दूसरो का काम साधने मे। (२) **रहयति**—त्यजति—त्याग देती है। यदि राजा दूसरे का स्वाथ साधन करता है तो उसका स्वाथ नष्ट होता है। (३) **परित्यक्तस्वाथ**—जो राजा अपनी स्वाथसिद्धि का परित्याग कर देता है। परित्यक्त स्वाथ येन स (ब० व्री०)। (४) **अय थाथ**—सुखभिलाषी सासारिक यक्ति राजा होने की कामना करते हैं। उनकी दष्टि मे राजा का अथ है—सुख भोग करन वाला यक्ति। किन्तु कतव्यपरायण राजा के जीवन मे सुख कहा वह प्रजा के सुख के लिए ही सदा खिन्न रहता है। अत उपयुक्त अथ मे वह वास्तविक राजा नही है। (५) **परवान**—पराधीन। (६) **परायत्त**—दूसरे के अधीन। परस्य आयत्त इति परायत्त। इस श्लोक मे काव्यलिग अलकार तथा शिखरिणी छद है।

अपि च, दुराराध्या हि राजलक्ष्मीरात्मवद्भिरपि राजभि। कुत ?—

तीक्ष्णादुद्विजते मृदौ परिभवत्रासान्न सन्तिष्ठते
मूर्खान द्वेष्टि न गच्छति प्रणयितामत्यन्तविद्वत्स्वपि।
शूरेभ्योऽप्यधिक बिभेत्युपहसत्येकान्तभीरूनहो
श्रीर्लब्धप्रसरेव वेशवनिता दु खोपचर्या भृशम् ॥५॥

अन्वय—तीक्ष्णात् उद्विजते परिभवत्रासात् मृदौ न सन्तिष्ठते, मूर्खान् द्वेष्टि, अत्यन्तविद्वत्स्वपि प्रणयिता न गच्छति, एकान्तभीरून् उपहसति, शूरेभ्यो

ऽपि अधिक बिभति। अहो ल ध्प्रसरा वेशवनिता इव श्री भशम् दु खोपचर्या (भवति) ॥५॥

हिंदी अनुवाद—और भी चाहे कसे भी अपने को सभाल कर रहे, राज्य लक्ष्मी को प्रसन्न रखना राजा के लिए असभव है। क्यो न हो ? राज्यलक्ष्मी उग्रस्वभाव वाले से उद्विग्न हो जाती है और मदु स्वभाव वालो के पास अपमानित होने के भय से नही ठहरती, वह मूख से द्वेष करती है और अधिक विद्वान से भी वह प्रेम नहीं करती, जो अत्य त डरपोक ह उनका वह मजाक करती है और अति शूरवीर से डरती है। आश्चय है कि आधिपत्य को प्राप्त वेश्या की तरह लक्ष्मी अत्यन्त कष्ट से सेवा के योग्य होती है।

Moreover Royal Fortune is difficult to serve even by kings who have command over self She suffers anxiety from the stern she does not live with the mild because she apprehends insult She dislikes the fool she does not like to be friend those who are highly educated she ridicules the timid and is afraid of the mighty ones Fortune like a public woman that has gained sway (over one) is very difficult to please

सस्कृत व्याख्या—तीक्ष्णात उग्रात वा राज्ञ उद्विजते उद्विग्ना भवति परिभवत्रासात परिभवात अवमानात य त्रास भय तस्मात परिभवत्रासात् मदौ विगततक्ष्ण्ये न सन्तिष्ठते न स्थिलिमात्मन करोति मूर्खात अविवेकिन भूपालान द्वेष्टि न कामयते अत्य तविद्वत्स्वपि महाविवेकिषु अपि राजसु प्रणयिता न गच्छति निकाममनुरक्ता न भवति शूरेभ्योऽपि नृपेभ्य अधिक बिभेति भश त्रस्यति एकान्तभीरून सदव ये भीरव भीता तान उपहसति तिरस्करोति अहो महदाश्चयम् श्री राजलक्ष्मील धप्रसरा अस्मद्वशीकरणेन प्राप्तप्रागलभ्या वेश वनिता वाराङ्गना इव भृशम नितातम दु खोपचर्या क्लेशेन सेव्या दुराराध्या वा।

टिप्पणी

(१) **दुराराध्या**—दु ख से (कठिनाई से) प्रसन्न होने वाली। आ+राध्+णिच+यत्=आराध्या। दु खेन आराध्या दुराराध्या (प्रादिस०)। (२) **आत्मवद्भि**—दृढ चित्त तथा चरित्र वाले। (३) **तीक्ष्णात**—कठोर से (४) **सन्तिष्ठते**—रुकती है ठहरती। समवप्रविभ्य स्थ स्था धातु के साथ यदि सम्, अव प्र उपसग हो तो उसका आत्मने पद मे रूप हो जाता है। सन्तिष्ठते प्रतिष्ठिते, अवतिष्ठते। (५) **एकान्तभीरून**—अति डरपोक। एक अ त स्वरूप यस्मिन् तत यथा तथा भीरव (सुप्सुपा समास), तान। (६) **लब्धप्रसरा**—अधिकार प्राप्त किए हुए। प्र+सृ+अप् भावे=प्रसर। ल ध

प्रसरो यया। (७) वेशवनिता—वेश्या। इस श्लोक मे काव्यलिग एव उपमा अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अन्यच्च, कृतककलह कृत्वा स्वतन्त्रेण त्वया कञ्चित् काल व्यवहर्तव्यमित्यार्योपदेश । स च कथमपि मया पातकमिवाभ्युपगत । अथवा शश्वदार्योपदेशसस्क्रियमाणमतय सदैव स्वतन्त्रा वयम् । कुत ?—

हिन्दी अनुवाद—और भी आर्य चाणक्य का उपदेश है कि ऊपरी (नकली) झगडा करके तुम कुछ समय तक अपने मन की करना। उस उपदेश को मने किसी प्रकार पातक के समान स्वीकार किया। अथवा आर्य के उपदेश से सदा शुद्ध बुद्धिवाले हम लोग स्वतत्र ही ह।

Moreover the command of the precepter is that for some time I have to manage affairs independently after making an artificial quarrel with him This I have accepted unwillingly like sin Or we are always independent being guided by the preceptor s instruction

इह हि रचयन् साध्वीं शिष्य क्रिया न निवार्यते
त्यजति तु यदा मार्गं मोहात् तदा गुरुरङ्कुश ।
विनयरुचयस्तस्मात् सन्त सदैव निरङ्कुशा
परतरमत स्वातन्त्र्येभ्यो वय हि पराङमुखा ।।८।।

अन्वय—इह हि शिष्य साध्वी क्रिया रचयन न निवार्यते, यदा तु मोहात (स) माग त्यजति तदा गुरु अङ्कुश । तस्मात विनयरुचय सन्त सदैव निरङ्कुशा । अत स्वातन्त्र्येभ्य वय परतर हि पराङ्मुखा ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—अच्छे काय को करने वाले शिष्य को गुरु रोकता नहीं अर्थात जब तक शिष्य अच्छा काय करता है गुरु उसे नहीं रोकता पर जब वह अज्ञानता के कारण कुमाग पर चलने लगता है तो गुरु अकुशरूपी वचन से उसे निवारण करता है। इसलिए विनय में रुचि रखने वाले सज्जन सदा स्वतत्र ही ह। अत स्वेच्छाचारो से हम सदा पराङ्मुख ह।

Here (in this world) a pupil is not checked from doing good work but if through ignorance he quits the right path the teacher is a check for him Hence the good with a liking for discipline are always unrestrained Therefore we are averse to an independence other than this

सस्कृत याख्या—इह अस्मिन् जगति शिष्य साध्वीम क्रियाम विरचयन् अनिन्द्य कम कुवन न निवार्यते न निषिध्यते यदा तु मोहात माग त्यजति मतिभ्रशात कुमार्गेण गच्छति तदा गुरुरङ्कुश तत तस्य निवारयिता भवति तस्मादेव भूताद गुरुस्वाभाव्याद विनयरुचय गुरुकृतशिक्षणे बद्धश्रद्धा सन्त सदाचारा शिष्या इति शेष सदव निरङ्कुशा सवदा एव स्वतत्रा न दण्डभागिन गुरूणा भवन्ति अर्थात सदाचारमनतिक्रान्ता कदापि न निवायन्ते अत अस्मादेव कारणात वयम स्वातत्र्येभ्य स्वच्छन्दानुवतनेभ्य परतरम हि नितान्तमेव पराङमुखा वितष्णा । यादश स्वातत्र्यम सदाचाररता सन्त नित्य हि लभन्ते तादशमेव प्राथयामहे नाधिक कञ्चितकालमपि इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **कृतककलहम**—बनावटी झगडा । च द्रगुप्त और चाणक्य का झगडा दिखावटी था। यह राक्षस को धोखा देने के लिए किया गया था। कृत एव कृतक तादश कलह (कम० स०)। (२) **आर्य्योपदेशसस्क्रियमाणमतय**—गुरु के उपदेश से जिनकी बुद्धि शुद्ध कर दी जाती है। आयस्योपदेशेन सस्क्रियमाणा मति येषा ते आर्योपदेशसस्क्रियमाणमतय । (३) **साध्वीं क्रिया रचयन**—अच्छा काम करता हुआ। (४) **विनयरुचय**—विनय (शिक्षा) मे रुचि रखने वाले। च द्रगुप्त के कहने का भाव यह है अगर शिष्य अच्छा काम करता है तो गुरु मना नही करेगा और यदि वह बुरा काय करेगा तो गुरु निवारण करेगा। इसलिए जो शिक्षा चाहने वाले लोग ह वे हमेशा इस माने मे स्वतत्र ह कि अच्छा काम करे। (५) **स्वातत्र्येभ्य पराङमुखा**—स्वतत्रता से विमुख। दूसरे प्रकार की स्वतत्रता हम लोग नही चाहते। इस श्लोक मे परिणाम अलकार तथा हरिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—नसमरसलाग षडवेदैहयहरिणी मता'।

(प्रकाशम्) आर्य वैहीनरे' सुगाङ्गप्रासादमार्गमादेशय ।

कञ्चुकी—इत इतो देव ।

राजा—(परिक्रामति ।)

कञ्चुकी—(परिक्रम्य) अय सुगाङ्गप्रासाद । शनैरारोढुमर्हत्यार्य ।

राजा—(नाट्येनारुह्य दिशोऽवलोक्य) अहो ! शरत्सम-यसम्भृतशोभाविभूतीना दिशामतिरमणीयता ! ! कुत ?—

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) आय वहीनरि, सुगाङ्ग भवन का रास्ता बताओ।
कञ्चुकी—इधर से, महाराज इधर से।
राजा—(घूमता है)।
कञ्चुकी—(घूमकर) यह सुगाङ्गप्रासाद है। आप धीरे धीरे चढें।
राजा—(चढने का अभिनय करके और दिशाओ को देखकर) ओह ! जिधर देखता हूँ उधर ही शरद काल की शोभा छाई दिखाई दे रही है।

(*Aloud*) Noble Vaihinari show me the way to the Suganga Palace

Chamberlain—This way sire this way (*Acting going round*) This is the Suganga Palace Let your honour ascend slowly

King (*Acting ascending and seeing the quarters*)—Oh how beautiful are the quarters with the beauty of the autumnal season mixed with their beauty

शनै शान्ता भूता सितजलधरच्छेदपुलिना
समन्तादाकीर्णा कलविरुतिभि सारसकुलै ।
चिताश्चित्राकारैर्निशि विकचनक्षत्रकुमुदै-
र्नभस्त स्यन्दन्ते सरित इव दीर्घा दश दिश ॥७॥

अन्वय—शन शान्ता भूता सितजलधरच्छेदपुलिना कलविरुतिभि सारस कुलै समन्तात आकीर्णा दश दिश चित्राकार विकचनक्षत्रकुमुद चिता (सत्य) दीर्घा सरित इव नभस्त स्यन्दन्ते ॥७॥

हिन्दी अनुवाद—धीरे धीरे निमल होते हुए श्वेत मेघ-खण्ड रूपी सिकतामय तटो से युक्त मधुर तथा अव्यक्त ध्वनि करने वाले सारसो से परिव्याप्त और रात्रि के सयोग से विचित्र शोभा देने वाले नक्षत्ररूपी विकसित कुमुदो से अलकृत सुदीघ दसो दिशायें आकाश से नदी के समान प्रवाहित होती ह। भाव यह है कि शरत्काल की बडी-बडी नदिया दिशाओ की भाति मालूम पड रही ह और दसो दिशायें नदियो की भाति लग रही ह। एक ओर तो मधुर स्वर करते हुए सारसो की पक्तियो से भरे हुए बालुकापुञ्ज ऐसे शान्त ह मानो सफेद मेघ खण्ड हों। दूसरी ओर धवल मेघो के टुकडे ऐसे नीरव दिखाई दे रहे ह जसे नदी पुलिन हो। रग बिरगे कुमुदों से भरी हुई नदियाँ एसी मालूम पड रही ह मानो रग बिरगे तारों से भरी हुई दिशायें हो। दूसरी ओर आकाश की ये दिशायें ऐसी लग रही हैं मानों चित्र विचित्र कुमुदो से भरी नदियाँ हों। दिशाए नदी के समान और

नदी दिशाओं के समान होने से पारस्परिक उपमानोपमेय हुआ। इसलिए उपमानो पमालंकार है। पर कुछ लोगों का मत है कि यह उपमा अलंकार ही है।

Gradually becoming dry and being crowded all round with flocks of herons with a sweet cackle and being strewn at night with pretty lily like stars uncovered the ten quarters extend from the summit of the sky like so many great rivers and the masses of white clouds seem like sand banks

संस्कृत व्याख्या—शनैः क्रमेण शाताः भूताः वर्षणमुक्ताः सितजलच्छेद-पुलिनाः सिताः शुभ्राः जलधरच्छदा पुलिनानीव सकतानीव यासां ताः धवल-जलदखण्डदन्तुराः कलविरुतिभिः अव्यक्तमधुरध्वनिभिः सारसकुलैः समन्तात् सर्वतः आकीर्णाः व्याप्ताः शब्दायमाना वा निशि रात्रौ चित्राकारम् अद्भुत दर्शनं विकचनक्षत्रकुमुदैः विकचानि ज्योतिर्मयानि नक्षत्राणि कुमुदानीव तैः प्रफुल्लकुमुदसदृशनक्षत्रैः चिता आकुला समाकीर्णाः सत्यः दीर्घाः आयताः सरितः इव नद्यः इव नभस्तः आकाशात् स्यन्दन्ते प्रसरन्ति।

टिप्पणी

(१) **वैहीनरे**—विहीनो नरः कामभोगाभ्याम् इति विहीनरः पृषोदरादित्वात् नलोपः। विहीनरस्य अपत्यं वैहीनरिः विहीनर+इञ् तत्सम्बोधने वैहीनरे इति। यह कञ्चुकी का नाम है। (२) **शरत्समयसम्भृतशोभानाम्**—शरद समय के कारण बढ़ी हुई शोभा के ऐश्वर्य से युक्त। यह दिशाम् का विशेषण है। शरदेव समयः तेन सम्भृता उपचिता शोभा यासाम् ताः तासाम्। (३) **सितजल धरच्छेदपुलिना**—बालुकामय तट के समान उज्ज्वल मेघ-खंडों से युक्त। जलानां धरा जलधराः तेषां छेदाः जलधरच्छेदाः सिताः जलधरच्छेदाः ते पुलिनानि इव इति सितजलधरच्छेदपुलिनानि तानि सन्ति आसाम् इति सितजलधरच्छेदपुलिन +अच् मत्वर्थे। यह दिशः का विशेषण है। (४) **आकीर्णा**—व्याप्त। आ+कॄ+क्त। (५) **विकचनक्षत्रकुमुद**—विगताः कचाः एषाम् इति विकचानि (जिनके बाल नहीं हैं अर्थात् बादल के पर्दे से रहित) तादृशानि नक्षत्राणि तानि कुमुदानि इव तैः। नक्षत्र ही कुमुद के समान। (६) **नभस्तः**—आकाश से। (७) **स्यन्दन्ते**—निकलती हैं प्रवाहित हो रही हैं। इसमें उपमेयोपमा अलंकार है। शिखरिणी छन्द है। पर कुछ लोग इसमें उपमा ही अलंकार मानते हैं।

अपामुद्वृत्तानां निजमुपदिशन्त्या स्थितिपदं
दधत्या शालीनामवनतिमुदारे सति फले।

मयूराणामुग्र विषमिव हरन्त्या मदमहो
कृत कृत्स्नस्याय विनय इव लोकस्य शरदा ।।८।।

अन्वय—अहो ! उद्वृत्तानाम् अपा निज स्थितिपदम उपदिशन्त्या शालीना फले उदारे सति अवनर्ति दधत्या मयूराणा विषमिव उग्र मद हरन्त्या शरदा कृत्स्नस्य लोकस्य अय विनय कृत इव ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—आश्चय है कि किनारो को तोड कर बहने वाले जलो को स्वाभाविक स्थान का ज्ञान कराती हुई, फल लगने पर (पक जाने पर) धानों को नम्र बनाती हुई और मोरो के तीक्ष्ण विष के समान मद को हरती हुई मानो शरद ने सारे ससार को इस विनय की शिक्षा दी है।

भाव यह है कि शरद ऋतु को एक शिक्षक के समान माना है जो सारे ससार को नम्रता का भाव सिखा रही है। वर्षा में नदिया उमड कर बहती हैं पर शरद में उनका जल कम हो जाता है, और बाढ़ समाप्त हो जाती है। इससे यह बताया कि मनमानी करने वाली प्रजा को मर्यादा में रहना सिखा रही है। एक तरफ भरपूर पके धानो के गुच्छो से लदे हुए धान के खेत धरती पर ऐसे झुके बना दिए गए ह जसे मनोवाछित धन-सम्पदा को पाकर प्रजा राजा के सामने झुकने को बाध्य कर दी जाती है। चारो ओर मयूरों की केका ध्वनि का मद इस प्रकार चूर किया जा रहा है जसे प्रजाओ में राज विद्रोह का भयङ्कर विष शान्त किया जाता है।

O it seems as if the autumn is teaching modesty or manners to the whole world by pointing out their natural place and location to waters that had overflown the banks (of rivers) by making the paddies stoop when the crop becomes mature by removing the turbulence of peacoks unbearable like poison

सस्कृत व्याख्या—उदवत्ताना वषतौ जलप्लावेन स्वप्रवाहपथमुत्सज्य यत्र् कुत्रचित् सवत्र वा प्रवत्तानाम उन्मागगामिनाम अपा जलसम्पदा नन्दानुरक्ताना प्रजानामिति ध्वनि निज स्वाभाविक स्थितिपद प्रवाहस्थान मर्यादामितिध्वनि उपदिशन्त्या बोधयन्त्या शालीना धान्यविशेषाणाम फले प्रसवे उदारे परिणते सति अथवा सस्यादौ फले प्रभूते सजाते अवनर्ति नम्रता दधत्या धारयन्त्या मयूराणाम बर्हिणा प्रतिपक्षिवर्त्तिना विशिष्टपुरुषाणामितिध्वनि विषमिव गरलमिव उग्रम तीक्ष्णम मद गव हरन्त्या दूरीकुवन्त्या अनया शरदा कृत्स्नस्य सम्पूणस्य लोकस्य चराचरस्य जगत प्रकृतिवर्गस्येति ध्वनि अयम एष विनय उपदेश कृत इव विहित इव।

टिप्पणी

(१) उदवत्तानाम—किनारो को काटकर बहने वाले। अपा का विशेषण है। उद–वत्त+क्त। वर्षा मे नदी नाले उमड पडते है पर शरद् मे सब शान्त हो जाते ह। इससे यह उत्प्रेक्षा की है कि शरद सब को नम्रता सिखाती है। उद+वत+क्त कतरि=उदवत्ता। उत्क्रान्ता वत्तम इति उदवत्ता अत्यादय क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया इत्यनेन प्रादिसमास। (२) उपदिशन्त्या—उपदेश देती हुई। उप–दिश+शत–डीप (३) स्थितिपदम—स्वाभाविक स्थान मर्यादा। (४) मयूराणाम मदम—वर्षा मे मोर खूब नाचते ह शोर करते ह पर शरद मे वे शान्त रहते ह इस प्रकार शरद मानो नम्रता की शिक्षा दे रही है। इसी प्रकार धान के पौधे भी फलभार से झुक जाते ह वे भी विनीत होने की शिक्षा दे रहे ह। यहा तीन बातो की ओर सकेत किया गया है—(१) अत्यन्त उच्छृङ्खल मलयकेतु का भावी निग्रह। (२) राक्षस के विष के समान अत्यन्त उग्र पराक्रम और नीतिविषयक गव का अपहरण। (३) साम्राज्य रूपी फल को प्राप्त करने वाले अत्यन्त उन्नतिशील च द्रगुप्त की विनय सम्पत्ति। इसमे शिखरिणी छ द है। पूर्णोपमा और उत्प्रेक्षालकार का योग है।

अपि च—भर्तुस्तथा कलुषिता बहुवल्लभस्य
मार्गे कथञ्चिदवताय तनूभवन्तीम्।
सर्वात्मना रतिकथाचतुरेव दूती
गङ्गा शरन्नयति सिन्धुपतिं प्रसन्नाम्॥६॥

अ वय—तथा कलुषिता तनूभवन्ती सर्वात्मना प्रसन्ना गङ्गा रतिकथा-चतुरा दूती इव शरत बहुवल्लभस्य भतुर्मार्गे कथञ्चित अवताय सि धुपतिं नयति॥६॥

हिन्दी अनुवाद—प्रेम की कथाओ में दक्ष दूती जिस प्रकार खडिता नायिका को बहुपत्नीक स्वामी के पास जाने के माग पर उपस्थित कर उसे प्रसन्नचित्त कर स्वामी से मिलाती है। उसी प्रकार शरद ऋतु कृशसलिला गगा को सागरा भिमुखी कर और उसको निमलता तथा कृशता द्वारा प्रसन्न कर समुद्र से मिलाती है। गगा की उपमा एक खीझी हुई नायिका से दी गई है और शरद ऋतु की उपमा एक दूती से दी गई है जो प्रेम कथा कहने में दक्ष हो। नायिका को जसे दूती उसके अनेक पत्नीवाले स्वामी से मिलाती है उसी प्रकार शरद्

ऋतु गगा का जल निमल कर उसे समुद्र से, जिसकी पत्निया नदिया है, मिलाती ह। इसमें अथश्लेषानुप्राणित पूर्णोपमालकार है।

The autumn like a female messenger clever at talking of love leads Ganga clear all over to the sea who is the lord of streams Ganga who is somehow brought down and is now becoming thin is like a lady who is angry with her many wived husband

सस्कृत व्याख्या—नथा तेन प्रकारेण कलुषिताम तनूभवन्तीम सर्वात्मना प्रसनाम इमा गङ्गामपि रतिकथाचतुरा प्रियवार्तानिवेदननिपुणा दूती इव बहु वल्लभस्य अनकसरिदभायस्य भतु सरिताम्पते समुद्रस्य मार्गे कथञ्चित तत प्रापणपथे अवताय नीत्वा सि धुपतिं सागर नयति प्रापयति। प्रावषि सवत प्रधाविता गङ्गा अधुना शरदि निजप्रवाहाणामचितेन मार्गेण वहति इति भाव । नायिका पक्षे बहुवल्लभस्य भतु कलुषिता मनोमालि यवतीम अतएव तनूभवन्तीम अल्पीभवन्तीम अनुपसपणात दष्टेरविषयीभवन्तीम गङ्गामपि नायिका कथचित मार्गे अवताय उ मागगमनात रक्षित्वा रतिकथाचतुरा दूतीव शरत सर्वात्मना साकल्येन प्रसन्नाम इमाम अकलुषा सि धुनायक पति नयति।

टिप्पणी

(१) **कलुषिताम**—वर्षा मे कीचड की अधिकता से ग दी (गगा) पति का अनेक पत्नियो से प्रम करने के कारण ईर्ष्यालु (नायिका)। (२) **तनूभव तीम**—वर्षा बीतने पर पतली या क्षीण धारावाली (गङ्गा) दुवली पतली (नायिका)। अतनु तनु भवन्ती इति तनु+च्वि दीघ—भू+शत (स्त्रियाम) ङीप। (३) **रतिकथाचतुरा दूती**—प्रमवार्ता कहने मे चतुर दूती (के समान शरद) जैसे चतुर दूती रुष्ट नायिका को पति से मिला देती है उसा प्रकार शरद गङ्गा को निमल कर समुद्र मे मिलाती है। (४) **अवताय्य**—उतार कर ले जाकर। अव+त+णिच+ल्यप। (५) **सि धुपतिम**—समुद्ररूपी पति अथवा सिंधूनाम नदीनाम् पति अर्थात नदियो का पति समुद्र। इस श्लोक से च द्रगुप्त के अभ्युदय की ध्वनि निकलती है। चाणक्य की नीति राज्यलक्ष्मी को च द्रगुप्त के पास लाती है। इस श्लोक मे उपमा अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द हैं।

(समन्तान्नाट्येनावलोक्य) अये कथमप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवम् कुसुमपुरम। आर्य्य वैहीनरे अथ अस्मद्वचनात् आघोषित कुसुमपुरे कौमुदीमहोत्सव ।

कञ्चुकी—देव ! अथ किम् ?

राजा—आर्य ! तदेव किं न परिगृहीतमस्मद्वचनं पौरजनेन ?

कञ्चुकी—(कर्णौ पिधाय) देव ! शान्तं पापं, शान्तं पापं, पृथिव्यामस्खलितपूर्वं देवस्य शासनं कथं पौरेषु स्खलितुमर्हति ?

राजा—आर्य वैहीनरे ! तत् कथमप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सव-मद्युनाऽपि कुसुमपुरं पश्यामि ? पश्य—

हिंदी अनुवाद—(चारों तरफ अभिनय पूर्वक देखकर) अरे ! कुसुमपुर में कौमुदी महोत्सव क्यों नहीं मनाया जा रहा है ? आर्य वहीनरि, क्या मेरी आज्ञा से कुसुमपुर में कौमुदी महोत्सव घोषित कर दिया गया था ?

कञ्चुकी—हां

राजा—आर्य, तो पुरवासियों ने मेरी बात क्यों नहीं मानी ?

कञ्चुकी—(कान बंद करके) महाराज, पाप शान्त हो पाप शान्त हो। पाटलिपुत्र के लोग भला आप की आज्ञा कैसे न मानेंगे जब सारा संसार मान रहा है।

राजा—आर्य वहीनरि, तो मैं अब भी कुसुमपुर को बिना कौमुदीमहोत्सव के क्यों देख रहा हूँ ? देखो—

(*Acts looking all round*) Ha how is it that Kaumudi festival is not being celebrated in Kusumpura Noble Vaihinari was the celebration of Kaumudi festival proclaimed in my name at Kusumpura ?

Chamberlain—Yes

King—Then why my orders were not carried out by the citizens ?

Chamberlain (*closing his ears*)—Begone sir Begone sir Why will not the citizens of Pataliputra carry out your orders when the whole world is carrying it out

King—Noble Vaihinari how is it that even now Kusumpura has not commenced the Kaumudi festival

टिप्पणी

(१) **अप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवम्**—जहां कौमुदी महोत्सव नहीं मनाया जा रहा है। अप्रवृत्त कौमुदीमहोत्सवः यस्मिन् स तम् (ब० व्री०)। (२) **अस्खलित-पूर्वम्**—पहले जो कभी नहीं खाली गया था या अमान्य था। स्खल+क्त कर्तरि=

स्खलितम पूव स्खलितम (सुप्सुपा स०) भूतपूर्वे चरट इति निर्देशात पूवश दस्य परनिपात । न स्खलितपूवम इति अस्खलितपूवम नञ समास ।

धूर्तैरन्वीयमाना स्फुटचतुरकथाकोविदैर्वेशनार्यो
नालङ्कुवन्ति रथ्या पृथुजघनभराक्रान्तिमन्दै प्रयातै ।
अन्योन्य स्पर्धमाना न च गृहविभवै स्वामिनो मुक्तशङ्का
साक स्त्रीभिभजन्ते विधिमभिलषित पावण पौरमुख्या ।।१०।।

अन्वय—स्फुटचतुरकथाकोविद धूर्ते अन्वीयमाना वेशनाय पथुजघन भराक्रान्तिम द प्रयात रथ्या न अलङ्कुवन्ति। स्वामिनो मुक्तशङ्का पौर मुख्याश्च गहविभव अन्योन्य स्पधमाना (सन्त) स्त्रीभि साकम अभिलषित पावण विधि न भजन्ते ।।१०।।

हिदी अनुवाद—बातचीत में निपुण धूत नागरिको के साथ भारी नितम्बो के बोझ से धीरे धीरे चलने वाली वेश्यायें राजमाग को सुशोभित नही कर रही ह। ऐश्वयशाली नगरवासी भी अपने वभवो के प्रदशन में पारस्परिक स्पर्धा दिखलाते हुए निश्शक स्त्रियो के साथ इस उत्सव में योग नही दे रहे ह।

Public women followed by gay lovers versed in free clever conversation do not adorn the street with slow movements due to the weight of the heavy hips Even the leading citizens with their fear from the king being removed do not compete with one another in the decoration of their houses and take part in the celebration of the Kaumadi festival along with their women

सस्कृत व्याख्या—वेशनाय्य बारवनिता स्फुटचतुरकथाकोविद स्फुटा स्पष्टा अगूढा इत्यथ चतुरा कुशला या कथा वाच तासु कोविद विच क्षण धूर्ते विटै अन्वीयमाना अनुगम्यमाना पथुजघनभराक्रान्तिम द पथो स्थूलस्य जघनस्य यो भर गुरुता तस्य आक्रान्त्या आरोपणेन म द अलस प्रयातै स्वगमनागम रथ्या राजमार्गान न अलङ्कुवन्ति न शोभयन्ति न भूषयन्ति वा। स्वामिन मुक्तशङ्का भूपात शङ्कारहिता भूत्वा पौरमुख्याश्च नगरवासि प्रमुखा गहविभव स्वगृहसम्पत्तिभि अन्योन्य स्पधमाना परस्पर विजयषिण स्त्रीभि साकम् स्वपत्नीभि समम अभिलषित ईप्सितम पावणम विधिम पूर्णिमा चारम् कौमुदीमहोत्सवम् इत्यथ न भजन्ते न सेवमाना दश्यन्ते ।

टिप्पणी

(१) स्फुटचतुरकथाकोविद —स्पष्ट एव चातुर्यपूर्ण वार्तालाप मे प्रवीण। कौति इति कु (शब्दे)+विच कर्तरि=को=वेद । वेत्ति इति विद+क कर्तरि= विद । को विद कोविद (षष्ठीतत०)। (२) वेशनार्य्य —वेश्यायें। (३) अन्वीयमाना —अनुसरण की जाती हुई अनु+इ+शानच। (४) स्वामिन – मालिक से राजा से। स्व धनमस्तीति अस्य। स्व+आमिन मत्वर्थे तस्मात— यह स्वामिन का पञ्चमी का रूप है। (५) मुक्तशङ्का —निर्भय होकर। चन्द्रगुप्त के राज्य मे यह भय नही था कि राजा उनके धन को छीन लेगा। पर नन्द के राज्य मे धनियो का धन राजा द्वारा ले लिया जाता था अत वे उसका प्रदर्शन नही करते थे। पर चन्द्रगुप्त के राज्य मे वे शङ्कारहित थे। (६) पार्वणम— कौमुदी महोत्सव। अमावास्या और पूर्णिमा को पर्व कहते ह। यहा पूर्णिमा से मतलब है। पर्वणिभव इति पार्वण । पर्वन+अण। (७) पृथुजघनभराक्रान्ति मद प्रयात —मोटे नितम्बो के भार के कारण मद गमनो से। पृथो जघनस्य यो भर तस्य आक्रान्त्या मन्द प्रयात गमन । प्र+या+क्त तृतीया बहुवचने विभक्तिकार्यम=प्रयात । यहा स्रग्धरा छन्द है स्वभावोक्ति अलकार है।

कञ्चुकी—देव! एवमेतत्।

राजा—किमेतत्?

कञ्चुकी—देव! अत इदम्—।

राजा—आर्य! स्फुटमभिधीयताम्।

कञ्चुकी—'देव! प्रतिषिद्ध कौमुदीमहोत्सव ।

राजा—(सक्रोधम्) आ केन?

कञ्चुकी—नात परमस्माभिर्देवो विज्ञापयितु शक्यते।

राजा—न खल्वार्येण चाणक्येनापहृत प्रेक्षकाणामतिशयरमणीयश्चक्षुषो विषय ?

कञ्चुकी—देव! कोऽन्यो जीवितुकामो देवस्य शासनमतिवर्तेत?

राजा—शोणोत्तरे! उपवेष्टुमिच्छामि।

प्रतीहारी—देव ! एद सिंहासण । उपविसदु देवो । (देव ! एतत सिंहासनम । उपविशतु देव ।)

राजा—(नाटयेनोपविश्य) आय वैहीनरे ! आर्यचाणक्य द्रष्टुमिच्छामि ।

कञ्चुकी—यदाज्ञापयति देव । (इति निष्क्रान्त)

(तत प्रविशत्यासनस्थ स्वभवनगत कोपानुविद्धा चिन्ता नाटयन चाणक्य ।)

चाणक्य —(आत्मगतम) कथ स्पधते मया सह दुरात्मा राक्षसहतक ! कुत ?—

हिन्दी अनुवाद—कञ्चुकी—महाराज, यह ऐसा ही है।

राजा—यह क्या है ?

कञ्चुकी—महाराज, इसलिए यह।

राजा—आय, साफ-साफ कहिए।

कञ्चुकी—महाराज, कौमुदीमहोत्सव मना कर दिया गया है।

राजा—(क्रोध से) अरे किसके द्वारा ?

कञ्चुकी—इसके आगे म महाराज से नहीं कह सकता।

राजा—क्या आय चाणक्य ने देखने वालो को आँखों के इस सुदर दश्य से तो वचित नहीं कर दिया ?

कञ्चुकी—महाराज, दूसरा अपने जीवन से ममता रखने वाला ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा का उल्लघन करे।

राजा—शोणोत्तरे, म बठना चाहता हूँ।

प्रतीहारी—महाराज, यह सिंहसान है, आप विराजें।

राजा—(बठने का अभिनय करके) आय वहीनरि, आय चाणक्य को देखना चाहता हूँ।

कञ्चुकी—जो महाराज की आज्ञा (बाहर जाता है)।

(तब अपने भवन में आसन पर विराजमान क्रोधपूवक चिन्ता का अभिनय करते हुए चाणक्य का प्रवेश)

चाणक्य—(मन में) दुष्ट राक्षस मेरे साथ क्यो स्पर्धा कर रहा है क्योकि—

Chamberlain—It is indeed so

King—What is it ?

Chamberlain—Sire therefore this

King—Speak out plainly

Chamberlain—Sire the Kaumudi festival has been forbidden.

King (*With anger*)—Ha by whom ?

Chamberlain—Sire I cannot tell you anything more than this

King—Really has this scene delightful to the eyes of on lookers been removed by Noble Chanakya ?

Chamberlain—Sire who else with the desire of living can over rule sire s command ?

King—Sonottara I wish to sit down

Warder—Sire heie is the throne

King (*Acting sitting down*)—Noble Vahinari I wish to see Noble Chanakya

Chamberlain—As Sire commands (*Goes out*)

(Then enter on a seat in his own house Chanakya acting anxiety mixed with anger)

How so this wicked Rakshas wants to compete with me

कृतागा कौटिल्यो भुजग इव निर्याय नगराद
यथा नन्दान हत्वा नृपतिमकरोन्मौर्यवृषलम ।
तथाह मौर्येन्दो श्रियमपहरामीति कृतधी
प्रभाव मदबुद्धेरतिशयितुमेष व्यवसित ।।११।।

अन्वय—यथा कृतागा कौटिल्य भुजग इव नगरात निर्याय न दान हत्वा मौयवषल नपतिम अकरोत तथा अह मौर्ये दो श्रियम अपहरामि इति कृतधी एष मदबुद्धे प्रभावम अतिशयितु यवसित ।

हि दी अनुवाद—कृतानिष्ट सप के समान अपमानित होकर जिस प्रकार चाणक्य ने नगर से निकल कर न दों का नाश करके वषल मौय को राजा बनाया "उसी प्रकार म भी च द्रगुप्त की राज्यलक्ष्मी का अपहरण करूँगा" ऐसा सकल्प कर यह राक्षस मेरी महदबुद्धि का अतिक्रमण करना चाहता है।

Has this fellow Rakshasa made up his mind to surpass me in wit with this intention— I will wrest the fortune of the moon like Maurya just as Kautilya who being insulted went out of the city like a molested snake and having destroyed all the Nandas made Maurya a king

सस्कृत याख्या—यथा कृतागा न देन कृताप्रिय कौटिल्य चाणक्य भुजग इव पादादिप्रहत सप इव नगरात पाटलिपुत्रात निर्याय बहि नि सत्य नन्दान नन्दवशीयान हत्वा मौयवषलम च द्रगुप्त राजानमकरोत तथा एष राक्षस मौर्ये दो मौयवशच द्रमस च द्रगुप्तस्य श्रियम राज्यलक्ष्मीम अपहरामि आत्मसात्

करिष्यामि इति अनेन प्रकारेण कृतधी कृता कल्पिता धी मति येन तादृश कृतसकल्प मदबुद्धे मदीयाया नीते प्रभावम सामथ्यम अतिशयितुम अतिवर्तितु व्यवसित उद्यत । स हि मन्यते मदबुद्धे अपि आत्मन बुद्धि प्रकृष्टा इति अहो भ्रम इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **कोपानुविद्धाम**—क्रोध से मिली हुई। कोपेन अनुविद्धाम इति । अनु+व्यध्+क्त । (२) **भुजग इव**—सप के समान । भुजेन कुटिलगत्या गच्छतीति भुज+गम+ड । पादाहत साप जसे क्रुद्ध होकर बदला लेने की सोचता है उसी प्रकार कौटिल्य ने भी बदला लेने को सोच लिया था। (३) **कृतागा**—जिसका अनिष्ट किया गया हो । नन्दो ने एक बार ब्राह्मणभोज के अवसर पर चाणक्य का अपमान किया था । उन लोगो ने उसे यथोचित आसन नही दिया तथा तिरस्कारपूवक वहा से निकाल दिया था । कृतम आचरितम आग अपराध यस्मिन स कृतागा (ब० व्री०) (४) **मौर्येन्दो**—मौयवश के च द्रमा का। (५) **प्रकषम**—बडप्पन श्रेष्ठता । प्र+कृष+घञ । (६) **अतिशयितुम**—बढने के लिए। अति+शी+तुमुन । (७) **व्यवसित**—उद्यत । तयार । वि+अव+सो+क्त। राक्षस मेरी बुद्धि को भी अतिक्रमण करना चाहता है। यह उसका भ्रम है। यहा उपमा अलङ्कार और शिखरिणी छन्द है।

(प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्य बद्ध्वा) राक्षस ! राक्षस ! विरम्यतामस्माद्दुर्व्यवसितात् ।

उत्सिक्त कुसचिवदृष्टराज्यतन्त्रो
नन्दोऽसौ न भवति चन्द्रगुप्त एष ।
चाणक्यस्त्वमपि च नैव केवल ते
साधर्म्य मदनुकृते प्रधानवैरम ।।१२।।

अन्वय—एष च द्रगुप्त उत्सिक्त कुसचिवदृष्टराज्यत त्र असौ नन्द न भवति । त्वमपि च नैव चाणक्य । केवल प्रधानवर ते मदनुकृते साधर्म्यम ।।१२।।

हि दी अनुवाद—(आकाश में प्रत्यक्ष देखते हुए की तरह दष्टि बाधकर) राक्षस, राक्षस, इस दुष्प्रयत्न को त्याग दो। च द्रगुप्त उद्धत न द नहीं है जिसका राजकाज दुष्ट मत्रियो के ही ऊपर निभर था और न तुम चाणक्य ही हो। हमारे और तुम्हारे कामों में यही समता है कि दोनो ने राजाओं से बर मोल लिया।

भाव यह है कि चाणक्य की बराबरी करना तुम्हारी धृष्टता है। साम्य यही है कि तुम चन्द्रगुप्त के वसे ही शत्रु बन रहे हो जसे म न द का। चन्द्रगुप्त कहाँ और कहाँ तुम्हारे सरीखे विवेकहीन मत्रियों पर राज्य भार छोडने वाला नन्द।

(*Looking at the sky*) Rakshasa Rakshasa desist from this mad pursuit This is King Chandragupta not the haughty Nanda whose state affairs were managed by bad ministers You too are not Chanakya In imitating me the common quality is our enemity with kings (I am enemy of Nanda and you are the enemy of Chandragupta)

सस्कृत व्याख्या—राक्षस ! कि न जानीषे यदेष च द्रगुप्त मौयवशे दु महीं विजिगीषु उत्सिक्त गर्वित कुसचिवदृष्टराज्यतत्र कुसिचवै दृष्ट सचालित राज्यतत्र यस्य स तथाविधोऽसौ मतो नन्दो न भवति। नन्दमौययो महद तर-मिति भाव त्वमपि च नव चाणक्य कौटिल्य केवलम एकम प्रधानवरम मुख्य-शत्रुता ते तव मदनुकृते ममानुकरणस्य साधम्यम सादृश्यम। अर्थात मम इव तवापि राज्ञा विरोध एतन्मात्रम आवयो समता। च द्रगुप्तात हीन नन्द त्वम च चाणक्यात् हीन। तस्मात विरम्यताम अस्माददुव्यसनात।

टिप्पणी

(१) **दुव्यसनात**—बुरे काम से। जुगुप्साविराम' आदि से यहाँ पञ्चमी हुई है। (२) **साधम्यम**—समानता। बराबरी। समानो धम सधम (कम० स०), समान इत्यस्य सादेश। स एव इति सधम+ष्यञ स्वार्थे। (३) **प्रधानवरम**—राजा से वर। चाणक्य के कहने का भाव यह है कि हमारी तुम्हारी बुद्धि बराबर नही हो सकती। समानता केवल यही है कि हम और तुम दोनो ने राजा से वर मोल लिया है। परन्तु च द्रगुप्त नन्द से अच्छा है। अत तुम अपने काम से विरत हो जाओ। इसमे परिकर तथा -यतिरेकालकार है और प्रहर्षिणी छन्द है।

(विचिन्त्य) अथवा नातिमात्रमस्मिन् वस्तुनि मया मन खेदयितव्यम्। कुत ?—

मद्भृत्यै किल सोऽपि पर्वतसुतो व्याप्त प्रविष्टान्तरै-
रुद्युक्ताश्च नियोगसाधनविधौ सिद्धाथकाद्या स्पशा।
कृत्वा सम्प्रति कैतवेन कलह मौर्येन्दुना राक्षस
भेत्स्यामि स्वमतेन भेदकुशलो ह्येष प्रतीप द्विष ॥१३॥

अन्वय—स पवतसुत अपि प्रविष्टान्तर मदभत्य ˜याप्त किल च सिद्धाथ काद्या स्पशा नियोगसाधनविधौ उद्युक्ता । सम्प्रति भेदकुशल (अहम) कत वेन मौर्येन्दुना कलह कृत्वा प्रतीप राक्षसम एष स्वमतेन द्विष भेत्स्यामि ।।१३।।

हि दी अनुवाद—(सोचकर) अथवा इस विषय में मुझे अपने मन को अधिक खिन्न नहीं करना चाहिए। क्योकि—वह पवतेश्वर का पुत्र मलयकेतु भी हृदय में पठे हुए मेरे अनुचरो से घिरा हुआ है और सिद्धाथक आदि गुप्तचर अपने कतव्य पालन में लगे ह। इस समय च द्रगुप्त से बनावटी कलह करके भेद नीति में कुशल म प्रतिकूल राक्षस को अपनी बुद्धि से शत्रु (मलयकेतु) से अलग कर दूगा।

(*Thinking*) Or I should not trouble my mind too much in this matter why—He too the son of Parvatak is surrounded by my spies that have won his heart spies like Siddharthaka and others are engaged in doing their duty I who am expert in the policy of alienation will alienate the enemical Rakshas from our enemy (Malayaketu) by my wit by picking up an artificial quarrel with Chandragupta

सस्कृत ˜याख्या—स पवतसुत मलयकेतुरपि प्रविष्टान्तर आयत्तीकृतशत्रु हृदय मदभत्य अस्मतपक्षीय सेवक ˜याप्त किल च सम तात सवत एव तिष्ठति सिद्धाथकाद्या सिद्धाथकप्रमुखा स्पशा चरा नियोगसाधनविधौ अस्मदाज्ञा नुष्ठानमहाकमणि च उद्युक्ता तत्परा । सम्प्रति इदानीम भेदकुशल अहम भेदे पाथक्ये कुशल चतुर अहम कतवेन व्याजेन न तु वस्तुत मौर्ये दुना च द्रगुप्तेन कलह कृत्वा विवाद कृत्वा प्रतीप मन्त्रीतिप्रभावात प्रतिकूलतया प्रख्यायमान राक्षसम एष अहम स्वमतेन आत्मच्छन्देन द्विष शत्रो मलयकेतोरित्यथ भेत्स्यामि पथक करिष्यामि।

टिप्पणी

(१) **प्रविष्टान्तर**—अन्त करण मे प्रवेश पाने वालो से अर्थात जिन लोगो ने हृदय मे विश्वास जमा लिया है। प्रविष्टम आयत्तीकृतम अन्त अ त करण यै ते तै। (२) **उदयुक्ता**—तत्पर ह। उद+युज+क्त। (३) **स्पशा**—गुप्तचरा। (४) **कतवेन**—नकली। (५) **स्वमतेन**—अपनी बुद्धि से। (६) **भेत्स्यामि**—फूट पदा कर दगा अर्थात राक्षस को मलयकेतु से शत्रुता कराकर अलग कर दूगा। क्योकि भागुरायण आदि चाणक्य के गुप्तचर ह। इन लोगो ने मलयकेतु को अपने वश मे कर रखा है। सिद्धाथक आदि भी चाणक्य

के गुप्तचर ह और ये राक्षस के पीछे लगे हुए ह । अत उन दोनो मे भेद डालना कठिन नही है । यहा उपमा अलकार तथा शादूलविक्रीडित छद है ।

कञ्चुकी——(प्रविश्य) कष्ट खलु सेवा नाम ! कुत ? ——
भेतव्य नृपतेस्तत सचिवतो राज्ञस्ततो वल्लभा-
द येभ्यश्च वसन्ति येऽस्य भवने लब्धप्रसादा विटा ।
दैन्यादु मुखदशनापलपने पिण्डार्थमायस्यत
सेवा लाघवकारिणी कृतधिय स्थाने श्ववृत्ति विदु ।।१४।।

अ वय——नपते भेत यम तत सचिवत तता राज्ञा वल्लभात अन्येभ्यश्च ये ल धप्रसादा विटा अस्य भवने वसति । स्थाने कृतधिय दन्यात उ मुखदशना पलपन पिण्डाथम आयस्यत लाघवकारिणी सेवा श्ववर्त्ति विदु ।।१४।।

हि दी अनुवाद——कञ्चुकी (प्रवेश करके) सेवा (नौकरी) दु खदायी वस्तु है । क्योकि जो भी राजा की सेवा करता है उसे किन किन से नही डरना पडता ? सबसे पहले तो राजा से, फिर उसके मत्रियो से, फिर उसके स्नेहपात्र लोगो से और जितने भी ऐसे धूत लोग राजभवन में डेरा दिए पडे रहते ह जो उसके मुह लगे हुआ करते ह । मनस्वियो ने यह ठीक ही कहा है कि सेवा की जीविका कुत्ते की जीविका है जिसमें किसी को भी अपनी दीनता वश रोटी के टुकडो के लिये लोगो का मुह ताकना, झूठमूठ की लोगो की प्रशसा करना और साथ ही साथ सब प्रकार से अपने आप को नीचा बनाना पडता है ।

Chamberlain (*Entering*)—Verily service is misery For—The king has to be afraid of next the ministers then the king s favourites and also other cunning persons (धूत) who live in the house having gained the favour Rightly the wisemen think service to be as the dog s life for one has to toil for bread with looks upturned and misrepresentations through helplessness—service brings meanness in the servant

सस्कृत व्याख्या——नपते भूपालात भेत यम कदा कुप्येदिति । तदनन्तर सचिवत मत्रिण भेत यम तत राज्ञ नपते वल्लभात प्रीतिपात्रात भेतव्यम अन्येभ्य अपि एतद यतिरिक्तेभ्योऽपि भेतव्यम के ते इत्याह ये अस्य राज्ञ भवने गहे ल धप्रसादा प्राप्नराजानुग्रहा विटा धूर्ता वसन्ति तेभ्योऽपि भेतव्यम । तेऽपि राज्ञे निवेद्य अप्रिय कतु शक्ता इति सुष्ठु युक्तम एव यत कृतधिय पण्डिता दन्यात कापण्यात उ मुखदशनापलपन उन्मुख मुखम उन्नमय्य यद्दशनम

स्वामिन यच्चापलपनम काकुभाषित तेन स तैरुपायै पिण्डाथम उदरभरणाथम् क्लिश्यमानस्य सेवा भत्यजीविका लाघवकारिणीम तस्य लघुतासम्पादिनी श्ववृत्ति कुक्कुरलीला विदु मन्यन्ते।

टिप्पणी

(१) **कष्टम**—दु ख की बात। अत्र सामान्ये नपुसकम। (२) **स्थाने**—ठीक ही। यह अव्यय है। (३) **पिण्डाथम**—पेट के लिए रोटी के लिए। (४) **लाघवकारिणीम**—छोटा बनाने वाली। (५) **उन्मुखदशनापलपन**—ऊपर मुह करके देखना और चापलूसी की बात करना उत ऊर्ध्वम मुखम् यस्मिन कमणि तत् उ मुखम् यथा स्यात्तथा दशनानि आलपनानि च त। (६) **आयस्यत**—प्रयास करता हुआ कष्ट सहता हुआ। **श्ववत्तिम**—सेवा (चाकरी) को विद्वानो ने श्ववृत्ति कहा है—शुनोवत्ति स्मता सेवा गर्हित तद द्विजन्मनाम्। अमरकोश का भी यही अभिमत है—सेवा श्ववत्ति। इस श्लोक मे काव्यलिंग अलकार तथा शादूलविक्रीडित छ द ह।

(परिक्रम्यावलोक्य च) इदमार्यचाणक्यस्य गृह, यावत् प्रविशामि।

(नाट्येन प्रविश्यावलोक्य च) अहो! राजाधिराजमन्त्रिणो गृहभूति!! कुत ?—

उपलशकलमेतद्भेदक गोमयाना
वटुभिरुपहृताना बर्हिषा स्तोम एष।
शरणमपि समिद्भि शुष्यमाणाभिराभि-
विनमितपटलान्त दृश्यते जीणकुड्यम्॥१५॥

अन्वय—गोमयाना भेदकम एतत उपलशकलम्, वटुभि उपहृताना बर्हिषाम् एष स्तोम, शुष्यमाणाभि आभि समिद्भि विनमितपटलान्त जीणकुडय शरणमपि दृश्यते॥१५॥

हिन्दी अनुवाद—(इधर-उधर घूमते हुए देखकर) अरे आय चाणक्य का घर यही है! चलो, भीतर चलू। (प्रवेश का अभिनय कर देख कर) अरे यह है एक राजाधिराज के मत्री के घर की विभूति! एक तरफ तो सूखे कडों को तोडने के लिए पत्थर का टुकडा पडा है, दूसरी ओर ब्रह्मचारियो द्वारा लाए हुए कुशों

का ढेर है। चारो ओर छप्पर पर सुखाई जाने वाली समिधा के भार से घर झुका जा रहा है और दीवारें भी टूटी-फूटी ह।

(*Going round and observing*) This is the house of Noble Chanakya (*Entering and seeing*) Oh the magnificience of the minister of the king of kings Thus on one side there is a piece of stone to break the cowdung on the other side there is the heap of Kusa grass collected by the disciples the house too is seen with old and broken walls and the corners of the roof are bending with the burden of sacrificial fuel that is being dried

संस्कृत व्याख्या—शुष्काणाम गोमयानाम गोपुरीषपिण्डानाम भेदकम् चूर्णन-साधकम एतत उपलशकलम प्रस्तरखण्ड दृश्यते वटुभि शिष्यभूतै ब्राह्मणै उप हृतानामानीतानाम बर्हिषा कुशानाम स्तोम समूह (दृश्यते) शुष्यमाणाभि शुष्य न्तीभि शुष्काभि च आभि दृश्यमानाभि समिद्भि काष्ठै विनमितपटलान्तम भाराधिक्यात जीर्णशीर्णत्वाद्वा विभग्नतणच्छादिप्रान्त जीर्णकुडयम् विशीर्णमिति शरणमपि गहमपि दृश्यते। अनेन अस्य अनासक्तियोगत्व दृश्यते।

टिप्पणी

(१) **राजाधिराजमन्त्रिण**—राजाओ के राजा के मन्त्री का। अधिको राजा अधिराज (प्रादितत०) समासान्तटच्प्रत्यय। राज्ञाम अधिराज तस्य मन्त्री (षष्ठीतत०) तस्य। (२) **उपलशकलम**—पत्थर का टुकडा। (३) **गोमयानाम भेदकम**—कण्डो को तोडने के लिए। (४) **स्तोम**—समूह। (५) **शरणम**—घर। (६) **विनमितपटलान्तम**—जिसके छप्पर की ओलती झुक गई है। विनमित पटलान्त यस्य तत। यह शरणम का विशेषण है। (७) **जीर्णकुडयम**—पुरानी दीवालो वाला। जीर्ण कुडच यस्य तत शरणम। भित्ति स्त्री कुडचम इत्यमर। इससे चाणक्य के घर की सादगी दिखाकर यह बताया है कि चाणक्य अपने वभव के लिए काय नही कर रहा था। वह चन्द्रगुप्त के लिए कर रहा था। इससे बढकर अनासक्ति योग का क्या उदाहरण हो सकता है। इस श्लोक मे स्वभावोक्ति अलकार तथा मालिनी छन्द है। छन्द का लक्षण—ननमयययुतेय मालिनी भोगिलोक।

तत् स्थाने खल्वस्य वृषलो देवश्चन्द्रगुप्त इति। कुत—

स्तुवन्त्यश्रान्तास्या क्षितिपतिमभूतैरपि गुणै
प्रवाच कार्पण्याद् यदवितथवाचोऽपि कृतिन।

प्रभावस्तृष्णाया स खलु सकल स्यादितरथा
निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कारविषय ॥१६॥

अन्वय—अवितथवाच कृतिन अपि यत कापण्यात प्रवाच (स त) अश्रान्तास्या (भूत्वा) अभूतरपि गुण क्षितिपतिं स्तुवन्ति स खलु तष्णाया सकल प्रभाव । इतरथा निरीहाणाम् ईश तणमिव तिरस्कारविषय स्यात ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—तो चाणक्य का चन्द्रगुप्त को वषल कहना उचित ही है, क्योकि सत्य वचन बोलने वाले बडे-बडे विद्वान भी दीनतावश वाचाल होते हुए, राजा की झूठ ही प्रशसा करते ह जो गुण उसमें नहीं ह उन गुणो का भी वे उसमें आरोप करके धन की लालच से उसकी स्तुति करते ह । यह अवश्य ही तष्णा का प्रभाव है । अन्यथा निरीह व्यक्ति के लिए तो राजा तृण के समान तिरस्कार का विषय है ।

It is but proper that to him Sire Chandragupta is only a Vrishal For—It is due to greed that even learned men of truthful speech being helpless flatter and praise a king with mouths untired even for those virtues which are not in him (*king*) But for those who have no desire the king is like a straw an object of contempt

सस्कृत व्याख्या—अवितथवाच सत्यवादिन कृतिन यशस्विन अपि यत् कापण्यात दारिद्रयात प्रवाच वाचाला सन्त अश्रान्तास्या अश्रान्त श्रमरहित आस्यम मुख येषा बहुभाषणऽपि श्रमरहिता भूत्वा अभूतरपि गुणै अविद्यमानरपि गुण क्षितिपतिं भूपाल स्तुवन्ति गायन्ति स खलु निश्चयेन तष्णाया लोभस्य प्रभाव । इतरथा अन्यथा असति लोभे निरीहाणाम तष्णारहितानाम् ईश प्रभु राजा वा तृणमिव तिरस्कारविषय अनादरपात्रम इति ।

टिप्पणी

(१) **स्थाने खल्वस्य**—शूद्र स्त्री के गभ से उत्पन्न होने के कारण चन्द्रगुप्त को चाणक्य वषल कहता है। वषल का अथ है—शूद्र। किन्तु अब चन्द्रगुप्त सम्राट है। उसे वषल कहना विपत्ति को बुलाना है। परन्तु धन्य है चाणक्य की नि स्पृहता जिससे वह सम्राट को भी दास के समान वृषल कहकर पुकारता है। (२) **अवितथवाच**—सत्यवादी लोग। अवितथा वाक् येषा ते। (३) **कृतिन**—विद्वान् लोग। (४) **अश्रान्तास्या**—मुह थकता नही जिनका। अश्रान्तम् आस्य येषा ते अश्रान्तास्या। प्रशसा करते करते उनका मुह थकता

नही। (५) अभूतरपि गुण —जो गुण राजा मे नही ह उन गुणो का भी आरोप करके। (६) इतरथा—नही तो। यह तष्णा का ही प्रभाव है कि बडे-बडे सत्यवादी विद्वान् राजाओ की झूठी प्रशसा करते ह। एक हिन्दी कवि ने भी कहा है— दिए लोभ चशमा दगन लघु पुनि बडो दिखात । उपमा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

(अवलोक्य सभयम) तदयमार्यचाणक्यस्तिष्ठति ।

यो नन्दमौर्यनृपयो परिभूय लोक-
मस्तोदयौ प्रतिदिशन्नविभिन्नकालम् ।
पर्यायपातितहिमोष्णमसर्वगामि
धाम्नातिशाययति धाम सहस्रधाम्न ॥१७॥

अन्वय—य लोक परिभूय अविभिन्नकाल नन्दमौर्यनपयो अस्तोदयौ प्रतिदिशन सहस्रधाम्न असर्वगामि पर्यायपातितहिमोष्ण धाम धाम्ना अतिशाययति ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—(देखकर भयभीत होकर) अरे यह आर्य चाणक्य विराजमान ह। जो अपने तेज से सहस्र किरण वाले सूय के भी तेज को नीचा दिखाते ह। कहा तो इनका तेज सारे ससार का सहसा आक्रामक और नन्दराज और मौयराज का अस्त और उदय करने वाला और कहा सूय का तेज जो सर्दी और गरमी का क्रमश करने वाला है।

(*Observing with awe*) Oh here is sitting Noble Chanakya who—Simultaneously caused the fall and the rise of the Nandas and the Maurya king respectively defying the world and thus causes his glory to surpass the glory of the thousand rayed sun which does not reach everywhere at the same time and imparts heat and cold by turns

सस्कृत व्याख्या—य चाणक्य लोकम ससारम परिभूय अगणयित्वा अविभिन्नकालम् युगपत नन्दमौर्यनपयो नपस्य नन्दस्य मौयस्य च अस्तोदयौ ह्रासोपचयौ प्रतिदिशन ददत सहस्रधाम्न सूयस्य असवगामि युगपदेव सकल लोक गन्तु यन्न शक्नोति तादशम पर्यायपातितहिमोष्णम पर्यायेण कालक्रमेण पातितम अवतारितम हिम शीतम उष्णम आतपश्च येन तादश धाम तेज धाम्ना स्वतेजसा अतिशाययति अतिक्रामति ।

टिप्पणी

(१) **लोकम**—ससार को। ढुण्डिराज टीकाकार का कहना है कि सूय पक्ष मे लोकम का अथ है लोकालोक पवत। (२) **पर्यायपातितहिमोष्णम**—बारी-बारी से गर्मी और शीत का करने वाला। परि+आ+इ+अच अथवा अय+घञ भावे=पर्याय। हिमम च उष्ण च हिमोष्णे। पर्यायेण पातिते हिमोष्णे येन तत्। यह धाम का विशेषण है। (३) **असवगामि**—जो सब जगह नही जा सकता। (४) **अतिशाययति**—अतिक्रमण कर रहा है। भाव यह है कि सूय तो बारी-बारी से सरदी और गर्मी देता है पर चाणक्य ने साथ ही साथ नन्दवश का नाश (शीत) और मौय-वश का उदय (गर्मी) किया। इसलिए चाणक्य का तेज अधिक हुआ क्योकि वह साथ ही साथ दोनो वस्तुओ का करने वाला है। यहाँ अतिशयोक्ति अलकार और वसन्ततिलका छन्द है।

(जानुभ्याम् भूमौ निपत्य) जयतु जयत्वार्य।

चाणक्य—(नाटयेनावलोक्य) वहीनरे! किमागमनप्रयोजनम!

कञ्चुकी—आर्य! प्रणतसम्भ्रमसमुच्चलितभूमिपालमौलिमालामाणिक्यशकलशिखापिशङ्गीकृतपादपद्मयुगल सुगृहीतनामधेयो देवश्चन्द्रगुप्त आर्यं शिरसा प्रणिपत्य विज्ञापयति—'अकृतक्रियान्तरायमार्यं द्रष्टुमिच्छामि' इति।

चाणक्य—वृषलो मा द्रष्टुमिच्छति? वैहीनरे! न खलु वृषलश्रवणपथगतोऽय मत्कृत कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेध?

कञ्चुकी—आर्य! अथ किम?

चाणक्य—(सक्रोधम) आ! केन कथितम्?

कञ्चुकी—(भय नाटयित्वा) प्रसीदत्वार्य। स्वयमेव सुगाङ्गप्रासादशिखरगतेन देवेनावलोकितमप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सव कुसुमपुरम।

चाणक्य—आ! ज्ञातम्। भवद्भिरेव मदन्तरा प्रोत्साह्य रोषितो वृषल। किमन्यत्?

कञ्चुकी—(सभय तूष्णीमधोमुखस्तिष्ठति।)

हिंदी अनुवाद(घुटनो के बल जमीन पर पडकर) आय की जय हो, जय हो।

चाणक्य—(देखने का अभिनय करके) वहीनरि, किस प्रयोजन से आगमन हुआ ?

कञ्चुकी—प्रात स्मरणीय महाराज चन्द्रगुप्त ने, जिनके चरणकमल निरन्तर अभिनन्दनाथ झुककर आने वाले और जाने वाले राजाओ के मौलिमुकुटो के मणि-माणिक्यो की रश्मि शिखाओ से लाल और पीला बने रहते ह, सिर झुका कर आप से निवेदन किया है कि यदि आय के किसी अन्य काय में कोई विघ्न न पडे तो दशन करने की इच्छा है।

चाणक्य—क्या वषल मुझे देखना चाहता है ? वहीनरि, ऐसा तो नहीं है कि मेरे द्वारा किया गया कौमुदीमहोत्सव का निषेध वषल के कान तक पहुँच गया हो ?

कञ्चुकी—आय, ऐसी ही बात है।

चाणक्य—(क्रोध से) अरे किसने बताया है ?

कञ्चुकी—(भय का अभिनय करके) आय प्रसन्न हो। सम्राट ने स्वय सुगाङ्गप्रासाद के शिखर से आकर देखा कि कुसुमपुर में कौमुदी-महोत्सव नहीं मनाया जा रहा है।

चाणक्य—अरे, समझ गया। तुम्हीं लोगो ने मेरे विषय में कुछ इधर उधर की बात कह कर वषल को नाराज कर दिया। और क्या ?

कञ्चुकी—(डर के मारे सिर नीचे किए खडा रहता है।)

(*Touching the ground with the knees*) Victory to the Noble Sir

Chanakya—Vahinari what is the purpose of your coming ?

Chamberlain—Noble Sir king Chandragupta of auspicious name whose both lotus like feet are made red and yellow by shoots of lustre of the pieces of gems that are moved on the crest of kings while they are bowing before him after having saluted Noble Sir says this I wish to see the Noble Preceptor if his other works are not interfered with

Chanakya—Does the Vrishal wish to see me ? Vahinari is it not that the prohibition by me of the celebration of Kaumudi festival has reached the ears of the Vrishal ?

Chamberlain—Yes Noble Sir

Chanakya (*With anger*)—Ah who told this ?

Chamberlain (*With fear*)—Noble Sir the king himself came to the Suganga Palace and from there he saw Kusumpura was without the celebration of kaumudi festival

Chanakya—Ah I understand Then at this occasion you people told something against me and enraged the Vrishal

Chamberlain—(Stands silent with face downcast and acts to be afraid)

टिप्पणी

(१) **प्रणतसम्भ्रम युगल**—जिनके दोनो चरण कमल प्रणामाथ झुके हुए तथा जल्दी के कारण कापते हुए राजाओ की चूडामणि की किरणो से लाल पीले बने रहते ह। प्रणता कृतप्रणामा अतएव सत्वर समुच्चलिता ये भूमिपाला तेषा मौलय चूडा तेषा मालासु यानि माणिक्यशकलानि रत्नखण्डानि तेषा शिखाभि पिशङ्गीकृतम पादपद्मयुगल यस्य स । (२) **अकृतक्रियान्तरायम**—जिसके अन्य किसी काय मे विघ्न न पडा हो अकृत क्रियाया अन्तराय यस्य तादृशम । अन्त मध्ये अयनम इति अन्तर+अय+घञ भावे=अन्तराय । क्रियाया अन्तराय (ष० त०) अकृत क्रियान्तरायो येन यस्य वा (ब० स०), तम्। (३) **अन्तरा**—बीच मे। मौका पाकर मेरे न रहने पर। (४) **प्रोत्साह्य**—उत्तेजित करके। प्र+उद+सह+णिच+ल्यप।

चाणक्य—अहो! राजपरिजनस्य चाणक्योपरि विद्वेष-पक्षपात । अथ क्व वृषलस्तिष्ठति?

कञ्चुकी—(भय नाटयन) आर्य! सुगाङ्गप्रासादगतेन देवेनाहमार्यपादमूल प्रेषित ।

चाणक्य—(उत्थाय) कञ्चुकिन! सुगाङ्गप्रासादमार्ग-मादेशय।

कञ्चुकी—इत इत आर्य । (इत्युभौ परिक्रामत ।)

कञ्चुकी—अय सुगाङ्गप्रासाद, शनैरारोढुमर्हत्यार्य ।

चाणक्य—(नाटयेनारुह्यावलोक्य च सहर्षमात्मगतम ।) अये! सिहासनमध्यास्ते वृषल । साधु साधु!—

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—ओह! चाणक्य के साथ राजा के नौकरों का अतिशय द्वेष है। अच्छा, वृषल कहाँ है?

कचुकी—(भय का अभिनय करते हुए) आर्य, सुगाङ्गप्रासाद में गए हुए महाराज ने मुझे आपके पास भेजा है।

चाणक्य—(उठकर) कञ्चुकी, सुगाङ्गप्रासाद का माग बताओ।

कँचुकी—इधर से आर्य, इधर से (दोनों घूमते ह)।

राजराजेश्वरेण वषलेन च द्रगुप्तेन अध्यासितम् अधिष्ठितम अनया च आक्रान्त्या इद सदशेन योग्येन आत्मानुरूपेण पार्थिवेन अद्य सगत च विभूषित च । एते गुणा अभ्युदया मम परा प्रीतिम आनन्दम प्रगुणयति जनयति समाहरन्तीत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **अनपेक्षितराजवत्त** —राजधम की उपेक्षा करने वाले न द वश के राजा लोग। अनपेक्षित राजवत्तम य तादृश । (२) **राज्ञा वषेण**—राजाओ मे श्रेष्ठ । (३) **सदशपार्थिवसगत च**—उपयुक्त राजा से युक्त होने पर। सदशेन योग्येन पार्थिवेन सगतमिति (त० तत्पु०) । (४) **प्रगुणयति**—पदा कर रहे है। एते गुणा —तीन गुणो मे पहला तो नन्द से वियुक्त होना दूसरा राजाओ मे श्रेष्ठ वषल से अधिष्ठित होना तीसरा यह कि सदृश राजा से युक्त होना। सिहासन के योग्य बतलाकर प्रशसा करने से सम' नामक अलकार हुआ। सतोष के कारण होने से समुच्चय अलकार हुआ। वसन्ततिलका छ द है।

(उपसृत्य) विजयता वृषल ।

(सिहासनादुत्थाय चाणक्यस्य पादौ गृहीत्वा) आय ! चन्द्रगुप्त प्रणमति ।

चाणक्य —(पाणौ गहीत्वा) उत्तिष्ठोत्तिष्ठ वत्स !—

आ शैलेन्द्राच्छिलान्त स्खलितसुरनदीशीकरासारशीता-
त्तीरान्तान्नैकरागस्फुरितमणिरुचो दक्षिणस्याणवस्य ।
आगत्यागत्य भीतिप्रणतनृपशतै शश्वदेव क्रियन्ता
चूडारत्नाशुगर्भास्तव चरणयुगस्याङ्गुलीरन्ध्रभागा ।।१९।।

अन्वय—शिलान्त स्खलितसुरनदीशीकरासारशीतात शैले द्रात आ नकराग स्फुरितमणिरुच दक्षिणस्य अणवस्य तीरान्तात आगत्य आगत्य भीतिप्रणतनपशतै तव चरणयुगस्य अङ्गलीर ध्रभागा शश्वदेव चूडारत्नाशुगर्भा क्रियन्ताम ।।१९।।

हि दी अनुवाद—(पास जाकर) वषल की जय हो।

(सिहासन से उठकर चाणक्य के पर पकड कर) आय, च द्रगुप्त प्रणाम करता है।

चाणक्य—(हाथ पकडकर) बेटा, उठो, उठो।

गगा जी के जलकण से शीतल होने वाले हिमालय के शृग जहा तक ह और दक्षिण की ओर जहाँ तक अनेक रगों वाले रत्नों से रजित समुद्र बहते ह, वहा तक

के (इन दोनो सीमाओ के बीच के) सभी राजा तुम्हारे आतक से नम्र होकर आकर तुम्हारे दोनो चरणो की उँगलियो के छिद्र भाग को मुकुटो में जडे हुए रत्नो की किरणो से सुशोभित करें।

(*Going near*)—Victory to Vrishala

King (*Rising from the seat*)—Noble Preceptor Chandra gupta salutes you (*falls at his feet*)

Chanakya (*Catching him by the hand*)—Arise arise child May the kings (from all the parts) from the lord of the hills cool with the shower of sprays of Ganga down to the shore of southern ocean having lustres of gems of various colours ever and anon come in awe and prostrate before you and in that process may the crevices of your toes be made beautiful with the lustre of gems on their crests

सस्कृत व्याख्या—शिलान्त स्खलितसुरनदीशीकरासारशीतात शिलान्तेषु शिलाना प्रान्तभागेषु स्खलिता आकाशात च्युता या सुरनदी गङ्गा तस्या शीकराणा जलकणाना य आसार सम्पात तेन शीतात शीतलात शलेन्द्रात पवतराजात हिमालयात आ मर्यादीकृत्येत्यथ नकरागस्फुटितमणिरुच नकरागा विविधवर्णा स्फुरिता अवभासमाना मणिरुच मणिकान्तयस्सन्ति यस्य तस्य दक्षिणस्याणवस्य दक्षिणसागरस्य चातीरात आतटादागत्य आगत्य भीतिप्रणत-नपशतै भीत्या भयेन नम्रीकृतशिरोभि नपशत तव चरणयुगलस्य पादद्वयस्य अङ्गुलीरन्ध्रभागा अङ्गुलिजालरध्रा शश्वदेव सवकालमेव चूडारत्नाशुगर्भा चूडास्थितानाम् रत्नानाम् अशव किरणा गर्भे मध्ये येषा तादशा मौलिमणि-किरणपूर्णा क्रियन्ताम विधीयन्ताम। सवदेशेभ्य नपतय आगत्य त्वा प्रणमन्तु इति भाव।

टिप्पणी

(१) **विजयताम**—यहा विपराभ्या जे सूत्र से आत्मनेपद हुआ। (२) **शिलान्त स्खलितसुरनदीशीकरासारशीतात**—शिलाओ पर गिरती हुई गगा के जल कणो की वर्षा से शीतल। शिलान्तेषु स्खलिता या सुरनदी तस्या शीकराणाम् आसार तेन शीतात। यह शलेन्द्रात का विशेषण है। (३) **आशलेन्द्रात**—हिमालय तक। पञ्चम्यपाङ्परिभि से आ के योग मे पञ्चमी हुई है। (४) **नकरागस्फुरितमणिरुच**—अनेक वण वाली मणियो की कान्ति वाला। न एक नक नञर्थेन नशब्देन सुप्सुपा समास। नैकश्च नैकश्च नकश्च इति

एकशेष । नैके रागा नकरागा (कम० स०)। नकरागा स्फुरिता मणिरुचं यस्य तस्य। यह अणवस्य का विशेषण है। (५) भीतिप्रणतनृपशत—डर के मारे झुके हुए सकडो राजाओ से। नपाणा शत नपशत भीत्या प्रणत नृपशतं इति भीतिप्रणतनपशत। (६) शश्वदेव—निरन्तर। (७) चूडारत्नाशु-गर्भा—(राजाओ के) मुकुटो मे जडे हुए रत्नो की किरणें जिनके ऊपर पडती ह। यह अङ्गुलीरध्रभागा का विशेषण है। चूडारत्नानाम अशव गर्भे येषा ते।

राजा—आयप्रसादादनुभूयत एवैतत, नाऽऽशास्यते। उपविशत्वार्य। (इत्युभौ यथासनमुपविष्टौ।)

चाणक्य—वृषल! किमर्थं वयमाहूता ?

राजा—आयस्य दशनेनात्मानमनुग्राहयितुम्।

चाणक्य—(स्मित कृत्वा) वृषल! अलमनेन प्रश्रयेण, न निष्प्रयोजनमधिकारवन्त प्रभुभिराहूयन्ते, तत् प्रयोजन-मभिधीयताम्।

राजा—आय! कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधस्य किं फलमार्यः पश्यति ?

चाणक्य—(स्मित कृत्वा) वृषल! उपालब्धु तर्हि वयमाहूता।

राजा—आय! नोपालब्धुम।

चाणक्य—कि तर्हि ?

राजा—विज्ञापयितुम।

चाणक्य—वृषल! यद्येव तर्हि विज्ञापनीयानामवश्य शिष्येण रुचयोऽनुरोद्धव्या।

राजा—आय! क सन्देह ? कि तु न कदाचिदप्यार्यस्य निष्प्रयोजना प्रवृत्तिरित्यस्ति न प्रश्नावकाश।

चाणक्य—वृषल! सम्यग्गृहीतवानसि मदाशयम्। न हि प्रयोजनमनपेक्षमाण स्वप्नेऽपि चाणक्यश्चेष्टते।

राजा—आर्य! अतएव मा प्रयोजनशुश्रूषा मुखरयति।

चाणक्य—वृषल ! श्रूयताम । इह खल्वर्थशास्त्रकारा त्रिविधा सिद्धिमुपवर्णयन्ति । तद्यथा—राजायत्ता, सचिवायत्ताम, उभयायत्ताञ्चेति । तत सचिवायत्तसिद्धेर्भवत किं फलान्वेषणेन ! यतो वयमेवात्र नियुक्ता वेत्स्याम ।

राजा—(सकोप इव मुख परावर्तयति।)

राजा—आर्य की कृपा से इसका अनुभव ही किया जा रहा है न कि आशा की जा रही है। आर्य बठें (दोनो यथोचित आसन पर बठ जाते ह)

चाणक्य—वषल, मुझे किसलिए बुलाया गया है।

राजा—आर्य का दशन करके अपने को कृताथ करने के लिए।

चाणक्य—(मुस्कुराकर) बस, बस, बहुत हो चुका अनुनय विनय। राजा लोग अधिकारियो को बिना कारण नही बुलाते। अब आप बुलाने का प्रयोजन बताइए।

राजा—आर्य, कौमुदी महोत्सव का निषेध करके क्या फल सोचा है ?

चाणक्य—(मुस्कुरा कर) वषल, क्या उलाहना देने को मुझे बुलाया है ?

राजा—आर्य, उलाहना देने के लिए नहीं।

चाणक्य—तो क्यो ?

राजा—निवेदन करने के लिए।

चाणक्य—वषल, यदि ऐसा है तो शिष्य को निवेदन करने योग्य व्यक्तियो की रुचि का अवश्य ही विचार करना चाहिए।

राजा—आर्य, इसमें क्या सन्देह ? बिना किसी प्रयोजन के तो आर्य का कोई काम नहीं होता। केवल इतना ही पूछना है।

चाणक्य—वषल, तुमने मेरे आशय को खूब समझ लिया है। बिना किसी प्रयोजन के तो चाणक्य स्वप्न में भी कुछ नहीं करता।

आर्य—इसीलिए तो पूछने की इच्छा मुझे कुछ कहने को कहती है।

चाणक्य—वषल, सुनो। अर्थशास्त्र के रचयिता लोगो ने तीन प्रकार की सिद्धि का वणन किया है। वे ये ह—राजायत्त (राजा के अधीन) सचिवायत्त (मत्री के अधीन) और दोनो के अधीन। आप की सिद्धि सचिवायत्त है। इसलिए फल का पता लगाने से तुम्हारा क्या प्रयोजन ? क्योंकि इस विषय में नियुक्त हम ही लोग जानेंगे।

राजा—(क्रोध से मुह फेर लेता है)

King—Through the grace of the Noble Preceptor this is being already enjoyed not only expected Noble Preceptor, may sit down (*Both are seated in a befitting way*)

Chanakya—Vrishala why have I been called ?

King—To favour myself by your sight

Chanakya (Smiling)—Enough of this modesty The authorities are not summoned in vain by their masters

King—Noble Sir what good do you see in prohibiting Kaumudi festival

Chanakya (With a smile)—So I have been summoned for being censured

King—No to tell something

Chanakya—If so then the wishes of those to whom something is to be told are to be respected by the pupil

King—Noble Sir no doubt it is so But your actions are never aimless so I have reason to ask

Chanakya—Vrishala you have rightly guessed Chanakya does not do anything even in dream without any aim

King—Therefore the desire to hear makes me speak

Chanakya—Vrishala listen Authors of works on politics speak of three kinds of success in the world—resting with the king resting with the ministers and the third is resting on both Your success rests on ministers then of what use is it for you to make search for the aim For we ourselves employed in the matter shall know it

King—*(Turns his face as if in anger)*

टिप्पणी

(१) **अनुग्राहयितुम**—अनुग्रह कराने के लिए। अनु+ग्रह्+णिच+तुमुन। (२) **प्रश्रयेण अलम**—अब अधिक नम्रता रहने दो। प्र+श्रि+अच=प्रश्रय तेन। अल योगे ततीया। (३) **अधिकारवन्त**—अधिकार रखने वाले कमचारी। अधिकार +मतुप (४) **विज्ञापयितुम**—कहन के लिये। निवेदन करने के लिए। वि+ज्ञा+णिच+तुमुन। (५) **विज्ञापनीयानाम**—जिनसे कुछ कहना है। (६) **रुचय अनुरोद्धव्या**—प्रवत्ति का आदर (ख्याल) करना चाहिये। (७) **प्रश्नावकाश**—पूछने का मौका। (८) **प्रयोजनशुश्रूषा**—प्रयोजन जानने (सुनन) की इच्छा। श्रोतुमिच्छा शुश्रूषा श्रु+सन+अ (भावे) स्त्रीलिङ्ग। (९) **मुखरयति**—बोलने को उत्साहित करती है। मुखमस्तीति महत इति मुख+र मत्वर्थे=मुखर। त करोतीति मुखर=णिच (नामधातु)। cf किरात III—मा श्रोतुमिच्छा मुखरीकरोति (१०) **आयत्ता**—अधीन—तीन प्रकार की सफलता बताई गई है। राजा के अधीन मत्री के अधीन दोनो के अधीन। चद्रगुप्त की सफलता अभी सचिवायत्त है। इसीलिये चाणक्य ने उससे ऐसा कहा कि अभी तुम्हारी सिद्धि हमारे ही हाथ मे है। अत हमारे द्वारा

किये गये कामो का कारण मत पूछो। यह बात केवल ऊपरी तौर से कही गई है ताकि लोग समझे कि दोनो मे वास्तविक कलह है। (११) नियुक्ता —नि+युज+क्त। (१२) वेत्स्याम —जानेंगे। यहा वेदिष्याम रूप होना चाहिए।

(ततो नेपथ्ये वैतालिकौ पठत ।) एक —

आकाश काशपुष्पच्छविमभिभवता भस्मना शुक्लयन्ती
शीताशोरशुजालैजलधरमलिना क्लिन्दती कृत्तिमैभीम ।
कापालीमुद्वहन्ती स्रजमिव धवला कौमुदीमित्यपूर्वा
हासश्रीराजहसा हरतु तनुरिव क्लेशमैशी शरद्व ।।२०।।

अन्वय—काशपुष्पच्छविम अभिभवता भस्मना आकाश शुक्लयन्ती शीताशो अशुजाल जलधरमलिनाम ऐभी कृत्ति क्लिन्दती कौमुदीमिव धवला कापाली स्रजम् उद्वहन्ती हासश्रीराजहसा इति अपूर्वा शरदिव ऐशी तनु व क्लेश हरतु ।।२०।।

हिन्दी अनुवाद—(नेपथ्य में दो वतालिक पढते ह) एक—हे राजन, काश पुष्प की शुभ्रकान्ति को भी मात करने वाली, भस्म से आकाश को धवल बनाने वाली, चद्र के किरण जाल से सजल मेघ के समान काले गज-चम परिधान को गीली करती हुई कलाधर की चादनी की भाति कपाल-माला को धारण करने वाली और राजहसी की शुभ्र छटा के समान अट्टहास की छटा को छिटकाने वाली महादेव की दिव्य मूर्ति की भाति यह अदभुत शरद आप के सताप को दूर करे। (शरद पक्ष में) भस्म को तिरस्कृत करने वाली काशपुष्प की कान्ति से आकाश को उज्ज्वल करती हुई चद्रमा के किरण-समूहो से गजचम के समान मेघ की नीलिमा को दूर करती हुई, मुण्डमाला के समान श्वेतचद्रिका को धारण करती हुई और हसी की शोभा के समान राजहसो से मुक्त होने के कारण विलक्षण शरद् ऋतु आप के दु ख को दूर करे।

(*Two bards sing in the dressingroom*)

First—May Lord (*Shiva at his tandava*) remove your troubles—the Lord whose person whitens the sky with ashes that surpass the glow of Kasa flowers and sprinkles the elephant s hide which is dark like cloud with the mass of rays of the moon (on the head) the person bearing a string of white skulls like moon beam giving out laughs the glow of which is like that of the swans and which is like a wonderful Autumn

सस्कृत व्याख्या—काशपुष्पच्छविमभिभवता तिरस्कुवता आकाश गगन शुक्लयन्ती धवलधवल कुवन्ती शीताशो चूडाचन्द्रस्य अशुजाल किरणकलाप जलधरमलिनाम् मेघनीलाम् ऐभी कृत्ति गजचम क्लिन्दन्ती सिञ्चन्ती कौमुदीमिव

चन्द्रिकामिव धवलाम शुभ्रवर्णां कापाली स्रजम नरमुण्डमालाम उद्वहन्ती धारयन्ती हासश्रीराजहसा राजहस इव हासश्री ताण्डवोचितस्य हासस्य शोभा अस्ति यस्या तादशी इति अतएव अपूर्वा नूतना विलक्षणा वा शरदिव ऐशी तनु शाम्भव वपु व युष्माकम क्लेश हरतु शरत काश आकाश शुक्लयति तनुरिय ततोऽधिक भस्मभि इत्यका नूतनता निजलत्वात प्रकृत्या शुभ्ररस्र शोभते शरत इय तु अभ्रतुल्यमायत नील गजाजिन चन्द्रकान्त्या धवलीकृत धारयन्ती शोभते इत्यपरा नूतनता। कौमुदीशुभ्रा शरत कपालधवला च तनु राजहसशुभ्रा शरत अट्टहास दर्शितदशन शुभ्रा तनु । अतएव शरदिव तनु । न च पुन पूवदष्टा इव शरत।

टिप्पणी

(१) **वतालिक**—स्तुति पाठ करने वाले भाट चारण। इनमे प्रथम वैतालिक चाणक्य का व्यक्ति है और दूसरा राक्षस का गुप्तचर स्तनकलश है जिसने वैतालिक का वेश बना रखा है। आदि के दो श्लोक (२० २१) चाणक्य के ववालिक द्वारा पढे गये ह और शेष दो स्तनकलश के द्वारा। (२) **काशपुष्पच्छविम अभिभवला**—काश (एक प्रकार की घास जिसमे सफेद फूल लगते ह) के फूल की सुन्दरता को तिरस्कृत करने वाली। यह भस्मना का विशेषण है। (३) **शुक्लयन्ती**—सफेद बनाती हुई (४) **शीतांशो**—चन्द्रमा के। (५) **ऐभीम् कृतिम्**—हाथी के चमडे को (जो शङ्कर जी धारण करते ह)। **इभ**—(हाथी) तस्येयम् अण। ऐभी। कहा जाता है कि शङ्कर जी गजासुर को मारकर उसकी खाल को वस्त्र रूप मे धारण करने लगे। of क्षण क्षणोतक्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना स्फुटोपम भूतिसितेन शम्भुना माघ १४ (६) **कापालीम स्रजम**—नर मुण्ड माला। कपालानामियम इति कापाली कपाल+अण+डीप ताम (७) **हास श्रीराजहसा**—राजहस के समान हँसी की शोभा। हासश्री राजहस इव इति उपमित कमधारय समास। ताण्डव नृत्य के समय शिव जी जो अट्टहास करते हैं उसकी सफेदी के समान। (८) **ऐशी**—शङ्कर जी की। ईशस्य इयम इति। ईश्+अण+डीप। इस श्लोक मे उपमालकार है। स्रग्धरा छन्द है। शङ्कर जी के शरीर को शरद् ऋतु के समान बताया है। और अनेक गुण जो शङ्कर जी के शरीर मे ह वे शरत मे भी बताये गये ह।

प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा क्षणमनभिमुखी रत्नदीपप्रभाणा-
मात्मव्यापारगुर्वी जनितजललवा जृम्भितै साङ्गभङ्गै ।

नागाङ्क मोक्तुमिच्छो शयनमुरु फणाचक्रवालोपधान
निद्राच्छेदाभिताम्रा चिरमवतु हरेदृष्टिराकेकरा व ।।२१।।

अन्वय—फणाचक्रवालोपधानम उरु नागाङ्क शयन मोक्तुमिच्छो हरे प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा क्षण रत्नदीपप्रभाणाम अनभिमुखी साङ्गभङ्ग जम्भित जनित-जललवा आत्मव्यापारगुर्वी आकेकरा निद्राच्छेदाभिताम्रा दष्टि व चिरम अवतु ।।२१।।

हिन्दी अनुवाद—फण-मण्डल के बने तकिया से सुशोभित अपने नागाङ्क (शेषनाग के देहरूप और सप शरीर की अनुकृति पर बनी हुई) शयन को छोडने के इच्छुक भगवान विष्णु की सद्य खुलने के कारण अलसाई हुई आखें आपकी चिरकाल तक रक्षा करें जो (आखें) सहसा निद्रा भङ्ग के कारण रत्नदीपो (अर्थात दीप रूपी नागराज की शिरोमणियो) की शिखा पर नहीं टिक पातीं तथा जो अगडाई के साथ जँभाई लेने से उत्पन्न अश्रु कणो से भरी हुई इधर उधर देखने में असमथ ह और निद्रा भग के कारण जिसकी लाली कम नहीं होती।

नोट—चार मास सोने पर शरद के अत में कार्तिक शुक्ल एकादशी को भगवान् विष्णु की निद्रा भङ्ग होती है। उसी का विचार करके नाटककार ने यह पद शरद-वणन के बाद दिया है। "शेते विष्णु सदाषाढे कार्तिके च विबुध्यते"।

May the half closed eyes of Hari that are read at the break of sleep may guard you for ever Hari desirous of leaving the inside bed of the snakes body with the circle of hoods for the pillow The eyes of Hari are dull due to his recent waking and do not face for the moment the light of lamps of the gems and that are unable to see here and there due to the drops of tears coming by yawn with stretching of limbs

सस्कृत व्याख्या—फणचक्रवालोपधानम फणानाम चक्रवालमेव मण्डलमेव उपधान शिरोधानम यस्मिन तादशम उरु विशालम नागाङ्कम शेषरूपमत एव शेषाङ्कतया प्रख्यातम शयनम पयङ्कम मोक्तुमिच्छो हातुकामस्य हरे श्रीविष्णो प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा प्रत्यग्र अचिर य उन्मेष उन्मीलन तेन जिह्मा मन्दा अलसायमाना वा क्षणम मुहूत्तमात्रम रत्नदीपानाम समुद्भवन विद्योतयन्तीनाम प्रभाणा रत्नदीपकिरणानाम अनभिमुखी सम्मुखतस्थुषी साङ्गभङ्ग साङ्गत्रोट जम्भितं मुखव्यादान जनितजललवा समुत्पन्नाश्रुविंदुसभृता अत आत्मव्यापार-गुर्वीम् आत्मव्यापारे निजकर्मणि दशनकर्मणि गुर्वी अलसा निद्राच्छेदाभिताम्रा

निद्राभङ्गेन भृश लोहितवर्णा अतएव आकेकरा अर्धनिमीलिता दष्टि नेत्र वः चिरम अवतु रक्षतु।

टिप्पणी

(१) **फणाचक्रवालोपधानम**—फणमण्डल ही है तकिया जिसमे। फण-समूह की तकिया वाला। फणाना चक्रवालमेव समूह एव उपधान यस्मिन् तादृशम। (२) **नागाङ्कम**—नागराज के शरीर या गोद रूप। (३) **प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा**—सद्य खुलने के कारण अलसायी। प्रत्यग्र य उन्मेष तेन जिह्मा। यह दष्टि का विशेषण है। तुरन्त सोकर उठने के कारण अलसायी हुई आखें। (४) **रत्नदीपप्रभाणाम**—रत्नदीप की प्रभा का। सपराज के शिरोमणि की प्रभा से भगवान विष्णु का सम्पूण शरीर देदीप्यमान रहता है। (५) **अनभिमुखी**—सामने न होती हुई। सामना करने मे असमथ अलसायी हुई होने के कारण कुछ देर तक विष्णु की दष्टि रत्नदीप की प्रभा का सामना नही कर सकती। (६) **साङ्गभङ्ग जम्भित**—अँगडाई के साथ जँभाई से। (७) **जनितजललवा**—जिनमे थोडा पानी (आँसू) आ जाता है। जनित जललव यस्या तादृशी। (८) **आत्मव्यापारगुर्वी**—अपना काम करने (देखने) मे असमथ। (९) **आकेकरा**—अधनिमीलित आधी बद। (१०) **निद्राच्छेदाभिताम्रा**—निद्राभग होने के कारण अत्यन्त लाल। निद्राया भङ्ग तेन अभिताम्र। (११) **अवतु**—रक्षा करें। यह श्लोक कार्तिक-पूर्णिमा को इसलिए पढा जा रहा है कि कार्तिक-शुक्ला एकादशी को भगवान विष्णु चार मास की निद्रा त्याग कर जो शीघ्र ही उठे ह। इस श्लोक मे सोकर उठे हुए विष्णु की आख की उसी अवस्था का वणन है जिसका अनुभव सभी लोग प्रतिदिन करते ह। इसमे स्रग्धरा छन्द है और रूपकालकार है।

द्वितीय —

सत्त्वोत्कर्षस्य धात्रा निधय इव कृता केऽपि कस्यापि हेतो-
र्जेतार स्वेन धाम्ना मदसलिलमुचा नागयूथेश्वराणाम्।
दष्ट्राभङ्ग मृगाणामधिपतय इव व्यक्तमानावलेपा-
नाऽऽज्ञाभङ्ग सहन्ते नृवर नृपतयस्त्वादृशा सार्वभौमा ॥२२॥

अन्वय—नवर! धात्रा सत्त्वोत्कषस्य निधय इव कृता व्यक्तमानावलेपा

केऽपि त्वादृशा सावभौमा नपतय स्वेन धाम्ना मदसलिलमुचा नागयूथेश्वराणा जेतार मगाणामधिपतय दष्ट्राभङ्गमिव कस्यापि हेतो आज्ञाभङ्ग न सहन्ते ।।२२।।

हिदी अनुवाद—ब्रह्मा ने जिन पुरुषो को ससार का श्रेष्ठतम काय दिया है (अर्थात राजा बनाया है) वे उन सिहो के समान ह जो सवदा बडे-बडे मस्त हाथियो पर विजय प्राप्त करते रहते ह और उनमें जिनको कभी किसी के सामने झुकना नही पडता वे नप श्रेष्ठ ही ससार के शिरोमौलि ह तथा वे अपनी आज्ञा भग को उसी प्रकार सहन नहीं कर सकते जिस प्रकार सिंह अपने दातो का उखाडना अर्थात जिस प्रकार सिंह अपने दातो के उखाडने वाले को नष्ट कर डालता है उसी प्रकार राजा लोग अपनी आज्ञा को भग करने वाले का नाश कर डालते ह।

O best of men paramount rulers of men like you made by the creator as the store house of the exuberence of power having pride and self respect manifested whoever they are do not for any reason whatsoever tolerate the disobedience of their orders as the lions who by their own might are conquerors of the leaders of herds of big elephants who are emitting the fluid of ichor do not tolerate the drawing out of their teeth

सस्कृत याख्या—हे नवर नरश्रेष्ठ चद्रगुप्त धात्रा वेधसा सत्त्वोत्कषस्य बलस्य य उत्कष आधिक्य तस्य बलसम्पद निधय इव निधानानीव कृता रचिता मानावलेपा प्रकटीकृतस्वाभिमानस्वगौरवातिशया केऽपि त्वादशा भवद्विधा सावभौमा चक्रवर्तिन नपतय राजान स्वेन निजेन धाम्ना तेजसा मदसलिलमुचाम मदसलिल दानवारि मुञ्चन्ति ये तादशानाम नागयूथेश्वराणाम् गजराजाना जेतार विजयिन मगाणामधिपतय पशुराजा सिंहा इव दष्ट्राभङ्गमिव दशनत्रुटिमिव कस्यापि हेतो कुतोऽपि कारणात आज्ञाभङ्ग शासनलघन केऽपि न सहन्ते। यथा सिह दतत्रुटिम न मषयति तथव मानिन राजान केनापि सत्त्वेन क्रियमाणम आज्ञाभङ्गम न मषयन्तीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **सत्त्वोत्कषस्य**—बल की अधिकता का। (२) **निधय**—खजाना, आकर। (३) **यक्तमानावलेपा**—स्वाभिमान एव गव जिसका प्रकट है। व्यक्त मान अवलेप च येषा ते। (४) **मदसलिलमुचाम**—मदरूपी जल को बहाने वाला। (५) **सावभौमा**—चक्रवर्ती। सवभूमे ईश्वरा इति सवभूमि+अण अनुशतिकादीना च' इति सूत्रेण उभयपदवद्धि । (६) **दष्ट्राभगामिव**—

दातो के उखाडे जाने के समान। वतालिक के वेश मे च द्रगुप्त के यहा वतमान राक्षस के गुप्तचर स्तनकलश ने च द्रगुप्त को उत्तेजित करने के लिए २२ वा तथा २३ वा श्लोक पढा है। इसमे उपमा अलकार और स्रग्धरा छ द है।

अपि च—भूषणाद्युपभोगेन प्रभुर्भवति न प्रभु ।
परैरपरिभूताज्ञस्त्वमिव प्रभुरुच्यते ॥२३॥

अ वय—प्रभु भूषणाद्युपभोगेन प्रभु न भवति। त्वमिव परै अपरिभूताज्ञ प्रभु उच्यते।

हिन्दी अनुवाद—राजा केवल आभूषणादि के उपभोग करने से राजा नही होता। वही राजा है जो आप की तरह आज्ञा का उल्लघन नहीं सह सकता।

The kıng ıs not the kıng by reason of the enjoyment of jewellery etc Rıghtly ıs he a kıng who lıke you can not tolerate hıs dısobedıence

सस्कृत व्याख्या—प्रभु राजा भूषणाद्युपभोगेन भूषणादीनाम अलकरणादीनाम उपभोगेन हेतुना न प्रभु भवति न राजा भवति त्वमिव भवानिव पर अन्यै अपरिभूताज्ञ अपरिभूता नोल्लघिता आदेशो यस्य तादश प्रभु नप उच्यते कथ्यते।

टिप्पणी

(१) **अपरिभूताज्ञ**—जिसकी आज्ञा का उल्लघन न किया गया हो। भाव यह है कि राजा वही है जिसकी आज्ञा का पालन हो। यदि उसकी आज्ञा की अवहेलना हुई तो वह नाममात्र का राजा है। इसमे उपमा अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

चाणक्य—(आकर्ण्यात्मगतम्) प्रथम तावद्विशिष्टदेवतास्तुतिरूपेण प्रवृत्तशरद्गुणप्रख्यापनमाशीर्वचनम्। इदमपर किमिति नावधारयामि। (विचिन्त्य) आ, ज्ञातम। राक्षसस्याय प्रयोग। आ दुरात्मन् राक्षसहतक! दृश्यसे, जागर्ति खलु कौटिल्य।

राजा—आय वैहीनरे! दापयाभ्या वैतालिकाभ्या सुवर्णशतसहस्रम्।

कञ्चुकी—यदाज्ञापयति देव । (इत्युत्थाय परिक्रामति ।)

चाणक्य —(सक्रोधम) वैहीनरे ! तिष्ठ तिष्ठ, न गन्तव्यम् । वृषल ! किमयमस्थाने एव महानर्थोत्सर्ग क्रियते !

राजा—आर्येणैव सर्वतो निरुद्धचेष्टाप्रसरस्य मम बन्धनमिव राज्य न राज्यमिव ।

चाणक्य —वृषल ! स्वयमनभियुक्ताना राज्ञामेते दोषा भवन्ति । तद्यदि न सहसे, तदा स्वयमेवाभियुज्यस्व ।

राजा—एते वय स्वकर्मण्यभियुज्यामहे ।

चाणक्य —प्रिय न, वयमपि स्वकर्मण्यभियुज्यामहे ।

राजा—यद्येव, तर्हि कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधस्य प्रयोजन श्रोतुमिच्छामि ।

चाणक्य —वृषल ! कौमुदीमहोत्सवानुष्ठानस्य कि प्रयोजनमित्यहमपि श्रोतुमिच्छामि ।

राजा—प्रथम तावत् ममाज्ञाव्याघात ।

चाणक्य —वृषल ! ममापि खलु त्वदाज्ञाव्याघात एव कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधस्य प्रथम प्रयोजनम । कुत ?

हिंदी अनुवाद—चाणक्य—(सुनकर स्वगत) पहला तो देव विशेषों की स्तुति रूप में प्रस्तुत शरद ऋतु के गुणों को प्रकट करने वाला आशीर्वाद है। परन्तु दूसरा क्या है यह समझ में नही आता। (सोचकर) अहा ! समझ गया। यह राक्षस की चाल है। अरे पापी दुष्ट राक्षस, समझ लिया (तुमको देख लिया) कौटिल्य जाग रहा है।

राजा—आर्य वहीनरि, इन दोनों वतालिको को एक लाख स्वण मुद्रा दिलाओ।

कञ्चुकी—जसी महाराज की आज्ञा। (उठकर घूमता है)।

चाणक्य—(क्रोध से) वहीनरि, ठहरो, ठहरो। मत जाओ। वषल ! यह अनुचित स्थान पर इतने धन का त्याग क्यो किया जा रहा है ?

राजा—आय, आप तो मेरे सभी कामों में रोडा अटकाते ह। यह तो राज्य नहीं है, बल्कि बधन है।

चाणक्य—वषल ! यह तो तुम्हारा दोष है जो स्वय कुछ कर नहीं सकते, तो यदि इसे सहन नहीं कर सकते हो तो स्वय सब कुछ देखो भालो।

राजा—बहुत ठीक। आज से हम सब कुछ करेंगे।

चाणक्य—हमारे लिए अच्छा है। हम भी अपने काय में लग जाते ह।

राजा—यदि ऐसी बात है तो कौमुदी-महोत्सव के रोकने का कारण सुनना चाहता हूँ।

चाणक्य—वषल ! कौमुदी-महोत्सव मनाने का प्रयोजन क्या है, यह म भी सुनना चाहता हू।

राजा—पहले तो (न मनाने से) मेरी आज्ञा का उल्लघन होता है।

चाणक्य—वषल, तुम्हारी आज्ञा का न पालन होना ही कौमुदी-महोत्सव को मना करने का प्रयोजन है।

Chanakya (*hearing to himself*)—The first is benediction in the shape of eulogy to big gods descriptive of the virtues of Autumn that has set in I am unable to understand what this other is (*Thinking*) Ah I see This is a move by Rakshas Wicked Rakshas you have been exposed Kautilya is alert

King—Noble Vaihinari let a hundred thousand gold pieces be given to these bards

Chamberlain—As your Majesty orders (*Rises and goes round the stage*)

Chanakya (*with anger*)—Vaihinari stop stop do not proceed Vrishala why such a large amount is being spent on an unworthy object

King—Noble Preceptor you cause hindrance in all my actions thus this kingdom is a prison to me not a kingdom

Chanakya—These inconveniences are experienced by kings who personally do not attend to their work So if you cannot tolerate them then attend personally to your work

King—Here we attend to our work

Chanakya—That is joy to me I too attend to my work

King—If so then I wish to know what the object is in prohibiting the Kaumudi festival

Chanakya—Vrishala I too wish to know the utility of celeberating the Kaumudi festival

King—First is the non carrying out of my orders

Chanakya—Vrishala my first object in prohibiting the Kaumudi festival is that your orders may not be carried out

टिप्पणी

(१) **विशिष्टदेवतास्तुतिरूपेण**—विशेष देवता (शिव और विष्णु) की स्तुति रूप मे। विशिष्टा देवता तस्या विशिष्टदेवताया स्तुति तस्या रूपेण इति विशिष्टदेवतास्तुतिरूपेण। (२) **प्रवत्तशरदगुणप्रख्यापनम**—शरद ऋतु जो आ गई है उसके गुणो का कीतन। प्रवत्ता या शरद तस्या गुणा तेषा प्रख्यापनम।

(३) **जागर्ति**—जागता है चौकन्ना है। (४) **दापयाम्याम**—दापय+आम्याम इन दोनो को दिला दो। दा धातु+णिच+आज्ञा। (५) **अस्थाने**—अनुचित रूप से (पात्र मे)। (६) **उत्सग**—त्याग खच। उद+सज+घञ। (७) **निरुद्धचेष्टाप्रसरस्य**—जिसके सभी व्यापार (काय) पर प्रतिबध लगा हो। प्र+स+अप भावे=प्रसर चेष्टाया प्रसर (षष्ठीतत०), निरुद्ध चेष्टा प्रसर यस्य स (बहुव्रीहि स०) तस्य। यह मे का विशेषण है। चन्द्रगुप्त के कहने का भाव यह है कि अगर मै काम करने मे स्वतत्र नही हूँ तो यह राज्य मेरा बधन है राज्य नही है। (८) **अनभियुक्तानाम**—स्वयम राजकाय न करने वालो का। (९) **त्वदाज्ञाव्याघात**—तुम्हारी आज्ञा का उल्लघन। वि+आ+हन+घञ् भावे=व्याघात। तव आज्ञा त्वदाज्ञा, त्वदाज्ञाया व्याघात (षष्ठीतत०)।

अम्भोधीना तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनाना-
मा पारेभ्यश्चतुर्णा चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तजलानाम्।
मालेवाज्ञा सपुष्पा तव नृपतिशतैरुह्यते या शिरोभि
सा मय्येव स्खलन्ती प्रथयति विनयालङ्कृत ते प्रभुत्वम।।२४।।

अन्वय—तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनाना चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तजलाना चतुर्णाम अम्भोधीना पारेभ्य आ या तव आज्ञा सपुष्पा माला इव नृपतिशत शिरोभि उह्यते सा मयि एव स्खलन्ती (सती) ते प्रभुत्व विनयालङ्कृत प्रथयति।।२४।।

हिन्दी अनुवाद—**जिनके तटो पर तमाल वृक्षो के पत्तो से श्यामायमान घोर वन है और जिनके जल बडी मछलियो के सचार से खलबलाते रहते है, ऐसे चारो समुद्रो के प्रातो तक से आए हुए सकडो राजे तुम्हारी जिस आज्ञा को अवनत मस्तक होकर फूल की माला के समान सिर पर धारण कर लेते है, उसका हमारे द्वारा भग होने से तुम्हारा प्रभुत्व विनय गुण से अलकृत घोषित होता है।**

Your order which is carried on their heads like a wreath of flowers unfaded by hundreds of kings upto the shores of the four oceans the forests on the shores of which are made dark by fresh leaves growing on Tamala trees and whose waters are agitated by big fishes rushing about has stumbled against me alone and this declares your authority is graced by humility

सस्कृत व्याख्या—तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनानाम तमालप्रभवाणि यानि किसलयानि त श्यामानि नीलानि वेलावनानि तीरवर्त्तिकाननानि येषा

तथाभूतानामथ चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तजलाना चटुल चपल यत् तिमिकुलम् महामत्स्यसमूह तेन क्षोभितानि आन्दोलितानि अन्तजलानि गभीरतलवर्तीनि सलिलानि येषा तादशानाम चतुर्णामम्भोधीना सागराणाम पारेभ्य समागतै नृपतिशत पुष्पमाला इव पुष्पस्रगिव या तव आज्ञा शिरोभि उह्यते धायते सा आज्ञा मयि एव स्खलन्ती मत्त एव प्राप्तप्रतिघाता सती ते विनयालकृतम प्रभुत्वमेव शीलभूषित स्वामित्वमेव प्रथयति प्रख्यापयतीत्यथ ।

चाणक्य चन्द्रगुप्त 'याहताज्ञ समाश्वासयन कथयति राजन मत्कृत तवाऽज्ञा व्याघात तवैव गौरवाय नात किमपि मम समीहितम सिद्धयति। ये भयेन तवाज्ञा शिरसि कुवन्ति इत पर ते एव तव विनय ज्ञात्वा भक्त्या मानयिष्यन्ति कदापि नोल्लघयिष्यन्ति इति मम प्रथम प्रयोजनम।

टिप्पणी

(१) **तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनानाम**—तमाल की पत्तियो से श्याम वर्ण हो रहे है जिन समुद्रो के तटवर्ती जगल। यह अम्भोधीना का विशेषण है। कालिदास— दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला' (रघु० १३)। समुद्र मे रहने वाली अत्यन्त विशालकाय मछलियो मे तिमि' जाति की मछलियाँ अपनी विशालता के लिए प्रसिद्ध ह। (२) **चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तजलानाम**—चचल मत्स्य-समूहो से आन्दोलित जलवाला। यह भी अम्भोधीना का विशेषण है। चटुलतिमिकुलेन क्षोभितम् अन्तजल येषा ते तेषाम। (३) **आ पारेभ्य**— यहाँ आ' आरम्भिक सीमा (अभिविधि) अथ को प्रकट करता है। आङ के साथ होने से पारेभ्य मे पचमी है। **उह्यते**—धारण की जाती है। वह् आत्मनेपदी लट (कमणि)। इसमे उपमा अलकार है स्रग्धरा छन्द है।

राजा—अथापरमपि प्रयोजन यत्तच्छ्रोतुमिच्छामि।

चाणक्य —तदपि कथयामि।

राजा—कथ्यताम्।

चाणक्य —शोणोत्तरे! मद्वचनात कायस्थमचलदत्त ब्रूहि, यत् भद्रभटप्रभृतीना लेख्यपत्र तत्तावत् दीयतामिति।

प्रतीहारी—ज अज्जो आणवेदि त्ति (यदार्य आज्ञापयतीति।) (निष्क्रम्य पुन प्रविश्य) अज्ज! एद पत्त। (आर्य! इव पत्रम्।)

चाणक्य —वृषल ! श्रूयताम् ।

राजा—दत्तावधानोऽस्मि ।

चाणक्य —(वाचयति) स्वस्ति सुगृहीतनामधेयस्य देवस्य चन्द्रगुप्तस्य सहोत्थायिना प्रधानपुरुषाणामितोऽपक्रम्य मलयकेतुमाश्रिताना प्रमाणलेख्यपत्रम् । तत्र प्रथम तावत् गजाध्यक्षो भद्रभट, अश्वाध्यक्ष पुरुषदत्त महाप्रतीहारस्य चन्द्रभानोर्भागिनेयो हिङ्गुरात, देवस्य स्वजनगन्धी महाराजो बलगुप्त, देवस्यैव कुमारसेवको राजसेन सेनापते सिंहबलस्य कनीयान् भ्राता भागुरायण मालवराजपुत्रो रोहिताक्ष क्षत्रगणमुख्यतमो विजयवर्मा इति ।

(आत्मगतम) एते वय देवस्य कार्येऽवहिता स्म इति ।

(प्रकाशम्) एतावदेतत् पत्रम् ।

हिन्दी अनुवाद—राजा—अच्छा, दूसरा जो प्रयोजन है, उसे भी सुनना चाहता हूँ ।

चाणक्य—उसे भी कह देता हूँ ।

राजा—कह डालिए ।

चाणक्य—शोणोत्तरे ! मेरी ओर से कायस्थ अचलदत्त से कहो कि भद्रभट आदि का लिखा हुआ जो पत्र है, वह दे दो ।

प्रतीहारी—जो आय की आज्ञा । (निकलकर पुन प्रवेश करके) आय ! यह पत्र है ।

चाणक्य—वषल, सुनो ।

राजा—म सुनने में दत्तचित्त हूँ ।

चाणक्य—(पढ़ता है) प्रणामादि के बाद यह विदित हो कि प्रात स्मरणीय महाराज चन्द्रगुप्त के सहोत्थायी (सदा साथ में उठने-बैठने वाले) हम लोगो का जो यहा से भागकर मलयकेतु का आश्रय लेने वाले ह उनका यह पत्र है । उनमें ये लोग ह—राजसेनापति भद्रभट (२) अश्वसेना का सेनापति पुरुषदत्त, (३) महा प्रतीहार चन्द्रभानु का भाजा हिंगुरात, (४) महाराज का आत्मीय महाराज बलगुप्त, (५) महाराज का ही बालसेवक राजसेन, (६) सेनापति सिंहबल का छोटा भाई भागुरायण, (७) मालव का राजकुमार रोहिताक्ष, (८) क्षत्रियो में सवश्रेष्ठ विजयवर्मा । (मन में) ये हम सब महाराज के काय में सावधान ह । (प्रकट) यह पत्र इतना ही है ।

King—Now I wish to hear the other purpose also

Chanakya—That too I will tell you

King—Then let it be told

Chanakya—Sonottara tell Kayastha Achaldas in my name Give me the letter of Bhadrabhatta and others

Warder—As the Noble Sir commands (*Going out and coming back again*) Noble Sir this is the letter

Chanakya—Vrishala listen

King—I am attentive

Chanakya (*Reads*)—Good to you The letter of the chief persons who always associated themselves with Sire Chandra gupta of auspicious name and having deserted from here have joined Malayaketu They are as follows —Bhadrabhatta the master of elephants Purushdatta the master of the horses Hingurata the sister s son of Chandrabhan the chief warder Maharaj Balagupta a distant relation of Sire Rajsena the attendant of Sire himself Bhaguravan the younger brother of the commander in chief Sinhabala Rohitaksha the prince of Malawa Vijayavarman the chief of the warriors (*To himself*) We are attending to the work of the king (*Aloud*) This much is the letter

टिप्पणी

(१) **लेख्यपत्रम**—पत्र चिटठी। पत्र लाकर पढने की बात चाणक्य और च द्रगुप्त के बीच रचा गया नाटक है। जो यक्ति च द्रगुप्त के पास से भाग गये है उनके बारे मे गुप्तचरो के द्वारा सुनकर राक्षस और मलयकेतु उन यक्तियो पर पूण विश्वास कर ले यह इस नाटक का प्रयोजन है। (२) **सहोत्थायिनाम**—साथ उठने-बैठने वालो का जो हमेशा साथ मे रहते थे। (३) **इत अपत्रम्य**—यहा से भागकर। (४) **स्वजनगधी**—सम्ब धी। स्व जन, कमधा०। तस्य गध लेश स्वजनगध। स अस्ति अस्येति स्वजन+ग ध+इति। (५) **कुमार-सेवक**—बचपन से सेवा करने वाला।

राजा—आय ! एतेषामपरागहेतून् श्रोतुमिच्छामि।

चाणक्य—वृषल ! श्रूयताम। अत्र यावेतौ गजाध्यक्षाश्वाध्यक्षौ भद्रभटपुरुषदत्तनामानौ, एतौ खलु स्त्रीमद्यमृगयाशीलौ हस्त्यश्वावेक्षणेऽभियुक्तौ इति स्वाधिकाराभ्यामवरोप्य मया स्वजीवनमात्रेणैव स्थापितावित्यपरक्तौ, गत्वा स्वेन स्वेन चाऽधिकारेण व्यवस्थाप्य मलयकेतुमाश्रितौ। यावेतौ हिङ्ग-

रातबलगुप्तौ, तावत्यन्तलुब्धप्रकृती दत्त धनमबहुमन्यमानौ 'तत्र बहु लभ्येत' इति मलयकेतुमाश्रितौ। योऽप्यसौ भवत कुमारसेवको राजसेन सोऽपि तव प्रसादादतिप्रभूतकोषहस्त्यश्व सहसैव सुमहदैश्वर्यमवाप्य, पुनरुच्छेदशङ्कया मलयकेतुमाश्रित। योऽयमपर सेनापते सिंहबलस्य कनीयान् भ्राता भागुरायण असावपि तत्र काले पवतकेन सह समुत्पन्नसौहाद तत्प्रीत्या च 'पिता ते चाणक्येन घातित' इति रहसि त्रासयित्वा मलयकेतुमपवाहितवान्। ततो भवदपथ्यकारिषु च दनदासप्रभृतिषु निगृह्यमाणेषु स्वदोषाशङ्कयाव्यक्रम्य मलयकेतुमाश्रित। तेना 'प्यसौ मम प्राणरक्षक' इति कृतज्ञतामनुवतमानेन आत्मनोऽनन्तरममात्यपद ग्राहित। यौ तौ लोहिताक्षविजयवर्माणौ, तावप्यतिमानित्वात् स्वदायादेभ्यस्त्वया दीयमानमसहमानौ मलयकेतुमाश्रितौ---इत्येषामपरागहेतव।

हि दी अनुवाद---राजा---आय, इनके नाराज होने का कारण सुनना चाहता हू।

चाणक्य---वषल, सुनो। इन लोगो में जो ये गजाध्यक्ष और अश्वाध्यक्ष भद्रभट्ट और पुरुषदत्त ह वे तो स्त्री, मद्यपान और मृगया में निर तर लगे रहते ह और हस्तिबल तथा अश्वबल के सरक्षण निरीक्षण में सदा असावधान रहते आये ह। इसलिए मने इनको इनके अधिकारो से अलग कर दिया और केवल जीविका निर्वाह मात्र पर रहने दिया। इसी से नाराज हो गये और मलयकेतु से मिल गये और वहा इनको अपना अपना अधिकार मिल गया। इनमें से जो हिंगुरात और बलगुप्त ह वे दोनो बडे लोभी ह, उन्हें जितना भी दो सब थोडा है। उ होंने इसलिए मलयकेतु का सहारा लिया कि उनको मनचाहा धन मिलता रहे। अब इनमें जो तुम्हारी बचपन से सेवा करने वाला राजसेन है जिसे तुम्हारी कृपा से अकस्मात बहुत धन सम्पत्ति और हाथी घोडो का वभव मिल गया वह तो इस भय से मलयकेतु से जा मिला है कि कहीं यह सब किसी समय उससे छीन न लिया जाय। अब सेनापति सिंहबल का छोटा भाई भागुरायण है वह भी उस समय पवतक के साथ मित्रता होने तथा उस (पवतक) के स्नेह के कारण "तुम्हारे पिता को चाणक्य ने ही मरवाया है" ऐसा डरा धमका कर मलयकेतु को यहा से भगा ले गया। फिर आप का अहित करने वाले च दनदास आदि के पकड लिए जाने पर अपने अपराध की आशका से भागकर वह (भागुरायण) मलयकेतु से जा मिला। उस (मलयकेतु) ने भी "यह मेरा प्राणरक्षक है" इस

प्रकार कृतज्ञता का अनुभव करते हुए अपने सन्निकट अमात्य पद पर उसे नियुक्त कर लिया है। अब इनमें जो विजयवर्मा और लोहिताक्ष बचे वे यहाँ से मलयकेतु के पास इसलिए गए ह कि उन्हें तुम्हारे द्वारा उनके सम्बन्धियो को जो कुछ दिया जाता रहा, सह्य नहीं होता रहा और अपने अभिमान पर ठेस लगती प्रतीत होती रही। यही सब इनको विरक्ति के कारण ह।

King—Noble Sir I wish to know the cause why they are dissatisfied

Chanakya—Vrishala listen Bhadrabhatta and Purushdatta respectively the master of elephants and horses are addicted to wine women and hunting and are inattentive to supervision of the elephants and the horses hence I dismissed them from their office and retained them on only a subsistence allowance so they became disloyal and went over to the side of Malaya ketu where they have been kept in their respective capacity As regards Hingurat and Balagupta these two were very greedy fellows and thought the salary given by you to be too little so they deserted you and went over to the side of Malayaketu thinking that they will get more there Regarding your old servant Rajsena he too through your favour suddenly got much wealth elephants and horses and fearing that these might be taken away from him has joined Malayaketu Bhagurayan the younger brother of Simhabala the commander in chief had contracted friendship with Parvatak in those bad times and through love for him had told Malayaketu Your father has been killed by Chanakya and with this invention scared him away Then when your enemies Chandandas and others were being punished he through apprehension due to his own guilt fled away and joined Malayaketu So he out of gratitude that he had saved his life caused him to accept the ministership (*an office next to him in power*) As far those two Lohitaksha and Vijayavarman these two through extreme pride and not tolerating your gifts to their relatives have gone over to Malaya ketu These are the reasons of the disaffection of these men

संस्कृत व्याख्या—एतेषाम भद्रभटादीनाम अपरागहेतून विरागकारणानि श्रोतुम इच्छामि। अत्र भद्रभटादिषु यौ एतौ भद्रभटपुरुषदत्तनामानौ गजाध्यक्षा श्वध्यक्षौ हस्तिपालक अश्वपालक च एतौ उभौ स्त्रीमद्यमगयाशीलौ परस्त्री-गामिनौ मद्यपौ मगयाशीलौ हस्त्यश्वावेक्षणे गजघोटकरक्षणे अनभियुक्तौ असाव धानौ इति अस्मात कारणात स्वाधिकाराभ्याम गजवाजिरक्षणाभ्याम अवरोप्य पृथक्कृत्य स्वजीवनमात्रेणव अल्पात वत्तियुक्तौ स्थापितौ इति अस्मात् कारणात्

अपरक्तौ रागरहितौ (सन्तौ) गत्वा स्वेन स्वेन अधिकारेण व्यवस्थाप्य मलयकेतुम आश्रितौ। मलयकेतुना एक गजाध्यक्ष कृत अपरश्च अश्वाध्यक्ष कृत। यौ एतौ हिङ्गुगतबलगप्तौ तौ द्वावपि लुधप्रकृती अतिलोभयुक्तौ दत्तम धनम् द्रव्यम् अबहुमन्यमानौ स्वल्पमवगच्छन्तौ तत्र मलयकेतुसेवाया बहु अधिक लभ्येत प्राप्येत इति मलयकेतुम आश्रितौ गतौ। योऽपि असौ भवत कुमारसेवक बाल्यसेवक राजसेन सोऽपि तव प्रसादात कृपाया अतिप्रभूतकोषहस्त्यश्वम अतिप्रचुरधनगजाश्वम महत एश्वयम सम्पत अवाप्य लब्ध्वा पुन भूय उच्छेदशङ्कया विनाशभीत्या मलयकेतुम आश्रित। योऽयमपर सेनापते सेनाध्यक्षस्य सिंहबलस्य कनीयान लघुभ्राता भागुरायण असौ अपि तत्र काले मलयकेतुसामीप्यकाले पवतकेन सह समुत्पन्नसौहाद्र समुत्पन्न जात सौहाद मत्री यस्य स तत्प्रीत्या च पवतकस्नेहेन च ते पिता चाणक्येन घातित विनाशित इति एकान्ते त्रासयित्वा भीतिमुत्पाद्य मलयकेतुम अपवाहितवान अस्मात स्थानात दूर नीतवान तत भवदपथ्यकारिषु तवाहितकारिषु चन्दनदासप्रभृतिषु निगृह्यमाणेषु दण्डयमानेषु स्वदोषाशङ्कया स्वापराधभीत्या अपक्रम्य इतो अन्यत्र गत्वा मलयकेतुम् आश्रित। असौ भागुरायण मे प्राणरक्षक इति कृतज्ञताम प्रत्युपकारिताम अनुवतमानेन अपेक्षमाणेन तेन मलयकेतुना आत्मन अनन्तरम अव्यवहितम् अमात्यपदम् मत्रिपद ग्राहित दापित। यौ तो लोहिताक्षविजयवर्माणौ तौ अपि अतिमानित्वात् अभिमानस्याधिक्यात स्वदायादेभ्य निजबधुभ्य त्वया दीयमानम् धनम् असहमानौ सोढुमशक्नुवन्तौ मलयकेतुम आश्रितौ। इति एतेषाम अपरागहेतव विरागकारणानि।

टिप्पणी

(१) **अपराग**—विरक्ति प्रेम का न होना। अप+रञ्ज+घञ भावे। (२) **अनभियुक्तौ**—असावधान। अन+अभि+युज+क्त। (३) **स्वजीवनमात्रेणव**—केवल जीन भर को वेतन देकर। (४) **दत्तम धनम अबहुमन्यमानौ**—जो कुछ दिया जाता था उसे बहुत थोडा समझते हुए। (५) **उच्छेद शकया**—छिन जान के डर से। (६) **तत्र काले**—पाटलिपुत्र के घेरे के समय मे। उस समय पवतक चद्रगुप्त के साथ रहकर उसकी सहायता कर रहा था। (७) **समुत्पन्नसौहाद**—मित्रता करके। (८) **स्वदोषाशकया**—अपने अपराध के डर से। अर्थात यह समझ कर कि कही हमारा अपराध मालूम न हो जाय।

(९) आत्मनोऽनन्तरम—अपने से दूर न था जो। अविद्यमानम अन्तरम अस्य अनन्तरम आत्मन स्वस्य राजपदस्य अनन्तरम अदूरम। (१०) स्वदायादेभ्य — अपने बान्धवो को। दा+घञ कमणि दाय। दायमदन्ति इति दाय+अद+अण कतरि अथवा दायमाददते इति दाय+आ+दा+क कतरि=दायादा। स्वस्य दायादा (ष० त०) तेभ्य।

राजा—आर्य! एवमेतेषु परिज्ञातापरागहेतुषु क्षिप्रमेव कस्मान्न प्रतिविहितमार्येण?

चाणक्य—वृषल! न पारित प्रतिविधातुम्।

राजा—किमकौशलात, उत प्रयोजनापेक्षया?

चाणक्य—कथमकौशल भविष्यति, प्रयोजनापेक्षयैव।

राजा—तदप्रतिविधानप्रयोजनमिदानीं श्रोतुमिच्छामि।

चाणक्य—वृषल! श्रूयतामवधार्यताञ्च।

राजा—उभयमपि क्रियते, कथ्यताम्।

चाणक्य—वृषल! इह खलु विरक्ताना प्रकृतीना द्विविध प्रतिविधानम्—अनुग्रहो निग्रहश्चेति। अनुग्रहस्तावदाक्षिप्ताधिकारयो भद्रभटपुरुषदत्तयो पुन अधिकारारोपणमेव। अधिकारश्च पुनस्तादृशेषु व्यसनयोगादनभियुक्तेषु पुनरारोप्यमाण सकलमेव राज्यस्य मूल हस्त्यश्वमवसादयेत्। हिङ्गुरातबलगुप्तयोरत्यन्तलुब्धप्रकृतिकयो सकलराज्यप्रदानेनाप्यपरितुष्यतोरनुग्रह कथ कर्तु शक्य? राजसेनभागुरायणयोस्तु धनप्रणाशभीतयो कुतोऽनुग्रहस्यावकाश? लोहिताक्षविजयवर्मणोरपि दायादमसहमानयोरतिमानिनो कीदृशोऽनुग्रह प्रीति जनयिष्यतीति परिहृत पूर्व पक्ष। उत्तरोऽपि खलु वयमचिरादधिगतनन्दैश्वर्या सहोत्थायिन प्रधानपुरुषवर्गमुग्रेण दण्डेन पीडयन्तो नन्दकुलानुरक्ताना प्रकृतीनामविश्वास्या भवाम इत्यत परिहृत एव। तदेवमनुगृहीतास्मद्भृत्यपक्षो राक्षसोपदेशश्रवणप्रवणो महीयसा म्लेच्छबलेन परिवृत पितृवधामर्षी पर्वतकपुत्रो मलय-

केतुरस्मानभियोक्तुमुद्यत इति । सोऽय व्यायामकालो नोत्सवकाल इति । अतो दुर्गसस्कारे आरब्धव्ये किं कौमुदीमहोत्सवेन ? इति प्रतिषिद्ध ।

हिदी अनुवाद—राजा—जब इनके अपराग (विराग) के कारण का पता चल गया तो शीघ्र ही इसका उचित प्रतीकार आप ने क्यो नहीं किया ?

चाणक्य—वषल प्रतीकार मुझसे न हो सका।

राजा—किसी असमथता के कारण या प्रयोजन विशेष से।

चाणक्य—असमथता के कारण क्यो ? प्रयोजन विशेष से ही।

राजा—अब म उस प्रयोजन विशेष को सुनना चाहता हूँ।

चाणक्य—वषल, सुनो और समझो।

राजा—आप कहिए, यहा दोनो हो रहे ह (सुनना और समझना)

चाणक्य—वषल, जब राज्य के प्रजाओ में विद्रोह हो जाय तो उसके दो ही प्रतीकार ह। अनुग्रह और निग्रह। भद्रभट और पुरुषदत्त के ऊपर अनुग्रह करना तो यही होता कि उहें पुन उनके पद पर रख दिया जाता। किन्तु क्या ऐसे दुव्यसनी और शासन के अयोग्य व्यक्तियो को उनके पदों पर पुन नियुक्त करना साम्राज्य की जड, और हस्तिसेना एव अश्वसेना को कमजोर करना न होता। हिंगुरात और बलगुप्त तो बडे लोभी प्रकृति के ह, उन्हें तो सारा राज्य देकर भी प्रसन्न नहीं किया जा सकता तो उनके ऊपर कसा अनुग्रह ? राजसेन और भागुरायण जो अपने धन और प्राणनाश का भय रखते ह उन पर भला अनुग्रह का कहा अवसर, इसी प्रकार लोहिताक्ष और विजयवर्मा ह जिन्हें, अपने कुटुम्बियो की उन्नति से ईर्ष्या है और जिनके अभिमान की सीमा नहीं। वे किस प्रकार के अनुग्रह से प्रसन्न किए जा सकते। इसलिए तो पूव पक्ष (अनुग्रह की बात) समाप्त हो गई। अब रहा निग्रह का पक्ष जिसे छोड देना इसलिए उचित समझा गया कि नन्द का ऐश्वय हस्तगत करने वाले हम लोगो के द्वारा यदि नाम मात्र को भी साथ देने वाले प्रमुख राजसेवको को कठोर दण्ड दे देकर पीडित किया जाय तो नन्दकुल से प्रेम रखने वाली प्रजा हम पर कसे विश्वास करेंगी। इस प्रकार हमारा भत्यवग जब उसका साथ दे रहा है और वह (मलयकेतु) राक्षस की शिक्षा सुनने में अनुरक्त है और अपने पिता के मरने के कारण अत्यन्त क्रुद्ध महती सेना से युक्त मलयकेतु हमारे ऊपर आक्रमण करने को उद्यत है तो यह उत्सव का समय नहीं है बल्कि सेना तयार करने का समय हैं।

King—If the reason of the disaffection of these persons was known why did your Nobleself not try to remove it ?

Chanakya—Vrishala that could not be done

King—Was it due to inability or there was some motive behind it

Chanakya—How could it be due to incapacity ? There was some motive behind it

King—I wish to hear the motive

Chanakya—Listen and learn There is two fold remedy for the dissatisfied officers—reward and punishment Re appointment to their respective posts would have been the only reconciliation of Bhadrabhatta and Purushdatta who were dismissed from their offices Re instating such people as are inattentive to their work and are engaged in bad pursuits would ruin the whole of our cavalry and elephant force the very root of the kingdom As reagrds Hingurata and Balagupta they cannot be satisfied even by giving the whole kingdom how then conciliation can be possible There is no room for conciliation to Rajsen and Bhagurayan who are afraid of their life and wealth What kind of favour will please Rohitaksha and Vijaya varman who are very proud and are unable to tolerate their king Therefore the first remedy of conciliation was abandoned The last too indeed has been out of consideration because we have acquired the fortune of Nandas recently and if we inflict severe punishment on high officials who made common cause with us we shall for ever become objects of distrust to such subjects as are attached to the family of Nanda Thus following the advice of Rakshas and showing favour to our servants in this manner Malayaketu the son of Parvataka enraged by the murder of his father is prepared to attack us with a huge army of Mlechhas This is the time for exertion and not festivities and the forts have to be repaired so there is no need of Kaumudi festival and hence it was forbidden

सस्कृत व्याख्या—एवम अनेन प्रकारेण परिज्ञातापरागहेतुषु परिज्ञाता अपरागाणाम विरक्तीनाम हेतव कारणानि येषा तासु क्षिप्रम एव सद्य एव कस्मान्न प्रतिविहितम् प्रतीकार कृत न पारितम उचितम प्रतिविधातुम प्रतिकतुम । किम अबलात शक्तेरभावात वा प्रयोजनापेक्षया प्रयोजनविशेषमुद्दिश्य कथम कौशलम् भविष्यति प्रयोजनापेक्षया एव असामर्थ्यात न अपि प्रयोजनविशेषेण एव अवधायताम विचायता विरक्ताना रागरहिताना प्रकृतीना प्रजानाम द्विविधम द्विप्रकारम प्रतिविधानम प्रतीकार । अनग्रह कृपा निग्रह दण्ड आक्षिप्ताधिकारयो पदच्युतयो अधिकारारोपणम् एव पदे स्थापनमेव व्यसनयोगात स्त्रीमद्यमगया सक्तिदोषात अनभियुक्तेषु अयोग्येषु अवसादयेत विनाशयेत अत्यन्तलुब्धप्रकृतिकयो अतिलोभयुक्तयो सकलराज्यप्रदानेनापि सम्पूणराज्यसमपणेनापि अपरितुष्यतो

सन्तोषम न गच्छतो । परिहित पूव पक्ष अनुग्रह त्यक्त । उत्तरेऽपि खलु निग्रहेऽपि अचिरादधिगतनन्दश्वर्या अबहुकालात अधिगतम प्राप्त नन्दश्वय नन्दराज्य य तादृशा वयम सहोत्थायिनम अस्माभि सह एकात्मतया उत्थायिन कृतोदय नन्दराज्यस्य प्रधानपुरुषवगम मुख्याधिकारिणम उग्रण कठोरेण दण्डेन निग्रहेण पीडयन्त क्लेश ददत न दकुलानुरक्तानाम न दवशेन सह प्रीति कुवताम प्रकृतीना प्रजानाम अविश्वासा अप्रीतिपात्रम् । अनुगहीतास्मदभृत्यपक्ष अनुगहीत अनुकम्पित अस्मदभत्यपक्ष अस्मतसेवकवग येन तादश राक्षसोपदेशश्रवणप्रवण राक्षसोपदेशानुरक्त महीयसा महता म्लेच्छबलेन म्लेच्छसेनया परिवत युक्त पितवधामर्षी जनकवधक्रुद्ध पवतकपुत्र पवतकसुत मलयकतु अस्मान अभियोक्तुम पराभवितुम उद्यत तत्पर स अयम व्यायामकाल सन्यसग्रहकाल नोत्सवकाल नतु कौमुदीमहोत्सवसमय । अत अस्मात कारणात दुगसस्कारे सैन्यएकत्रीकरणे आरब्धव्ये प्रक्रमितव्ये कौमुदीमहोत्सवेन किम कौमुदीमहोत्सवस्य का आवश्यकता । इति अस्माद्धेतो महोत्सव प्रतिषिद्ध निवारित ।

टिप्पणी

(१) **परिज्ञातापरागहेतुषु**—विरक्ति क॰ कारण मालूम हो जाने पर। (२) **न पारितम**—उचित नही था। (३) **अकौशलात**—असमथता के कारण अथवा योग्यता न होने के कारण। (४) **अप्रतिविधानप्रयोजनम**—उपाय न करने का प्रयोजन। (५) **श्रूयतामवधायताम**—सुनो और ध्यान मे रक्खो। श्रूयताम धमसवस्व श्रुत्वा चाप्यवधायताम् । (६) **प्रतिविधानम**—उपाय। प्रति+वि+धा+ल्युट। (७) **आक्षिप्ताधिकारयो**—अपने अधिकार से च्युत किए गए लोग। (८) **अनिलु धप्रकृतिकयो**—अति लोभी स्वभाव वालो का। (९) **धनप्रणाशभीतयो**—राजसेन अपने धन के नष्ट हो जाने के भय से इसलिए आक्रा त था कि शत्रु प्रबल है। कही वह च द्रगुप्त को जीतकर हमारा भी धन न छीन ले। भागुरायण को यह भय था कि मने पवतक को चाणक्य ने मरवाया है—यह बात फला दी है और मलयकेतु को भी डराकर भगा दिया है अत च द्रगुप्त मुझे मरवा देगा । (१०) **पूवपक्ष**—अनुग्रह करना। (११) **अचिराद धिगतन दश्वर्या**—थोडे दिनो से ही जि होने न द का ऐश्वय प्राप्त किया। (१२) **सहोत्थायिनम**—अपना साथ देने वाले। (१३) **अनुगहीतास्मदभत्य**

पक्ष —हमारे नौकरो के ऊपर जिसने अनुग्रह किया। (१४) राक्षसोपदेश-श्रवणप्रवण —राक्षस के उपदेश मे चलने वाला। (१५) पितवधामर्षी—पिता के वध से रुष्ट। ये दोनो मलयकेतु के विशेषण ह। (१६) "यायाम काल —परिश्रम करने का समय। (१७) दुगसस्कारे आरब्धव्ये—किले की मरम्मत आदि करने का समय।

राजा—आय ! बहु प्रष्टव्यमत्र।

चाणक्य —वृषल ! विश्रब्ध पृच्छ। ममापि बह्वाख्येयमत्र।

राजा—एष पृच्छामि।

चाणक्य —अहमप्येष कथयामि।

राजा—योऽयमस्माकमस्य सर्वस्यैवानर्थस्य हेतुर्मलयकेतु स कस्मादार्येणापक्रामन्नुपेक्षित ?

चाणक्य —वृषल ! मलयकेतोरपक्रमणानुपेक्षणे द्वयी गति स्यात्—अनुगृह्येत निगृह्येत वा। अनुग्रहे पूर्वप्रतिश्रुत राज्यार्धं प्रतिपाद्येत। निग्रहे तावत पवतकोऽस्माभिर्व्यापादित इति कृतघ्नताया स्वय हस्तो दत्त स्यात। प्रतिश्रुताधराज्यप्रतिपादनेऽपि पवतकविनाश केवल कृतघ्नतामात्रफल स्यात् इति मलयकेतुरपक्रामन्नुपेक्षित।

राजा—अत्र तावदेवम। राक्षस पुनरिहैवान्तर्नगरे वर्तमान आर्येणोपेक्षित इत्यत्र किमुत्तरमायस्य ?

चाणक्य —राक्षसोऽपि खलु निजस्वामिनि स्थिरानुरागत्वात सुचिरमेकत्रवासाच्च शीलज्ञाना नन्दानुरक्ताना प्रकृतीनामत्यन्त विश्वास्य, प्रज्ञापुरुषकाराभ्यामुपेत, सहायसम्पदा युक्त, कोषबलवानिहैवान्तनगरे वर्तमानो महान्त खल्वन्त: कोपमुत्पादयेत। दूरीकृतस्तु बाह्यकोपमुत्पादयन्नपि न दु ख-साध्यो भविष्यतीत्यतोऽपक्रामन्नुपेक्षित।

राजा—तत किमर्थमिहस्थ एवोपायैर्नोपक्रान्त ?

चाणक्य —अथ कथमपक्रान्तो भविष्यति ? ननु उपायै-

रेवासौ हृदयेशय शङ्कुरिवोद्धृत्य दूरीकृत । दूरीकरणस्य चोक्त प्रयोजनम् ।

राजा—आर्य ! कस्माद्विक्रम्य न गृहीत ?

चाणक्य—वृषल ! राक्षस खल्वसौ विक्रम्य निगृह्यमाण स्वय वा विनश्येत्, युष्मद्बलानि वा विनाशयेत् । एव सत्युभयथापि दोष । पश्य—

हिन्दी अनुवाद—राजा—आर्य, इस विषय में मुझे बहुत पूछना है ।

चाणक्य—बेखटके पूछो । मुझे भी इस विषय में बहुत कहना है ।

राजा—पूछता हूँ ।

चाणक्य—म भी कहता हूँ ।

राजा—हमारी सारी विपत्ति की जड यह मलयकेतु है । जब वह भागने लगा तो उसकी उपेक्षा क्यों की गई ?

चाणक्य—वृषल, मलयकेतु के भागने की उपेक्षा न करने में केवल दो ही बातें हो सकती थीं । पहली उसके अनुग्रह की, दूसरी उसके निग्रह की । अब यदि अनुग्रह की बात होती तो पूर्व सधि के अनुसार उसे आधा राज्य देना पडता और यदि उसका निग्रह किया जाता तब पर्वतक की हत्या करने में हमारी जो कृतघ्नता हुई है उसे हमें अपने ही हाथो हाथ स्वीकार कर लेना पडता । साथ ही साथ यदि प्रतिज्ञात आधा राज्य दे भी दिया जाता तो पर्वतक का विनाश केवल कृतघ्नता मात्र प्रयोजन रखता । इसीलिए तो भागते हुए मलयकेतु की उपेक्षा की गई ।

राजा—इस विषय में तो आपकी यह बात ठीक है । किन्तु राक्षस यहीं नगर के भीतर रहता हुआ आपके द्वारा उपेक्षित कर दिया गया, इस विषय में आपको क्या कहना है ?

चाणक्य—राक्षस को भी यहा से इसलिए जाने दिया गया कि उसमें अपने महाराज के प्रति दृढ भक्ति थी । बहुत दिनो से उसके यहाँ रहते आने के कारण उसके शील से नन्दानुरक्त प्रजाओं का उस पर विश्वास था, वह बुद्धि और पराक्रम से युक्त था, उसके पास सहायक थे, कोषबल भी उसके पास था, वह यहा नगर में रहकर प्रजा में महान विद्रोह पदा कर देता । किन्तु अब जब वह यहाँ से बाहर चला गया तब अधिक से अधिक वह बाहरी विप्लव ही मचा सकेगा जिसका प्रतीकार असाध्य न होगा ।

राजा—किस कारण से आपने उसे यहाँ रहते हुए उपायो से वश में नहीं कर लिया ?

चाणक्य—वह मुझसे भागकर कहाँ जा सकता है ? अरे अपनी बुद्धि से

ही तो हमने हृदय में चुभे हुए काटे के समान उसे निकाल कर बाहर किया और उसे दूर करने का प्रयोजन भी बता चुका हूँ।

राजा—आर्य, वह शक्ति प्रयोग द्वारा क्यो नहीं पकड लिया गया?

चाणक्य—वह राक्षस यदि शक्ति द्वारा पकडा जाता तो या तो वह स्वय अपने को नष्ट कर देता या तुम्हारी सेनाओ का विनाश कर देता। ऐसा होने पर दोनो प्रकार से हानि होती।

King—Arya I have to ask much in this matter

Chanakya—Vrishala ask freely I too have to say much in this matter

King—Here I ask

Chanakya—I also say

King—This Malayaketu is the chief cause of our evil why did your Noble Sir overlook his escape?

Chanakya—Vrishala there would have been only two courses if not overlooked—either he should have been punished or favoured If he would have been favoured the half of the kingdom that was promised to him should have been given to him Had he been punished we should have lent our own hand to the treachery and ingratitude that Parvataka was killed by yourselves In giving him half of the kingdom that was promised, the murder of Parvataka would have had treachery and ungratefulness for its only reward Hence while escaping Malayaketu was overlooked

King—It is so in this matter Rakshas was present here in this very city and he was overlooked by your Noble Sir What explanation is there for this?

Chanakya—Again Rakshas who is wise and has enterprise possesses men and money and is backed by a large number of help rs and is by steady devotion to his king and residence together an object of great confidence to subjects that are still loyal to Nanda and appreciate character would cause serious internal trouble staying within this very city but being sent away he is capable of being forced to subjection somehow by expedients though causing disaffection outside

King—Then why was he not won over by expedients while staying here?

Chanakya—How can he remain exiled? It was by expedients that he was extracted and cast off like a plug rankling in the heart when he was here I have told you the motive in removing him

King—Arya why was he not seized by force?

Chanakya—Vrishala had Rakshas been captured by force

he would have destroyed himself or your whole army In either cases there would have been evil See—

टिप्पणी

(१) विश्रम्भम—विश्वासपूर्वक। विश्वस्त यथा स्यात तथा। यह 'पच्छ' क्रिया का विशेषण है। (२) अपक्रामन्—भागते हुए। अप+क्रम्+शतृ। (३) उपेक्षित —उपेक्षा की गयी। नही रोका गया। (४) अपक्रमणानुपेक्षणे—भागते समय उपेक्षा न करने मे। अपक्रमणस्य अनुपेक्षणे इति (५) पूर्वप्रतिश्रुतम—पहली शर्त के अनुसार पहले वादे के अनुसार पर्वतक को आधा राज्य देने का वादा करके ही तो चाणक्य ने नन्द के ऊपर हमला करने के लिए उसे (पर्वतक को) बुलाया था। (६) कृतघ्नतायाः स्वहस्तोदत्त स्यात—कृतघ्नता को अपने ऊपर दृढ करना होता अर्थात् पर्वतक को मरवा कर हमने जो यह समाचार फैला दिया है कि उसको राक्षस ने मरवाया है, यह बात समाप्त हो जाती और उसके वध का अपयश हमारे मत्थे पडता। क्योकि लोग यह सोचते कि यदि इन्होने नही मरवाया है तो उसके पुत्र को क्यो पकड कर दण्डित किया ? (७) स्थिरानुरक्तत्वात—दृढ प्रेम होने के कारण। यहा हेतौ पञ्चमी है। (८) सुचिरम एकत्रवासाच्च—बहुत दिन तक एक स्थान पर रहने के कारण। (९) विश्वास्य —विश्वासपात्र। (१०) प्रज्ञापुरुषकाराभ्याम उपेत —बुद्धि और पुरुषार्थ से युक्त। (११) सहायसम्पदा—सहायको से, साहाय्यकारिणा सम्पत्त्या। (१२) अन्त कोपम—भीतरी झगडा प्रजाओ मे विद्रोह। (१३) विक्रम्य निगृह्यमाण —बल से पकडे जाने पर। वि+क्रम+ल्यप। नि+ग्रह+शानच। चाणक्य और चन्द्रगुप्त के इस वार्तालाप मे सारी नीति छिपी हुई है। राजनीति के पक्के खिलाडी कौटिल्य ने अपना सारा दाँव-पेंच चन्द्रगुप्त को इस प्रकार बतलाया है।

स हि भृशमभियुक्तो यद्युपेयाद् विनाश
ननु वृषल वियुक्तस्तादृशेनासि पुसा।
अथ तव बलमुख्यान्नाशयेत् सापि पीडा
नवगज इव तस्मात् सोऽभ्युपायैर्विनेय ॥२५॥

अन्वय—ननु वृषल ! भृशम अभियुक्त स यदि विनाशम् उपेयात तादृशेन

पुसा वियुक्त असि, अथ तव बलमुख्यान नाशयेत् सा अपि पीडा। तस्मात् स वनगज इव अभ्युपाय विनेय ॥२५॥

हिन्दी अनुवाद—हे वषल, यदि हमारे द्वारा बल प्रयोग किए जाने पर वह अपने को नष्ट कर देता तो तुम वसे गुणशाली पुरुष को खो बठते, और यदि तुम्हारे सेनानायको को मार डालता तो भी दु ख की बात होती। उसे तो उसी प्रकार बुद्धि से वश में करना है जिस प्रकार एक जगली हाथी वश में किया जाता है।

See—Vrishala if being pressed hard he destroys himself you are in that case deprived of an incomparably good man if on the other hand he kills your chief warriors that again is an injury So he has to be handled by stratagem like a wild elephant

सस्कृत व्याख्या—वषल, स हि राक्षस भशमभियुक्त विक्रम्य निगह्यमाण यदि विनाशम् उपेयात् म्रियेत ननु तादशेन तथाविधन प्रज्ञाविक्रमशालिना पुसा नरेण वियुक्त विरहितो भवसि। सेयमस्माकम प्रथमा पीडा। अथ यदि समाक्रान्त तव बलमुख्यान् सेनानायकान नाशयेत हन्यात सापि पीडवास्माकम् महद्दु खमेव। तत उभयथापि दोषे सति विक्रम्य ग्रहणस्य अविषयोऽसौ। अत वनगज इव वन्यकरीव अभ्युपायै कौशलेन विनय वशीकरणीय इत्यर्थ।

टिप्पणी

(१) **भृशमभियुक्त**—अधिक शक्ति का प्रयोग करके। (२) **तादशेन पुसा**—इस प्रकार के पुरुष से। (३) **वनगज**—जगली हाथी। वनचरो गज वनगज मध्यमपदलोपी स०। (४) **अभ्युपाय**—साम, दान दड और भेद रूप उपायो से। यथा—राक्षस को चन्द्रगुप्त के अमात्य बनने का निमन्त्रण देना=साम उपाय। चन्दनदास को नगरश्रेष्ठी बना देना=दान उपाय। चन्दनदास को फासी का दण्ड देना=दण्ड उपाय। मलयकेतु से राक्षस को अलग करना=भेद उपाय। गज पक्ष मे वशीकरण के साधनो से। यहा उपमा अलकार है और मालिनी छन्द है।

राजा—न शक्नुमो वयमार्यस्य वाचा वाचमतिशयितुम्। सर्वथाऽमात्यराक्षस एवात्र प्रशस्यतर।

चाणक्य—(सक्रोधम्) न भवानिति वाक्यशेष। भो वृषल! तेन कि कृतम्?

राजा—यदि न ज्ञायते, तदा श्रूयताम् । तेन खलु महात्मना—
लब्धाया पुरि यावदिच्छमुषित कृत्वा पद नो गले
व्याघातो जयघोषणादिषु बलादस्मद्बलाना कृत ।
अत्यथ विपुलै स्वनीतिविभवै सम्मोहमापादिता
विश्वास्येष्वपि विश्वसन्ति मतयो न स्वेषु वर्गेषु न ॥२६॥

अन्वय—न गले पद कृत्वा लब्धाया पुरि यावदिच्छम उषितम, अस्मद्-बलाना जयघोषणादिषु बलात व्याघात कृत विपुल स्वनीतिविभव अत्यर्थं सम्मोहम आपादिता न मतय विश्वास्येष्वपि स्वेषु वर्गेषु न विश्वसन्ति ॥२६॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—हम आप की बातो से बात नहीं लड़ा सकते। पर अमात्य राक्षस सब प्रकार श्रेष्ठ है।

चाणक्य—(क्रोध से) "और आप नहीं" इस प्रकार कहकर वाक्य पूरा करो। ऐ वषल, उसने क्या किया ?

राजा—अगर नहीं मालूम है तो सुन लीजिए। उस महात्मा ने शहर के जीते जाने पर भी जब तक चाहा हमारे गले पर पर रखकर नगर में निवास किया। हमारी सेनाओ की विजय घोषणा आदि में जबदस्ती विघ्न पदा किया। उसी को नीति के वभव से हमारी बुद्धि भ्रम में पड गई जिससे कि हम अपने विश्वास पात्रो पर भी विश्वास नहीं कर पाते।

King—We cannot argue with your Noble Sir In this matter minister Rakshas is indeed more praise worthy by all means

Chanakya (with anger)— Not thyself is the ending of your sentence Oh Vrishala what has been done by him ?

King—Listen by that great man—Residence was made in the city captured by us by planting his foot on our very neck as it were as long as he wished hindrance was caused in the proclamation of victory by our forces being confused by the great power of his policy we do not place reliance in even the most trust worthy of our own helpers

सस्कृत व्याख्या—तेन खलु महात्मना विपुलबुद्धिना पुरुषेण न गले पद कृत्वा पादेन तु गले पीडयित्वा अस्मान् विधूय इत्यथ लब्धाया पुरि अस्माभि अधिकृतेऽपि पाटलिपुत्रनगरे यावदिच्छ यावत्काल निवसितुमिच्छा तावत्काल यावती वा इच्छेति स्वेच्छानुसार वा उषितम् स्थितम। येन अस्मदबलानाम् अस्मत सैन्याना जयघोषणादिषु बलात व्याघात कृत प्रत्यूह कृत। तेन विपुलै

सुनीतिविभव अत्यथम सम्मोहमापादिता किंकतव्यविमूढीकृता न अस्माकम मतय बुद्धय विश्वास्येषु अपि विश्वासयोग्येषु अपि स्वेषु वर्गेषु न विश्वसन्ति न विश्वास कुर्वन्तीत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **अतिशयितुम**—उल्लघन करना। आयस्य वाचा वाचम अतिशयितुम—आय की बात से बात नही लडा सकते। (२) **यावदिच्छम**—जब तक जी चाहा तब तक। यावती इच्छा तावत उषितम इति यावदिच्छम। (अव्ययीभाव समास)। (३) न **मतय**—हमारी बुद्धि। यहा अतिशयोक्ति, दीपक तथा उदात्त अलकार है और शादलविक्रीडित छद है।

चाणक्य—(विहस्य) वृषल, एतत् कृत राक्षसेन ?

राजा—अथ किम् ? एतत कृतममात्यराक्षसेन।

चाणक्य—वृषल ! मया पुनर्ज्ञात, नन्दमिव भवन्त-मुद्धृत्य भवानिव भूतले मलयकेतुरधिराज्यमारोपित ।

राजा—अलमुपालभ्य। आय ! दैवेनेदमनुष्ठितम्। किमत्रार्यस्य ?

चाणक्य—हे मत्सरिन् !

आरुह्यारूढकोपस्फुरणविषमिताग्राङ्गुलीमुक्तचूडा
लोकप्रत्यक्षमुग्रा सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घा प्रतिज्ञाम्।
केनान्येनावलिप्ता नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वरास्ते
नन्दा पर्यायभूता पशव इव हता पश्यतो राक्षसस्य ।।२७।।

अन्वय—केन अन्येन लोकप्रत्यक्षम आरूढकोपस्फुरणविषमिताग्राङ्गुली-मुक्तचूडाम उग्रा सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घां प्रतिज्ञाम आरुह्य अवलिप्ता नव नवतिशतद्रव्यकोटीश्वरा ते नन्दा पर्यायभूता पशव इव पश्यतो राक्षसस्य हता ? ।।२७।।

हिदी अनुवाद—**चाणक्य**—(हँसकर) वषल, तुमने क्या कहा कि यह सब राक्षस ने किया ?

राजा—हाँ, यह सब काम अमात्य राक्षस ने किया।

चाणक्य—वषल, मुझे तो ऐसा लगता है जसे उसी ने तुमको गद्दी पर से

नन्द की भाति उठा दिया हो और उस पर मलयकेतु को तुम्हारी भाति बठा दिया हो ।

राजा—उलाहना देना व्यथ है । अरे यह सब तो भाग्य से हुआ है । आपके वश की यह बात कसी ?

चाणक्य—अरे डाह करने वाले, मेरे अलावा ऐसा कौन है जिसने राक्षस के देखते-देखते, सारे ससार की आँखो के सामने अपने शत्रु के नाश करने की वह भयानक प्रतिज्ञा की जिसमें क्रोध के आवेग से कापते शरीर की टेढी अँगुलियो ने शिखा खोल डाली और जिसके द्वारा (निन्यानबे सौ करोड) विपुल धन-सम्पत्ति के स्वामी महाभिमानी राजा नन्द और उनके वशधर बलि के पशुओ की भाँति एक एक करके मार डाले गए।

Chanakya (smılıng)—Vrıshala do you say that all thıs was done by Rakshas ?

Kıng—Yes thıs all was done by Mınıster Rakshas

Chanakya—Vrıshala I thought that Malayaketu was ınstalled as kıng lıke you you havıng been uprooted lıke Nanda

Kıng—Enough of tauntıng Thıs has been done by fate What ıs ın ıt of my Noble preceptor ?

Chanakya—Oh you jealous (fellow) By whom else the Nandas masters of nınety nıne hundred kotıs of gold were kılled one by one lıke beasts of sacrıfice ın the presence of Rakshas after havıng taken before the eyes of the world the grım vow ın whıch the tuft of the haır was untıed wıth the tıps of the fingers that were tremblıng by the sway of anger whıch was aroused and (the vow) whıch ınvolved the complete annıhılatıon of the entıre famıly of the enemy

सस्कृत व्याख्या—केन अपरेण लोकस्य ससारस्य प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर यथा तथा आरूढकोपस्फुरणविषमिताङ्गलीमुक्तचूडाम आरूढ प्रवद्ध य कोप तस्य यत्स्फुरण तीव्रावेशस्तेन विषमिताभि प्रचलिताभि अग्राङ्गलीभि अङ्गुल्यग्रभागै मुक्ता श्लथबधनी चूडा शिखा यस्याम तथाभूताम उग्राम कठिना सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घाम सकलस्य अखिलस्य नि शेषस्येत्यथ रिपुकुलस्य शत्रुकुलस्य य उच्छेद विनाश तेन दीर्घाम दु खसाध्याम प्रतिज्ञाम आरुह्य कृत्वा अवलिप्ता दप्ता नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वरा महाधनिन महैश्वर्यवन्त ते नन्दा प्रसिद्धा नन्दवशीया पर्यायभूता क्रमोपस्थिता पशव इव पश्यतो राक्षसस्य पश्यन्त राक्षसमनादृत्य हता विनाशिता ।

टिप्पणी

(१) एतत्कृत राक्षसेन—च द्रगुप्त के द्वारा राक्षस की प्रशसा मे २६वें

श्लोक मे जो कुछ कहा गया है, उसे अतिसामान्य समझते हुए चाणक्य ने इस बात को व्यग्यपूवक कहा है। (२) **आरूढकोपस्फुरणविषमिताङ्गुलीमुक्तचूडाम**— बढे हुए क्रोध के आवेश के कारण टेढी हुई उगलियो से मुक्त की गई शिखा जिसमे ऐसी प्रतिज्ञा की। यह प्रतिज्ञा का विशषण है। (३) **सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घाम**— सारे शत्रुओ के नाश करने के कारण से कठोर अर्थात सारे रिपुकुल के नाश करने की कठिन प्रतिज्ञा। सकलस्य निखिलस्य रिपुकुलस्य उच्छेदेन विनाशेन दीर्घाम महतीम। (४) **नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वरा**—निन्यानवे सौ करोड मुद्राओ के स्वामी अर्थात बडे धनी। (५) **पर्यायभूता**—एक एक करके। (६) **पश्यतो राक्षसस्य**—राक्षस के देखते देखते। पश्यन्त राक्षसमनादृत्येत्यथ। यहा अनादरे षष्ठी है। (७) **अधिराज्यम**—राज्य मे। राज्ये इति अधिराज्यम अव्ययीभाव स०। इस श्लोक मे अर्थापत्ति तथा उपमा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

अपि च,

गृध्रैराबद्धचक्रं वियति विचलितैर्दीर्घनिष्कम्पपक्षै-
र्धूमैर्ध्वस्ताकभासा सघनमिव दिशा मण्डल दशयन्त।
नन्दैरानन्दयन्त पितृवननिलयान् प्राणिन पश्य चैतान्
निर्वान्त्यद्यापि नैते स्रुतबहलवसावाहिनो हव्यवाहा ॥२८॥

अन्वय—पश्य दीघनिष्कम्पपक्षै आबद्धचक्र वियति विचलित गध्र धूम ध्वस्ताकभासा दिशा मण्डल सघनमिव दशयन्त पितवननिलयान एतान प्राणिन नन्दै आनन्दयन्त एते स्रुतबहलवसावाहिन हव्यवाहा अद्यापि न निर्वान्ति ॥२८॥

हिन्दी अनुवाद—जले मरे (नन्दो की मास मज्जा से) श्मशानवासी जीवों को आनन्द देने वाली ये ज्वालायें और नन्द के वशधरो की पिघलती हुई चर्बियों से युक्त ये आग की लपटें, लम्बे और निश्चल पखों से मण्डल बनाकर आकाश में उडते हुए गध्रों के रूप में धुओ से प्रत्यक्ष प्रतीत होने वाली दिशाओ के समूह को मानों मेघों से आच्छादित दिखलाती हुई तथा सूर्यालोक को नष्ट करती हुई (ज्वालायें) अभी बुझी कहाँ ह?

Even today are present the fires which burnt the Nandas and cause the large amount of fat to flow making happy the creatures that live on the cremation ground and which cause all the quarters to appear as if clouded with the sunlight dimmed

by smoke in the shape of Vultures hovering in the sky in circles with wide and steady wings

सस्कृत व्याख्या—पश्य अवलोकय दीघनिष्कम्पपक्ष दीर्घा आयता निष्कम्पा कम्पनरहिता ये पक्षा त आबद्धचक्र विरचितमण्डल यथा स्यात्तथा वियति गगने विचलितै उडडीयमानै गध्र धूम गध्ररूपधूमै ध्वस्ताकभासाम ध्वस्ता नष्टा अकभास सूयकिरणा यासु तासा स्थगितरविकिरणनिकराणाम दिशाम मण्डल दिकचक्रवाल सघनमिव घना धकारितमिव दशयन्त पितवननिलयान श्मशानवासिन एतान् प्राणिन जीवान नन्दयन्त पीडयन्त एते स्नुतबहलवसावाहिन नन्दाना श्रुता गलिता या बहला प्रचुरा वसा मज्जा ता ये वाहयन्ति स्रोत क्रमेण निस्सारयन्ति तादशा अर्थात दह्यमानदेहच्युतमेदोमज्जितास्सन्त हव्यवाहा अग्नय अद्यापि न निर्वान्ति न प्रशाम्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **दीघनिष्कम्पपक्ष**—लम्बे और न हिलने वाले पखो से। (२) **आबद्ध चक्रम**—मण्डल बनाकर। आबद्धानि चक्राणि यस्मिन कमणि तत यथा स्यात्तथा (अव्ययीभाव)। (३) **गध्र धूम**—गिद्ध रूपी धुओ से। यहा व्यस्त रूपक है। कई दिन पूव जली हुई चिता मे अगारमात्र शेष रह गये हैं। उनमे अब वास्तविक धूम नही है। अत गध्रो को धूम के रूप मे वर्णित किया गया है। (४) **ध्वस्ताकभासाम**—सूय की किरण को छिपाने वाली यह दिशा का विशेषण है। ध्वस्ता अकभास यासु तासाम ब० व्री०। (५) **पितवननिल यान**—श्मशान घाट पर रहने वाले जीवो को। (६) **स्नुतबहलवसावाहिन**—निकलती हुई जो प्रचुर मज्जा उसे बहाने वाली। बहल—प्रचुर। वसा—मज्जा, चर्बी। यह हव्यवाहा का विशेषण है। (७) **हव्यवाहा**—आग। हव्य वहन्ति देवेभ्य प्रापयन्ति इति हव्य+वह+अण। इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

राजा—अन्येनैवेदमनुष्ठितम।
चाणक्य—आ केन?
राजा—नन्दकुलविद्वेषिणा दैवेन।
चाणक्य—दैवमविद्वास प्रमाणयन्ति।

चाणक्य —(सक्रोधम्) वृषल ! भृत्यमिव मामारोढु-मिच्छसि ?

शिखा मोक्तु बद्धामपि पुनरय धावति कर ।
(भूमौ पादप्रहार कृत्वा)
प्रतिज्ञामारोढु पुनरपि चलत्येष चरण ।
प्रणाशान्नन्दाना प्रशममुपयात त्वमधुना
परीत कालेन ज्वलयसि मम क्रोधदहनम् ॥२९॥

अन्वय—अय कर बद्धाम अपि शिखा मोक्तु पुन धावति एष चरण पुन अपि प्रतिज्ञाम आरोढु चलति कालेन परीत त्वम नन्दाना प्रणाशात प्रशमम उपजात क्रोधदहनम अधुना पुन ज्वलयसि ॥२९॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—यह सब काम दूसरे के द्वारा सपादित किया गया।
चाणक्य—किसके द्वारा ?
राजा—नन्दकुल के द्वेषी दव (भाग्य) से।
चाणक्य—मूर्ख लोग भाग्य को प्रमाण मानते है।
राजा—विद्वान भी शेखी नहीं बघारते।
चाणक्य—(क्रोध से) वृषल, नौकर के समान मुझ पर शासन करना चाहते हो। बाँधी हुई चोटी को खोलने के वास्ते यह हाथ पुन बढ़ रहा है। (पृथ्वी पर पैर पटक कर) यह पैर फिर भी प्रतिज्ञा करने के लिए उठ रहा है। नन्दो के नाश से शान्ति को प्राप्त मेरी क्रोधाग्नि को काल के वशीभूत होकर तुम फिर से जलाना चाहते हो।

King—This has been done by another
Chanakya—Ah by whom ?
King—By fate which is the enemy of the Nandas
Chanakya—The ignorant persons believe in fate
King—The wise people do not brag
Chanakya (with anger)—Vrishala do you wish to crush me like a slave ? This hand too runs to untie the crest which is tied (already) (Stamps the ground with his foot) This foot too moves to make a vow Being urged by death you are again enkindling the fire of anger that was extinguished through the extinction of the Nandas

संस्कृत व्याख्या—वृषल, अय कर मम हस्त बद्धामपि शिखा नन्दवश-नाशात पूर्णप्रतिज्ञत्वात चूडा मोक्तुम अबन्धना कर्त्तु पुन धावति भूय प्रसरति।

एष चरण मदीय पाद अपि पुन प्रतिज्ञाम आरोढुम मद्बमानिन विनाशयिष्या-मीति प्रतिज्ञापथेनाऽतिसकटेन सञ्चरितुम पुनरपि चलति अग्रेसरो भवति। कालेन परीत मत्युवश गत त्वम नन्दाना प्रणाशात मरणात प्रशमम उपजातम प्रशान्त क्रोधदहनम कोपाग्निम अधुना सम्प्रति पुन ज्वलयसि प्रदीपयितुमुत्सहसे।

टिप्पणी

(१) **अविद्वास**—मूख। (२) **अविकत्थना**—डीग न मारने वाले, (३) **मामारोढुम**—मेरे ऊपर रहना मुझे तुच्छ समझना। आ+रुह्+तुमुन=आरोढुम। (४) **बद्धाम**—बध+क्त+टाप। यहाँ ध्यान रहे कि चाणक्य ने अब तक अपनी शिखा बाधी नही है। क्योकि वह प्रकरण की समाप्ति पर कहता है—पूणप्रतिज्ञेन मया केवल बध्यते शिखा। प्रथम अक की प्रस्तावना के बाद भी कहा गया है कि तत प्रविशति मुक्ता शिखा परामशन कुपित चाणक्य। अत यहा बद्धाम का अथ बद्धप्राय है। (५) **कालेन परीत**—काल के वशीभूत होकर। इसमे निरगरूपक अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

राजा—(सावेग स्वगतम्) अये ! तत् कथ सत्यमेव कुपित आय ? तथाहि—

सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामयापि
भ्रूभङ्गोद्भेदधूम ज्वलितमिव पुर पिङ्गया नेत्रभासा।
मन्ये रुद्रस्य रौद्र रसमभिनयतस्ताण्डवे सस्मरन्त्या
सञ्जातोदग्रकम्प कथमपि धरया धारित पादघात ॥३०॥

अन्वय—सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामया अपि पिङ्गया नेत्र-भासा भ्रूभङ्गोदभेदधूम पुर ज्वलितमिव। मन्ये ताण्डवे रौद्र रसम अभिनयतः रुद्रस्य सस्मरन्त्या धरया पादघात कथमपि सञ्जातोदग्रकम्प धारित ॥३०॥

हिन्दी अनुवाद—राजा (आवेग के साथ अपने मन में) तो क्या सचमुच आय कुपित ह? क्योकि—

इनके नेत्रो की पिङ्गल वण कान्ति क्रोध के कारण कम्पायमान पलको से निकलते हुए अश्रुकणो से धोने के कारण क्षीण होने पर भी मानो टेढ़ी भ्रू रूपी धुयें के साथ एकाएक प्रज्वलित हो उठी है। पथ्वी ने इनके पदाघात को उग्र कम्पन के साथ इस प्रकार सहन कर लिया है मानों ऐसा मालूम पडता है कि उसे रौद्ररस के अभिनयकारी भगवान शङ्कर के ताण्डव का स्मरण हुआ हो।

King (with agitation to himself)—Is then Noble preceptor really angry ? The fiery glow of his eyes though made weak by the tears dropping from the eyelashes that are quivering in anger seems to have been ablaze as it were and the frowning of the eyebrows appears to be its smoke I think that the stamping of the foot has been tolerated by the earth somehow with great shock felt as she remembered of Rudra displaying the Rudrarasa at his dances (tandawa)

सस्कृत व्याख्या—सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामया सरम्भेण क्रोधावेशेन स्पन्दीनि उत्कम्पवन्ति यानि पक्ष्माणि तेभ्य क्षरत निस्सरद यदमल जल क्रोधाश्रु तेन कृत यत् क्षालन तेन क्षामया क्षीणया अपि पिङ्गया अरुणया नेत्रभासा नेत्रदीप्त्या भ्रूभङ्गोदभेदधूम भ्रुवोभङ्गोद्भेद एव धूमो यस्मिन कर्मणि तद यथा तथा पुर ज्वलितमिव अग्रे प्रदीप्तमिव मन्ये शङ्के ताण्डवेषु विकट विक्रान्तनृत्येषु रौद्र रसमभिनयत हृदगत क्रोध कायमनोवाग्व्यापारै प्रकाशयत रुद्रस्य शिवस्य सस्मरन्त्या स्मृतिं कुर्वता धरया पृथिव्या पादघात पादप्रहार कथमपि केनापि प्रकारेण कष्टेन सञ्जातोदग्रम् सञ्जात समुदभूत उदग्रो विकट कम्पो यस्मिन् कर्मणि तद यथा तथा धारित सोढ इत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **सत्यमेवार्य कुपित**—चन्द्रगुप्त सोचता है कि मने तो आर्य चाणक्य के आदेशानुसार ही यह वाद विवाद करके उन्हे कृत्रिम रूप से कुपित करने का नाटक किया है। किन्तु प्रतीत होता है कि आर्य चाणक्य यथार्थ मे कुपित हो गये ह। (२) **सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामया**—क्रोध से हिलती बरौनियो से निकलता हुआ जो अश्रु प्रवाह उससे धुल जाने से क्षीण हो गई है जो (नेत्रकान्ति)। यह नेत्रभासा का विशेषण है। (३) **भ्रूभङ्गोद्भेदधूमम**—भृकुटी रूप धुएँ से युक्त। भ्रूभगस्य उद्भेद स एव धूमो यत्र तत् यथा स्यात्तथा। (४) **धरया**—पृथ्वी से। धरा शब्द का तृतीया का एकवचन है। (५) **सञ्जातोदग्रकम्पम**—विशेष उत्कम्पन के साथ। क्रियाविशेषण अव्यय है। सजात उदग्र कम्प यस्मिन् कर्मणि तत् यथा स्यात्तथा। इसमे रूपक और उत्प्रेक्षा अलकार ह तथा स्रग्धरा छन्द है।

चाणक्य—(कृतक कोप सहृत्य) वृषल, वृषल, अलमुत्तरोत्तरेण यद्यस्मत्तो वरीयान राक्षसोऽवगम्यते

नाशाय भविष्यतीति भाव । आवयोर्भेदार्थं प्रयुक्ता नीति युवयोर्भेद साधयिष्यति इत्याशय ।

टिप्पणी

(१) **कृतककोपम**—नकली (ऊपरी) क्रोध। कृत एव कृतक । (२) **उत्तरोत्तरेण**—जवाब-सवाल से उद+त+अप=उत्तरम । उत्तरस्य उत्तरम उत्तरोत्तरम तेन। अल योगे ततीया' है। (३) **गरीयान**—अधिक श्रेष्ठ। अतिशयेन गुरु इति गुरु+ईयसुन् । (४) **कौटिल्यबुद्धिविजिगीषो**—कौटिल्य की बुद्धि को परास्त करने के इच्छुक। एष बुद्धे प्रकष—इतनी ही बुद्धि है। भाव यह है कि क्या तुम्हारी कौटिल्य को जीतने की इतनी ही बुद्धि है। (५) **चलितभक्तिम**—विचलित भक्ति वाले को। चलिता भक्ति यस्य त। (६) **तव दूषणाय**—तुम्हारे नाश का कारण होगा। दुष+णिच+ल्युट भावे, दोषो णौ इत्यनेन ऊत्वम=दूषणम तस्म। 'क्लपि सपद्यमाने' से यहा चतुर्थी हुई है। यहा विषमालकार है और वसन्ततिलका छन्द है।

राजा—आय वैहीनरे! अद्य प्रभृत्यनादृत्य चाणक्य चन्द्रगुप्त स्वयमेव राज्यकार्याणि करिष्यतीति गृहीतार्था प्रकृतय क्रियन्ताम।

कञ्चुकी—(स्वगतम्) कथ निरुपपद एव चाणक्यो नार्यं चाणक्य इति। हन्त! सत्यमेव हृतोऽधिकार । अथवा न खल्वत्र वस्तुनि देवदोष । कुत—

स दोष सचिवस्यैव यदसत कुरुते नृप ।
याति यन्तु प्रमादेन गजो व्यालत्ववाच्यताम ।।३२।।

अन्वय—नप यत असत् कुरुते स सचिवस्यव दोष । यन्तु प्रमादेन गज व्यालत्ववाच्यता याति ।।३२।।

हिन्दी अनुवाद—राजा—आय वहीनरि, "आज से चाणक्य का अनादर कर चन्द्रगुप्त स्वय राजकाय करेगा" यह बात प्रजा में घोषित कर दो।

कञ्चुकी—(अपने मन में) क्यों बिना किसी आदरसूचक विशेषण के ही "चाणक्य' कहा "आय चाणक्य' नहीं कहा। कष्ट है कि अधिकार छीन लिया गया। अथवा इस विषय में महाराज का दोष नहीं है, क्योंकि—यह मन्त्री का ही दोष है जो कि राजा अनुचित काय करता है। (क्योंकि) महावत की असावधानी से ही हाथी को "दुष्ट हाथी" होने की निन्दा प्राप्त होती है।

King—Arya Vaihinari let it be proclaimed among the people that from today Chandragupta will conduct all the affairs of state ignoring Chanakya.

Chamberlain (to himself)—How is that he says Chanakya without adding any respectful word not Noble Chanakya Alas the rights are taken away Or in this matter the fault is not of the king For—It is through the minister s fault that the king does some wrong action The elephant earns the title of Rogue through the carelessness of the keeper

संस्कृत व्याख्या—नृप राजा यत असत अनुचितम् कार्य करोति तत सचिवस्य एव मन्त्रिण एव अपराध न तु नृपस्य। यन्तु हस्तिपकस्य प्रमादेन असावधानतया गज करी व्यालत्ववाच्यता दुष्टगजत्वेन वाच्यता निन्दनीयता याति।

टिप्पणी

(१) **अद्यप्रभृति**—आज से। (२) **गृहीतार्था प्रकृतय क्रियन्ताम**—प्रजावर्ग को अवगत करा दिया जाय। इति अनेन प्रकारेण गृहीत परिज्ञात अर्थ वस्तु याभि (बहुव्रीहि स०) ता। (३) **निरुपपद**—बिना किसी आदर-सूचक शब्द के (लगाए)। (४) **व्यालत्ववाच्यताम**—दुष्ट हाथी की पदवी। व्यालो दुष्टगजे सर्पे इति हैम। व्याल—दुष्ट हाथी। यहा दृष्टान्त अलकार और अनुष्टुप छन्द ह।

राजा—आर्य! किं विचारयसि?

कचुकी—देव! न किञ्चिद्विचारयामि, किन्तु एतद्विज्ञापयामि, दिष्ट्या देव इदानी देव सवृत्त इति।

राजा—(आत्मगतम्) एवमस्मासु गृह्यमाणेषु स्वकार्यसिद्धिकाम, सकामो भवत्वार्य। (प्रकाशम) शोणोत्तरे! अनेन शुष्ककलहेन शिरोवेदना मा बाधते, तच्छयनगृहमादेशय।

प्रतीहारी—एदु एदु महाराओ। (एतु एतु महाराज।)

हिन्दी अनुवाद—राजा—क्या सोच रहे हो?

कञ्चुकी—कुछ नहीं महाराज, बस यही कहना चाहता हूँ कि आज महाराज, महाराज हुए।

राजा—(स्वगत) इस प्रकार (लोगो के द्वारा) हम लोगो के (यथार्थ कलह किये हुए) समझ लिये जाने पर अपने कार्य की सिद्धि चाहने वाले आर्य पूर्णकाम

हों। (प्रकट) शोणोत्तरे! इस व्यर्थ के विवाद से मेरा सिर दब कर रहा है, मुझे शयन-गृह में ले चलो।

प्रतीहारी—महाराज, इधर आवें।

King—What are you thinking of ?

Chamberlain—Nothing Sire I want to say only this that luckily sire has become a (real) king now

King (*to himself*)—May the desires of Noble Preceptor who expects success in the undertaking be fulfilled when people are thinking thus about us (*Aloud*) sonottara due to this dry wrangle I am feeling headache Show me the bed room

Warder—Come let sire come

राजा—(आसनादुत्थायात्मगतम)

आर्याज्ञयैव मम लङ्घितगौरवस्य
बुद्धि प्रवेष्टुमवनेर्विवर प्रवृत्ता।
ये सत्यमेव न गुरून् प्रतिमानयन्ति
तेषा कथ नु हृदय न भिनत्ति लज्जा ॥३३॥

(इति निष्क्रान्ता सर्वे।)

॥ इति तृतीयोऽङ्क ॥

अन्वय—आर्याज्ञया एव लङ्घितगौरवस्य मम अवने विवर प्रवेष्टु बुद्धि प्रवृत्ता। ये सत्यमेव गुरून् न प्रतिमानयन्ति तेषा हृदय लज्जा कथ नु न भिनत्ति ? ॥३३॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—(आसन से उठकर स्वगत) ओह जब कि आर्य की आज्ञा से उनके गौरव का हमने अतिक्रमण किया तब यदि हमारा हृदय ऐसा अधीर हो उठा है जैसे पाताल में धँस जाना चाहता हो तब भला उन लोगो का हृदय तो लज्जा से फट ही जाना चाहिए जो अपने बडो का सचमुच ही अपमान किया करते हैं। (सभी पात्र बाहर चले जाते ह।)

॥ तीसरा अङ्क समाप्त ॥

King (*Rising from his seat to himself*)—I who have transgressed the bounds of respectfulness by the order of the Noble Preceptor intend to enter a hole in the earth how is it that the heart of those who purposely insult their elders is not rent as under with shame ? (*all depart*) (End of the third act)

संस्कृत व्याख्या—आर्याज्ञया आर्यस्य गुरोश्चाणक्यस्य आज्ञया आदेशेनैव न

तु निजमत्या लघितगौरवस्य लंघितम उत्क्रान्तम गौवरम मर्यादा येन तादृशस्य मम अवने पथिव्या विवर रध्रम प्रवेष्टुम बुद्धि प्रवत्ता मति सञ्जाता ये जना सत्यमेव गुरून प्रतिमानयन्ति अवमानयन्ति लज्जा तेषा हृदय कथ न भिनत्ति विदारयति ।

टिप्पणी

(१) **स्वकार्यसिद्धिकाम**—अपने काम की सिद्धि चाहने वाला । स्वकार्यस्य सिद्धिम् कामयते तादृश । (२) **शुष्ककलहेन**—सूखा विवाद, व्यर्थ का कलह । (३) **लघितगौरवस्य**—गौरव का लघन करने वाले का अर्थात अपमान करने वाले का । (४) **अवने विवरम**—पृथ्वी के छेद मे अर्थात पृथ्वी के अन्दर । (५) **प्रतिमानयन्ति**—अपमानित करते ह । प्रति+मान्+णिच+लट । इस श्लोक मे परिसख्या, काव्यलिग तथा अर्थापत्ति अलकार ह और वसन्ततिलका छन्द है ।

चतुर्थोऽङ्क

(तत प्राविशत्यध्वगवेष पुरुष ।)

पुरुष —हीमाणहे हीमाणहे । (आश्चर्यमाश्चर्यम् ।)

जोअणसअ समधिअ को णाम गदागद इह करेइ ।
अत्थाणगमणगुरुई प्पहुणो अण्णा जइ ण होइ ॥१॥
(योजनशत समधिक को नाम गतागतमिह करोति ।
अस्थानगमनगुरुका प्रभोराज्ञा यदि न भवति ॥१॥)

अन्वय—अस्थानगमनगुरुका प्रभो आज्ञा यदि न भवति को नाम इह समधिक योजनशत गतागत करोति ? ॥१॥

हिन्दी अनुवाद—(पथिक के वेष में एक पुरुष का प्रवेश)

पुरुष—आश्चय है, आश्चय है ! यदि स्वामी की महान आज्ञा न होती तो ऐसा कौन व्यक्ति है जो असमय में सकडो योजन से भी ज्यादा दूर का आना जाना करता ?

(*Now enters a person dressed as a traveller*) *Traveller*—Oh ! wonder wonder Had there not been the heavy order of the master who would have come and gone back over a hundred yojans and more at this odd time

संस्कृत याख्या—अस्थानगमनगुरुका अनवसरे यत गमन तेन गुरुका गुर्वी प्रभो स्वामिन अमात्यस्य आज्ञा आदेश यदि चेत न भवति तर्हि को नाम मद्भिन्न इह अस्मिन लोके समधिक योजनशतम गतागतम तत्र ततो वाऽत्र गमनागमन करोति । न कोऽपीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **अध्वगवेष**—पथिकवेषधारी । पथिक के वेश मे यह राक्षस का गुप्तचर करभक है । यह राक्षस की आज्ञा से कुसुमपुर मे वतालिक के वेश मे रहते हुए राक्षस के ही एक दूसरे गुप्तचर—स्तनकलश को सन्देश देकर और वहा का समाचार लेकर वापस आया है । अध्वान गच्छतीति अध्वग तस्य वेष अध्वगवेष इव वेष अस्येति बहुव्रीहि । (२) **समधिकम**—सङ्गतमधिकेन

प्रादि तत्पुरुष। समधिक योजनशतम। सौ योजन से अधिक। (३) **अस्थान गमनगुरुका**—असमय मे जाने के कारण महान। (४) **गतागतम**—आना-जाना। गतञ्च आगतञ्च गतागतम समाहार द्वन्द्व। इस पद्य मे काव्यलिंग अलकार तथा आर्या छन्द है।

ता जाव अम्मच्चक्खूवसस्स ज्जेव गेह् गच्छामि (परिश्रान्तवत् परिक्रम्य) भो ! को एत्थ दुआरिआणम् ? णिवेदेह् दाव भट्टिणो अमच्चरक्खसस्स, एसो क्खु करह्को करह्क विअ कज्ज तुवरन्तो पाडलिपुत्तादो आगदोऽत्ति (तद्यावदमात्यराक्षस्यैव गेह गच्छामि। भो ! कोऽत्र दौवारिकाणाम्? निवेदय तावत भर्तु अमात्यराक्षसस्य। एष खलु करभक करभक इव कार्यं त्वरयन् पाटलिपुत्रादागत इति)।

हिन्दी अनुवाद—तो अब अमात्य राक्षस के ही घर जाता हू। (थके हुए के समान घूमकर) अरे यहाँ कौन द्वारपाल है? जाकर स्वामी अमात्य राक्षस से निवेदन करो कि करभक हाथी के बच्चे के समान काम को जल्दी से पूरा करके पाटलिपुत्र से आ गया है।

Then meanwhile I shall enter the house of minister Rakshas (*Going round as if tired*) Which of the watchman is here ? Inform Minister Rakshas that Karbhak like an elephant cub has come hastily from Pataliputra after performing his function

टिप्पणी

(१) **काय त्वरयन**—काम को शीघ्रता से पूरा करके। (२) **करभक इव**—हाथी के बच्चे के समान। करभक गुप्तचर का नाम भी है। (३) **दौवारिकाणाम क**—द्वारपालो मे से कौन।

दौवारिक —(प्रविश्य) भद्द ! मा उच्च यन्तेहि। एसो अमच्चो भट्टा कज्जचिन्ताजणिदेण जाअरेण समुप्पणसीसवेअणो अज्ज बिदाव ण सअणदल मुञ्चदि, ता चिट्ठदाव मुहुत्तअ जाव से लद्धावसरो भविअ भवदो आगमण णिवेदेमि। (भद्र ! मा उच्चैमन्त्रय। एष खलु भर्ता अमात्यराक्षस

कार्यचिन्ताजनितेन जागरेण समुत्पन्नशीर्षवेदनोऽद्यापि तावत् न शयनतल मुञ्चति । तस्मात् तिष्ठ तावन्मुहूर्तं यावत् तस्य लब्धावसरो भूत्वा भवत आगमन निवेदयामि) ।

पुरुष —भद्दमुह जधा दे रोग्रदि (भद्रमुख, यथा ते रोचते)

(तत प्रविशति शयनगत आसनगतेन शकटदासेन सह चिन्तित राक्षस)

राक्षस —(आत्मगतम्)

हिन्दी अनुवाद—द्वारपाल—(प्रवेश करके) भद्र ! जोर से मत बोलो। स्वामी अमात्य राक्षस को काय की चिन्ता से जागरण करने के कारण सिर में पीडा हो रही है और उन्होने अब भी शय्या को नहीं छोडा है। इसलिए एक मुहूर्त्त तक रुको । जब तक अवसर पाकर आपका आना म उनसे निवेदन कर दू ।

पुरुष—भद्रमुख, जसी तुम्हारी इच्छा ।

(तब शयनगत चिन्तामग्न राक्षस शकटदास के साथ प्रवेश करता है)

राक्षस—(मन में)

Door keeper (*Entering*)—Gentleman do not talk so loudly Here Minister Rakshas suffering from headache caused by the wakefulness due to anxiety of state affairs does not leave the bed as yet So wait a moment getting an opportunity I shall inform him of your arrival

Traveller—Good man as you like it

(Now seated in his bed enter Rakshas with Shakatdas engaged in meditation)

Rakshas—(*To himself*)

टिप्पणी

(१) कायजनितचिन्ताजनितेन—काम के कारण उत्पन्न चिन्ता से । (२) समुत्पन्नशीषवेदन —सिर में पीडा युक्त । समुत्पन्ना शीर्षे वेदना यस्य स । (३) दौवारिक —द्वारपाल । द्वार+ठक द्वारादीना च इति सूत्रेण ऐजागम ।

मम विमृशत कार्यारम्भे विधेरविधेयता
सहजकुटिला कौटिल्यस्य प्रचिन्तयतो मतिम् ।
अथ च विहिते मत्कृत्याना निकाममुपग्रहे
कथमिदमिहेत्युन्निद्रस्य प्रयान्त्यनिश निशा ।।२।।

अन्वय—कार्यारम्भे विधे अविधेयता विमशत कौटिल्यस्य सहजकुटिला मतिं प्रचिन्तयत अथ च मत्कृत्याना निकामम उपग्रहे विहिते इह इद कथम् इति अनिशम् उन्निद्रस्य मम निशा प्रयान्ति ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—काय प्रारम्भ करते ही भाग्य की प्रतिकूलता सोचते हुए और कौटिल्य की स्वाभाविक कुटिलनीति पर विचार करते हुए तथा अपने कामो के असफल हो जाने पर म सोचने लग जाता हूँ कि "यहा यह कसे हुआ" इस प्रकार निरन्तर चिन्ता में लगा रहता हूँ और जागते-जागते ही मेरी रातें व्यतीत हो जाती ह ।

As soon as I undertake some work fate becomes perverse and I brood over this perversity then again I weigh cunning designs of Kautilya and my undertaking being unsuccessful I begin to think how this happened here in this way being engrossed in meditation I pass my nights without any sleep

संस्कृत व्याख्या—कार्यारम्भे कृत्योपक्रमप्रभत्येव विधे भाग्यस्य अविधेयता प्रतिकूलता विमशत चिन्तयत अपि च कौटिल्यस्य चाणक्यस्य कुटिला मतिं वक्र नय प्रचिन्तयत विचारयत अथ च मत्कृत्यानाम मदीयव्यापाराणा निकामम सर्वाङ्गीणम उपग्रहे प्रतीकारे विहिते साधिते इह इद कथ निश्चितसाफल्ये इदमचिन्तित वैफल्य कथ कस्मात्कारणात इति अनिशम सवदा उन्निद्रस्य निद्रा रहितस्य मम निशा रात्रय प्रयाति व्यतियान्ति । या चिन्ता कार्यारम्भे सा एव आरब्धेऽपि कार्ये इति निद्रा नैव लभे इत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **विधे**—भाग्य की । (२) **अविधेयता**—प्रतिकूलता । (३) **उपग्रह**—विफलता । (४) **उन्निद्रस्य**—जागते हुए का । उदगता निद्रा यस्य स । इस श्लोक मे समुच्चय अलकार तथा हरिणी छन्द है । छन्द का लक्षण—नसमरस लागा षड्वेदैर्हयहरिणी मता' ।

अपि च

कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयस्तस्य विस्तारमिच्छन्
बीजाना गर्भितानाम् फलमतिगहनम् गूढमुद्भेदयश्च ।
कुर्वन् बुद्ध्या विमर्शं प्रसृतमपि पुन सहरन् कार्यजातम्
कर्ता वा नाटकानामिममनुभवति क्लेशमस्मद्विधो वा ॥३॥

अन्वय—आदौ तनुमपि कार्योपक्षेप रचयन तस्य विस्तारमिच्छन गर्भिताना बीजानाम अतिगहन फल गूढमुद्भेदयश्च बुद्धया विमश कुवन प्रसतम अपि कायजात पुन सहरन नाटकाना कर्ता वा अस्मद्विधो वा इम क्लेशम अनुभवति ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—ओह! कसा विचित्र कष्ट भोगना पड रहा है। यह राजनीति भी कसा नाटक है। जो कष्ट नाटककार को भोगना पडता है वही कष्ट मुझ जसे राजनीतिज्ञ को भी भोगना पडता है। प्रारम्भ में थोडे भी काय के उपाय को करता हुआ, उसका विस्तार चाहता हुआ, फलोन्मुख बीजो के अत्यन्त गहन परिणाम को गुप्त रूप में प्रकट करता हुआ और फले हुए काय-समूह को पुन इकटठा करता हुआ (नाटककार और नीति का प्रयोग करने वाला) कष्ट पाता ही है। नाटककार के लिए कार्यारम्भ मुखसधि है, उसे फलोन्मुख बनाना प्रतिमुखसधि है, काय-समह को इकटठा करना गभसधि में बीजोद्भेद करना है।

The author of a drama as well as a politician like me has to experience the same trouble he has to devise means to the end though it is meagre in the beginning and then he has to think of developing it and then secretly the very issues of the impregnated seeds have to be germinated Again he has to think over the result and ultimatelv all the results though scattered have to be focussed

सस्कृतव्याख्या—आदौ प्रारम्भे तनुमपि अल्पमपि कार्योपक्षेपम प्रतिपक्षोपजापोपग्रहादिरूपस्य कृत्यजातस्य उपन्यास रचयन प्रणयन तस्य कायस्य विस्तारमिच्छन हृदयेन समाशसमान गर्भितानाम बीजानाम निपुण निगूढाना बीजानाम प्रसरता प्रयोगानाम पक्षान्तरे फलप्रधानहेतूनामित्यथ अतिगहन फलम दुरवगमम गूढम अनभिव्यक्तम च फलम उद्भेदयश्च प्रकटयश्च बुद्धया प्रज्ञया विमश कुवन सिद्धचसभावना निरासपूवक सिद्धिनिश्चयादि कुवन प्रसृतमपि विस्ततमपि कायजातम तत्त मत्रसम्पत्साध्यानथसभारान सहरन सगह्णन च समापयन च नाटकानाम कर्ता वा रचयिता वा अस्मद्विधो वा मादशश्च राजनीतिप्रयोक्ता जन इम क्लेश दु ख जागरणरूप क्लेशम अनुभवति भजते। क्लेशमय एवाय राजमाग नाटकाभिनयप्रयोग इव द्रष्टणा यथा सुखावहो न तथा कत णाम।

टिप्पणी

(१) **आदौ—**शुरू मे। नाटककार के सबध मे 'मुखसधि मे । (२) **तनुमपि—**थोडा सा भी। (३) **कार्योपक्षेपम—**शत्रुपराजयरूप साम आदि उपाय

को। कायस्य उपक्षेप । काय—जो काम किया जाने वाला है। उपक्षेपम—हेतु, कारण जो पूरा करे अर्थात उपाय। (४) **तस्य विस्तारम**—काय (बीज) के विस्तार को। (५) **गर्भितानाम**—फलोमुख। गभ सञ्जात एषामिति गभ—इतच। जो बीज बोए जाते ह उनमे कुछ तो सड जाते ह कुछ सूख जाते ह और थोडे से ही फलोमुख होते ह। राक्षस का कार्योपक्षप गर्भित नही ह पर चाणक्य का गर्भित है। देखिए अङ्क २ जहा आभूषण आदि सिद्धार्थक को दिए जाते ह और व राक्षस के पास जमा करके रक्खे जाते ह। ततीय अङ्क मे भी चाणक्य की सिद्धि है जहा पर यह बताया गया है कि मलयकेतु ने चाणक्य के ही आदमियो को अपने यहा नियुक्त किया है। (६) **प्रसतमपि**—फले हुए काय-समूह का उपसहार करता हुआ। राक्षस का कायजात प्रसत नहा हे। चाणक्य का कायजात प्रसत है। उसके काय-समूह का उपसहार सप्तम अङ्क मे है भ्त्या भद्रभटादय स च तथा लेख स सिद्धाथक अङ्क ७ श्लोक ८। (७) **नाटकाना कर्ता वा**—नाटककार ने राक्षस के इस कथन के माध्यम से नाटक के निर्माण के समय अपने द्वारा अनुभूत कठिनाइया को वर्णित किया है। (८) **इमम क्लेशम**—यह जागने का कष्ट। राजनीतिक नाटको की रचना करना सरल काम नही है। राजनीति के खिलाडी को जो कष्ट उठाने पडते ह वही कष्ट नाटक-कार को उठाना पडता है। यहा श्लेष तथा दीपक अलकार और स्रग्धरा छन्द है।

तदपि नाम दुरात्मा चाणक्यवटु ,—'

(उपसृत्य)

दौवारिक —जेदु जेदु—' (जयतु जयतु—')

राक्षस —'अभिसन्धातु शक्य स्यात्।

दौवारिक —अमच्चो। (अमात्य)।

राक्षस —(वामाक्षिस्पन्द सूचयित्वात्मगतम) 'दुरात्मा चाणक्यवटुर्जयति, अभिसन्धातु शक्य स्यादमात्य' इति वागीश्वरी वामाक्षिस्पन्दनेन प्रस्तावगता प्रतिपादयति। तथापि नोद्यमस्त्याज्य। (प्रकाशम्) भद्र! किमसि वक्तु-काम ?

दौवारिक —अमच्च ! एसो क्खु करहओ पाडलिपुत्तादो आअदो, इच्छदि अमच्च पेक्खिदु। (अमात्य ! एष खलु करभक पाटलिपुत्रादागत, इच्छति अमात्य प्रेक्षितुम्।)

राक्षस —अवारित प्रवेशयैनम।

दौवारिक —ज अमच्चो आणवेदि। (इति निष्क्रम्य पुरुषमुपसृत्य) भद्द ! एसो क्खु अमच्चो चिट्ठदि, ता उबसप्प ण। (यदमात्य आज्ञापयति। भद्र ! एष खलु अमात्यस्तिष्ठति, तदुपसप एनम्।)

(इति निष्क्रान्तो दौवारिक।)

हिन्दी अनुवाद—इतना होने पर भी यदि कहीं यह दुष्ट चाणक्य

द्वारपाल—(पास जाकर) जय हो, जय हो।

राक्षस—वश में आ सकता।

द्वारपाल—अमात्य !

राक्षस—(बाइ आख का फडकना सूचित कर स्वगत) अरे यह क्या, "दुष्ट चाणक्य की जय हो" और अमात्य वश में आ जाता इस प्रकार की यह अदभुत वाणी क्या मेरी बाइ आख फडक उठने में इस प्रकार के होने की सूचना देने लगी। फिर भी उद्यम नहीं छोडना चाहिए। (प्रकट) भद्र क्या कहना चाहते हो ?

द्वारपाल—अमात्य ! यह करभक पाटलिपुत्र से आया है और अमात्य से मिलना चाहता है।

राक्षस—बे रोकटोक के उसे ले आओ।

द्वारपाल—जसी अमात्य की आज्ञा। (बाहर जाकर उस पुरुष के पास पहुँचकर) भद्र ये अमात्य विराजमान ह, आप इनके पास आइए। (द्वारपाल चला जाता है)

Well then is it likely that the wicked Chanakya—

Warder (*Going near*)—Be victorious

Rakshas—Might be capable of being subdued

Warder—Minister

Rakshas—(*Indicating the throbbing of the left eye to himself*) The divine speech in the form of the throbbing of the left eye foretells this Let the wicked Chanakya be victorious Minister might be capable of being subdued Still I must not give up my efforts (Aloud) Good man what do you wish to say ?

Warder—Minister this Karbhaka has come from Patali putra he wishes to see the minister

Rakshas—Let him be admitted without any check
Warder—As the minister orders (*Going out and approaching the man*) Good man here it is the Minister approach him (Exit)

टिप्पणी

(१) अवारितम—बिना रोक-टोक के। (२) अभिसधातुम—वश मे करना, धोखा देना। (३) वामाक्षिस्पदनम—बाइ आख का फडकना। पुरुषो की बाइ तथा स्त्रियो की दाइ आख का फडकना अशुभ माना गया है। (४) वागीश्वरी—वाग्देवता।

करभक —(राक्षसमुपसृत्य) जेदु जेदु अमच्चो। (जयतु जयत्वमात्य ।)

राक्षस —(नाट्येनावलोक्य) भद्र करभक ! स्वागतम्। उपविश्यताम्।

करभक —ज अमच्चो आणवेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति भूमावुपविशति।)

राक्षस —(आत्मगतम्) अथ कस्मिन् प्रयोजने मयाऽय प्रणिधि प्रहित इति प्रभूतत्वात् प्रयोजनाना न खल्ववधारयामि। (इति चिन्ता नाटयति।)

(तत प्रविशति वेत्रपाणिरपर पुरुष।)

पुरुष —ओसलध अज्जा ! ओसलध। अबेध माणहे ! अबेध। किं ण पेक्खस ? (अपसरत आर्या ! अपसरत। अपेत मान्या ! अपेत। कि न पश्यथ ?)

हिन्दी अनुवाद—करभक—(राक्षस के पास जाकर) अमात्य की जय हो।
राक्षस—(अभिनय के साथ देखकर) भद्र करभक ! स्वागत है, बठ जाओ।
करभक—अमात्य की जो आज्ञा (पथ्वी पर बठ जाता है)।
राक्षस—(मन में) काम की अधिकता से यह निश्चित नहीं कर पा रहा हूँ कि किस काम से इस गुप्तचर को भेजा था। (चिन्ता का अभिनय करता है)।
पुरुष—(हाथ में बेंत लिए हुए, दूसरे पुरुष का प्रवेश) हटो आर्यो, हटो। मान्य लोगो ! दूर हो जाओ। क्या देखते नहीं हो ?

Karbhak (*Approaching Rakshas*)—Victory to the Minister

Rakshas (*Acts seeing*)—Good man you are welcome sit down

Karbhak—As the Minister commands (*Sits on the ground*)

Rakshas (*To himself*)—Due to Multiplicity of engagements I do not remember to what propose this spy was sent by me (*Acts thinking*)

The man—(*Enters another person with a rod in hand*) Away away Ye people get away get away Do not you see ?

दूले पच्चासत्ती दसणमबि दुल्लह् अधण्णेहि ।
कल्लाणकुलहराण देवाण अ मनुस्सदेआण ।।४।।
(दूरे प्रत्यासत्तिर्दशनमपि दुलभमधन्यै ।
कल्याणकुलधराणा देवानाञ्च मनुष्यदेवानाम् ।।४।।)

अन्वय—कल्याणकुलधराणा देवाना मनुष्यदेवाना च दशनमपि अधन्य दुलभम, प्रत्यासत्ति दूरे ।।४।।

हिन्दी अनुवाद—सम्पूण मङ्गलालय देवो के समान बडे,बडे राजाओं का दशन भी भाग्यहीनो के लिए दुलभ है, उनके पास पहुँचना तो दूर रहा।

Even the sight of kings the representative of the blessed ones is hardly available to those without luck nothing to say of approaching them

सस्कृत व्याख्या—कल्याणकुलधराणाम स्वहस्तधतसकललोकमङ्गलाना कृतमेरुवासाना वा देवाना महोदारराजवशप्रभवाणा मनुष्यदेवाना नरपतीना च दशनमपि साक्षात्करणमपि दुलभम अधन्यै भाग्यरहित प्रत्यासत्ति तु सामीप्याप्ति नु दूरे निष्ठतु उपसपणस्य का कथा।

टिप्पणी

(१) **कल्याणकुलधराणाम**—सकल कल्याणो का धारण करने वाला। कल्याणाना कुल तस्य धरा कल्याणकुलधरा तेषा कल्याणकुलधराणाम। (२) **मनुष्यदेवानाम**—नररूपी देवता। मनुष्येषु देवा तेषा मनुष्यदेवानाम् राज्ञा (राजाओ का) (३) **अधन्य**—अभागो से। यहाँ न लोका ययनिष्ठाखलथतृनाम' सूत्र से षष्ठी का निषेध हो गया है। (४) **प्रत्यासत्ति दूरे**—पास मे जाना तो दूर रहा। प्रति+आ+सद+क्तिन। राजा मनुष्य के रूप मे देवता है

बालोऽपि नावमन्तव्य मनुष्य इति भूमिप । महती देवता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ।। इस श्लोक मे दीपक अलकार और आर्या छन्द है ।

(आकाशे) अज्जा ! किं भणाध, कि णिमित्त एसा ओसालणा करीअदि ? अज्जा ! एसो क्खु कुमालो मलयकेदू समुप्पण्णसीसवेअण अमच्चरक्खस पेक्खिदु इह ज्जेव आअच्छदि । एदिणा कालणेण ओसालणा करीअदि । (आर्या ! कि भणथ, किं निमित्तमेषाऽपसारणा क्रियते ? आर्या ! एष खलु कुमारो मलयकेतु समुत्पन्नशीर्षवेदनममात्यराक्षस प्रेक्षितुमिहैवागच्छति । एतेन कारणेनापसारणा क्रियते ।) (इति निष्क्रान्त पुरुष ।)

(तत प्रविशति भागुरायणेन कञ्चुकिना चाऽनुगम्यमानो मलयकेतु ।)

मलयकेतु —(नि श्वस्यात्मगतम्) अद्य दशमो मासस्तातस्योपरतस्य । न चास्माभिर्वृथा पुरुषकारमुद्वहद्भिस्तमुद्दिश्य तोयाञ्जलिरप्यावर्जित । अथवा, प्रतिज्ञातमेतत् पुरस्तात् ।

हिन्दी अनुवाद—(आकाश की ओर देखकर) अरे लोगो ! क्या आप जानना चाहते ह कि किस कारण लोग हटाए व भगाए जा रहे ह । अरे, आय कुमार मलयकेतु यह सुनकर कि अमात्य राक्षस के सिर में पीडा हो रही है, उन्हें देखने के लिए इधर पधार रहे ह । इसी कारण आप लोगों को हटाया जा रहा है । (पुरुष निकल जाता है)

(भागुरायण तथा कञ्चुकी के साथ मलयकेतु प्रवेश करता है)

मलयकेतु—(सास खींचकर स्वगत) पिता को मरे हुए आज दस मास हो गए । व्यथ के लिए यह सब हमारा बल-पौरुष का अभिमान रहा । अभी तक उनकी श्रद्धाजलि भी न अर्पित की जा सकी । अथवा पहले यही प्रतिज्ञा की थी ।

(*Looking at the sky*) Ye people do you wish to know why you are being removed ? Noble Sir here indeed Prince Malayaketu hearing that Minister Rakshas is suffering from headache, is coming to see him Hence the clearing is being made (*Exit the man*)

(Now enter Malayaketu followed by Bhagurayan and the Chamberlain)

Malayaketu (*Sighing*)—To day is the tenth month since father died but even a handful of water has not yet been offered by me falsely bearing the pride of man or this was vowed by me previously

टिप्पणी

(१) **अपसारणा**—लोगो का हटाया जाना । अप+स+णिच+अन+टाप । (२) **समुत्पन्नशीर्षवेदनम राक्षसम अमात्यम**—अमात्य राक्षस को जिनके सिर मे पीडा हो रही है । समुत्पन्ना शीर्षे वेदना यस्य तम (ब० व्री०) (३) **उपरतस्य**—मरे हुए । उप+रम्+क्त । (४) **दशम**—दशाना पूरण दशम दशन+डट तस्य मडागम । (५) **आवर्जित**—दत्त । आ+वज+णिच+क्त ।

वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलय भ्रष्टोत्तरीयाशुक
हाहेत्युच्चरितार्तनादकरुण भूरेणुरूक्षालकम् ।
तादृङमातृजनस्य शोकजनित सम्प्रत्यवस्थान्तर
शत्रुस्त्रीषु मया विधाय गुरवे देयो निवापाञ्जलि ॥५॥

अन्वय—मातजनस्य शोकजनित वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलय भ्रष्टोत्तरीयाशुक भूरेणुरूक्षालक हाहेत्युच्चरितातनादकरुण तादक अवस्थान्तर सम्प्रति शत्रु स्त्रीषु विधाय मया गुरवे निवापाञ्जलि देय ॥५॥

हिन्दी अनुवाद—मने यह प्रतिज्ञा की थी कि माताओ के शोक से उत्पन्न, छाती पीटने के कारण टूटे हुए रत्न ककणो वाली पृथ्वी से उठी हुई धूल से रूखे बालो वाली और हाय हाय करने से हृदय विदारक दीनस्वर से युक्त ऐसी विपरीत दशा (दुदशा) जब तक बरियो की औरतो की न हो जायगी तब तक पिता का श्राद्धतपण न करूँगा ।

The handful of oblations has to be given to father after having at once inflicted on the wives of the enemy the same cruel change of fate through grief as was experienced by my mothers with their upper garments slipped off and with the locks of hair made rough by the dust from the ground with the gem bracelets broken to pieces on account of beating the breast change was painful due to the cry of distress that went up in the shape Ah Ah

सस्कृतव्याख्या—मातजनस्य मदीयस्यवाम्बाजनस्य शोकजनित दु खोत्पन्नम वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलयम वक्षस उरस यानि ताडनानि त भिन्नानि त्रुटितानि

खण्डितानि वा रत्नवलयानि यस्मिन्नेव भूत भ्रष्टोत्तरीयाशुकम भ्रष्टम् स्व-स्थानात्पतितम उत्तरीयाशुकम उत्तरीयवस्त्र यस्मिन तादशम भूरेणुरूक्षालकम् भूरेणुभि धूलिकणै रूक्षा धूसरिता मलिनीकृता वा अलकाश्चूर्णकुन्तला यस्मिन तादशम हाहेत्युच्चरितातनादकरुणम हा हा इति अनेन प्रकारेण उच्च-रित उदगत आतनाद दीनस्वर तेन करुण शोकमयम अवस्थान्तरम रिपु-वनिताना दशापरिवतन कृत्वा मया गुरवे पित्रे निवापाञ्जलि देय समपणीय ।

टिप्पणी

(१) **वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलयम**—छाती पीटने के कारण रत्न के ककण गिर गए ह जिसमे ऐसी (दशा)। (२) **भ्रष्टोत्तरीयाशुकम**—शरीर पर के कपडे हट गए है जिसमे। (३) **भूरेणुरूक्षालकम**—पथ्वी की धूल से रुखे बालो वाली। यह तीनो विशेषण अवस्थान्तरम के हैं। (४) **अवस्थान्तरम**—दूसरी अवस्था। अन्या अवस्था अवस्थान्तरम। (मयूरव्यसकादित्वात त० स०)। (५) **निवापाञ्जलि**—श्राद्धतपण। (६) **देय**—दा–यत् कमणि। इस श्लोक मे निदशना अलकार और शादूलविक्रीडित छन्द है।

तत् किमिह बहुना ?

उद्यच्छता धुरमकापुरुषानुरूपा
गन्तव्यमाजिनिधनेन पितु पथा वा।
आच्छिद्य वा स्वजननीजनलोचनेभ्यो
नेयो मया रिपुवधूनयनानि वाष्प ॥६॥

अन्वय—अकापुरुषानुरूपा धुरम उद्यच्छता मया पितु पथा वा आजिनिधनेन गन्तव्यम, वाष्पो वा स्वजननीजनलोचनेभ्य आच्छिद्य रिपुवधूनयनानि नेय ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—तो इस विषय में बहुत कहने से क्या लाभ ? वीर पुरुषो की तरह इस महान कायभार को उठाते हुए या तो मुझे अपनी माताओं की आखो के आसुओ को शत्रु-वनिताओ की आँखों में पहुँचा देना चाहिए या समरभूमि में वीरगति पाकर पिता के माग का अनुगमन करना चाहिए।

Then what is the use of talking much in this matter Bearing the burden of this great undertaking like a brave person I should either tread along the path of my father by giving up my life in battle or transfer the tears to the wives of my enemy by forcibly taking them away from the eyes of my mothers

संस्कृतव्याख्या—अकापुरुषानुरूपाम वीरपुरुषोचिता धुर शत्रुप्रणाशादि कार्यभारम उद्यच्छता उद्वहता मया पितु पथा वा मार्गेण आजिनिधनेन सग्रामे वीरगतिगमनेन ग त यम मरण कामयित यम वाष्पो वा नेत्रजल वा स्वजन नीजनलोचनेभ्य मातवगस्य नेत्रेभ्य आच्छिद्य गहीत्वा रिपुवधूनयनानि शत्रु स्त्रानेत्राणि नेय प्रापयित य ।

टिप्पणी

(१) **अकापुरुषानुरूपाम**—वीरपुरुष के योग्य । रूपम अनुगता अनुरूपा (सुप्सुपा स०) । कुत्सित पुरुष कापुरुष वा कुपुरुष विभाषा पुरुषे इति सूत्रेण कादेशस्य विकल्पात । न कापुरुष अकापुरुष तस्य अनुरूपाम इति । (२) **उद्यच्छता**—धारण करते हुए । उद+यम+शतृ । (३) **आजिनिधनेन**—लडाई मे मरकर । (४) **स्वजननीजनलोचनेभ्य**—अपनी माताओ के नेत्रो से । (५) **आच्छिद्य**—लेकर । आ+छिद+ल्यप । यहा विकल्प अलकार तथा वस त तिलका छन्द है ।

(प्रकाशम्) आय जाजले ! उच्यन्तामस्मद्वचनादनुयायिनो राजान —'एक एवाहममात्यराक्षसस्यार्तकितागमनेन प्रीति-मुत्पादयितुमिच्छामि, अत कृतमनुगमनक्लेशेने'ति ।

कचुकी—यदाज्ञापयति कुमार । (परिक्रम्याकाशे) भो भो राजान ! कुमार समाज्ञापयति—'न खल्वह केनचिदनु-गन्तव्य ' इति । (विलोक्य सहषम्) कुमार ! कुमार ! एते भवदाज्ञासमनन्तरमेव प्रतिनिवृत्ता सर्व एव राजान । पश्यतु कुमार —

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) आय जाजलि, हमारी ओर से अनुगामी राजाओ से कह दो कि म अकेला ही अमात्य राक्षस के पास सहसा जाकर प्रीति उत्पन्न करना चाहता हूँ । इसलिए पीछे-पीछे चलने वाले कष्ट न करें ।

कञ्चुकी—जो कुमार की आज्ञा (परिक्रमा करके आकाश में) ऐ राजाओ, कुमार की आज्ञा है कि "मेरे पीछे कोई न चले" । (देखकर प्रसन्नता से) कुमार, कुमार, ये सभी राजा आप की आज्ञा पाते ही लौट गए । कुमार देखें ।

(*Aloud*) Noble Jajali in my words tell the princes that are following me I wish to give joy to Minister Rakshas un attended by my unexpected visit So away with the trouble of following me

Chamberlain—As the prince commands (*Going round in the sky*) Oh kings the prince commands thus I must not be followed by anyone (*Seeing with joy*) Prince prince all the kings have turned back simultaneously with your command See oh prince

टिप्पणी

(१) **अतर्कितागमनेन**—यकायक पहुँच जाना। सहसापस्थित्या। तक+णिच स्वार्थे+क्त कमणि=तर्कित=जिसकी पहले से आशा हो। न तर्कितम अतर्कितम। अतर्कित च तत आगमनम अतर्कितागमनम तेन। unexpected visit। (२) **आज्ञासमनन्तरमेव**—आज्ञा पाते ही।

सोत्सेधैः स्कन्धदेशैः खरतरकविकाकर्षणात्यथभुग्नै-
रश्वा कैश्चिन्निरुद्धा खमिव खुरपुटैः खण्डयन्त पुरस्तात्।
केचिन्मातङ्गमुख्यैर्विहतजवतया मूकघण्टैर्निवृत्ता
मर्यादा भूमिपाला जलधय इव ते देव नोल्लङ्घयन्ति ।।७।।

अन्वय—कैश्चित् खुरपुट पुरस्तात ख खण्डयन्त इव अश्वा खरतरकविकाकषणात्यथभुग्न सोत्सेध स्कन्धदेशै। निरुद्धा केचित विहतजवतया मूकघण्ट मातङ्गमुख्य निवत्ता। देव! भूमिपाला जलधय इव मर्यादा न उल्लघयन्ति ।।७।।

हिन्दी अनुवाद—**काटेदार लगामो को अधिक खींचने से अत्यन्त टेढी और ऊँची गदन किए हुए अपने खुरो से मानो आकाश को विदीण करने वाले घोडो को कुछ राजाओ ने रोक लिया है और कुछ ने हाथियो को रोक लिया जिससे उनके घण्टे अब नहीं बजते। हे देव, समुद्र के समान ये राजे भी मर्यादा का उल्लघन नहीं करते।**

Some have stopped their horses whose necks are much curved and bulged from a very tight pull of the reins and who (horses) are as if pounding with their hoofs the yonder sky Some (kings) have stopped their elephants the bells of which are silent because their speed is hindered Oh Sire the kings like seas donot cross the bounds

संस्कृतव्याख्या—कश्चित भूमिपालै खुरपुटै शफकोटिभि पुरस्तात अग्रत खम गगनम् खण्डयन्त इव वेगनिरोधाऽसहतयाऽऽकाशाभोगमेव कुट्टयन्त इव अश्वा हया खरतरकविकाकषणात्यथभुग्न खरतरम् सम्भ्रमात अतिकठोरम्

यत कविकाकषणम खलिनसग्रह तेन अत्यथम अतिशयम भुग्नै कुटिल सोत्सेध समुन्नतीकृतमध्यभाग स्क धदेश ग्रीवाप्रदेश निरुद्धा अवरुद्धा । केचित विहृत-जवतया विहृत अपगत जव वग धावनवेग इत्यथ येषा तथाविधतया निरुद्ध-वेगतया इत्यथ मूकघण्ट श दरहितघण्ट मातङ्गमुख्य महागजस्सह इति भाव निवत्ता प्रतिगता । हे देव ! जलधय इव सागरा इव भूमिपाला राजान ते तव मर्य्यादा तवाज्ञा वेला वा न उल्लघयन्ति । न अतिक्रामन्ति । सागरा यथा वेला प्राप्य निवतन्ते भूपालास्तथा तवाज्ञा श्रुत्वा निवत्ता ।

टिप्पणी

(१) **खम**—आकाश को। (२) **खण्डयन्त**—विदीण करते हुए। घोड तेजी से भाग रहे थे। एकाएक लगाम खीच कर उन्हे रोक दिया गया। अत वे पीछे के दो पैरो पर खडे हो गए। उनके अगले दो पर आकाश मे उठे थे। इससे लगता था मानो वे आकाश को तोड रहे हो। (३) **खरतरकविकाकषणा-त्यथभुग्न**—अति तीक्ष्ण लगाम को खीचने के कारण अधिक टेढे। यह स्क ध देश का विशेषण है (४) **सोत्सेध**—ऊँचा। (५) **निरुद्धा**—रोके गये (घोडे) नि+रुध+क्त। (६) **केचित**—कुछ (राजा लोग)। (७) **विहृतजवतया**—वेग के कम होने के कारण। विहृत जव येषा ते विहृतजवा तस्य भाव तया। (८) **मूकघण्ट**—जिनके घटो का बजना बन्द हो गया है वे (हाथी)। यह गज का विशेषण है। मूका घण्टा येषा ते मूकघण्टा त मूकघण्ट । (९) **जलधय इव**—समुद्रो के समान। इनमे स्वभावोक्ति उपमा और उत्प्रेक्षा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

मलयकेतु—आर्य जाजले ! त्वमपि सपरिजनो निवर्तस्व। भागुरायण एको मामनुगच्छतु।

कञ्चुकी—यदाज्ञापयति कुमार ।

(इति सपरिजनो निष्क्रान्त)

मलयकेतु—सखे भागुरायण ! विज्ञापितोऽहमिहागच्छद्भिर्भद्रभटप्रभृतिभि , यथा—'न वयममात्यराक्षसद्वारेण कुमारमाश्रयणीयमाश्रयामहे, किन्तु कुमारस्य सेनापति शिखरसेनमूरीकृत्य दुष्टामात्यपरिगृहीतात् चन्द्रगुप्तादपरक्ता

सन्त कुमारमाभिरामिकगुणयोगादाश्रयणीयमाश्रयामह' इति । तन्मया सुचिरमपि विचारयता तेषा न वाक्यार्थोऽधिगत ।

भागुरायण —कुमार ! 'नायमत्यन्तदुर्बोधोऽर्थ । पश्य, विजगीषुमात्मगुणसम्पन्न प्रियहितद्वारेणाश्रयणीयमाश्रयेदि' ति ननु न्याय्य एवायम् ।

मलयकेतु —सखे भागुरायण ! नन्वस्माकममात्यराक्षस प्रियतमो हिततमश्च ।

हिदी अनुवाद—मलयकेतु—आय जाजलि, तुम भी परिजनो के साथ लौट जाओ। अकेला भागुरायण ही मेरे पीछे-पीछे चले।

कञ्चुकी—जसी कुमार की आज्ञा। (परिजनो के साथ बाहर चला जाता है)

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, यहा आते हुए भद्रभटादि ने मुझसे यह कहा कि "हम लोग अमात्य राक्षस के द्वारा आश्रय योग्य कुमार का आश्रय नही ले रहे ह बल्कि कुमार के सेनापति शिखरसेन को स्वीकार करके (उसकी बात मानकर) दुष्ट अमात्य (चाणक्य) के वशीभूत चद्रगुप्त से विरक्त होकर कुमार का आश्रय ले रहे ह कि वह (मलयकेतु) राजा के उत्तम गुणो से विभूषित ह।" सो मने बडी देर तक उनकी बातो पर विचार किया परन्तु उनकी बात का अथ न समझा।

भागुरायण—इसका अथ समझने में कठिन नहीं है। देखिए, उचित यही है कि उसी विजिगीषु राजा का आश्रय लो जो आत्मा के गुणो (शूरता, उदारता आदि) से युक्त हो और उसी को बीच में डालकर आश्रय लो जो प्रिय और हितचिन्तक हो।

मलयकेतु—सखे भागुरायण, पर अमात्य राक्षस तो हम लोगो के बडे प्रिय और हितषी ह।

Malayaketu—Noble Jajalı you too retire with the servants Bhagurayan alone may follow me

Chamberlain—As the prınce orders (*Retires with servants*)

Malayaketu—Friend Bhagurayan while coming here I was thus told by Bhadrabhatta and others It is not through Minister Rakshas that we join the Prince who is worthy of attachment but having won over Shikharsena the general of the Prince we being dissatisfied with Chandragupta who is controlled by a wicked minister attach ourselves to Prince who is worthy of attachment due to possessing attractive qualities

Now though I have thought much yet I am unable to make out the sense of their speech

Bhagurayan—Prince it is not difficult to understand the sense This is but proper that through a beloved well wisher one should join the ambitious who are endowed with the quality of heart and are fit for being attached

Malayaketu—Friend Bhagurayan but minister Rakshas is our most beloved and the greatest well wisher

टिप्पणी

(१) **भागुरायण एको मामनुगच्छतु**—केवल भागुरायण मेरे पीछे-पीछे आये। यहा ध्यान रहे कि भागुरायण चाणक्य का गुप्तचर है। यही वह मलयकेतु के मन मे राक्षस के प्रति सन्देह का बीज बो देगा। भविष्य मे यह सन्देह क्रमश बढता ही जाएगा। परिणामस्वरूप मलयकेतु राक्षस से अलग हो जाएगा। (२) **आश्रयणीयम**—आश्रय के योग्य। आ+श्रि+अनीयर। (३) **ऊरीकृत्य**—स्वीकार करके मान करके। ऊरी+कृ+ल्यप। (४) **दुष्टामात्यपरिगृहीतात**—दुष्ट अमात्य के वशीभूत। (५) **आभिरामिकगुणयोगात**—प्रशस्त गुणो से भूषित होने के कारण। अभि+रम+णिच+अच+कर्तरि। अभिरामम—सुदर। तत शीलमस्य इति अभिराम+ठक (आभिरामिकम)। (६) **अवधारित**—समझा। अव+धृ+णिच+क्त।

भागुरायण—कुमार! एवमेतत,किन्तु अमात्यराक्षसश्चाणक्ये बद्धवैरो न तु चन्द्रगुप्ते, तद्यदि कदाचिच्चन्द्रगुप्तश्चाणक्यमतिजितकाशिनमसहमान साचिव्यादवरोपयेत, ततो नन्दकुलभक्त्या नन्दान्वय एवार्यमिति कृत्वा, सुहृज्जनापेक्षया च, अमात्यराक्षसश्चन्द्रगुप्तेन सह सन्दधीत। चन्द्रगुप्तोऽपि पितृपारम्पर्यागत एवार्यमिति कृत्वा सन्धिमनुमन्येत। एव सत्यस्मास्वपि कुमारो न विश्वसेदित्ययमेषा वाक्यार्थ।

मलयकेतु—युज्यते। सखे भागुरायण! अमात्यराक्षसस्य गृहमार्गमादेशय।

भागुरायण—इत इत कुमार। (इत्युभौ परिक्रामत।) कुमार! इदममात्यराक्षसस्य गृह प्रविशतु कुमार।

मलयकेतु —एष प्रविशामि। (इत्युभौ प्रवेशन नाटयत ।)

राक्षस —(आत्मगतम्) आ स्मृतम्। (प्रकाशम्) भद्र! अपि दृष्टस्त्वया कुसुमपुरे वैतालिक स्तनकलश ?

करभक —अमच्च! अध इ ? (अमात्य! अथ किम् ?)

मलयकेतु —सखे भागुरायण! कुसुमपुरवृत्तान्त प्रस्तूयते। तन्नोपसर्पाव, शृणुवस्तावत्—

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—कुमार, ऐसा ही समझिये। इन लोगो के कहने का मतलब यह है कि अमात्य राक्षस की दुश्मनी तो चाणक्य से है न कि चन्द्रगुप्त से। कभी यदि ऐसा हुआ कि चन्द्रगुप्त चाणक्य के गव से ऊबकर उसे मन्त्रिपद से अलग कर दिया तो हो सकता है कि अमात्य राक्षस अपनी नन्दवश की भक्ति के कारण और अपने मित्रो की रक्षा के लिए यह सोच कर चन्द्रगुप्त से जा मिले कि वह भी तो नन्दवश का ठहरा और चन्द्रगुप्त भी यह जानकर कि यह तो परम्परागत अमात्य ही ठहरा उससे मिल जायें तो कुमार हम लोगो पर भी न विश्वास करेंगे यही इन लोगो के कहने का तात्पय है।

मलयकेतु—ठीक है। मित्र भागुरायण, अमात्यराक्षस के घर का रास्ता बताओ।

भागुरायण—कुमार इधर आइए। (दोनो चलते ह) कुमार यही अमात्य राक्षस का घर है। चलिए भीतर चलें।

मलयकेतु—तो भीतर चलता हूँ। (दोनो भीतर जाने का अभिनय करते ह)।

राक्षस—(मन में) अच्छा। याद हो गया। भद्र, क्या तुमने कुसुमपुर में वतालिक स्तनकलश को देखा था ?

करभक—अमात्य, हा, मिला।

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, यहा तो कुसुमपुर की बात हो रही है। तो अभी न चलें। सुनें (क्या बात हो रही है)

Bhagurayan—It is so Minister Rakshas has enmity with Chanakya not with Chandragupta So if he (Chandragupta) not tolerating Chanakya who is too much elated with success removes him from ministership then Rakshas might make treaty with Chandragupta for the good of his friends and through devotion to the Nanda family for after all he (Chandragupta) is the son of Nanda Chandragupta too may like this alliance because Rakshas is connected with him by ancestral succession And if this happens the prince may not have faith in us This is what they mean

Malayaketu—This is reasonable Show me the way to the minister s house

Bhagurayan—This way Prince this way (*Both go round the stage*) This is Minister s house Prince may enter

Malayaketu—Here I enter

Rakshas (*To himself*)—Yes now I remember (*Aloud*) Gentleman did you see Stankalash in Kusumpura ?

Karbhaka—Yes Minister

Malayaketu—Friend Bhagurayan the affairs of Kusum pura are being discussed We must not go in the meantime we will listen For—

सत्त्वभङ्गभयाद्राज्ञा कथयन्त्यन्यथा पुर ।
अन्यथा विवृतार्थेषु स्वैरालापेषु मन्त्रिण ।।८।।

अन्वय—मन्त्रिण राज्ञा पुर सत्त्वभङ्गभयात अन्यथा कथयन्ति, विवतार्थेषु स्वैरालापेषु अन्यथा ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—अपने प्रभाव के नष्ट हो जाने के भय से मत्री लोग राजाओ के सामने दूसरे ही ढग से बात करते ह और उसी बात को अपने इष्ट मित्रो के साथ किए जाने वाले वार्तालाप में दूसरे ढग से बताते ह।

Ministers speak differently befoie the kings fearing loss of prestige but speak otherwise in easy chats in which the real facts are spoken of

सस्कृतव्याख्या—मन्त्रिण अमात्या राज्ञा नपतीनाम पुर अग्र सत्त्वभङ्ग-भयात् स्वप्रभावनाशशङ्कया अन्यथा अन्यन प्रकारेण कथयन्ति किन्तु विवतार्थेषु विवृता विस्पष्ट प्रकटीकृता अर्था तत्तदविवक्षितविषया येषु तेषु स्वरालापेषु मित्रैस्सह कृतेषु सभाषणेषु तदेवान्यथाऽन्यनव प्रकारेण कथयन्ति भाषन्ते ।

टिप्पणी

(१) **एवमेतत**—यह ऐसा ही है। बात तो ठीक है पर। स्मरण रहे कि यह भागुरायण चाणक्य का गुप्तचर है। वह राक्षस और मलयकेतु को लडवाना चाहता है। इसीलिए उसने ऐसी बात कही। (२) **बद्धवर**—वैर बाधने वाला, वरी। बद्ध वर येन स (बहुव्रीहि स०)। (३) **अतिजितकाशिनम**—अत्यन्त अभिमानी। अतिगर्वितम। अतिजितेन अतिजयेन काशते तच्छील इति अति जित+काश+णिनि। तम। (४) **अवरोपयेत**—अलग कर दे। अव+रुह+

णिच, ह्रस्व प +लिङ—यात। मन्त्रिपदात मे अपादाने पञ्चमी। (५) सुहृज्जनापेक्षया—मित्रो के कल्याण का ख्याल करके। (६) स्वरालापेषु—स्वच्छन्द बातचीत मे। स्वरा आलापा तेषु (कम धा०)। इस श्लोक मे काव्यलिंग अलकार और अनुष्टुप छन्द है।

भागुरायण —यदाज्ञापयति कुमार ।

राक्षस —भद्र ! अपि तत् काय सिद्धम ?

करभक —अमच्चस्स प्पसाएण सिद्धम। (अमात्यस्य प्रसादेन सिद्धम्।)

मलयकेतु —सखे भागुरायण ! किं तत कायम् ?

भागुरायण —कुमार ! गहन खलु सचिववृत्तान्तो नैतावता परिच्छेत्तु शक्यते। अवहितस्तावच्छृणु।

राक्षस —विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि।

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—जो कुमार की आज्ञा।

राक्षस—भद्र ! क्या वह काम सिद्ध हो गया ?

करभक—अमात्य की कृपा से पूरा हो गया।

मलयकेतु—मित्र भागुरायण ! वह काम क्या है ?

भागुरायण—कुमार, मन्त्रियो का वत्तान्त बडा गूढ होता है। इतने से ही समझ में नहीं आ सकता। ध्यान देकर सुनिए।

राक्षस—विस्तार से सुनना चाहता हू।

Bhagurayan—As the prince orders

Rakshas—Good man is the work complete ?

Karbhaka—Through Minister s grace it is done

Malayaketu—Friend Bhagurayan what work is that ?

Bhagurayan—Prince the affairs of the ministers are very secret This cannot be known duly by so much Listen attentively

Rakshas—Good man I wish to hear it in detail

टिप्पणी

परिच्छेत्तुम—नापने के लिए जानने के लिए। परि+छिद+तुमुन। अवहित —सावधान। अव+धा+क्त, हि आदेश।

करभक —सुणादु अमच्चो, अत्थि दाव अहं अमच्चेणा-

णत्तो, जधा—'करभग्र ! कुसुमपुरे गच्छिग्र भणिदव्बो मम वग्रणेण तुए वेग्रालिग्रो त्थणकलसो, जधा—'चाणक्कहदएण तेसु तेसु ग्रण्णाभङ्गेसु ग्रणुचिट्ठीग्रमाणेसु चन्दउत्तो समुत्तेग्रणसमत्थेहि सिलोएहि उबलिसोग्रइदव्बो' त्ति । (शृणोत्वमात्य, ग्रस्ति तावदहममात्येनाज्ञप्तो यथा—'करभक ! कुसुमपुर गत्वा मम वचनेन त्वया भणितव्यो वैतालिक स्तनकलश, यथा—'चाणक्यहतकेन तेषु तेषु ग्राज्ञाभङ्गेषु ग्रनुष्ठीयमानेषु च द्रगुप्त समुत्तेजनसमथ श्लोकैरुपश्लोकयितव्य ' इति ।)

राक्षस —ततस्तत ?

हिन्दी ग्रनुवाद—करभक—ग्रमात्य, सुनिए । ग्रापकी ग्राज्ञा हुई थी "करभक, पाटलिपुत्र जाग्रो ग्रौर वहा वतालिक स्तनकलश से मेरी ग्रोर से जाकर कहो कि जब-जब दुष्ट चाणक्य च द्रगुप्त की बात टाले तब तब ऐसी कवितायें (श्लोक) कही जाय कि च द्रगुप्त उत्तेजित हो जाय।"

राक्षस—तब, इसके बाद ?

Karbhaka—Let Minister hear I was ordered by Minister Karbhaka go to Kusumpura and tell the bard Stankalasa in my words that at each and every transgression of orders by cursed Chanakya Chandragupta should be praised by verses capable of rousing him

Rakshas—What next ?

टिप्पणी

ग्रस्ति—यहा ग्रस्ति एक ग्र यय है। उपश्लोकयित य—स्तोत य । प्रशसा किये जाने के योग्य है।

करभक —तदो मए पाडलिउत्त गच्छिग्र सुणाविदो ग्रमच्चस्स सन्देश वेग्रालिग्रो त्थणकलसो । (ततो मया पाटलिपुत्र गत्वा श्रावितोऽमात्यस्य सन्देश वैतालिक स्तनकलश ।)

राक्षस —ततस्तत ?

करभक —एत्थन्तरे णन्दकुलबिणासदुम्मणस्स पोरजणस्स

परिश्रोस सम्मुप्पाश्रन्तेण चन्दउत्तेण आघोसिदो कुसुमउरे कौमुदीमहोसबो। सोबि चिरश्रालपबत्तमाणो जणिदपरिश्रोसो श्रहिमदबन्धुजणसमागमो बिश्र, ससिणेह बहुमणिदो णश्ररजणेण। (अत्रान्तरे नन्दकुलविनाशदुर्मनस पौरजनस्य परितोष समुत्पादयता चन्द्रगुप्तेनाघोषित कुसुमपुरे कौमुदी-महोत्सव। सोऽपि चिरकालप्रवतमानो जनितपरितोष श्रभिमतबन्धुजनसमागम इव सस्नेह बहुमानितो नगरजनेन।)

हिदी श्रनुवाद—करभक—तब म पाटलिपुत्र गया और श्रमात्य का सन्देश वतालिक स्तनकलश से कहा।

राक्षस—तब, श्रागे कहो।

करभक—इसके बाद नन्दकुल के विनाश से दुखी नागरिको को प्रसन्न करने के लिए चद्रगुप्त ने कुसुमपुर में कौमुदी महोत्सव के मनाए जाने की घोषणा कर दी। नागरिको ने भी चिरकाल से चले श्राते हुए और श्रानद उत्पन्न करने वाले उस महोत्सव का श्रभीष्ट बधु के श्रागमन के समान बडे प्रेम से श्रभिनदन किया।

Karbhaka—Then going to Pataliputra I apprised the bard Stankalash of the Minister s command

Rakshas—Then waht ?

Karbhaka—In the meantime the great Kaumudi festival was proclaimed by the king to the great joy of the citizens who were grieved by the annihilation of the family of Nanda and this was affectionately welcomed by the towns men like union with desired Kinsmen for it (festival) had become familiar by recurring for a long time

टिप्पणी

(१) श्रावित—सुना दिया गया। श्रु+णिच+क्त कमणि। (२) नदकुल-विनाशदुमनस—नन्दकुल के नाश से दु खी (पुरवासियो का) नन्दाना कुलस्य विनाशेन दुष्ट खिन्नम मनो यस्य स नन्दकुलविनाशदुमना तस्य। (३) चिरकाल प्रवतमान—बहुत दिनो से मनाए जाने के कारण। चिर काल। चिरकाल प्रवतमान (द्वितीयातत०)। श्रत्र कालाध्वनोरत्यन्तसयोगे' इत्यनेन द्वितीया श्रत्यन्तसयोगे च इत्यनेन समास। (४) जनितपरितोष—सतोष देने वाला सुखदायी। जनित परितोष येन स।

राक्षस —(सवाष्पम) हा देव नन्द ! —
कौमुदी कुमुदानन्दे जगदानन्दहेतुना ।
कीदृशी सति चन्द्रेऽपि नृपचन्द्र त्वया विना ।।६।।

अन्वय—नपचन्द्र ! कुमुदानन्दे चन्द्रे सति अपि जगदानन्दहेतुना त्वया विना कौमुदी कीदशी ? ।।६।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(आखो में आसू भरकर) हा देव नन्द, हे नपचन्द्र, कुमुदो को आनन्दित करने वाले चन्द्रमा के रहते हुए भी ससार को आनन्द देने वाले तुम्हारे बिना कौमुदी कसी (अर्थात व्यथ है) ।

Rakshas (*with tears*)—Alas ! Sire Nanda the moon among kings what like will Kaumudi be inspite of there being the moon the delighter of lilies when you the source of joy to the world are not present

सस्कृत याख्या—हे नृपचन्द्र चन्द्रतुल्य नप राजन कुमुदानन्दे कुमुदाना करवाणाम आनन्दे हृषवद्धने विकाशके इत्यथ चन्द्रे विधौ सति अपि वतमाने ऽपि जगदानन्दहेतुना सवजनरञ्जनसमर्थेन त्वया विना नन्देन विना कौमुदी कीदृशी महोत्सव किंविध आनन्दकर कस्यापि भवितेति भाव ।

टिप्पणी

(१) **नपचन्द्र**—राजाओ मे चन्द्रमा । नप चन्द्र इव उपमित स । (२) **कुमुदानन्दे**—कुमुदो को आनन्द देने वाला । कुमुदानि आनन्दयति इति कुमुद+आ+नन्द+णिच+अण कतरि=कुमुदानन्द तस्मिन । (३) **जगदानन्दहेतुना**—जगत के आनन्द देन वाले (आप के बिना) विना योगे ततीया है । अनुष्टुप छन्द है । श्लेष अलकार है ।

भद्र ! ततस्तत ?

करभक —अमच्च ! तदो सो लोअलोअणाणन्दभूदो अणिच्छन्तस्स ज्जेब तस्स णिबारिदो चाणक्कहदकेण कौमुदी-महोस्सवो । एत्थन्तरे त्थणकलसेण पवट्टिदा चन्दउत्तस्स समुत्तेअणसमत्था सिलोअपरिबाटी । (अमात्य ! तत स लोकलोचनानन्दभूतोऽनिच्छत एव तस्य निवारितश्चाणक्य-

हतकेन कौमुदीमहोत्सव । अत्रान्तरे स्तनकलशेन प्रवर्तिता चन्द्रगुप्तस्य समुत्तेजनसमर्था श्लोकपरिपाटी ।

राक्षस —कीदृशी सा ?

करभक —('सत्त्वोत्कर्षस्य' इत्यादि पूर्वोक्त पठति ।)

राक्षस —(सहषम्) साधु सखे स्तनकलश ! साधु । काले भेदबीजमुप्तम् अवश्यमेव फलमुपदर्शयिष्यति । यत —

हिदी अनुवाद—राक्षस—भद्र, फिर क्या हुआ ?

करभक—अमात्य इसके बाद चद्रगुप्त के न चाहते हुए भी लोको के नेत्रों को आनन्द देने वाले उस कौमुदी महोत्सव को दुष्ट चाणक्य ने रोक दिया। इसी बीच में स्तनकलश ने चद्रगुप्त को उत्तेजित करने में समथ स्तुति प्रारम्भ कर दी।

राक्षस—वह कसी है ?

करभक—(सत्वोत्कषस्य इत्यादि पूर्वोक्त श्लोक को पढता है) ।

राक्षस—(प्रसन्नता से) मित्र स्तनकलश धन्य हो, धन्य हो । समय पर बोया हुआ भेदबीज अवश्य ही फल देगा क्योकि—

Rakshas—Good man what then ?

Karbhaka—This joy to the eyes of the people was for bidden by the wicked Chanakya At this stage some verses that were to rouse Chandragupta were read out by Stankalash

Rakshas—How ran they ?

Karbhaka—(*Recites the verse* सत्वोत्कषस्य *as recited before*)

Rakshas (*With joy*)—Bravo Stankalash bravo Seed of enmity has been sown in time and it will surely bear fruit For—

सद्य क्रीडारसच्छेद प्राकृतोऽपि न मर्षयेत् ।
किमु लोकाधिक धाम बिभ्राण पृथिवीपति ॥१०॥

अन्वय—प्राकृत अपि सद्य क्रीडारसच्छेद न मषयेत, लोकाधिक धाम बिभ्राण पथिवीपति किमु ॥१०॥

हिन्दी अनुवाद—साधारण लोग भी सहसा अपने मनोरजन का भग होना नहीं सह सकते तो लोकाधिक तेज धारण करने वाले राजा कसे सहेंगे ?

Even an ordinary person cannot brook the stopping of the pleasures how then the lord of the world bearing all transcending power can tolerate it ?

संस्कृतव्याख्या—प्राकृत अपि साधारण अपि जन मनुष्य सद्य प्रसभ क्रीडारसच्छेद क्रीडारसस्य खेलास्वादस्य छेद भग न मषयेत न क्षमेत छेदे सति क्रोध करोति तर्हि लोकाधिक जनातिग धाम तेज बिभ्राण धारयन पथिवीपति राजा किमु मषयत न सहेत इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **लोकलोचनानन्दभूत**—लोगो के नेत्रो को आनन्द देने वाला। लोकाना लोचनानि तेषाम आनन्द (षष्ठीतत० स०) तेन भूत तुल्य (सुप्सुपा स०)। (२) **अनिच्छत तस्य**—चन्द्रगुप्त के न चाहते हुए भी। चन्द्रगुप्त नही चाहता था कि कौमुदीमहोत्सव बन्द हो जाय। यहा पर अनादरे षष्ठी है। चन्द्रगुप्तमनादत्य इत्यथ। (३) **समुत्तेजनसमर्था**—उत्तेजना देने मे समथ। उत्तेजना देन वाली। (४) **क्रीडारसच्छेदम**—खल के रग मे भग। क्रीडाया रसच्छेदम। (५) **लोकाधिकम**—अलौकिक। लोकात अधिकम (सुप्सुपा स०)। **बिभ्राण**—धारण करने वाला। भ+लट—शानच कतरि। यहा अर्थापत्ति अलकार तथा अनुष्टुप छन्द है।

मलयकेतु—एवमेतत।

राक्षस—ततस्तत ?

करभक—तदा चन्दउत्तेण आणाभङ्गकलुसिदहिअएण सुइर अमच्चगुण प्पससिअ प्पब्भसिदो अहिआरादो चाणक्कहदओ। (ततश्चन्द्रगुप्तेनाज्ञाभङ्गकलुषितहृदयेन सुचिरममात्यगुण प्रशस्य प्रभ्रंशितोऽधिकारात् चाणक्यहतक।)

मलयकेतु—सखे भागुरायण! गुणप्रशसया दर्शितश्चन्द्रगुप्तेन राक्षसे भक्तिपक्षपात।

भागुरायण—कुमार! न तथा गुणप्रशसया यथा चाणक्यवटोर्निराकरणेन।

राक्षस—भद्र! किमयमेवैक कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधश्चन्द्रगुप्तस्य चाणक्य प्रति कोपकारणमुतान्यदप्यस्ति ?

मलयकेतु—सखे भागुरायण! चन्द्रगुप्तस्य अपरकोपकारणान्वेषणे किं फलमेष पश्यति ?

भागुरायण —कुमार ! एतत फल पश्यति—'अतिमतिमान् चाणक्यो निष्प्रयोजनमेव किमिति चन्द्रगुप्त कोपयिष्यति ? न च कृतवेदी चन्द्रगुप्त एतावता गौरवमुलङ्घयिष्यति। सवथा चाणक्यचन्द्रगुप्तयो पुष्कलात् कारणाद् यो विश्लेष उत्पद्येत, स आत्यन्तिको भविष्यति' इति।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—ठीक है।

राक्षस—हा, फिर क्या हुआ ?

करभक—तब आज्ञा भग से रुष्ट होकर चन्द्रगुप्त ने अमात्य के (आपके) गुणो की प्रशसा करके दुष्ट चाणक्य से अधिकार ले लिया।

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, गुणो की प्रशसा करके चद्रगुप्त ने राक्षस में अपनी भक्ति दिखाई।

भागुरायण—कुमार, गुण प्रशसा से उतनी नहीं जितनी कि दुष्ट चाणक्य का अधिकार लेने से।

राक्षस—भद्र, क्या यही एक कौमुदी-महोत्सव का रोका जाना चन्द्रगुप्त का चाणक्य के प्रति क्रोध का कारण है ?

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, चद्रगुप्त के क्रोध के अन्य कारण के अन्वेषण से इनका क्या मतलब है ?

भागुरायण—कुमार, यह फल निकला है कि चाणक्य बडा बुद्धिमान है, वह निरथक चद्रगुप्त को अप्रसन्न न करेगा। कृतज्ञ चन्द्रगुप्त भी इतने से ही चाणक्य की प्रतिष्ठा का उल्लघन नहीं करेगा। इसे उन लोगो में परिपुष्ट कारण होने से जो झगडा पडेगा वह स्थायी होगा।

Malayaketu—Right it is

Rakshas—What next ?

Karbhaka—Then Chandragupta being enraged at the dis obedience by wicked Chanakya extolled the virtues of Minister and removed Chanakya from his office

Malayaketu—Friend Bhagurayan by praising the qualities, Chandragupta has shown a bias towards Rakshas through respect

Bhagurayan—Not so much by extolling virtues as by the removal of the wicked Chanakya

Rakshas—Good man is the stopping of the celebration of Kaumudi festival the only reason of the anger of Chandra gupta towards Chanakya or is there anything else also ?

Malayaketu—Friend what good does he expect in finding out the other cause of Chandragupta s anger

Bhagurayan—Prince he sees this good—Chanakya is very wise He will not enrage Chandragupta for nothing Chandragupta too is grateful and will not overstep reverence for this petty affair The discord between them will be lasting which wil result due to a variety of sufficient causes

टिप्पणी

(१) **आज्ञाभगकलुषितहृदयेन**—आज्ञा भङ्ग होने के कारण रुष्ट। कलुष कृतम इति कलुष+णिच (नामधातु)+क्त कमणि=कलुषित। (२) **निराकरणेन**—निकालने से। निष्काशनेन। निर+आ+कृ+ल्युट। (३) **कृतवेदी**—कृतज्ञ। कृतम उपकृतम वेत्तीति। कृत+विद+णिनि। (४) **आत्यन्तिक**—पक्का स्थायी। अतिगतम अ तम अत्यन्तम अत्यन्ते भव । अत्यन्त+ठञ।

करभक —अमच्च ! अत्थि अण्णदपि चन्दउत्तस्स कोबकारण चाणक्के। (अमात्य ! अस्त्यन्यदपि चन्द्रगुप्तस्य कोपकारण चाणक्ये।)

राक्षस —किं किम् ?

करभक —जधा पढम दाव उबेक्खिदो अणेण अवक्कमन्तो कुमारो मलयकेदू अमच्चरक्खसो अ। (यथा प्रथम तावदुपेक्षितोऽनेन अपक्रामन् कुमारो मलयकेतु अमात्यराक्षसश्च।)

राक्षस —(सहर्षम) सखे शकटदास ! हस्ततलगतो मे चन्द्रगुप्तो भविष्यति। इदानीं चन्दनदासस्य बन्धनान्मोक्ष तव च पुत्रदारै सह समागम , जीवसिद्धिप्रभृतीना क्लेशच्छेद ।

भागुरायण —(आत्मगतम) जात सत्य जीवसिद्धे क्लेशच्छेद

मलयकेतु —सखे भागुरायण ! 'हस्ततलगतो मे सम्प्रति चन्द्रगुप्तो भविष्यति' इति व्याहरत कोऽयमस्याभिप्राय ?

भागुरायण —किमन्यत् ? चाणक्यादपकृष्टस्य चन्द्रगुप्तस्योद्धरणान्न किञ्चित्कार्यमवश्य पश्यति।

राक्षस —भद्र ! हृताधिकार साम्प्रत क्वासौ वटु ?

करभक —तहि ज्जेव पाडलिपुत्ते प्पडिवसदि। (तस्मिन्नेव पाटलिपुत्रे प्रतिवसति।)

राक्षस —(सावेगम्) भद्र! तत्रैव प्रतिवसति, न तपोवन गत, प्रतिज्ञा वा न पुन समारूढवान्?

करभक —अमच्च! तबोवण गमिस्सदि त्ति सुणीअदि। (अमात्य! तपोवन गमिष्यतीति श्रूयते।)

राक्षस —(सावेगम्) शकटदास! नेदमुपपद्यते। पश्य—

हिन्दी अनुवाद—करभक—अमात्य चाणक्य के ऊपर क्रोध करने का चन्द्रगुप्त को दूसरा भी कारण है।

राक्षस—वह क्या है?

करभक—यह कि कुमार मलयकेतु और अमात्य राक्षस को भागते हुए देखकर क्यों उपेक्षा की गई।

राक्षस—(प्रसन्नतापूर्वक) मित्र शकटदास, चन्द्रगुप्त मेरे हाथ में आ जायगा। अब चन्दनदास बधन से मुक्त हो जायगा। और तुम भी पुत्र और स्त्री से मिल जाओगे और जीवसिद्धि आदि के दुःखो का अन्त होगा।

भागुरायण—(मन में) जीवसिद्धि का कष्ट-शमन तो अवश्य ही हो गया।

मलयकेतु—सखे भागुरायण "अब चन्द्रगुप्त मेरे हाथ में आ जायेगा" इससे इनका क्या अभिप्राय है?

भागुरायण—यह कि जब चन्द्रगुप्त चाणक्य से अलग हो गया तो उसके उन्मूलन से कोई लाभ नहीं।

राक्षस—भद्र, अधिकार से वंचित यह वटु चाणक्य कहाँ है?

करभक—उसी पाटलिपुत्र में रहता है।

राक्षस—(आवेग के साथ) भद्र, वहीं रह रहा है, तपोवन नहीं गया अथवा कोई प्रतिज्ञा नहीं की?

करभक—सुना जाता है कि तपोवन में चला जायगा।

राक्षस—शकटदास यह बात युक्तिसंगत नहीं है। देखो—

Karbhaka—Chandragupta has other reason to be angry with Chanakya Malayaketu and Minister Rakshas were overlooked by him while escaping

Rakshas (with joy)—Friend Shakatdas now Chandragupta will be in my hands Chandandas also shall be released from prison and you will be united with your son and wife, and Jivasiddhi and others will be relieved of their grief

Bhagurayan (To himself)—Jivasiddhi is certainly relieved

Malayaketu—Friend Bhagurayan what does he mean by saying Now Chandragupta will be in my hands

Bhagurayan—What else ? He sees no good in overthrowing Chandragupta who is separated from Chanakya

Rakshas—Gentleman where is that wicked fellow now when he is devoid of authority

Karbhaka—He is still staying in Pataliputra itself

Rakshas (*With concern*)—Gentleman he is staying there has not gone to penance forest nor undertaken a fresh vow ?

Karbhaka—It is heard that he will go to hermitage

Rakshas—Shakatdas this is not consistent

टिप्पणी

(१) **अपक्रामन**—भागता हुआ । (२) **क्लेशच्छेद**—दु ख नाश । (३) **अपकृष्टस्य**—अलग हुए का दूर हुए का । दूरीभूतस्य । (४) **उद्धरणात**—नाश से । (५) **हृताधिकार**—अधिकार रहित । हृत अधिकार यस्य स । (६) **सावेगम**—आवेग के साथ । राक्षस को आवेग इसलिए हुआ कि पाटलिपुत्र मे रहता हुआ चाणक्य सभव है कि च द्रगुप्त पर विपत्ति आ पडने पर उसकी सहायता के लिए तयार हो जाय । (७) **न इदम उपपद्यते**—यह युक्तिसगत नही है ।

देवस्य येन पृथिवीतलवासवस्य
स्वाऽग्रासनापनयजा निकृतिन सोढा ।
सोऽय स्वयङ्कृतनराधिपतेमनस्वी
मौर्यात्कथ नु परिभूतिमिमा सहेत ।।११।।

अन्वय—येन पथिवीतलवासवस्य देवस्य स्वाग्रासनापनयजा निकृति न सोढा स अय मनस्वी स्वयङ्कृतनराधिपते मौर्यात इमा परिभूति कथ नु सहत ? ।।११।।

हि दी अनुवाद—जिसने पृथिवी के ऊपर इन्द्र के समान महाराज न द के द्वारा किए गए अग्रासन से हटाए जाने के रूप में अपमान का सहन नही किया वह मनस्वी स्वयम अपने द्वारा बनाए हुए राजा से किए गए इस अपमान को कसे सहेगा ?

The dishonour of removal from the front seat by sire (Nanda) who was virtually like Indra on the earth was not

tolerated by this supersensitive man how can he now tolerate this disgrace from Chandragupta who was made king by himself

संस्कृतव्याख्या—येन चाणक्येन पथिवीतलवासवस्य भूलोकमहेन्द्रस्य देवस्य नन्दस्य स्वाग्रासनापनयजा स्वस्य आत्मन यत अग्रासनम श्रेष्ठासन तस्मात य अपनय निष्कासन तस्माज्जाता उत्पन्ना निकृति अपमान न सोढा न मर्षिता स अय मनस्वी तथाविधस्वाभिमानी स्वयङ्कृतनराधिपते स्वयमात्मना कृतश्चासौ नराधिपति च तस्मात मौर्यात इमाम परिभूतिम अवमानना कथ नु सहेत केन वा प्रकारेण मषयेत।

टिप्पणी

(१) परिभूति—पराभव अपमान। (२) स्वाग्रासनापनयजा—अपने अग्रासन से उठाए जाने के कारण की गई। (३) निकृति—अपमान। (४) स्वयङ्कृतनराधिपते—अपने द्वारा बनाए गए राजा से। यहा अर्थापत्ति अलकार और वसन्ततिलका छद है।

मलयकेतु—सखे भागुरायण! चाणक्यस्य तपोवनगमने पुन प्रतिज्ञारोहणे वा काऽस्य स्वार्थसिद्धि?

भागुरायण—कुमार! नात्यन्तदुर्बोधोऽयमर्थं यावद्यावत् चाणक्यहतकश्चन्द्रगुप्ताद् दूरीभवति तावत्तावदस्य स्वार्थ-सिद्धि।

शकटदास—अमात्य! अलमत्यन्तविकल्पितेन, एतदुपपद्यत एव। कुत? पश्यत्वमात्य—

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—मित्र भागुरायण, राक्षस की इसमें कौन सी स्वार्थसिद्धि है कि चाणक्य तपोवन में चला जाय या और कोई प्रतिज्ञा करे।

भागुरायण—कुमार, यह बडी कठिन बात नहीं है। चन्द्रगुप्त से चाणक्य जितना ही दूर चला जाय उतना ही राक्षस का काम बन जायगा।

शकटदास—अमात्य, इसमें ज्यादा सोच विचार न करें। इसमें कोई सन्देह नहीं। आप ऐसा क्यों नहीं सोचते कि—

Malayaketu—Friend Bhagurayan what purpose of Rakshas is served by Chanakya s going to a forest or taking fresh vow?

Bhagurayan—It is not very difficult to understand The more Chanakya is away from Chandragupta the more his purpose is served

Shakatdas—Minister enough of much thinking This is consistent Why ? Let minister consider

राज्ञा चूडामणीन्दुद्युतिखचितशिखे मूर्ध्नि विन्यस्तपाद
स्वैरेवोत्पाद्यमान किमिति विषहते मौर्य आज्ञाविघातम् ? ।
कौटिल्य कोपनोऽपि स्वयमभिचरणज्ञातदु ख प्रतिज्ञा
दैवात पूर्णप्रतिज्ञ पुनरपि न करोत्यायतिज्यानिभीत ॥१२॥

अ वय—राज्ञा चूडामणी दुद्युतिखचितशिखे राज्ञा मूर्ध्नि विन्यस्तपाद मौय स्वरेव उत्पाद्यमानम आज्ञाविघात किमिति विषहते ? स्वयमभिचरणज्ञातदु ख दवात पूणप्रतिज्ञ कौटिल्य कोपनोऽपि आयतिज्यानिभीत (सन) पुनरपि प्रतिज्ञा न करोति ॥१२॥

हि दी अनुवा —अब च द्रगुप्त के चरण राजा-महाराजाओ के चूडा-मणियो की च द्रतुल्य कान्तियो से युक्त केशो वाले मस्तको पर पडने लग गए ह । भला वह अब अपने ही लोगो के द्वारा किए गए आज्ञा के उल्लघन को कसे सहन कर सकता है ? और चाहे कितना ही क्रोधी क्यो न हो यह जानकर कि शत्रुहत्या करने के लिए अभिचार कम कितना कठिन होता है और यह भी जानकर कि एक बार की प्रतिज्ञा नो किसी प्रकार भाग्य से पूरी हुई अब यह समझ कर कि कहीं यह प्रतिज्ञा विफल न हो जाय क्यो कर दूसरी प्रतिज्ञा करेगा ?

Now the foot of Maurya is planted on the head of kings the tuft of hair of which is glowing with the lustre of Moon like gems on their crests so how can he tolerate the non carrying out of his orders by those very men who are his own Kautilya though full of anger by nature somehow or other has got his personal incantation realised and his vow has been fulfilled is afraid of taking a fresh vow for he apprehends a future failure

सस्कृतव्याख्या—राज्ञाम भूपतीनाम चूडामणी दुद्युतिखचितशिखे चूडाया मौलिमुकुटादिषु प्रत्युप्ता ये मणय ते एव इ दव च द्रकला तदद्युतिभि कान्तिभि खचिता चर्चिता शिखा यस्य तथाभूते मूर्ध्नि शिरसि विन्यस्तपाद विन्यस्तौ स्थापितौ पादौ चरणौ येन तादश मौय च द्रगुप्त स्वरेव आत्मीयरेव जनरिति शेष उत्पाद्यमानम क्रियमाणम आज्ञाविघातम अनुशासनभङ्गम किमिति विषहते कथ सोढु शक्नुयात । स्वयमभिचरणज्ञातदु ख स्वयमेवाभिचरणे कृत्यादि-विधानकमणि ज्ञातम अनुभूत तत्र दु ख तेन स दवात भाग्यवशात येन केन प्रकारेण पूणप्रतिज्ञ सफलप्रतिज्ञ कौटिल्य कोपनोऽपि प्रकृत्या क्रोधी सन्नपि आयतिज्या-

निभीत आयतौ उत्तरे काले या ज्यानि हानि निष्फलतेत्यथ तस्या भीत शङ्कित पुनरपि भूयोऽपि प्रतिज्ञा न करोति चन्द्रगुप्त नाशयितु न प्रतिज्ञामारोहे-दिति। तत चाणक्यस्य सत्यपि कोपकारणे औदासीन्येनावस्थानम उपपद्यते एव।

टिप्पणी

(१) राज्ञा चूडामणीन्दुद्युतिखचितशिखे—चन्द्रमा के समान चूडामणि की कान्तियो से खचित राजाओ के (मस्तक पर)। (२) **विन्यस्तपाद**—पैर रखने वाला। (३) **उत्पाद्यमानम**—किया जाता हुआ। उत—पद्—णिच+शानच। (४) **अभिचरणज्ञातदु ख**—अभिचरण के दु ख को जो भोग चुका है। अभिचार तन्त्रोक्त मोहन मारण उच्चाटन आदि अनुष्ठान। हिसा-कर्माभिचार स्यात इत्यमर। चाणक्य इस बात को अनुभव कर चुका हे कि अभिचार मे कितना दु ख व परिश्रम होता है। पवतक के ऊपर विषकन्या का प्रयोग करके चाणक्य इस कष्ट का अनुभव कर चुका है। अपने नीतिसार के प्रारम्भ मे कामन्दक चाणक्य के लिए कहता है—यस्याभिचारवज्रेण इत्यादि। (५) **आयतिज्यानिभीत**—भविष्य मे होने वाली असफलता की आशङ्का से। (अब चाणक्य दूसरी प्रतिज्ञा करने नही जा रहा है।) इस श्लाक मे उत्प्रेक्षा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

राक्षस—शकटदास! एवमेतत्। तद् गच्छ, विश्रामय करभकम्।

शकटदास—यदाज्ञापयत्यमात्य इति। (करभकेण सह निष्क्रान्त।)

राक्षस—अहमपि कुमार द्रष्टुमिच्छामि।

मलयकेतु—अहमेवार्यं द्रष्टुमागत।

राक्षस—(नाट्येनावलोक्य) अये! कुमार एवागत। (आसनादुत्थाय) इदमासनमुपवेष्टुमर्हति कुमार।

मलयकेतु—अहमुपविशामि। उपविशत्वार्य। (इत्युभौ यथासनमुपविष्टौ) आर्य! अपि सह्या शिरोवेदना?

राक्षस—कुमारस्याधिराजशब्देनातिरस्कृते कुमारशब्द कुत शिरोवेदनाया सह्यता?

मलयकेतु —स्वयमुरीकृतमेतदार्येण, न दुष्प्राप भविष्यति। तत् कियन्त कालमस्माभिरेव सम्भृतबलैरपि शत्रुव्यसनमवेक्षमाणैरुदासितव्यम्।

राक्षस —कुमार! कुतोऽद्यापि कालहरणस्यावकाश ? प्रतिष्ठस्व रिपुजयाय।

मलयकेतु —अमात्य! अपि किञ्चिच्छत्रुव्यसनमुपलब्धम्।

राक्षस —बाढमुपलब्धम्।

मलयकेतु —कीदृशम् ?

राक्षस —सचिवव्यसन, किमन्यत् ? अपकृष्टश्चाणक्याच्चन्द्रगुप्त ।

मलयकेतु —अमात्य! सचिवव्यसनमेव ?

राक्षस —कुमार! अन्येषा भूपतीना कदाचिदमात्यव्यसनमव्यसनमपि स्यात, न पुनश्चन्द्रगुप्तस्य।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—शकटदास, ऐसा ही सही। जाओ, करभक को विश्राम कराओ।

शकटदास—अमात्य की जसी आज्ञा। (करभक के साथ चला जाता है।)

राक्षस—म भी कुमार से मिलना चाहता हूँ।

मलयकेतु—म ही आय से मिलने आया हूँ।

राक्षस—(देखने का अभिनय करके) अरे, यह तो कुमार स्वय ही आ गये ह। (आसन से उठकर) कुमार इस आसन पर बठें।

मलयकेतु—म बठता हूँ। आय बठें। (दोनो आसन पर बठ जाते ह)। आय, क्या सिर का दद कुछ कम है ?

राक्षस—कुमार, इस सिर का दद तब तक नही छूट सकता जब तक कुमार का नाम 'राजाधिराज' पद से सुशोभित न हो जाय।

मलयकेतु—जब आप स्वय ऐसा कह रहे ह तब तो म इसे हुआ ही समझता हूँ। अब हम लोग सेना इकटठी करके भी कितने समय तक शत्रुव्यसन की प्रतीक्षा में बठे रहेंगे।

राक्षस—कुमार, अब देरी करने की क्या आवश्यकता है ? शत्रुविजय के लिए प्रस्थान कर दिया जाय।

मलयकेतु—तो क्या कोई सूचना मिली है कि शत्रु सकट में है ?

यह है कि जब तक आप महाराज नहीं हो जाते तब तक सिर की पीडा कसे शान्त हो सकती है। (४) सम्भतबलरपि—सेना इकटठी करने पर भी। (५) शत्रु व्यसनम—शत्रु के सकट को।

मलयकेतु —आय ! ननु विशेषतश्चन्द्रगुप्तस्येति।

राक्षस —किं कारण यदस्यामात्यव्यसनमव्यसनम् ?

मलयकेतु —चन्द्रगुप्तप्रकृतीना हि चाणक्यदोषा एव विरागहेतव। तस्मिन्निराकृते प्रथममपि चन्द्रगुप्तानुरक्ता प्रकृतय इदानी पुन सुतरामेव तत्रानुराग दर्शयिष्यन्ति।

राक्षस —कुमार ! नैतदेव, इह द्विप्रकारा प्रकृतय — चन्द्रगुप्तसहोत्थायिन्यो नन्दकुलानुरक्ताश्च। तत्र चन्द्रगुप्त-सहोत्थायिनीना प्रकृतीना चाणक्यदोषा एव विरागहेतव, न नन्दकुलानुरक्तानाम। तास्तु खलु नन्दकुलमनेन पितृकुल-भूत कृत्स्न कृतघ्नेन घातितमित्यपरागामर्षाभ्या विप्रकृता सत्य स्वाश्रयमलभमानाश्चन्द्रगुप्तमेवानुवर्तन्ते। त्वादृश पुन प्रतिपक्षोद्धरणे सम्भावितशक्तिमभियोक्तारमासाद्य क्षिप्रमेन परित्यज्य त्वामेवाश्रयिष्यन्ते इति। अत्र कुमारस्य वयमेव निदर्शनम्।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—आय, विशेष करके चन्द्रगुप्त के लिए (ही ऐसी बात है)।

राक्षस—क्या कारण है कि इसके लिए अमात्य-व्यसन कोई व्यसन (सकट) नहीं है ?

मलयकेतु—चन्द्रगुप्त की प्रजा तो चाणक्य के दोष से उससे विरक्त रहती है। उस (चाणक्य) के अलग हो जाने पर लोग जो उससे अनुरक्त ह वे (उस) (चन्द्रगुप्त) से और अधिक प्रेम करेंगे।

राक्षस—कुमार ऐसा नहीं है। क्योकि वहा दो प्रकार की प्रजा है। एक तो चन्द्रगुप्त के साथी दूसरी नन्दकुल से प्रेम करने वाली। उनमें जो चन्द्रगुप्त के साथी ह वे ही चाणक्य के कारण विरक्त होंगे न कि नन्दकुल से अनुरक्त लोग। नन्दकुलानुरक्त प्रजा यह सोच कर कि चन्द्रगुप्त के पितवश रूप नन्द वश का समुन्मूलन करने वाला चाणक्य ही है उसके प्रति क्रोध और द्वेष से विक्षुब्ध होकर अपना कोई सहारा न पाकर चन्द्रगुप्त को ही अपना सब कुछ

मान बठे ह। परन्तु आपके समान आक्रमणकारी को पाकर वे निश्चय ही चन्द्रगुप्त को छोडकर आप से आ मिलेंगे। इस विषय में कुमार के लिए तो हम ही प्रमाण ह।

Malayaketu—Noble Sir not so to Chandragupta specially

Rakshasa—What is the reason that loss of minister is no loss to him ?

Malayaketu—The faults of Chanakya are the cause of dissatisfaction of the people of Chandragupta The people who were already attached to him will show greater affection to him now when Chanakya is dismissed

Rakshasa—Prince not so There are two kinds of people those who made common cause with Chandragupta and those who are attached to Nanda The faults of Chanakya are the cause of dissatisfaction of those only who are devoted to Chandragupta and not of those who a e devoted to the family of Nanda They again being goaded by anger and discontent for the reason that Nanda s family which was like his parental family was assassinated by this ungrateful man follow Chandragupta because they do not find any other person worthy of giving them shelter But finding an invader like you whose power to destroy the foe may be estimated those people will leave this man at once and come to you for shelter In this matter I myself am an instance to the Prince

टिप्पणी

(१) **सुतराम**—अधिक। (२) **चन्द्रगुप्तसहोत्थायिनीना प्रकृतीनाम**—चन्द्रगुप्त का साथ देने वाली प्रजाओ का। (३) **नन्दकुलानुरक्तानाम**—नन्दकुल से प्रेम करने वाले। (४) **पितकुलभूतम**—पिता के कुल के समान। पितवश तुल्यम। कृत्स्नम—सम्पूण। (५) **अपरागामर्षाभ्याम**—विराग और क्रोध से। विरागक्रोधाभ्याम। (६) **विप्रकृता**—तिरस्कृत आहत। वि+प्र+कृ+क्त कमणि। (७) **त्वादशम**—आप के समान। भवत्सदशम। (८) **प्रतिपक्षोद्धरणे**—शत्रु के नाश करने मे शत्रुनाशकरणे। (९) **सम्भावितशक्तिम**—जिसकी शक्ति का अनमान किया गया है। निश्चितसामथ्यम। सभाविता शक्ति यस्य तम्। (१०) **अभियोक्तारम**—आक्रमण करने वाला। शत्रुविजयिनम। (११) **निदशनम**—उदाहरण। नि+दश+णिच+ल्युट करणे।

मलयकेतु—अमात्य! किमेतदेवैक सचिवव्यसनमभियोगकारण चन्द्रगुप्तस्य? आहोस्विदन्यदप्यस्ति?

राक्षस—कुमार! किमन्यै बहुभिरपि? एतद्धि तत्र प्रधानतमम्।

मलयकेतु—अमात्य! कथ प्रधानतम नाम? किमिदानी चन्द्रगुप्त स्वराज्यकार्यधुरामन्यत्र मन्त्रिणि आत्मनि वा समासज्य स्वय प्रतिविधातुमसमथ स्यात्?

राक्षस—वाढम्, असमर्थ एव।

मलयकेतु—कि कारणम्?

राक्षस—स्वायत्तसिद्धिषु उभयायत्तसिद्धिषु वा भूमिपालेषु कदाचिदेतत् सम्भवति, न तु चन्द्रगुप्ते। चन्द्रगुप्तस्तु दुरात्मा नित्य सचिवायत्तसिद्धावेवावस्थितस्चक्षुर्विकल इवाप्रत्यक्षसर्वलोकव्यवहार कथमिव स्वय प्रतिविधातु समथ स्यात्? कुत—

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—अमात्य, क्या चन्द्रगुप्त के ऊपर आक्रमण करने का यही एक कारण है कि उसे मन्त्रिसकट है या कोई और भी?

राक्षस—कुमार, अन्य कारणो के होने न होने से क्या? यही प्रधान कारण है।

मलयकेतु—अमात्य, यह कसे प्रधान कारण है? क्या इस समय चन्द्रगुप्त अन्य मन्त्रियो के ऊपर काय भार डाल कर या स्वय काय भार अपने ऊपर लेकर हमसे लडने में असमथ है?

राक्षस—हा, असमथ ही है।

मलयकेतु—क्या कारण है?

राक्षस—यह बात तो उस राजा के लिए सभव है जो स्वायत्त सिद्धि वाला हो या उभयायत्त सिद्धि वाला, परन्तु चन्द्रगुप्त के लिए यह सम्भव नही। वह दुष्ट चन्द्रगुप्त तो सचिवायत्त सिद्धि वाले अधे के समान विकल तथा समस्त लोक व्यवहार से अनभिज्ञ है। भला, वह कसे स्वय सब प्रकार का प्रतीकार कर सकता है? क्योकि—

Malayaketu—Minister is this loss of minister the only reason for waging a war against Chandragupta or is there any other reason also?

Rakshasa—What have we to do with other reasons? This indeed is the most important

Malayaketu—Noble Sir how is this the most prominent one Is Chandragupta personally unable to fight all the evils

after having entrusted the affairs to another minister or to himself ?

Rakshasa—Yes unable

Malayaketu—What is the reason ?

Rakshasa—This can be possible for one whose success is in his own hands or in the hands of both the minister and the king but not for Chandragupta He is wicked and always depends for his success on his minister alone and is like a person destitute of eyes and does not know the ways of the world how can he be able to counteract this himself For—

अत्युच्छ्रिते मन्त्रिणि पार्थिवे च विष्टभ्य पादावुपतिष्ठते श्री ।
सा स्त्रीस्वभावादसहा भरस्य तयोर्द्वयोरेकतर जहाति ।।१३।।

अन्वय—श्री अत्युच्छ्रिते मन्त्रिणि पार्थिवे च पादौ विष्टभ्य उपतिष्ठते। स्त्रीस्वभावात भरस्य असहा सा तयो द्वयो एकतर जहाति ।।१३।।

हिन्दी अनुवाद—अति उन्नत मत्री और राजा दोनो के ऊपर पर जमाकर लक्ष्मी रहती है (अर्थात जब राजा और मत्री में मेल रहता है तभी लक्ष्मी टिकती है) स्त्री स्वभाव के कारण भार को न सह सकती हुई वह दोनो में से एक को छोड देती है। (अर्थात जब मत्री और राजा में मतभेद हो जाता है तो वह लक्ष्मी टिक नहीं पाती। चली जाती है)

Shri stays after having placed her foot in the minister and the king who grow very high But due to the feminine nature unable to balance herself she leaves one of them

सस्कृतव्याख्या—पार्थिवे नपे मन्त्रिणि सचिवे अत्युच्छ्रिते अतिउन्नते श्री राजलक्ष्मी पादौ चरणौ (प्रभुशक्तिमत्रशक्तिरूपौ) विष्टभ्य व्यवस्थाप्य उपतिष्ठते तयो समीपवर्तिनी भवतीत्यथ। स्त्रीस्वभावात नारीप्रकृत्या स्त्रीजनोचित-दुबलतया भरस्य स्वदेहभरस्य असहा अक्षमा सा तयो अन्यतर जहाति परित्यजति। ऐकमत्य विहाय वैमत्येन वतमानयोश्च द्रगुप्तचाणक्ययोरवश्यमेवास्माक काय-सिद्धिरित्यभिप्राय ।

टिप्पणी

(१) **स्वायत्तसिद्धिष्वित्यादि**—राक्षस के कहने का तात्पय यह है कि तीन प्रकार के राजा होते ह—(१) अपने ही हाथो मे सब अधिकार रखने वाले (२) मत्री की सहायता से अपने हाथो मे अधिकार रखने वाले तथा (३) मत्री

के हाथो मे सम्पूण अधिकार दे देने वाले। **अप्रत्यक्षसवलोकव्यवहार**—लौकिक ्यवहार को न जानने वाला। अप्रत्यक्ष अगोचर सवलोक यवहारो यस्य स। (२) **स्वकायधुरम**—अपने काम के भार को। (३) **अत्युच्छ्रिते**—अत्यन्त उच्च। (४) **विष्टभ्य**—रखकर स्थापयित्वा। वि+स्तम्भ+ल्यप। यहा समासोक्ति अलकार और उपजाति छद है। राक्षस के कहने का मतलब है कि जब राजा और मत्री मे मतक्य होता है तो राज्यलक्ष्मी टिकती है। और दोनो मे मतक्य न होने पर वह चली जाती है। इस समय चाणक्य और चद्रगुप्त मे झगडा है अत हम लोगो की अवश्य विजय होगी। परन्तु राक्षस को यह क्या मालूम कि यह झगडा बनावटी है। इस श्लोक मे समासोक्ति अलकार तथा उपजाति छद है।

अपि च—

नृपोऽपकृष्ट सचिवात्तदर्पण स्तनन्धयोऽत्यन्तशिशु स्तनादिव।
अदृष्टलोकव्यवहारमन्दधीर्मुहूर्तमप्युत्सहते न वर्तितुम ॥१४॥

अन्वय—सचिवात अपकृष्ट तदपण अदष्टलोक यवहारमन्दधी नप स्तनात (अपकृष्ट) स्तनधय अत्यन्तशिशु इव मुहूत्तमपि वर्तितु न उत्सहते ॥१४॥

हिदी अनुवाद—और भी—मत्री से पथक हुआ, उसी के आश्रित रहने वाला और लोक-व्यवहार को न देखने के कारण मद बुद्धि वाला राजा (मा के) स्तन से अलग किये हुए दुधमुहे बच्चे के समान एक क्षण भी नहीं ठहर सकता।

This dull king (*Chandragupta*) having entrusted all the affairs to the minister and being separated from the (same) minister and not knowing the ways of the world cannot survive even for a moment like a young suckling weaned from the breast

सस्कृतव्याख्या—सचिवात मत्रिण अपकृष्ट पृथगभूत तदपण तस्मिन अमात्ये एव अपण राज्यभारसमपण यस्य स तथाभूत अदृष्टलोकव्यवहारमदधी न दष्टो लोक यवहार येन स अत एव मन्दा किंचित प्रतिविधातुमसमर्था धी बुद्धि यस्य स नप राजा स्तनात मातु स्तनात (अपकृष्ट) अत्यन्तशिशु अतिबाल स्तनधय इव स्तनपायी इव मुहूतमपि क्षणमात्रमपि वर्त्तितु न उत्सहते स्थातु न क्षमते।

टिप्पणी

(१) **अपकृष्ट**—अलग किया हुआ। अप+कृष+क्त। (२) **तदर्पण**—उसको (मन्त्री को) भार सौंपने वाला। तस्मिन् अर्पणं यस्य स तदर्पण। (३) **अदृष्टलोकव्यवहारमन्दधी**—संसार के व्यवहार को न जानने वाला तथा मन्दमति। (४) माता का स्तन पीने वाला दुधमुहा, स्तनं धयति पिबति इति स्तन+धे+खश् मुमागम। इसमें उपमा अलंकार और वंशस्थविलनामक छन्द है। छन्द का लक्षण—'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ'।

मलयकेतु—(आत्मगतम्) दिष्टया न सचिवायत्ततन्त्रोऽस्मि। (प्रकाशम्) अमात्य! यद्यप्येवं तथापि खलु बहुष्वभियोगकारणेषु सत्सु सचिवव्यसनमभियुञ्जानस्य शत्रुमभियोक्तुं नैकान्तिकी सिद्धिर्भवति।

राक्षस—ऐकान्तिकीमेव सिद्धिमवगन्तुमर्हति कुमारः। कुतः—

त्वय्युत्कृष्टबलेऽभियोक्तरि नृपे नन्दानुरक्ते पुरे
चाणक्ये चलिताधिकारविमुखे मौर्ये नवे राजनि।
स्वाधीने मयि'—(इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयन्)
'—मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे।
त्वद्वाञ्छान्तरितानि सम्प्रति विभो! तिष्ठन्ति साध्यानि न ॥१५॥

अन्वय—विभो! सम्प्रति उत्कृष्टबले नृपे त्वयि अभियोक्तरि पुरे नन्दानुरक्ते चाणक्ये चलिताधिकारविमुखे राजनि मौर्ये नवे मयि स्वाधीने मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे न साध्यानि त्वद्वाञ्छान्तरितानि तिष्ठन्ति ॥१५॥

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—(मन में) भाग्यवश मैं सचिवायत्त (मन्त्री के वश में सिद्धि वाला) नहीं हूं। (प्रकट) अमात्य! यद्यपि यह बात है तो भी अनेक कारणों के रहते हुए केवल मन्त्री के संकट का पता लगाकर आक्रमण करने वाले को निश्चित सिद्धि नहीं मिलती।

राक्षस—निश्चित सिद्धि समझें। क्योंकि इस समय उत्कृष्ट शक्तिसम्पन्न आप के समान आक्रमणकारी होने पर नन्द में प्रजा के अनुरक्त होने पर, चाणक्य के अधिकारच्युत होने पर, चन्द्रगुप्त के नये राजा होने पर और मेरे स्वाधीन

रहने पर (ऐसी आधी बात कह कर लज्जा का अभिनय करता है) तथा मार्ग-दर्शन और कर्त्तव्याकर्त्तव्य के निर्देश में सतत उद्युक्त हमारे रहते हुए हमारी उद्देश्य-सिद्धि आप की इच्छा से व्यवहित है (अर्थात आप की आज्ञा की देरी है)।

Malayaketu (*To himself*)—Fortunately I am not one whose affairs are entrusted to the minister (*Aloud*) Minister though it is so yet lasting success does not come when an attack is made only when the enemy is without minister if several other reasons are present for the invasion

Rakshasa—It behoves the prince to consider the success as lasting indeed For—

The invader being yourself a king with a good army the people being attached to Nanda Chanakya being adverse because of being dismissed Maurya being a new king I being independent (*Acts modesty after uttering half*) with efforts consisting merely in the application of energy in leading our objects now stand hidden by your wish

सस्कृत याख्या—हे विभो सम्प्रति इदानीम उत्कृष्टनृपबले सन्नद्धसवप्रकार सैन्येऽभियोक्तरि प्रतिपक्षे सति पुरे नन्दानुरक्ते पाटलिपुत्रे च नन्दभक्ते तिष्ठति सति चाणक्ये चलिताधिकारविमुखे चलिताधिकार च्युतपद च असौ अतएव विमुखो निरपेक्षश्चेति तथाविधे सजायमाने राजनि भूपतौ मौर्य्ये नवे अज्ञातराज्यतन्त्रसचालने मागमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे मागमात्रस्य युद्धपथस्य एव कथने उपदेशे यो व्यापारयोग प्रयत्नघटना स एव उद्यम "यवसायो यस्य तादृशे मयि स्वाधीने राक्षसे स्वतत्रे सति न अस्माकम साध्यानि कार्याणि त्वद्वाञ्छान्तरितानि तव या वाञ्छा इच्छा तया अन्तरितानि व्यवहितानि तिष्ठन्ति वतन्ते। सन्यानि त्वदाज्ञा प्रतीक्षन्ते यदवाज्ञापयसि तदव सिद्ध सवमित्यभि प्राय ।

टिप्पणी

(१) **दिष्टया**—भाग्य से। (२) **सचिवायत्ततत्र**—मत्री के बल पर जो राज्यकाय चलाता है। सचिवे आयत्तम—सुप्सुपा स०। (३) **अभियोग-कारणेषु सत्सु**—आक्रमण के कारण रहते हुए। (४) **सचिवव्यसन शत्रुम**—वह शत्रु जिसे मत्रि-सकट आ पडा हो। (५) **ऐकान्तिकी सिद्धि**—निश्चयात्मक सफलता। (६) **चलिताधिकारविमुखे**—अधिकार के छिन जाने से विमुख (होने पर)। (७) **लज्जा नाटयन**—लज्जा का अभिनय करते हुए। अपने

स्वामी नन्द के भक्त राक्षस को अपनी स्वतन्त्रता पर प्रसन्न होना शोभा नही देता। अत मुह से उक्त वाक्य के निकल जाने पर वह लज्जित होता है। **मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे**—मार्गदर्शन और कर्त्तव्याकर्त्तव्य के निर्देश मे लगा हुआ। राक्षस का कहना है कि मैं मार्ग प्रदर्शन मे लगा हुआ हूँ (ऐसी हालत मे) (८) **साध्यानि**—काम। (९) **त्वद्वाञ्छान्तरितानि**—तुम्हारे इच्छा के अन्दर छिपे ह। अर्थात तुम्हारे कहने मात्र की देरी है। इसमे समुच्चयालकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

मलयकेतु—अमात्य ! यद्येवमभियोगकालममात्य पश्यति, तत्किमास्यते ? पश्य—

उत्तुङ्गास्तुङ्गकूल स्रुतमदसलिला प्रस्यन्दिसलिल
श्यामा श्यामोपकण्ठद्रुममलिमुखरा कल्लोलमुखरम् ।
स्रोत खातावसीदत्तटमुरुदशनैरुत्सादिततटा
शोण सिन्दूरशोणा मम गजपतय पास्यन्ति शतश ॥१६॥

अन्वय—मम उत्तुङ्गा स्रुतमदसलिला अलिमुखरा उरुदशनैरुत्सादिततटा श्यामा सिन्दूरशोणा शतश गजपतय तुङ्गकूल प्रस्यन्दिसलिल कल्लोलमुखरं स्रोत खातावसीदत्तट श्यामोपकण्ठद्रुम शोण पास्यन्ति ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—अमात्य, यदि आप ऐसा आक्रमण का समय देख रहे ह तो क्यों बठा जाय। देखिए—

मेरे सकडो हाथी ह जो अति ऊँचे है, जिनसे मदजल टपक रहा है। जिनके ऊपर भँवरे मँडरा रहे ह, जो अपने विशाल दातो से तटों को उखाडने वाले ह और काले परन्तु सिन्दूर से लाल वण हो रहे ह। ये मेरे हाथी शोण नद को जिसके ऊँचे कगार ह, जिसका जल धारा प्रवाह से बह रहा है, जो लहरो से शब्दायमान है और जिसके किनारे प्रवाह से टूटकर गिर रहे ह और जिसके किनारे पर काले वृक्ष उगे ह, पी डालेंगे।

Malayaketu—If Noble Sir thinks this to be the proper time for attack why should we sit here See—

I have huge elephants whose fluid of ichor is coming out round whom black bees are humming and which are demolishing the bank with their huge tusks black but crimson with vermilion and whose number is in hundreds those (elephants) will drink up the Sona (river) with high banks with a rushing current and which has green trees in the vicinity and the

billows of which are roaring and whose banks are falling down due to being undermined by the current

संस्कृतव्याख्या—मम मलयकेतो उत्तुङ्गा विशाला स्रुतमदसलिला स्रुत क्षरित मदसलिल दानवारि यषा ते तादशा मदश्राविण इत्यथ अलिमुखरा अलिभि भ्रमर मुखरा शब्दायमाना उरुदशन विशालदत उत्सादिततटा उत्सादित विनाशित तट रोध य ते विदारिततीरा श्यामा कृष्णवर्णा सिन्दूर शोणा सिन्दूर शोणा रक्तवर्णा शतश गजपतय गजेन्द्रा तुङ्गकूल उन्नततट प्रस्यन्दिसलिलम प्रक्षरज्जलम कल्लोलमुखरम तरङ्गध्वनिवाचालम स्रोत खाता वसीदत्तटम स्रोतसा प्रवाहेण खातम विशीणम अतएव अवसीदत पतत तट तीर यस्य तथाविधम श्यामोपकण्ठद्रुमम श्यामायमानतटवक्षमाल शोण शोणनामानम महानदम पास्यन्ति पाय पाय शोषयिष्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **स्रुतमदसलिला**—मदरूपी जल को चुआने वाले। (२) **उरुदशन**—बडे-बडे दातो से। (३) **सिन्दूरशोणा**—सिन्दूर (लगाने) से लाल वण। (४) **तुङ्गकूलम**—ऊँचे किनारे वाले (शोण को)। (५) **स्रोत खातावसीदत्तटम**—प्रवाह से कटकर गिरने वाले किनारे हु जिसके स्रोतसा खातम अवसीदत् पतत तटम यस्य तम। (६) **श्यामोपकण्ठद्रुमम**—किनारे पर स्थित हरित (नील) वण के वक्षो वाले। उपगत कण्ठम उपकण्ठ। तत्र द्रुमा (सुप्सुपा स०)। श्यामा उपकण्ठद्रुमा (कमधारय स)। यहा पर श्लेषानुप्राणित उपमा अलकार तथा सुवदना छन्द है। छन्द का लक्षण—अश्वरश्वश्च षडभिमरभनयमला ग स्यात सुवदना'।

अपि च—

गम्भीरगर्जितरवा स्वमदाम्बुमिश्र-
मासारवषमिव शीकरमुद्गिरन्त्य ।
विन्ध्य विकीणसलिला इव मेघमाला
रोत्स्यन्ति वारणघटा नगर मदीया ।।१७।।

(इति भागुरायणेन सह निष्क्रान्त मलयकेतु)

अन्वय—गम्भीरगर्जितरवा स्वमदाम्बुमिश्र शीकरम आसारवषमिव

उदिगरन्त्य मदीया वारणघटा विकीणसलिला मेघमाला विंध्यमिव नगर रोत्स्यन्ति ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—गभीर गजन करने वाली, मद जल से मिश्रित जलकण राशि की वर्षा करने वाली, मेरे हाथियो की सेना नगर (पाटलिपुत्र) को उसी प्रकार घेर लेगी जसे कि मूसलाधार पानी बरसाती जलाप्लावन करती घनघटायें विन्ध्याचल को घेर लेती ह।

(भागुरायण के साथ मलयकेतु बाहर चला जाता है)

My cloud like elephants with deep roar and emitting like a torrential downpour sprays mixed with their ichoral fluid, will besiege the city as a row of clouds that is raining water and whose cry is its deep roar invests the Vindhya mountain

(Malayaketu goes out with Bhagurayan)

सस्कृत याख्या—मदीया मामकीना गम्भीरगर्जितरवा गम्भीरा गर्जित-रवा गजध्वनयो येषा तथाविधा स्वमदाम्बुमिश्रम शीकरम निजमदजलमिश्रित जलकणौघमासारवषमिव धारासम्पातमिव उदिगरत्य उद्वमन्त्य वारणघटा गजपङ्क्तय विकीणसलिला विक्षिप्तजला मेघमाला घनघटा विन्ध्यम इव तदाख्यगिरिम रोत्स्यन्ति आवरिष्यन्ति समन्तात। परिवत्त्यापरोधवशसेन पीड यिष्यन्तीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **वारणघटा**—हाथियो की पडक्तिया। (२) **उदिगरन्त्य**—वमन करती हुई। उद—ग—शत। हाथियो का यह स्वभाव होता है कि वे अपनी सूड से जल के कणो को श्वासवायु के साथ बाहर निकालते रहते ह। उनकी यह क्रिया उस समय बढ जाती है जब वे जल पिये होते ह। श्लोक १६ मे शोण के जल को हाथियो के द्वारा पीने की चर्चा आ चुकी है। (३) **आसारववम इव**—मूसलाधार जल वष्टि के समान। यहा पर पूर्णोपमा अलकार है और वसन्त तिलका छद है।

राक्षस—क कोऽत्र भो ?

पुरुष—(प्रविश्य) आणवेदु अमच्चो। (आज्ञापयत्व-मात्य ।)

राक्षस—प्रियवदक! ज्ञायता सावत्सरिकाणा द्वारि कस्तिष्ठति ।

प्रियवदक —ज अमच्चो आणबेदि। (इति निष्क्रम्य क्षपणक दृष्ट्वा पुन प्रविश्य च) अमच्च! एसो क्खु सवत्सरिओ क्खवणओ। (यदमात्य आज्ञापयति। अमात्य! एष खलु सावत्सरिक क्षपणक।)

राक्षस —(स्वगतमनिमित्त सूचयित्वा) कथ प्रथममेव क्षपणकदशनम्?

प्रियवदक —जीवसिद्धो। (जीवसिद्धि।)

राक्षस —(प्रकाशम्) अबीभत्सदशन कृत्वा प्रवेशय।

प्रियवदक —ज अमच्चो आणबेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्त।)

(तत प्रविशति क्षपणक।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—यहाँ कोई है जी?

पुरुष—(प्रवेश करके) अमात्य आज्ञा दें।

राक्षस—प्रियवदक, मालूम करो कि दरवाजे पर ज्योतिषियो में कौन है?

प्रियवदक—जो अमात्य की आज्ञा (बाहर जाकर क्षपणक को देखकर फिर से प्रवेश कर) अमात्य, ज्योतिषी क्षपणक यहा पर है।

राक्षस—(मन में, अशकुन सूचित करके) अरे यह क्या, पहले ही क्षपणक का दर्शन हुआ।

प्रियवदक—जीवसिद्धि।

राक्षस—(प्रकट) निन्दित वेष से रहित करके भीतर ले आओ।

प्रियवदक—जसी अमात्य की आज्ञा। (बाहर जाता है)

(तब क्षपणक प्रवेश करता है)

Rakshasa—Who is here Ho why?

Servant (*Entering*)—Let Minister order

Rakshasa—Priyamvadaka find out which of the astrologers is at the door

Priyamvadaka—As the Minister orders (*Goes out and seeing Kshapanaka re enters*) Minister it is Kshapanaka

Rakshasa—(*Acting the presentation of a bad omen to him self*) Oh a Kshapanaka is seen at the very out set

Priyamvadaka—Jivasiddhi

Rakshasa (*Aloud*)—Let him come in making him stripped of his hateful garment

Priyamvadaka—As the Minister orders (*Goes out*)
(*Enters the Kshapanaka*)

क्षपणक —

सासणमलिहन्ताण प्पडिवज्जह मोहवाहिवेज्जाण।
जे पढममेत्तकडुअ पच्छा पत्थ उबदिसन्ति ॥१८॥
(शासनमर्हंता प्रतिपद्यध्व मोहव्याधिवैद्यानाम् ।
ये प्रथममात्रकटुक पश्चात् पथ्यमुपदिशन्ति ॥१८॥)

अन्वय—मोहव्याधिवद्यानाम अर्हता शासन प्रतिपद्यध्वम् ये प्रथममात्र कटुक पश्चात् पथ्यम उपदिशन्ति ॥

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—मोहरूपी रोग के वद्य जन सन्यासियो के उपदेश का पालन करो जो ऐसे उपदेश करते ह जो कि पहले तो कटु होता है पर पीछे लाभकारी होता है।

Kshapanaka—Follow the advice of Arhats who are the curers of the sickness of delusion whose advice is bitter in the beginning but wholesome in the end

सस्कृतव्याख्या—मोहव्याधिवद्यानाम मोह अज्ञानम एव व्याधि रोग तस्य ये वैद्या चिकित्सका तेषाम अर्हताम जनसन्यासिनाम शासनम शिक्षाम् प्रतिपद्यध्वम् प्रतिपालयत ये सन्यासिन प्रथममात्रकटुकम् आदावेव तिक्तम। पश्चात् परिणामे पथ्यम हितम उपदिशन्ति कथयन्ति ।

टिप्पणी

(१) **क्षपणक जीवसिद्धि**—यहा क्षपणक' सुनकर राक्षस को अरुचि हुई क्योकि यात्राकाल मे क्षपणक का दशन अशुभसूचक है। किन्तु जीवसिद्धि' सुनकर राक्षस ने उसे भीतर आने की अनुमति दे दी। क्योकि यह शब्द शुभाथक है और जीवसिद्धि राक्षस का प्रिय पात्र भी बना हुआ है। (२) **सावत्सरिकाणाम**—ज्योतिषियो (मे) दैवज्ञानाम। (२) **अबीभत्सदशनम**—घणित वेष से रहित। अर्थात सौम्य वेष से युक्त करके भीतर ले आओ। (३) **अनिमित्तम**—अशकुन। (४) **प्रथममात्रकटुकम**—पहले ही कड़ुआ परन्तु (बाद मे पथ्य यानी हितकारी)। यहा आर्या छन्द है और अप्रस्तुप्रशसा तथा रूपक अलकार है।

(उपसृत्य) धम्मलाहो साबका ! भोदु। (धमलाभ उपासक ! भवतु।)

राक्षस —भदन्त ! निरूप्यता तावदस्मत्प्रस्थानयोग्य-दिवस ।

क्षपणक —(नाटयेन चिन्तयित्वा) साबका ! णिलूविदे मुहुत्ते। आ मज्झणादो णिब्बुत्तसत्तसकला सोहणा तिही सपुणच दा पुण्णमासी तुह्माण उत्तलाए दिसाए दक्खिणा दिस प्पत्थिदाण दक्षिणदुबालिओ णक्खत्तओ। (उपासक ! निरूपितो मुहूत । आ मध्याह्नात् निवृत्तसप्तशकला शोभना तिथि सम्पूर्णचन्द्रा पौर्णमासी, युष्माकमुत्तरस्या दिशो दक्षिणा दिश प्रस्थिताना दक्षिणद्वारिक नक्षत्रम्।)

हि दी अनुवाद—(पास जाकर) उपासक ! धम का लाभ करो।

राक्षस—भिक्षु, हमारे प्रस्थान योग्य मुहूत्त को बताइए।

क्षपणक—(सोचने का अभिनय करते हुए) उपासक ! मुहूत विचार लिया गया। मध्याह्न काल से सम्पूण च द्रमा वाली तिथि हो रही है बडी शोभन और सप्तमी के अश से रहित है और उत्तर की ओर से दक्षिण प्रस्थान करते हुए आप का नक्षत्र भी दक्षिणवर्त्ती है।

(*Approaching*) May your religion increase

Rakshasa—Mendicant tell me a day for our march

Kshapanaka (*Acts thinking*)—Well believer the full moon day with complete moon which is auspicious from mid day with the seventh Karana over is selected by me The नक्षत्र too is favourable for you to proceed from north to south

अबि अ—(अपि च—)

अत्थाहिमुहे सूले, उदिदे सपुण्णमण्डले चन्दे।
गमण बुहस्स लग्गे, उदिदत्थमिदे केदुम्मि ॥१६॥
(अस्ताभिमुखे शूरे, उदिते सम्पूर्णमण्डले चन्द्रे।
गमन बुधस्य लग्ने, उदितास्तमिते च केतौ ॥१६॥)

अ वय—शूरे अस्ताभिमुखे सम्पूणमण्डले च द्रे उदिते केतौ च उदितास्तमिते बुधस्य लग्ने गमनम् ॥१६॥

हिंदी अनुवाद—और भी—सूर्य के अस्ताचल पर जाने पर और पूर्ण मण्डल वाले चन्द्रमा के उदय होने पर और जब केतु उदय होकर अस्त हो जाय तब बुध के लग्न में गमन करना उत्तम है। यह श्लोक द्व्यर्थक है—पक्षान्तर में इसका अर्थ होगा बलवान (राक्षस) के विनाश होने पर सम्पूर्ण राष्ट्र वाले चन्द्रगुप्त के उत्थान होने पर और मलयकेतु के उत्थान के साथ ही पतन होने पर चाणक्य के सम्पर्क में जाना ठीक है।

It is auspicious to march in the Buddha Lagna when the sun is about to set and the moon has arisen with the whole of her curb and the Ketu has appeared and (then) disappeared

संस्कृत व्याख्या—शूरे रवौ अस्ताभिमुखे अस्ताचलं गच्छति सम्पूर्णमण्डले पूर्णबिम्बे चन्द्रे सहस्रांशौ उदिते प्रकटिते केतौ उदितास्तमिते आविर्भूय तिरोभूते सति बुधस्य लग्नौ कन्यालग्ने ऽत्यर्थं गमनम् यात्रा कार्या यद्व्यार्थस्तु—शूरे भवति राक्षसे अस्ताभिमुखे मौर्ये साचिव्यस्वयग्राहसत्वरे संभूते सति चन्द्रे चन्द्रगुप्ते वशीकृतसर्वराजमण्डले भूते सति बुधस्य कौटिल्यस्य सम्बन्धे (लग्ने) केतौ मलयकेतौ उदितास्तमिते गमनं समीचीनम्।

टिप्पणी

(१) **भदन्त**—बौद्धसन्यासी। भन्द+झच कर्तरि झस्य अन्तादेश। अथवा भदन्त ज्योतिषी को कहते हैं। भानि नक्षत्राणि दन्ता अस्य इति भदन्त। (२) **सावका**—विश्वास करने वाले सुनने वाले श्रोतार। (३) **आमध्याह्लात**—दोपहर से प्रारम्भ होकर आ के योग मे पञ्चमी होती है। (४) **निवृत्तसप्तशकला**—सप्तमी तिथि का अंश जिसमे भद्रा होती है बीतने पर। (५) **उत्तरस्या**—उत्तर मे अपादाने पञ्चमी है। (६) **उदितास्तमिते केतौ**—केतु के उदय होकर अस्त होने पर। राहु और केतु का शरीर एक ही है। सिर भाग को राहु कहते हैं और पुच्छ भाग को केतु। सिर जब उदित होता है तब पुच्छ अस्त होता है और पुच्छ भाग के उदित होने पर सिर अस्त होता है। इसीलिए उदितास्तमिते केतौ कहा है। यहा आर्या छन्द तथा श्लेष अलंकार है।

राक्षस—भदन्त! तिथिरेव तावन्न शुध्यति।

क्षपणक—सावका! (उपासक!)—

एक्कगुणा होइ तिही चउग्गुणे होइ णक्खत्ते।
चउसत्तिगुणे लग्गे एसे जोइसतन्तसिद्ध ते ॥२०॥

(एकगुणा भवति तिथिश्चतुर्गुण भवति नक्षत्रम ।
चतु षष्टिगुण लग्नमेतददृश्यते ज्यौतिषतन्त्रसिद्धान्ते ।।२०।।)

अन्वय—ज्यौतिषत त्रसिद्धा ते एतत दश्यते (यत) तिथि एकगुणा भवति नक्षत्र चतुाण भवति लग्न चतु षष्टिगुण (भवति) ।।२०।।

हिदी अनुवाद—राक्षस—भद त, पहले तो तिथि ही नहीं शुद्ध है।
क्षपणक—उपासक ज्योतिष शास्त्र के सिद्धा त पर देखा गया है कि तिथि एक गुना फल देती है नक्षत्र का फल चौगुना होता है और लग्न का फल चौंसठ गुना होता है।

Rakshasa—Mendicant first of all the date (or day) is not auspicious

Kshapanaka—Well believer according to the principle of Astrology the day is a single measure mansion is fourfold and the Lagna is sixtyfour fold

सस्कृत व्याख्या—ज्यौतिषत त्रसिद्धान्ते एतत इदम दृश्यते अवलोक्यते यत तिथि एकगुणा फलदायिनी भवति नक्षत्र चतुगुणम फलद भवति लग्न चतु षष्टिगुण फलद भवति।

टिप्पणी

तिथिरेव न शुध्यति—यहा राक्षस कहना चाहता है कि पहले तो तिथि ही हमारी यात्रा के लिए उपयुक्त नही है नक्षत्र आदि की बात तो दूर रही । क्योकि पूर्णिमा को यात्रा करना वर्जित है—विनाशदाथ पूर्णिमा यश क्षय करोत्यमा' ।

ता । लग्गो होइ सुलग्गे कूलग्गह पलिहलिज्जासु ।
पाबिहि दीह लाह चन्दस्य बलेण गच्छन्ते ।।२१।।
(तस्मात् । लग्न भवति सुलग्न क्रूरग्रह परिहर आशु ।
प्राप्नुहि दीर्घ लाभ चन्द्रस्य बलेन गच्छन् ।।२१।।)

अन्वय—आशु क्रूरग्रहम परिहर लग्न सुलग्न भवति च द्रस्य बले गच्छन दीघ लाभ प्राप्नुहि ।।२१।।

हिदी अनुवाद—हीन लग्न भी शुभ हो जाती है, शीघ्र ही क्रूरग्रह को छोड दो (अर्थात् यदि क्रूरग्रह से सम्बन्ध न रहेगा तो अशुभ लग्न भी शुभ होती है)

चन्द्रमा के बल से जाते हुए तुम चिरस्थायी सिद्धि प्राप्त करो। इसका दूसरा अर्थ भी है—हे राक्षस! हठ छोड दो चन्द्रगुप्त की सेना में जाते हुए (तुम) लाभ प्राप्त करो। ऐसा करने से अशुभ लग्न भी शुभ फल देगी।

Give up the Krurgra i soon even a bad Lagna (touch) will become auspicious Marching on the strength of the moon you will attain lasting success

सस्कृत व्याख्या—आश शीघ्र क्रूरग्रह नीचग्रहसम्बन्ध त्यज चन्द्रस्य बलन गच्छन चन्द्रसबधेन प्रस्थातुकाम त्वम दीघ लाभम प्राप्नुहि यदि एतत करिष्यसि तदा लग्न हीनमपि सुलग्न फलदायक भविष्यति।

टिप्पणी

लग्न भवति सुलग्नम—अशुभ लग्न भी यदि बुध से अधिष्ठित हो तो शुभ हो जाता है। यहा श्लेष अलकार है।

राक्षस —भदन्त! अपर सावत्सरिकै सार्धं सवाद्यताम्।

क्षपणक —सबादेहु साबके। अह णिअ गेह गमिस्स। (सवादयतु उपासक। अह निज गेह गमिष्यामि।)

राक्षस —न खलु कुपितो भदन्त ?

क्षपणक —ण कुबिदे तुह्माण भदन्ते। (न कुपितो युष्माक भदन्त।)

राक्षस —कस्तर्हि ?

क्षपणक —भअब कअन्तो। जेण अत्तणो पक्ख उज्झिअ परपक्ख प्पमाणीकलेसि। (भगवान कृतान्त। येन आत्मन पक्षमुज्झित्वा परपक्ष प्रमाणीकरोषि।) (इति निष्क्रान्त क्षपणक।)

राक्षस —प्रियवदक! ज्ञायता का वेला वतत इति।

प्रियवदक —ज अमच्चो आणबेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुन प्रविश्य च) अत्थाहिलासी भअबसुले। (अस्ताभिलाषी भगवान् सूर्य)।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—भदन्त, अन्य ज्योतिषियों से भी इस पर राय ले लें।

क्षपणक—उपासक, आप सलाह लेते रहें। म तो अपने घर जाऊगा।

राक्षस—क्या भदन्त अप्रसन्न हो गये ?

क्षपणक—आप के भदन्त अप्रसन्न नहीं ह।

राक्षस—तब कौन ?

क्षपणक—भगवान यमराज (अप्रसन्न ह) जो कि अपना पक्ष त्याग कर शत्रुपक्ष ग्रहण कर रहे हो। (क्षपणक चला जाता है)

राक्षस—प्रियवदक, मालूम करो, क्या समय है।

प्रियवदक—जसी अमात्य की आज्ञा (बाहर जाकर पुन प्रवेश कर) भगवान सूय अब अस्ताचल पर जाने वाले ह।

Rakshasa—Mendicant let other astrologers be also con sulted

Kshapanaka—Let believer consult I will go home

Rakshasa—Is mendicant angry ?

Kshapanaka—Your mendicant is not angry

Rakshasa—Who then ?

Kshapanaka—The God of Death Because you are accept ing others as guide and avoiding your own men (*Exit Ksha panaka*)

Rakshasa—Priyamvadak see what the time is

Priyamvadaka—As the Minister commands (*Going out and re entering*) The sun desires to set

राक्षस —(आसनादुत्थाय विलोक्य च) अये ! अस्ताभिलाषी भगवान् सहस्रदीधिति । सम्प्रति हि—

आविर्भूतानुरागा क्षणमुदयगिरेरुज्जिहानस्य भानो
पत्रच्छायै पुरस्तादुपवनतरवो दूरमाश्वेव गत्वा ।
एते तस्मिन्निवृत्ता पुनरपरककुप्प्रान्तपर्यस्तबिम्बे
प्रायो भृत्यास्त्यजन्ति प्रचलितविभव स्वामिन सेवमाना ।।२२।।

(इति निष्क्रान्ता सर्वे।)

।। इति चतुर्थोऽङ्क ।।

अन्वय—एते उपवनतरव क्षणम आविभूतानुरागा उदयगिरे उज्जिहानस्य भानो पुरस्तात पत्रच्छाय आशु एव दूर गत्वा तस्मिन अपरककुपप्रान्तपयस्त बिम्बे सम्प्रति पुनर्निवत्ता हि सेवमाना भत्या प्रचलितविभव स्वामिन प्राय त्यजन्ति ।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(आसन से उठकर और देखकर) अरे भगवान सहस्राशु अस्त होना चाहते ह। इस समय भगवान सूय के उदय होने पर क्षणभर में जो उपवन के वक्ष लाल रग के हो गये थे और अपने पत्रों की प्रभूत छाया से दूर तक आगे मानो स्वागत के लिए खडे दिखाई देते थे वे अब सूय के पश्चिम दिशा में चले जाने पर लौट आये ह। (क्योकि) प्राय सेवा करते हुए भत्यगण ऐश्वयहीन स्वामी को छोड देते ह। (सभी चले जाते ह)

चौथा अङ्क समाप्त

Rakshasa (*Rising from his seat and looking*)—Aha the sun wishes to set These garden trees which for a moment had become red and with the shades of foliage had gone in front of the sun that was moving away from the rising hill have indeed turned back now when the sun has gone to the other direction (viz the west) Usually the serving servants leave the master whose wealth is gone (*Exit all*) (The fourth Act ends)

सस्कृत व्याख्या—एते अमी उपवनतरव आरामपादपा क्षणम मुहूत्तमात्रम आविर्भूतानुरागा आविर्भूत सञ्जात अनुराग अनुरञ्जनमिति येषा तादशा प्रीतिरक्तास्सन्त उदयगिरे उदयाचलात उज्जिहानस्य उदयमानस्य भानो सूयस्य पुरस्तात सूर्याभिमुख पत्रच्छाय छायाबाहुल्येन आशु एव शीघ्रमेव दूर गत्वा सूयस्य स्वागताय पुरश्छाया प्रसारयन्त स्थिता इत्यथ। तस्मिन भानौ अपर-ककुपप्रान्तपयस्तबिम्बे पश्चिमाशावलम्बिनि सति अस्तोमुखे सभूते सम्प्रति अधुना निवृत्ता पृष्ठत अपसता एव। यावत प्रताप तावत पुरस्तात उपसपणम प्रतापक्षये तु पश्चादपसपणम इति एषा कृतघ्नता। सेवमाना उपचरन्त भत्या सेवका प्रचलितविभव धनरहित स्वामिन प्राय त्यजन्ति जहति।

टिप्पणी

(१) **सवाद्यताम**—सलाह ले ली जाय। सम+वद+णिच+लोट। (२) **सवादयतु श्रावक**—श्रावक सलाह ले। इससे प्रतीत होता है कि जब राक्षस ने दूसरे ज्योतिषियो से पूछने के लिए कहा तो क्षपणक रुष्ट हो गया। (३) **कृतान्त**—यमराज। क्षपणक के कहने का भाव यह है कि मैं नही कुपित हो रहा हू बल्कि यमराज कुपित ह जो तुम अपने लोगो (चन्द्रगुप्त) को छोड कर शत्रुपक्ष का सहारा ले रहे हो। (४) **अस्ताभिलाषी**—अस्तम अभिलषितु शीलमस्य इति अस्त+अभि+लष+णिनि कतरि ताच्छील्ये। (५) **आविर्भूता नुरागा**—लालिमा (अथवा प्रेम) प्रकट किया जिसने। आविर्भूत अनुराग

येषा ते। सूर्योदय होने पर वक्ष लाल हो जाते ह क्योकि उन पर सूय की छाया पडती है। (६) **उज्जिहानस्य**—चलता हुअ निकलता हुआ। उद+हा+शानच। (७) **पत्रच्छाय**—छाया की बहुलता से। (७) **अपरककुप्रात-पयस्तबिम्बे**—दूसरी (पश्चिम) दिशा मे चले जाने पर। जब सूय पश्चिम दिशा को चला जाता है तो वक्षो की छाया भी छोटी हो जाती है उसी को कवि कह रहा है कि क्षीणविभव स्वामी को सेवक लोग छोड देते ह। इसमे अर्थान्तरन्यास तथा उत्प्रेक्षा अलकार और स्रग्धरा छद ह।

पञ्चमोऽङ्कः

(तत प्रविशति लेखमलङ्करणस्थगिकाञ्च मुद्रिता-मादाय सिद्धार्थक)

सिद्धार्थक —ही हीमाणहे ! हीमाणहे ! ! (आश्चयम् ! आश्चयम् ! !)

बुद्धिजलणिज्झरेहिं सिच्चन्ती देशकालकलसेहि ।
दसइस्सदि कज्जफल गुरुअ चाणक्कणीदिलदा ।।१।।
(बुद्धिजलनिर्झरै सिच्यमाना देशकालकलसै ।
दर्शयिष्यति कार्यफल गुरुक चाणक्यनीतिलता ।।१।।)

अ वय—दशकालकलस बुद्धिजलनिझर सिच्यमाना चाणक्यनीतिलना गुरुक कायफल दशयिष्यति ।।१।।

हि दी अनुवाद—(सिद्धाथक का राक्षस की मुद्रा से मुद्रित लेख तथा आभूषण वाली पेटी के साथ रगमच पर आगमन) ।

सिद्धाथक—आश्चय, बडा भारी आश्चय ।

देशकाल रूपी घडे से (उपयुक्त देश और काल का विचार करके) बुद्धि रूपी जल से सीची गई (बुद्धिपूवक विचार करके) चाणक्य की नीतिलता बहुत फल देगी ।

विशेष—इस अङ्क से फलागम सबधी निवहण सधि का आरम्भ होता है । इस श्लोक से यह सूचना दी गई है कि चाणक्य का फलाया हुआ नीतिजाल अब फलदायक होने वाला है । सिद्धाथक के पास का पत्र और मुहर वही है जिसे चाणक्य ने उसे सौंपा था (अक १ देखिए) और गहनो की पेटी वह है जिसे चाणक्य के कथनानुसार उसने शकटदास से बचाने के पुरस्कार में राक्षस से पाया था तथा उसी के महर से अकित कराया था । (अङ्क २) ।

(Now enter Siddharthaka with a sealed letter and a box of ornaments)

Siddharthaka—Wonder wonder The creeper of Chanakya s policy watered by the jug of time and place with a flow of the water of wisdom will give great fruits

सस्कृत व्याख्या—देशकालकलस देशश्च कालश्च देशकालौ तावेव कलसास्सेचनघटा त बुद्धिजलनिझर बुदध्या जलानि इव तेषा निझरा प्रवाहा तै तथाभूत सिच्यमाना आर्द्रीक्रियमाणा चाणक्यनीतिलतिका चाणक्यस्य नीति एव लतिका इति चाणक्यनीतिलतिका गुरुक महत फल परिणाम दर्शयिष्यति लोकेभ्य प्रकटीकरिष्यति।

टिप्पणी

(१) **अलकरणस्थगिकाम**—गहनो की पेटी को। अलकरणाना स्थगिका इति (ष० तत्पु०)। स्थग+णिच+अच कतरि=स्थग स एव स्थगक स्वार्थे कन—स्त्रियां स्थगिका। (२) **कार्यफलम**—चाणक्य ने राक्षस को वश मे करने के लिए ही चारो ओर अपनी नीति का जाल बिछा रखा है। राक्षस का चाणक्य के वश मे हो जाना ही कार्यरूप फल है। यहा रूपक अलकार तथा आर्या छद है।

गहीदो गए अज्जचाणक्केण पढमलेहिदो लेहो, अमच्चरक्खसस्स मुद्दालच्छिदो। तस्स ज्जेव्व मुद्दालच्छिदा इअ आहरणपेडिआ। चलिदेह्मि किल पाडलिउत्त, ता जाव गच्छह्मि। (परिक्रम्यावलोक्य च) कह क्खबणओ आअच्छदि? जाव मे असउणभूद इमस्स दसण, ता आदित्तदसणेण पडिहणामि। (गृहीतो मयाऽऽर्यचाणक्येन प्रथमलेखितो लेख, अमात्यराक्षसस्य मुद्रालाञ्छित। तस्यैव मुद्रालाञ्छितेयमाभरणपेटिका। चलितोऽस्मि किल पाटलिपुत्र, तद्यावत् गच्छामि। कथ क्षपणक आगच्छति? यावन्मेऽशकुनभूतमस्य दर्शन, तस्मादादित्यदर्शनेन प्रतिहन्मि।)

हिंदी अनुवाद—आर्य चाणक्य द्वारा लिखवाया गया वह लेख जिस पर अमात्य राक्षस की मुहर लगी है मने पहले ही से ले लिया है। उसी की मुद्रा से मुद्रित यह गहनो की पिटारी है। पाटलिपुत्र के लिए अब चलू। अब चल ही दिया जाय। (चलकर और देखकर) अरे, यह क्षपणक आ रहा है। इसका दर्शन तो अशकुन है अत सूर्य का दर्शन करके इस अशकुन का फल मिटा दू।

I have taken with me this letter previously caused to be written by Noble Chanakya and stamped with the seal of

Minister Rakshas This box of ornaments is also sealed with the same seal I have started for Pataliputra now I (must) go (*Going round and seeing*) Oh how is it that a Kshapanaka (mendicant) is seen His sight is inauspicious to me so I shall remove the inauspiciousness by looking at the sun

टिप्पणी

(१) **प्रथमलेखित**—चाणक्य ने कपटपूवक इस लेख को सिद्धाथक के हाथो भेजकर शकटदास से लिखवाया था। इसका प्रसग प्रथम अक मे आ चुका है। (२) कही **यावन्मे**—प्रतिहन्मि के स्थान पर यह पाठ है यावदस्य अशकुन भूतम् दशनम् मम सम्मतमेव तस्मात न परिहरामि।' इसका अथ है कि इस क्षपणक का अमङ्गलकारी दशन मुझे अभीष्ट है अत उसका त्याग न करूँगा।

(तत प्रविशति क्षपणक ।)

क्षपणक —अलिहन्ताण प्पणमामो जे दे गभीलदाए बुद्धिए।
लोउत्तलेंहि लोए सिद्धि मग्गेहि मग्गन्ति ॥२॥
(अर्हता प्रणमामो ये ते गम्भीरतया बुद्धे ।
लोकोत्तरैर्लोके सिद्धि मार्गैर्मार्गयन्ति ॥२॥)

अन्वय—अहता प्रणमाम ये ते बुद्धे गम्भीरतया लोके लोकोत्तर मार्गै सिद्धि मागयन्ति ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—(क्षपणक प्रवेश करता है) हम बौद्ध सन्यासियो को प्रणाम करते ह जो बुद्धि की गभीरता से ससार में अलौकिक माग से सिद्धि प्राप्त करते ह।

(*Now enter Kshapanaka*) I bow to Arhatas who through their sharp intelligence attain success in this world by means of extraordinary methods

सस्कृत व्याख्या—अहता बौद्धभिक्षूणा प्रणमाम नमस्कुम ये ते अहन्त बुद्धे गम्भीरतया धीरतया लोके ससारे लोकोत्तर अलौकिक मार्गै पथिभ्य सिद्धि सफलता मोक्ष वा मागयति अन्वेषयन्ति।

टिप्पणी

(१) **अहताम**—बौद्ध भिक्षुओ को। अह + शत=अहन्त तेषाम। 'कमण शेषत्वविवक्षाया षष्ठी हुई है। (२) **लोकोत्तर**—अलौकिक।

लोकातिगा प्रशस्ता त इत्यथ । इस पद्य मे अप्रस्तुत प्रशसा अलकार तथा आर्या छद है।

सिद्धाथक —भदन्त ! प्पणामि (भदन्त ! प्रणमामि)

क्षपणक —सावका ! धम्मलाहो ते होदु (सिद्धाथक निवण्य) सावका ! पत्थाणसमुब्बहणो किदब्बवसाअ बिअदे हिअअ पेक्खामि) (उपासक ! धमलाभस्ते भवतु। उपासक ! प्रस्थानसमुद्वहने कृतव्यवसायमिव ते हृदय पश्यामि।)

सिद्धाथक —कह भदन्तो जाणादि ? (कथ भदन्तो जानाति ?)

क्षपणक —सावका ! किं एत्थ जाणिदब्ब ? एसो दे मग्गादेसकुसलो सउणो करगदो लेहो अ सूचेदि। (उपासक ! किमत्र ज्ञातव्यम् ? एष ते मार्गादेशकुशल शकुन करगतो लेखश्च सूचयति।)

सिद्धार्थक —जाणिद भदन्तेण देसन्तल चलिदोह्मि। ता कधेदु भदन्तो कीदिसो अज्ज दिअसो ? (ज्ञात भदन्तेन देशान्तर चलितोऽस्मि। तत कथयतु भदन्त कीदृशोऽद्य दिवस ?)

क्षपणक —(विहस्य) सावका ! मुण्डिअमुण्डो तुम णक्खत्ताइ पुच्छसि ? (उपासक ! मुण्डितमुण्डस्त्व नक्षत्राणि पृच्छसि ?)

सिद्धाथक —भदन्त ! सम्पद पि किं जाद ? ता कधेहि, जइ अत्तणो अणुऊल भविस्सदि, ता गमिस्स, अण्णधा णिवत्तिस्स (भदन्त ! साम्प्रतमपि किं जातम ! तत कथय, यद्यात्मनोऽनुकूल भवेत, तदा गमिष्यामि, अन्यथा निवर्त्तिष्ये।)

क्षपणक —सावकाण सम्पद एदस्सि मलयकेदुकडए अणणुऊलेण वा किं ? अगहीदमुददेण ण गच्छीअदि।

(उपासकाना साम्प्रतमेतस्मिन मलयकेतुकटके अनुकूलेनाऽननुकूलेन वा किम् ? अगृहीतमुद्रेण न गम्यते।)

सिद्धार्थक —भदन्त ! कहेहि, कुदो क्खु अग्र। (भदन्त ! कथय, कुत खल्वयम् ?)

हिन्दी अनुवाद—सिद्धार्थक—भदन्त प्रणाम करता हू।

क्षपणक—उपासक तुम्हें धम का लाभ हो (सिद्धार्थक को अच्छी तरह देखकर) म देख रहा हू कि तुम्हारा हृदय यात्रा की तयारी में कृतनिश्चय है।

सिद्धार्थक—भदन्त कसे जानते ह ?

क्षपणक—उपासक, इसमें जानने की क्या बात है ? तुम्हारे माग की सूचना देने में निपुण शकुन तथा तुम्हारे हाथ का पत्र यह बता रहा है।

सिद्धार्थक—तो क्या भदन्त ने जान लिया कि म परदेश जा रहा हूँ। तो भदन्त बतावें कि आज का दिन कसा है।

क्षपणक—(हँसकर) उपासक, सिर मुडा कर तुम नक्षत्र पूछ रहे हो।

सिद्धार्थक—भदन्त, तो अभी क्या हो गया। बताइए, यदि दिन अपने अनुकूल होगा तो जाऊगा नहीं तो लौट जाऊगा।

क्षपणक—उपामकों को इस समय मलयकेतु के कटक में अनुकूल अथवा प्रतिकूल होने से क्या ? बिना मुद्रा के नहीं जा सकते।

सिद्धार्थक—भदन्त, कहिए, ऐसा क्यो ?

Siddharthaka—Mendicant I bow to you

Kshapanaka—Well believer may you attain piety (*Looking at him carefully*) Believer you seem to be like one whose mind has decided to accomplish a journey

Siddharthaka—How does the mendicant know ?

Kshapanaka—Believer what is there to know ? This letter in your hand and the auspiciousness which is the indicator of the way tell this

Siddharthaka—Has mendicant known that I am going on a journey Then let the mendicant tell how the day is today

Kshapanaka (*Laughing*)—Believer having got the head shaved already you ask about the stars

Siddharthaka—Mendicant nothing has happened as yet Speak if it is favourable for a journey I may go or I shall return

Kshapanaka—What is the use of being favourable or unfavourable at this time in the camp of Malayaketu ? None is allowed to go without a seal

Siddharthaka—Mendicant tell me how so ?

टिप्पणी

(१) **प्रस्थानसमुद्वहने**—यात्रा करने के लिए। (२) **कृत यवसायम**—तयारी की है जिसने। कृत यवसायो येन तम। (३) **मार्गादेशकुशल**—प्रस्थान करने का विशेष समय। मागस्य आदेश तस्मिन कुशल । (४) **शकुन**—यात्रा आरम्भ करने के समय मस्तक पर लगाई गई हल्दी अक्षत आदि कोई वस्तु। (५) **मुण्डितमुण्ड**—मूड मुडाकर नक्षत्र पूछते हो। अर्थात यात्रा की तैयारी कर अब मुहूत पूछते हो। यह तो पहले ही कर लेना था। (६) **साम्प्रतम किं जातम**—अभी बिगडा ही क्या है।

क्षपणक—सावका ! णिसामेहि पढम दाव एत्थ मलअकेदुकडए लोअस्स अणिबालिअणिक्कमणप्पवेसो आसी। दाणी इदो पच्चासण्णे कुसुमउरे ण कोबि अमुद्दालच्छिदो णिक्कमिदु प्पबिसेदु वा अणुमोदीअदि। ता जइ भाउराअणस्स मुद्दालच्छिदोसि, तदो गच्छ बीसत्थो, अण्णाधा णिब्बत्तिअ णिउक्कण्ठ चिटठ। मा तुम गुम्मट्ठाणाधिवेहि सजमिदकलचलणो राअउल प्पबेसीअसि। (उपासक ! निशामय, प्रथम तावदत्र मलयकेतुकटके लोकस्यानिवारितनिष्क्रमणप्रवेशावास्ताम। इदानीमित प्रत्यासन्ने कुसुमपुरे न कोऽप्यमुद्रालाञ्छितो निष्क्रमितु प्रवेष्टु वाऽनुमोद्यते। तद यदि भागुरायणस्य मुद्रालाञ्छितोऽसि, तदा गच्छ विश्वस्त, अन्यथा निवृत्त्य निरुत्कण्ठ तिष्ठ। मा त्व गुल्मस्थानाधिपै सयमितकरचरणो राजकुल प्रवेश्यसे।)

सिद्धार्थक—किं ण आणादि भदन्तो, जधा अमच्चरक्खसस्स केलिअरो अन्तिओ सिद्धत्थओ अह त्ति ? ता अमुद्दालच्छिद पि म णिक्कमन्त कस्स सत्ती णिबारेदु ? (कि न जानाति भदन्त, यथा अमात्यराक्षसस्य केलिकरोऽन्तिक सिद्धाथकोऽहमिति ? तद् अमुद्रालाञ्छितमपि मा निष्क्रामन्त कस्य शक्तिर्निवारयितुम् ?)

क्षपणक —साबका ! रक्खसस्स पिसाचस्स बा केलिअरो होहि । णत्थि उण दे अमुद्दालच्छिदस्स इदो णिक्कमणोबाओ । (उपासक ! राक्षसस्य पिशाचस्य वा केलिकरो भव । नास्ति पुनस्ते अमुद्रालाञ्छितस्येतो निष्क्रमणोपाय ।)

सिद्धार्थक —भदन्त ! ण कुप्य, भण मे कज्जसिद्धी होदु त्ति (भदन्त ! न कुप्य भण मे कार्यसिद्धिर्भवतु इति ।)

क्षपणक —साबका ! गच्छ, होदु दे कज्जसिद्धी । अहपि भागुराअणादो पाडलिउत्त गन्तु मुद्द पडिच्छेमि । (उपासक ! गच्छ, भवतु ते कायसिद्धि । अहमपि भागुरायणात् पाटलिपुत्र गन्तु मुद्रा प्रतीच्छामि ।) (इत्युभौ निष्क्रान्तौ ।)

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—उपासक, सुनो, पहले तो मलयकेतु की सेना में बिना रोकटोक के लोगो का आना-जाना होता था । अब इस समय पाटलि पुत्र के करीब आ जाने पर कोई भी बिना मुद्रा के चिह्न दिखाए नहीं आ-जा सकता । यदि भागुरायण की मुद्रा से चिह्नित होगे तो बेखटके जा सकते हो अन्यथा लौट जाओ, और उत्कण्ठाहीन होकर रहो । कहीं ऐसा न हो कि शिविर के रक्षक तुम्हारा हाथ पर बाधकर (कदकर) तुम्हें राजा के दरबार में ले जाय ।

सिद्धाथक—क्या भदन्त को नहीं मालूम है कि अमात्य राक्षस के समीप रहने वाला म उसका विनोदी सेवक हूँ । तो किसकी शक्ति है कि बिना मुद्रा से चिह्नित होन पर भी मुझको बाहर जाने से रोके ।

क्षपणक—उपासक ! तुम चाहे राक्षस के चाहे पिशाच के निकटवर्ती सेवक रहो, परन्तु बिना मुद्रा चिह्न के तुम्हारे लिए यहा से बाहर जाने का कोई उपाय नहीं है ।

सिद्धाथक—भदन्त, अप्रसन्न न हो । कहिए मेरा काम सफल हो जाय ।

क्षपणक—उपासक ! जाओ, तुम्हारो काय सिद्धि हो जाय । म भी भागुरायण से पाटलिपुत्र जाने के लिए मुद्रा की प्रतीक्षा कर रहा हू । (दोनो निकल जाते ह)

(प्रवेशक समाप्त)

Kshapanaka—Listen believer Formerly all were allowed to go out and come in without any check But now as Kusum pura is near no one is allowed to go in or come out unmarked bv a stamp If you are marked with the seal of Bhagurayan you may proceed on without any fear otherwise stay without any eagerness last the guards may tie you by the hands and feet and take you to the royal camp

Siddharthaka—Does mendicant not know that I am an attendant of Minister Rakshas So who has the power to stop me from going out even unmarked by a stamp

Kshapanaka—Believer whether you are the attendant of a Rakshas or Pishach you have no means to go out if you are not marked by a signet

Siddharthaka—Mendicant do not be angry say that I may succeed in my mission

Kshapanaka—Believer go You may succeed in your work I am also waiting for a seal from Bhagurayan to go to Pataliputra

टिप्पणी

(१) **निशामय**—सुनो। नि+शम+णिच+लोट। see दुर्गा सप्तसती—निशामय तदुत्पत्ति विस्तराद्वदतो मम'। (२) **अनिवारितनिष्क्रमणप्रवेशौ**—आना जाना बिना रोकटोक के होता था। (३) **अमुद्रालाछित**—बिना मद्रा के चिह्न से चिह्नित। न मुद्रया लाछित इति अमुद्रालाछित (नञ समास)। (४) **गुल्मस्थानाधिप**—रखवालो से। (५) **सयमितकरचरण**—हाथ पर बाँधकर कद कर। करौ च चरणौ च इति करचरणम (द्वन्द्व स०) प्राण्यङ्गत्वादे कवद्भाव नपुसकत्व च। सयमित करचरण यस्य स। (६) **केलिकर**—विनोदप्रिय। अतिक—समीपवर्त्ती चाकर। (७) **प्रवेशक**—दो अको के बीच के एक प्रकार के अक को प्रवेशक कहते ह। देखिए भूमिका। प्र+विश+णिच+ण्वुल कतरि।

(तत प्रविशति पुरुषेणानुगम्यमानो भागुरायण।)

भागुरायण—(आत्मगतम्) अहो! विचित्रतार्यचाणक्य-नीते। कुत—

मुहुर्लक्ष्योद्भेदा मुहुरधिगमाभावगहना
मुहु सम्पूर्णाङ्गी मुहुरतिकृशा कायवशत।
मुहुर्भ्रश्यद्बीजा मुहुरपि बहुप्रापितफले-
त्यहो! चित्राकारा नियतिरिव नीतिनयविद ॥३॥

अन्वय—मुहु लक्ष्योद्भेदा मुहु अधिगमाभावगहना मुहु सम्पूर्णाङ्गी मुहु कायवशत अतिकृशा, मुहु भ्रश्यदबीजा मुहु बहुप्रापितफला अपि इति अहो नियति इव नयविद नीति चित्राकारा ॥३॥

हिंदी अनुवाद—(एक पुरुष के साथ भागुरायण का प्रवेश) भागुरायण—(मन में) अहो (ओह) आय चाणक्य की नीति कसी विचित्र ह —कभी तो ऐसा लगता है कि इसका लक्ष्य प्रकट हो गया है और कभी इतनी गहन हो जाती है कि किसी की बुद्धि में ही नहीं आ सकती। कभी-कभी परिपुष्ट अङ्गो वाली और कभी काय के अनुरोध से अति क्षीण हो जाती है। कभी ऐसा मालूम पडता है कि वह बीज से नष्ट हो रही है और कभी विविध फलो को देती हुई प्रतीत होती है। इसकी विविधरूपता कसी विचित्र है। जसी नियति की चाल बहुरगी, वसी चाणक्य की कूट चाल बहुरगी।

(*Enter Bhagurayan followed by an attendant*) *Bhagurayan*—(*To himself*) Oh the wonderfulness of Noble Chanakya s policy Sometimes it seems that its aim is visible sometimes it is inscrutable in the absence of trace sometimes it is full in its part often subtle on purpose sometimes it seems that its very basis is disappearing often again it seems leading to great success Thus like fate is the policy of diplomats of striking character

सस्कृत व्याख्या—अहो आश्चय महाश्चय यन्नयविद नयज्ञाननिधेराचाय चाणक्यस्य नीति कूटराजनीति नियतिरिव प्रकृतिशक्तिवैचित्री या चित्रकारा विस्मयजननी मुहु वार वार लक्ष्योद्भेदा लक्ष्य अनुमय उद्भेद आविर्भाव यस्या तादृशी मुहु वार वार अधिगमाभावगहना अधिगमस्य उपलब्धे अभावात विरहात अतिगहना दुर्बोधा मुहु सम्पूर्णाङ्गी प्रचितावयवा मुहु कदाचिन कायवशात आवश्यकतानुसारम अतिकृशा अतिक्षीणा मुहु भ्रश्यदबीजा भ्रश्यन विनाश गच्छत बीज कारण यस्या सा तादृशी मुहु वार वार बहुप्रापितफला प्रचुरफलदायिनी अपि इनि एव नियति इव भाग्यम इव नयविद नीति नीतिज्ञस्य नीति चित्राकारा बहुप्रकारा।

टिप्पणी

(१) **लक्ष्योद्भेदा**—लक्ष्य अनुमेय उद्भेद आविर्भाव यस्या सा। जिसका आविर्भाव समझ मे आने लगता है अर्थात गूढ चाले कुछ कुछ प्रकाश म आने लगती ह। भागुरायण जब प्रथम बार पाटलिपुत्र मे आया और मलयकतु के यहा नौकरी करने लगा तब उस समय चाणक्य की सफलता की कुछ-कुछ आशा हो गई कि जो कुछ मलयकेतु को राक्षस समझावेगा उसके विपरीत भागुरायण उसे समझाने का प्रयत्न करेगा। (२) **अधिगमाभावगहना**—कोई फल न होने से गूढ (समझ मे न आने वाली)। अधिगमस्य अभावात गहना इति।

जब से भागुरायण आदि मलयकेतु की सेवा मे आये तब से बहुत दिनो तक कोई घटना नही घटित हुई। उसी से वह ऐसा कह रहा है कि कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि राजनीति का कुछ प्रभाव होता ही नही जान पडता। (३) **सम्पूर्णाङ्गी**—चाणक्य की नीति के सभी अग इस प्रकार ह—(१) भद्रभट आदि का मलयकेतु की सेना मे आना (२) शकटदास का पहुँचना (३) सिद्धार्थक का राक्षस का प्रिय बनकर उसके पास रहना (४) सिद्धार्थक को आभूषणो का पुरस्कार मिलना तथा (५) राक्षस के ही पास आभूषणा को रखना। (४) **नश्यदबीजा**—जिसका बीज नष्ट होता दिखाई पडता है। (५) **बहुप्रापितफला**—बहुत फल देने वाली। इसका तात्पय यह है कि भागुरायण ने मलयकेतु के साथ जाकर करभक और राक्षस की बातचीत सुन ली थी जिससे उसे राक्षस और मलयकेतु के बीच फूट डालने का अवसर प्राप्त हुआ। भत हरि ने भी लिखा है—वाराङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपा। यहा उपमा कार्यलिंग तथा अप्रस्तुतप्रशसा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

(प्रकाशम) भद्र भासुरक! न मा दूरीभवन्तमिच्छति कुमार। अतोऽस्मिन्नेवास्थानमण्डपे विन्यस्यतामासनम्।

पुरुष—एद आसन, उपविसदु अज्जो। (एतदासनम्, उपविशत्वाय।)

भागुरायण—(उपविश्य) भद्र भासुरक! य कश्चिन्मुद्रार्थी मा द्रष्टुमिच्छति, स त्वया प्रवेशयितव्य।

पुरुष—ज अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्त)

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) भद्र भासुरक, कुमार नहीं चाहते कि म दूर रहूँ। इसलिए इसी सभामण्डप में आसन लगा दो।

पुरुष—यह आसन है, आय बठें।

भागुरायण—(बठकर) भद्र भासुरक, जो कोई मुद्रा चाहने वाला मुझसे मिलने आवे उसे तुम भीतर लिवा लाना।

पुरुष—जसी आय की आज्ञा। (निकल जाता है)

(*Aloud*) Noble Bhasuraka the prince does not want to see me go far So let my seat be placed in the pavilion of the court itself

Attendant—This is the seat let Noble sire sit down

Bhagurayan (Sitting)—Noble Bhasuraka whoever desirous of getting a permit wants to see me should be admitted by you

Attendant—As Noble Sire commands (*Exit*)

भागुरायण —(स्वगतम्) कष्टमेवमप्यस्मासु स्नेहवान् कुमारो मलयकेतुरतिसन्धातव्य इत्यहो दुष्करम् । अथवा—

कुले लज्जायाञ्च स्वयशसि च माने च विमुख
शरीर विक्रीय क्षणिकधनलाभाद्धनवति ।
तदाज्ञा कुर्वाणो हितमहितमित्येतदधुना
विचारातिक्रान्त किमिति परतन्त्रो विमृशति ।।४।।

अन्वय—क्षणिकधनलाभात लज्जाया माने च स्वयशसि च कुले च विमुख (भूत्वा) धनवति शरीर विक्रीय विचारातिक्रान्त परतन्त्र अधुना तदाज्ञा कुर्वाण इति हितम एतत अहितम इति किं विमशति ? ।।४।।

भागुरायण—(अपने मन में) खेद की बात है मुझसे इस प्रकार स्नेह करने वाले कुमार (मलयकेतु) को भी धोखा दिया जाय। यह बडा कठिन तथा आश्चयजनक है। अथवा—

क्षणिक धन पाने के कारण, लज्जा तथा अपने यश और अपने कुल से भी विमुख होकर धनवान के हाथ शरीर बेचकर विवेकहीन होकर परतत्र हुआ और इस समय उस (धनवान) की आज्ञा पालन करता हुआ मेरे समान व्यक्ति यह क्यो सोचे कि यह हित है और यह अहित है।

Bhagurayan (To himself)—Oh woe even Prince Malayaketu who is kind to me has to be deceived Alas this is very difficult and strange Or—

Due to getting transient wealth regardless of fame shame family and self respect having sold the self to the rich being devoid of self determination and being the slave of another why should a person like me think whether this is proper or improper while carrying out his orders

सस्कृत व्याख्या—क्षणिकधनलाभात अस्थिरसुखसम्पदा प्राप्य लज्जाया माने च कस्माच्चनापि कमणोऽपत्रपे स्वयशसि च स्वात्मकीतौ च कुले च वश च विमुख (भूत्वा) विरक्तीभूत धनवति धनयुक्ते पुरुषे शरीरम स्वदेह विक्रीय विचारातिक्रात विरहितसदसद्विवेक परतत्र पराधीन अधुना इदानी तदाज्ञा

कुर्वाण स्वामिन नियोगमेव निकाम परिपालयन इति हितम इति अहितम किं विमशति चिन्तयति ।

टिप्पणी

(१) **आस्थानमण्डपे**—दरबार के मण्डप मे। आ+स्था+ल्युट। (२) **अतिसधातव्य**—धोखा दिया जाने योग्य। (३) **क्षणिकधनलाभात**—क्षणिक सम्पत्ति पान के कारण। (४) **विचारातिक्रान्त**—जो बुरा और भला के विवेक करने से भी वचित है अर्थात जो बुरे और भले का विचार करने का अधिकारी नही है (क्योकि उसने अपना शरीर बेच दिया है और वह उस धनी के आश्रित है)। इस श्लोक मे कार्यलिग अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

(तत प्रविशति प्रतीहार्यनुगतो मलयकेतु ।)

मलयकेतु —(स्वगतम्) अहो! राक्षस प्रति मे विकल्पबाहुल्यादाकुला बुद्धिन निश्चयमधिगच्छति। कुत —

भक्त्या नन्दकुलानुरागदृढया नन्दान्वयालम्बिना
किं चाणक्यनिराकृतेन कृतिना मौर्येण सन्धास्यते।
स्थैर्यं भक्तिगुणस्य वा विगणयन् किं सत्यसन्धो भवे-
दित्यारूढकुलालचक्रमिव मे चेतश्चिर भ्राम्यति ॥५॥

अन्वय—कृतिना चाणक्यनिराकृतेन नन्दान्वयालम्बिना मौर्येण नन्दकुलानुरागदृढया भक्तया सन्धास्यते किम्, वा भक्तिगुणस्य स्थैर्यम विगणयन सत्यसन्धो भवेत् किम् इति मे चेत आरूढकुलालचक्रम इव चिर भ्राम्यति ॥५॥

हिन्दी अनुवाद—(प्रतीहारी के साथ मलयकेतु का प्रवेश)

मलयकेतु—(मन में) ओह राक्षस के सम्बन्ध में इतने सशय मन में उठ खड़े हुए ह कि कुछ पता नहीं चलता कि क्या होगा। क्योंकि क्या नन्दवश के दढ़ अनुराग से उत्पन्न भक्ति के कारण नन्दवशी चन्द्रगुप्त से, जो चाणक्य से परित्यक्त है, वह (राक्षस) सधि कर लेगा अथवा स्वामिभक्ति ही पर दृढ रह कर अत तक सच्चा रहेगा। (यही बात सोचते हुए) मेरा चित्त कुम्हार के चक्र पर चढ़े हुए के समान चिरकाल से घूम रहा है।

(Enter Malayaketu followed by the warder)

Malayaketu (*To himself*)—Oh so many doubts have arisen about Rakshas that I do not reach any certainty about him For—Due to the devotion from attachment to the family of

Nanda he may join Chandragupta who is abandoned by Chanakya or being loyal he may be true to his promise upto the end Thinking this my mind whirls ceaselessly like one mounted on a potter s wheel

संस्कृत व्याख्या—कृतिना कुशलेन चाणक्यनिराकृतेन चाणक्येन परित्यक्तेन नन्दान्वयालम्बिना नन्दवंशपुच्छभूतेन नन्दकुलवर्तिना मौर्येण चन्द्रगुप्तेन नन्दकुलानुरागदढया नन्दकुले य अनुराग स्नेह तेन दढा स्थिरा भक्त्या सेवया संधास्यते संधि करिष्यति किम (माम च मध्ये समुद्र परित्यक्ष्यति किम) वा भक्तिगुणस्य स्थयम भक्ति अनुराग एव गुण तस्य स्थयम स्थिरताम विगणयन विचारयन सत्यसंध सत्यप्रतिज्ञ भवेत किम इति अनेन प्रकारेण मे चेत मन आरूढकुलालचक्रम आरुढ कुलालचक्रम कुम्भकारचक्रम येन तादशम इव बहुकाल चिरात भ्राम्यति संदेहयुक्त भवति अर्थात अनिशम निश्चय न लभते।

टिप्पणी

(१) **विकल्पबाहुल्यात**—अनेक विचारो (सन्देहो) के कारण से। (२) **कृतिना**—बुद्धिमान। (३) **चाणक्यनिराकृतेन**—चाणक्य से परित्यक्त। यह विशेषण इस बात की ओर संकेत करता है कि चन्द्रगुप्त के यहा से चाणक्य के चले जाने के कारण राक्षस मंत्री बन जाने की अभिलाषा से चन्द्रगुप्त से संधि कर सकता है। चाणक्येन निराकृत इति तेन। (४) **नन्दकुलान्वयालम्बिना**—नन्दकुल से संबध रखने वाला, यह इसलिए कहा कि चन्द्रगुप्त नन्द का ही पुत्र था जो कि शूद्रा माता से पदा हुआ था। नन्दान्वयम् आलम्बते य स तेन। (५) **नन्दकुलानुरागदढया भक्त्या**—नन्दकुल से अनुराग होने के कारण दढ भक्ति से। (६) **सत्यसंध**—सच्ची प्रतिज्ञा वाला सत्या संधा प्रतिज्ञा यस्य स। (७) **आरूढकुलालचक्रम**—कुंभार के चाक पर चढे हुए के समान। जसे कुंभार के चक्र पर रक्खी हुई वस्तु घूमती है वसे ही मेरा मन घूम रहा है। किसी निश्चय पर नही आ रहा है। उत्प्रेक्षा अलंकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(प्रकाशम्) विजये ! क्व भागुरायण !

प्रतीहारी—कुमार ! एसो क्खु कडआदो णिक्कमिदुकामाण मुद्दासंपदाणं अणु चिट्ठति। (कुमार ! एष खलु कटकान्निष्क्रमितुकामाना मुद्रासम्प्रदानमधितिष्ठति।)

मलयकेतु —विजये ! मुहूर्त्त निभृतपदसञ्चारा भव, यावदस्य पराङमुखस्यैव पाणिभ्या नयने पिदधामि ।

प्रतीहारी—ज कुमारो आणवेदि । (यत कुमार आज्ञापयति ।)

भासुरक —(प्रविश्य) अज्ज ! एसो क्खु क्खवणओ मुद्दाणिमित्त अज्ज पेक्खिदुमिच्छदि । (आय ! एष खलु क्षपणको मुद्रानिमित्तमाय प्रेक्षितुमिच्छति ।)

भागुरायण —प्रवेशय ।

भासुरक —ज अज्जो आणवेदि । (यदाय आज्ञापयति ।)

(इति निष्क्रान्त ।)

क्षपणक —(प्रविश्य) सावकाण धम्मबिद्धी होदु । (उपासकाना धमवृद्धिभवतु ।)

भागुरायण —(नाट्येनावलोक्य स्वगतम) अये ! राक्षसस्य मित्र जीवसिद्ध । (प्रकाशम्) भदन्त ! न खलु राक्षसस्य प्रयोजनमेव किञ्चिदुद्दिश्य गम्यते ?

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) विजये, भागुरायण कहा है ?

प्रतीहारी—कटक से बाहर जाने वालो को वे इस समय मुद्रा दे रहे ह ।

मलयकेतु—विजये, क्षण भर के लिए अपने परो की आवाज बन्द कर दो, जब तक म इनके बिना जाने इनकी आखें बन्द कर दू ।

प्रतीहारी—जसी कुमार की आज्ञा ।

भासुरक—(प्रवेश कर) क्षपणक मुद्रा लेने की इच्छा से आय को देखना चाहता है ।

भागुरायण—बुलाओ ।

भासुरक—जसी आय की आज्ञा (बाहर चला जाता है) ।

भासुरक—(प्रवेश कर) उपासको के धम की वद्धि हो ।

भागुरायण—(देखने का अभिनय करके स्वगत) अरे यह तो राक्षस का मित्र जीवसिद्धि है । (प्रकट) भदन्त राक्षस के ही किसी प्रयोजन के उद्देश्य से तो नहीं जा रहे हो ।

(*Aloud*) Vijaya where is Bhagurayan ?

Warder—He is at this time issuing pass to those who wish to go out of the camp

Malayaketu—Vijaya be motionless for a moment while I cover his eyes with my hands without his knowledge

Warder—As the Prince commands

Bhasuraka (*Entering*)—Noble Sir desirous of getting a pass Kshapanaka wishes to see you

Bhagurayan—Admit him

Bhasuraka—As the Noble Sir orders (*Exit*)

Kshapanaka (*Entering*)—Let the religion of the believer may increase

Bhagurayan (*Looking to himself*)—Rakshas friend Jiva siddhi (*Aloud*) surely you are not going with a view to do some work of Rakshas himself

टिप्पणी

(१) **निष्क्रमितुकामानाम**—बाहर जाने वालो का। निष्क्रमण काम येषा ते तेषा (अधिकरण ब० व्री०) तुङ्काममनसोरपि इति कारिकया मलोप । (२) **निभतपदसचारा**—चरणो की गति रोककर त्यक्तचरणप्रक्षेपा । (३) **पिदधामि**—बद कर देता हू। यहा वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसगयो । आपञ्चव हल ताना यथा वाचा निशा दिशा इस कारिका से अपि उपसग के अकार का लोप हो गया। (४) **राक्षसस्य मित्रम**—भागुरायण नही जानता था कि जीवसिद्धि क्षपणक चाणक्य का गुप्तचर है।

क्षपणक—(कर्णौ पिधाय) सन्त पाब, सन्त पाब। साबका! तहिं ज्जेब गमिस्स जहि रक्खसस्स पिसाचस्स वा णाम पि ण सुणीअदि। (शान्त पाप, शान्त पापम। उपासक! तत्रैव गमिष्यामि, यत्र राक्षसस्य पिशाचस्य वा नामापि न श्रूयते।)

भागुरायण—भदन्त! बलीयास्ते सुहृदि प्रणयकोप । तत् किमपराद्ध राक्षसेन भदन्तस्य?

क्षपणक—साबका! ण मम किं पि रक्खसेण अबलद्ध, सअ ज्जेब्ब मन्दभाओ अत्तणो कमम्मु लज्जामि। (उपासक! न मे किमपि राक्षसेनापराद्ध, स्वयमेव मन्दभाग्य आत्मन कमसु लज्जे।)

भागुरायण—भदन्त! वधयसि मे कुतूहलम्।

मलयकेतु —(स्वगतम) मम च ।

भागुरायण —श्रोतुमिच्छामि ।

मलयकेतु —(स्वगतम) अहमपि ।

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—(कानो को बन्द कर) पाप शान्त हो, पाप शान्त हो। म वहा जाऊँगा जहा राक्षस या पिशाच का नाम भी न सुना जाता हो।

भागुरायण—मित्र के ऊपर आप का बडा भारी क्रोध है। तो राक्षस ने भदन्त का क्या अपराध किया है ?

क्षपणक—उपासक, राक्षस ने मेरा कुछ नहीं बिगाडा, म अभागा स्वय अपने काम से लज्जित हूँ।

भागुरायण—भदन्त, तुम मेरे कुतूहल को बढा रहे हो।

मलयकेतु—(स्वगत) मेरा भी।

भागुरायण—सुनना चाहता हू।

मलयकेतु—(स्वगत) म भी।

Kshapanaka (*Shutting his ears*)—Begone Sin Begone Sin Believer I will go to that place where even the name of Rakshas or Pishach is not heard

Bhagurayan—Mendicant your anger against your friend is very great What harm has he done to the mendicant

Kshapanaka—Believer Rakshas has done me no harm I myself am ashamed of my deeds

Bhagurayan—Mendicant you increase my curiosity

Malayaketu (*To himself*)—And mine too

Bhagurayan—I wish to hear

Malayaketu (*To himself*)—I too

टिप्पणी

(१) प्रणयकोप—प्रेम के कारण क्रोध बनावटी कोप नाज नखरो से भरा कोप। प्रणयकृत कोप प्रणयकोप (मध्य० स०)। (२) अपराद्धम—अनिष्ट किया। अप+राध+क्त भावे वा कमणि।

क्षपणक —सावका ! किं एदिणा असुणिदव्वेण सुदेण ? (उपासक ! किमेतेनाश्रोतव्येन श्रुतेन ?)

भागुरायण —भदन्त ! यदि रहस्य, तदा तिष्ठतु ।

क्षपणक —सावका ! ण हि रहस्स । (उपासक ! न हि रहस्यम ।)

भागुरायण ——तर्हि कथ्यताम् ।

क्षपणक ——सावका ! णत्थि एद, तधावि ण कधइस्स अदिणिसस । (उपासक ! नास्तीद, तथापि न कथयिष्याम्यतिनृशसम् ।)

भागुरायण ——भदन्त ! अहमपि मुद्रा न दास्यामि ।

क्षपणक ——(स्वगतम्) युक्तमिदानीमर्थिने कथयितुम ॥ (प्रकाशम्) का गदी ? एसे णिवेदेमि सुणादु सावको । अत्थि दाव हगे अधण्णो पढम पाडलिउत्ते णिबसमाणो रक्खस्स मित्तत्तण उवगदे । तहि अवसले रक्खसेण गूढ बिसकण्णाप्पओअ समुप्पादिअ घादिदे देवे पव्वदीसले । (का गति ? एष निवेदयामि शृणोतु उपासक । अस्ति तावदहमधन्य प्रथम पाटलिपुत्रे निवसन् राक्षसस्य मित्रत्वमुपगत । तस्मिन्नवसरे राक्षसेन गूढ विषकन्याप्रयोग समुत्पाद्य घातितो देव पर्वतेश्वर ।)

मलयकेतु ——(सवाष्पमात्मगतम्) कथ राक्षसेन घातितस्तातो न चाणक्येन ?

भागुरायण ——भदन्त ! ततस्तत ?

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—उपासक, उस न सुनने योग्य बात के सुनने से क्या लाभ ?

भागुरायण—यदि गोपनीय हो तो न कहिये ।

क्षपणक—उपासक गोपनीय नहीं है ।

भागुरायण—तो कहिये ।

क्षपणक—उपासक, यह गोपनीय नही है फिर भी यह कठोर बात है । म न कहूँगा ।

भागुरायण—भदन्त, तो म भी मुद्रा (पारपत्र) न दूगा ।

क्षपणक—(मन में) इस समय इस प्रार्थी को सुनाना उचित होगा । (प्रकट) क्या चारा है, लो बताता हूँ, सुनिये । म अभागा पाटलिपुत्र में रहता हुआ राक्षस का मित्र बन गया । उसी समय राक्षस ने विषकन्या का प्रयोग करके देव (महाराज) पवतेश्वर को मरवा डाला ।

मलयकेतु—(आसू के साथ मन में) क्या राक्षस ने पिता जी को मरवाया चाणक्य ने नहीं ?

भागुरायण—भदन्त, तब क्या हुआ ?

Kshapanaka—Believer what is the use of hearing what should not be heard

Bhagurayan—If it is a secret do not tell

Kshapanaka—It is not a secret

Bhagurayan—Then tell me

Kshapanaka—It is not confidential yet I shall not relate this cruel event

Bhagurayan—Then I too will not give you the passport

Kshapanaka (To himself)—It is proper that I should tell it at request (*Aloud*) What alternative is there Now I tell let believer hear it Formerly I the unlucky one lived in Patali putra and befriended Rakshas During that period Parvataka was caused to be killed by Rakshas by devising the means of the poison girl

Malayaketu (With tears to himself)—Oh was father done to death by Rakshas and not by Chanakya

Kshapanaka—Mendicant what next ?

क्षपणक—तदो हगे रक्खसस्स मित्त कदुअ चाणक्कहदएण सणिकाल णअरादो णिब्वासिदो। दाणी पि रक्खसेण अणेकअकज्जकुसलेण किंपि तादिस आलहीअदि, जेण हगे जीअलोआदो णिक्कासिज्जेमि। (ततोऽह राक्षसस्य मित्र कृत्वा चाणक्यहतकेन सनिकार नगरान्निर्वासित। इदानीमपि राक्षसेनानेकाकायकुशलेन किमपि तादृशमारभ्यते, येनाह जीवलोकान्निष्कासिष्ये।)

भागुरायण—भदन्त! प्रतिश्रुतराज्याधमयच्छता चाणक्यहतकेनेदमकायमनुष्ठित न राक्षसेनेति श्रुतमस्माभि।

क्षपणक—(कणौ पिधाय) सन्त पाव। साबका! चाणक्को बिसकण्णाए णामपि ण जाणादि। तेण ज्जेब दुट्टबुद्धिणा रक्खसेण एसा अकज्जसिद्धी किदा। (शान्त पापम्। उपासक! चाणक्यो विषकन्याया नामापि न जानाति। तेनैव दुष्टबुद्धिना राक्षसेनैषाऽकार्यसिद्धि कृता।)

राक्षस का विश्वासपात्र मित्र बन गया था। (४) **सनिकारम**—अपमान के साथ। (५) **किमपि तादृशम**—भाव यह है कि गुप्त रूप से विषकन्या का प्रयोग करके राक्षस ने पहले पवतक को मरवाया था। अब वह मलयकेतु के पीछे पडा हुआ है। वह उसे (मलयकेतु को) भी मरवाना चाहता है। (६) **प्रति-श्रुतराज्याधम**—वादा किए हुए आध राज्य को। (६) **अयच्छता**—न देकर।

मलयकेतु —(उपसृत्य)

श्रुत सखे श्रवणविदारण वच सुहृन्मुखाद्रिपुमधिकृत्य भाषितम्।
पितुर्वधव्यसनमिद हि येन मे चिरादपि द्विगुणमिवाद्य वर्धते ।।६।।

अ वय—सखे रिपुमधिकृत्य भाषित श्रवणविदारण वच सुहृ मुखात श्रुतम येन इद मे पितुवध यसन चिरादपि अद्य द्विगुणमिव वधते।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—(आगे बढकर) मित्र, शत्रु को लक्ष्य करके कानो को विदीण करने वाला वचन उसके (राक्षस) के मित्र के मुह से सुना जिससे मेरा पितवध (पिता के मरने) का दु ख बहुत दिन बीतने पर भी आज मानो दूना हो रहा है।

Malayaketu (*Advancing*)—Friend I have heard the earsplitting words spoken with reference to the enemy from the mouth of his (*Rakshas*) friend The sorrow of the murder of father even after such a long time has been doubled as if it were to day

सस्कृत व्याख्या—सखे मित्र रिपुम शत्रुम अधिकृत्य उद्दिश्य भाषितम उक्तम श्रवणविदारणम कणभेदक वच सुहृ मुखात राक्षसस्य सुहृद मित्रस्य जीवसिद्धे रित्यथ आननात श्रुतम कणगोचरम अभूत येन कारणेन इदम अनुभूयमानम मे मम पितुवधव्यसनम जनकस्य विनाशजन्यदु खम चिरादपि चिरकालजातमपि अद्य अस्मिन दिने द्विगुणमिव अधिकमिव वधते वद्धि गच्छति।

टिप्पणी

(१) **श्रवणविदारणम**—कानो को विदीण करन वाला। वि+दृ+णिच+ल्युट कतरि बाहुलकात=विदारणम। श्रवणयो विदारणम। (२) **सुहृन्मुखात**—मित्र के मुख से। अर्थात यह बात मने राक्षस के मित्र क्षपणक के मुख से सुनी है। अत अविश्वास करन का कोई कारण नही है। इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा अलकार तथा रुचिरा छद है।

क्षपणक —(स्वगतम्) अये श्रुत मलयकेतुहतकेन ! कृतार्थोऽस्मि । (इति निष्क्रान्तः ।)

मलयकेतु —(प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्य बद्ध्वा) राक्षस ! युक्तमिदम ।

मित्र ममायमिति निर्वृतचित्तवृत्ति
विश्रम्भतस्त्वयि निवेशितसर्वकार्यम् ।
तात निपात्य सह बन्धुजनाक्षितोयै-
रन्वर्थतोऽपि ननु राक्षस ! राक्षसोऽसि ।।७।।

अन्वय—ननु राक्षस ! अय मम मित्रम इति विश्रम्भत त्वयि निवेशित-सवकायम निव तचित्तवृत्ति तात ब धुजनाक्षितोय सह निपात्य अ वथतोऽपि राक्षसोऽसि ।।७।।

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—(मन में) अभागे मलयकेतु ने सुन लिया। मेरा तो काम बन गया। (बाहर चला जाता है)

मलयकेतु—(आकाश की ओर देखता हुआ मानो राक्षस ही की ओर देख रहा है) राक्षस, ठीक है ! मेरे पिता यह समझकर कि तुम उनके मित्र हो और तुम पर विश्वास करके सारा काय भार तुम्हें सौंपकर वे निश्चिन्त हो गए थे। उन पिता को ब धुओ के आसुओ के साथ धराशायी करके तुम नाम के ही नहीं बल्कि वास्तव में भी राक्षस हो।

Kshapanaka (*To himself*)—The wretched Malayaketu has heard it My purpose is served (*Exit*)

Malayaketu—(*Fixing his gaze in the sky as if on some thing visible*) Rakshas Rakshas this is befitting indeed Oh Rakshas, you are literally Rakshas by letting my father fall down on the ground along with the tears of the kindred the father who had entrusted all affairs to you in the confidence that you were his friend and had his mind s care ceased

सस्कृत व्याख्या—ननु आय भो राक्षस अयम मम मित्रम एष राक्षस मम सुहृत इति विश्रम्भत एवविधात विश्वासात त्वयि राक्षसे निवेशितसवकायम निवेशितम समर्पितम सवकाय्यम निखिल राज्यतत्रम येन तादृशम अतएव निव तचित्तवत्तिम निव ता स्वस्था चित्तवत्ति यस्य स तम तात जनक ब धु-जनाश्रुतोय ब धुजनानाम् स्वगणानाम अश्रुतोय नेत्रजल सह निपात्य धरा-

शायिन कृत्वा श्र वथत अपि श्रभिधेयधारणेन च राक्षस श्रसि न केवल नाम्ना त्व राक्षस परन्तु अनेन कमणा यथाथत राक्षस सवत्तोऽसि।

टिप्पणी

(१) **कृतार्थोऽस्मि**—कृतकृत्योऽस्मि। चाणक्य ने प्रथम अक मे इसी क्षपणक के लिए कहा है कि 'तेनदानी महत्प्रयोजनमनुष्ठेय भविष्यति। वह प्रयोजन अब सिद्ध हो गया। मलयकेतु इस समय राक्षस का प्रबल शत्रु बन गया है। इसीलिए क्षपणक कहता है—कृतार्थोऽस्मि'। (२) **विश्रम्भत**—विश्वास के कारण। (३) **निवेशितसवकाय्यम**—सारा काय्य (तुमको) सौप दिया था जिसने (उसके)। (४) **बधुजनाक्षितोय**—कुटुम्बियो के आसू के साथ। (५) **निपात्य**—हननकर मार कर। (६) **श्र वथत**—यथाथ मे। कहने का मतलब है कि नाम तो तुम्हारा राक्षस था ही कम भी तुमने राक्षस का कर दिया। अनुगत अथम श्र वथ तेन। यहा ततीयायास्तसि सूत्र से तसि प्रत्यय होने पर श्र वथत बना। इसमे सहोक्ति अलकार तथा वसन्ततिलका छ द है।

भागुरायण—(स्वगतम) रक्षणीया राक्षसस्य प्राणा इत्यार्यादेश। भवत्वेव तावत। (प्रकाशम) कुमार! अलमावेगेन। आसनस्थ कुमार किञ्चिद्विज्ञापयितुमिच्छामि।

मलयकेतु—(उपविश्य) सखे! किमसि वक्तुकाम?

भागुरायण—कुमार! खल्वर्थशास्त्रव्यवहारिणामथवशादरिमित्रोदासीनव्यवस्था न लौकिकानामिव स्वेच्छावशात। यतस्तस्मिन काले सर्वार्थसिद्धि राजानमिच्छतो राक्षसस्य च द्रगुप्तादपि बलीयस्तया सुगृहीतनामा देव पवतेश्वर एवार्थपरिपन्थी महानरातिरासीत्। तस्मिश्च काले राक्षसेनेदमनुष्ठितमिति नातिदोषमत्र पश्यामि। पश्यतु कुमार।

भागुरायण—(मन में) आय (चाणक्य) का आदेश है कि राक्षस के प्राणो की रक्षा की जाय। तब तक ऐसा हो। (प्रकट) कुमार क्रोध न करें। आप आसन पर बठ जायें तो कुछ कहना चाहता हूँ।

मलयकेतु—(बठकर) मित्र, क्या कहना चाहते हो?

भागुरायण—नीति शास्त्र को मानने वाले साधारण जनो की भाति किसी को अपना मित्र या शत्रु अथवा तटस्थ नही बनाते। उनकी व्यवस्था मनमानी

नहीं होती बल्कि प्रयोजन वश होती है, क्योंकि उस समय सर्वार्थसिद्धि को राजा बनाने की इच्छा करते हुए राक्षस के लिए चन्द्रगुप्त से भी बलवान प्रातः-स्मरणीय महाराज पर्वतक ही स्वार्थ में बाधक लग रहे थे। उस समय राक्षस ने यह (पर्वतेश्वर का वध) किया। अतः इसमें उसका कोई ज्यादा दोष नहीं है। कुमार देखें।

Bhagurayan (*To himself*)—The Noble Sire (*Chanakya*) has commanded that the life of Rakshas should be saved So let it be (*Aloud*) Prince do not be excited I wish to say some thing to you when you are seated

Malayaketu (*Sitting down*)—Friend what do you wish to say

Bhagurayan—Those who are diplomats make friends foes, or neutrals according to consideration of interest and not from the sway of personal inclination as the ordinary people do At that time Rakshas wanted to make Sarvarthsiddhi the king and Sire Parvateshwar of blessed name who was stronger even than Chandragupta was a great bar in his purpose and so Rakshas did this (*murdered him*) I think that Rakshas is not to blame in it Prince mark—

टिप्पणी

(१) **अर्थशास्त्रव्यवहारिणाम्**—नीतिशास्त्र के मानने वालों का। अर्थस्य धनस्य अत्र राजनीतेः शास्त्रम् तेन व्यवहरन्तीति अर्थशास्त्र+वि+अव=हृ+णिनि कर्तरि ताच्छील्ये। (२) **अर्थवशात्**—प्रयोजन वश (न कि मनमानी स्वेच्छावशात्)। (३) **अरिमित्रोदासीनव्यवस्था**—शत्रु मित्र और उदासीन की व्यवस्था अरयश्च मित्राणि च उदासीनाश्च इति (द्वन्द्व) तेषां व्यवस्था। (४) **अर्थपरिपन्थी**—काम का बाधक। परिपन्थी—शत्रु।

मित्राणि शत्रुत्वमिवानयन्ती मित्रत्वमर्थस्य वशाच्च शत्रून्।
नीतिर्नयत्यस्मृतपूर्ववृत्तं जन्मान्तरं जीवत एव पुंसः ॥८॥

अन्वय—अर्थस्य वशात् नीतिः अस्मृतपूर्ववृत्तं मित्राणि शत्रुत्वं शत्रून् च मित्रत्वम् इव आनयन्ती जीवतः एव पुंसः जन्मान्तरं नयति ॥८॥

हिन्दी अनुवाद—नीति शास्त्र के नियमानुसार प्रयोजन वश होकर मित्र शत्रु हो जाते हैं और शत्रु मित्र बन जाते हैं तथा वे इस जन्म की पूर्व स्मृतियों को इस प्रकार भूल जाते हैं मानो इन्होंने काया पलट कर ली है।

According to principles of policy due to self interest friends become enemies and enemies become friends and they (*people*) forget the previous doing of this very life as if the whole thing is changed completely

सस्कृत व्याख्या—अथस्य कायस्य वशात अनुरोधात नीति नय यवहार अस्मतपूववत्तम न स्मत पूववत्त पूवकृततत्तत्काय येनवम्भूतम मित्राणि सुहृद शत्रुत्व शत्रून न अरीन च मित्रत्वम सुहृत्त्वम इव आनयन्ती कुवन्ती जीवत एव अमतान् एव पस पुरुषान जन्मान्तरम अन्यज्ज म नयति प्रापयति। अर्थात नयजीवी प्रयोजनानुरोधात मित्रस्य मित्रत्व विस्मत्य शत्रुमिव त पश्यति। तत् यदि तदानी राक्षस मित्रे एव पवतेश्वरे अमित्रवदाचरितवान स दोषो नय प्रयोगस्य न राक्षसस्य इति पश्यतु कुमार ।

टिप्पणी

(१) **अस्मतपूववत्तम**—जिसमे पूव वत्तान्त का स्मरण नही रह जाता। जिस प्रकार पूवज म का वत्ता त दूसरे जन्म मे स्मरण नही रहता उसी प्रकार राजनीति मे पहले के किए हुए उपकार और अपकार सब भूल जाते ह। इसी से शत्रु को लोग मित्र बना लेते ह और मित्र को शत्रु। अस्मत पूववत्तम यस्मिन तत। (२) **जन्मान्तरम**—अन्यज्जन्म जन्मान्तरम। दूसरा ज म। इसमे विषमालकार तथा इ द्रवज्रा छन्द ह। छन्द का लक्षण—स्यादि द्रवज्रा यदि तौ जगौ ग ।

तदत्र वस्तुनि नोपालभ्यो राक्षस, आ नन्दराज्यलाभादनुग्राह्यश्च। परतस्तस्य परिग्रहे परित्यागे वा कुमार प्रमाणम् ।

मलयकेतु —एव भवतु। सखे ! सम्यक दृष्टवानसि। अमात्यस्य वधे प्रकृतिक्षोभ स्यात एवञ्च सन्दिग्धो विजय स्यात् ।

पुरुष —(प्रविश्य) जेदु कुमारो। अअ अज्जस्स गुम्मट्ठाणाधिकिदो दीहचक्खू अज्ज विण्णवेदि—एसो क्खु अह्मेहिं कडआदो णिक्कमन्तो अग्गहीदमुद्दो सलेहो पुरिसो गहीदो, ता पच्चक्खीकरेदु ण अज्जो त्ति। (जयतु कुमार ।

अयमायस्य गुल्मस्थानाधिकृतो दीर्घचक्षुरार्यं विज्ञापयति—एष खल्वस्माभि कटकान्निष्क्रामन्नगृहीतमुद्र सलेख पुरुषो गृहीतस्तत् प्रत्यक्षीकरोत्वेनमाय इति)

भागुरायण —भद्र ! प्रवेशय।

पुरुष —ज अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्त।)

हिन्दी अनुवाद—तो इस विषय में राक्षस को भला-बुरा न कहना चाहिए। जब तक नन्द का राज्य नही मिल जाता तब तक तो उसे मिलाकर ही रखना ठीक है। इसके बाद उसे रखना या निकालना कुमार की इच्छा पर है।

कुमार—ऐसा ही सही। मित्र, अच्छा सोचा। अमात्य के वध करने से प्रजा में विद्रोह उठ खडा हो जायगा और हमारी विजय भी सदेह युक्त हो जायगी।

नौकर—(प्रवेश कर) कुमार की विजय हो। आय के प्रधान शिविरपाल दीघचक्षु आय से निवेदन करते ह कि बिना मुद्रा (पास) के कटक से निकलते हुए, पत्र के सहित इस व्यक्ति को हम लोगो ने पकडा है। इसलिए आय इसको देखें।

भागुरायण—भद्र, उसे अन्दर ले आओ।

नौकर—जसी आय की आज्ञा (चला जाता है)।

So in this matter Rakshas is not to blame but has to be favoured so long as the kingdom of Nanda is not acquired Thereafter the prince may either retain him or dismiss him

Malayaketu—Let it be so Friend you have well thought The execution of the minister may lead to discontentment among the people and our victory would be doubtful

Attendant (*Entering*)—Let Prince prosper Noble Sir Dirghachakshu in charge of the piquet station thus reports This man with a letter was arrested by us while going out of the camp without a pass so let Noble Sir see him

Bhagurayan—Good man bring him in

Attendant—As the Noble Sir commands (*Exit*)

टिप्पणी

(१) **प्रकृतिक्षोभ** —प्रजा मे खलबली। यहा उस प्रजावग की ओर सकेत है जो नन्द और राक्षस मे अनुरक्त है। (२) **अगहीतमुद्र** —बिना मुद्रा (पास) के। न गहीता मुद्रा येन स अगहीतमुद्र ब० व्री०। (२) **गुल्मस्थानाधिकृत** —शिविर का मुख्य द्वारपाल। गुल्मस्थाने अधिकृत इति गुल्मस्थानाधिकृत ।

(तत प्रविशति पुरुषेणानुगम्यमान सयत सिद्धार्थक ।)

सिद्धार्थक —(स्वगतम्)

तिप्पन्तीए गुणेसु दोसेसु परमुह करन्तीए ।
अह्मारिसजणणीए प्पणमामो सामिभत्तीए ।।६।।
(तृप्यन्त्यै गुणेषु दोषेषु पराङमुख कुर्वन्त्यै ।
अस्मादृशजनन्यै प्रणमाम स्वामिभक्त्यै ।।६।।)

अन्वय—गुणेषु तप्यन्त्य दोषेषु पराङमुख कुर्वन्त्य अस्मादृशजनन्य स्वामिभक्त्यै प्रणमाम ।।६।।

हिन्दी अनुवाद—(नौकर के साथ बँधा हुआ सिद्धार्थक प्रवेश करता है) सिद्धार्थक—(मन में) गुणो से सतुष्ट और दोषो से विमुख करने वाली हम लोगो की माता के समान स्वामिभक्ति को प्रणाम है।

(Then enter Siddharthaka fettered and followed by an attendant)

Siddharthaka (To himself)—We bow to the devotion to our master which is like a mother and draws us towards her virtues and causes us to shut our eyes to her faults

सस्कृत व्याख्या—गुणेषु स्वामिभक्तिरूपाया जनन्या आत्मगुणेषु विषये तप्यन्त्य सतुष्टाय दोषेषु तस्या एव आत्मदोषषु अवगुणेषु पराङमुखम कुवन्त्यै विदधत्य अस्मादृशजनन्य अस्मादृशानाम मद्विधानाम जनन्य अन्नदानपोषणकमभि मातरूपायै स्वामिभक्त्य प्रभुपरायणताय प्रणमाम नमस्कुम । अर्थात यथा जनन्या गुणा एव ग्राह्या दोषा उपेक्ष्या जननीरूपाया मे राजभक्तेरपि तथा। तत राजभक्त्या प्रेरित सदोषमपि अद्य राक्षसवञ्चनकम करिष्ये।

पुरुष —(उपसृत्य) अज्ज ! अअ सो पुरिसो। (आर्य ! अय स पुरुष ।)

भागरायण —(नाट्येनावलोक्य) भद्र ! किमयमागन्तुक, आहोस्विदिहैव कस्यचित्परिग्रह ?

सिद्धार्थक —अज्ज ! अह क्खु अमच्चरकखसस्स सेवओ। (आय ! अह खल्वमात्यराक्षसस्य सेवक ।)

भागुरायण —भद्र ! तत् किमर्थमगृहीतमुद्र कटकान्निष्क्रामसि ?

सिद्धार्थक —अज्ज ! कज्जगोरबेण तुवराबिदोह्मि । (आर्य ! कार्यगौरवेण त्वरायितोऽस्मि ।)

भागुरायण —कीदृश तत्कार्यगौरव, यद्राजशासनमुल्लङ्घयसि ?

मलयकेतु —सखे भागुरायण ! लेखमुपानय ।

सिद्धार्थक —(भागुरायणाय लेखमर्पयति ।)

भागुरायण —(सिद्धार्थकहस्ताल्लेख गृहीत्वा मुद्रा दृष्टवा) कुमार ! अय लेख , राक्षसनामाङ्कितेय मुद्रा ।

मलयकेतु —मुद्रा परिपालयन्नुद्घाट्य दर्शय ।

भागुरायण —(तथा कृत्वा दर्शयति ।)

पुरुष—(समीप जाकर) आर्य, यह वही व्यक्ति है ।

भागुरायण—(देखने का अभिनय करके) भद्र, (आप कौन ह) क्या आप कोई आगन्तुक ह या यही किसी के सेवक ह ?

सिद्धार्थक—आर्य, म अमात्य राक्षस का सेवक हूँ ।

भागुरायण—तब तुम विना मुद्रा के शिविर के बाहर क्यो जा रहे हो ?

सिद्धार्थक—आर्य, कार्य की गुरुता के कारण जल्दी में था ।

भागुरायण—वह कसा आवश्यक कार्य है, जिसके कारण राजशासन का उल्लघन कर रहे हो ?

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, लेखपत्र तो ले आओ ।

सिद्धार्थक—(भागुरायण को लेखपत्र देता है ।)

भागुरायण—(सिद्धार्थक के हाथ से लेख लेकर और मुद्रा देखकर) कुमार, यह पत्र तो राक्षस की मुहर से अकित है ।

मलयकेतु—मुद्रा (मुहर) ज्यो का त्यो रहे और पत्र खोलो और दिखाओ ।

भागुरायण—(वसा करके दिखाता है)

Attendant (*Approaching*)—Noble Sir this is the man

Bhagurayan (*Acting observation*)—Noble Sir are you a new arrival or the servant of some one in this very place ?

Siddharthaka—Noble Sir I am the servant of Minister Rakshas

Bhagurayan—Gentleman why do you go out of the camp without a pass ?

Siddharthaka—Noble Sir I am being hastened by the gravity of my work

Bhagurayan—What kind of gravity is it which makes you disobey the royal command

Malayaketu—Friend Bhagurayan bring the letter to me

Siddharthaka—(*Hands over the letter to Bhagurayan*)

Bhagurayan—(*Taking the letter from Siddharthaka s hand and seeing the seal*)—Prince this is the letter and it is marked with the seal of Rakshas

Malayaketu—Show me having opened it without breaking the seal

Bhagurayan—(*Shows the letter doing as was directed*)

मलयकेतु —(गृहीत्वा वाचयति ।) 'स्वस्ति, यथास्थान कुतोऽपि, कोऽपि, कमपि, पुरुषविशेषमवगमयति । अस्मद्विपक्ष निराकृत्य दर्शिता कापि सत्यता सत्यवादिना । साम्प्रतमेषामपि प्रथममुपन्यस्तसन्धीनामस्मत्सुहृदा, पूवप्रतिज्ञातसन्धिपरिपणवस्तुप्रतिपादनप्रोत्साहनेन सत्यसन्ध , प्रीतिमुत्पादयितुमर्हति । एते ह्येवमनुगृहीता सन्त स्वाश्रयविनाशेनैवोपकारिणमाराधयिष्यन्ति । अविस्मृतमप्येतत्—सत्यवत स्मारयाम । एतेषा मध्ये केचिदरे कोषदन्तिभ्यामर्थिन , केचिद् विषयेणेति । अस्मान् प्रत्यलङ्कारत्रयञ्च, यत् सत्यवताऽनुप्रेषित तदुपगतम् । अस्माभिरपि लेखस्याशून्याथ किञ्चिदनुप्रेषित तदुपगमनीय, वाचिकञ्चाप्ततमात सिद्धाथकाच्छ्रोतव्यम्' इति ।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—(पत्र लेकर पढ़ता है) यथा स्थान कहीं से भी कोई भी, किसी भी विशिष्ट पुरुष से निवेदन करता है कि हमारे शत्रु को निकाल कर आपने, जो सत्यवादी ह, सत्यता का परिचय दिया है । अब हमारे इन मित्रो को भी, जिनके साथ पहले से ही सधि हो चुकी है, पहली प्रतिज्ञात सन्धि के मूल्य स्वरूप वस्तु देने के प्रोत्साहन के द्वारा सत्य प्रतिज्ञा वाले आप प्रसन्न करने योग्य ह । जब इनके ऊपर इस प्रकार का अनुग्रह हो जायगा तो अपने आश्रय के विनाश होने के कारण उपकार करने वाले आप को सेवा करने लगेंगे । सत्यवक्ता आप को हम यह बात भी स्मरण करा रहे ह, यद्यपि वह भुलाई नहीं गई है । इनमें तो कुछ ऐसे ह जो शत्रु के हाथी व धन के इच्छुक ह और

कुछ राज्य के। आप सत्यवादी ने हमारे लिए जो तीन आभूषण भेजे थे, वे मिल गये। हमने भी पत्र की रिक्तता को हटाने के लिए कुछ भेजा है। उसे स्वीकार करिये और जो मौखिक सदेश है वह आप विश्वासपात्र सिद्धार्थक से सुन लें।

Malayaketu (*Takes and reads the letter*)—May good come to you Some one from somewhere tells a certain ımpoıtant person ın the proper place ın thıs way —Your truthful self has shown great honesty by removıng our enemy True to your promıse as you are ıt ıs proper for you now by encourage ment regardıng the prıce for peace whıch was already pro mısed to please these frıends of mıne to whom peace was form erly suggested Beıng thus favoured they will serve you the benefactor due to theır present shelter beıng destroyed Though your truthful self has not forgotten yet ıt ıs ıemınded that among these there are some who are desırous of the ele phants and the treasure of the enemy some want hıs terrıtorıes The three ornaments sent by your truthful self have been receıved I too am sendıng a trıfing accomplıshment to the letter and ıt should be accepted Verbal message has to be heard from the most trustworthy Sıddharthaka

सस्कृत व्याख्या—स्वस्ति कल्याण भूयात यथास्थान स्थानमनतिक्रम्य उचितस्थानात इत्यथ कुतोऽपि कस्मादपि स्थानात कमपि पुरुषविशेषम विशिष्ट जनम अवगमयति निवेदयति। अस्मद्विपक्षम मम शत्रु निराकृत्य निष्कास्य सत्य वादिना भवता कापि महती सत्यता दर्शिता प्रकटीकृता। साम्प्रतम इदानीम एषामपि प्रथममुपन्यस्तसधीनाम प्रथमम प्राक उपन्यस्त कृत सधि य तेषाम अस्मत्सुहृदाम मम मित्राणाम पूवप्रतिज्ञातसधिपरिपणवस्तुप्रतिपादनप्रोत्साह नेन पूवमादौ प्रतिज्ञातस्य सधे परिपण मूल्यभूत यत वस्तु तस्य प्रतिपादन समपणम तेन प्रोत्साहनम तेन अर्थात पूवप्रतिज्ञातसधिमूल्यभूतवस्तुप्रतिदानेन प्रोत्साहन कृत्वा सत्यसध सत्यप्रतिज्ञ भवान प्रीतिम आनन्दम उत्पादयितुम जनयितुम अहति योग्यो भवति। एते उपयुक्ता एवमनेन प्रकारेण अनुगहीता अनकम्पिता स त भवन्त स्वाश्रयविनाशेन एव स्वाश्रयनाशात उपकारिणम हितकारकम त्वाम आराधयिष्यति पूजयिष्यति। अविस्मृतमपि ~~विस्मृ~~तिम न गतमपि एतत इदम सत्यवत सत्यवादिन भवत स्मारयाम स्मृतिपथ कुम। एतेषा मध्ये केचित अरे शत्रो कोषदन्तिभ्याम धनहस्तिभ्याम अर्थिन धनिन केचिद विषयेण इति राज्येन। अस्मान प्रति अलकारत्रय त्रीणि अलकरणानि

यत् यानि अनुप्रेषित प्रहितानि तत् तानि अलङ्करणानि उपगतानि। अस्माभि अपि लेखस्य अशून्याथम किंचित किमपि वस्तु अनुप्रेषित प्रहित तत उपगमनीयम स्वीकत यम। वाचिकम च मौखिक स देशम आप्ततमात अतिविश्वासपात्रात सिद्धाथकात श्रोतव्यम आकणनीयम।

टिप्पणी

(१) **परिग्रह**—सेवक। परिगह्यते इति परिग्रह परि+ग्रह+अप कमणि। भागरायण और सिद्धाथक दोनो चाणक्य के गुप्तचर ह और एक दूसरे को जानते भी है फिर भी भागुरायण अपरिचित के समान व्यवहार कर रहा है ताकि मलयकेतु उनकी चाल समझ न सके। (२) **उदघाटय**—खोलकर उद+घट+णिच+ल्यप्। (३) **सत्यवत स्मारयाम**—आप सत्यवादी को स्मरण कराते ह। यहा पर अधीगथदयेशा कमणि से षष्ठी हुई है। (४) **अस्मत्सुहृदाम**—प्रथम अक के २० वे श्लोक मे कहे गये कौलूत आदि की ओर सकेत है। (५) **अशून्याथम**—शून्य हाथ न करने के लिये अर्थात राजा को खाली हाथ पत्र न भेजना चाहिए अत पत्र के साथ कुछ भेज रहा हू। लिखा भी है रिक्तपाणिन पश्येत्तु राजान देवता गुरुम। (६) **याचिकम**—जबानी सदेश। वाच+ठक् (ठक का इक आदेश हो गया) ठस्येक इस सूत्र से।

मलयकेतु—भागुरायण! कीदृशो लेख?

भागुरायण—भद्र सिद्धार्थक! कस्याय लेख?

सिद्धार्थक—अज्ज! ण आणामि। (आय! न जानामि।)

भागुरायण—हे धूत्त! लेखो नीयते, न च ज्ञायते कस्यायमिति। सर्वं तावत्तिष्ठतु। वाचिक त्वत्त केन श्रोतव्यम्?

सिद्धार्थक—(भय नाटयन्) तुह्मेहि। (युष्माभि।)

भागुरायण—किमस्माभि?

सिद्धाथक—मिस्सेहि गहीदो, ण आणामि, कि भणामित्ति। (मिश्रैगृहीतो न जानामि कि भणामीति।)

भागुरायण—(सक्रोधम) एष ज्ञास्यसि। भद्र भासुरक! बहिर्नीत्वा ताडयता तावत्, यावत सवमनेन कथित भवेत्।

भासुरक—जं अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति सिद्धार्थकेन सह निष्क्रान्त)
(पुन प्रविश्य) अज्ज ! इअ तस्स ताडीअमाणस्स कक्खादो णाममुद्दालच्छिदा आहरणपेडिआ णिवडिदा ।
(आय ! इय तस्य ताड्यमानस्य कक्षत नाममुद्रालाञ्छिता-ऽऽभरणपेटिका निपतिता ।)

हिन्दी अनुवाद--मलयकेतु--भागुरायण, कसा पत्र है ?
भागुरायण--भद्र सिद्धाथक यह किसका लेख हैं ?
सिद्धाथक--आय, नहीं जानता।
भागुरायण--अरे धूत्त, लेख तो ले जा रहे हो और यह नहीं जानते कि किसका लेख है। और सब रहने दो बताओ तो मौखिक सदेश किसको सुनाना है ?
सिद्धायक--(भय का अभिनय करते हुए) आप लोगो को।
भागुरायण--क्या हमको ?
सिद्धाथक--आप के द्वारा पकडा हुआ म नहीं जानता कि क्या कह रहा हूँ।
भागुरायण--(क्रोध के साथ) अभी जानोगे। भद्र भासुरक, बाहर ले जाकर इसे तब तक पीटो जब तक यह सब कुछ न बता दे।
भासुरक--आय की जसी आज्ञा (सिद्धाथक के साथ बाहर चला जाता है) (फिर प्रवेश कर) आय, जब वह पीटा जा रहा था तो उसकी काख से यह नाम की मुहर से मुद्रित यह गहनो की पेटी गिर पडी।

Malayaketu—Bhagurayan what kind of letter is it ?
Bhagurayan—Noble Siddharthaka whose letter is it ?
Siddhathaka—Noble Sir I do not know
Bhagurayan—You know you are carrying the letter but do not know whose it is Let all this alone (*Tell me*) who has to hear the verbal message from you ?
Siddharthaka (*Acting fright*)—By you
Bhagurayan—How by us ?
Siddharthaka—Being arrested by you I do not know what I am saying
Bhagurayan (*With anger*)—You shall know presently Noble Bhasuraka take him out and beat him till he discloses everything
Bhasuraka—As the Noble Sir commands (*Goes out with Siddharthaka and coming back*) Noble Sir this basket of ornaments marked with a seal has dropped from his arm pit as he was being beaten

टिप्पणी

(१) **भद्र सिद्धार्थक**—भागुरायण ने पीछे पकड कर लाये गये पुरुष को देखकर कहा है— किमयमागन्तुक आहोस्विदिहैव कस्यचित परिग्रह । और यहा नाम लेकर पूछता है। यह नाटकीय दृष्टि से उचित तो नही कहा जा सकता किन्तु पत्र मे वाचिकञ्चाप्ततमात सिद्धार्थकाच्छ्रोतव्यम इस उल्लेख से भागुरायण ने अनुमान लगाया कि इस आगन्तुक का नाम सिद्धार्थक है। इसी आधार पर उसने नामोच्चारण किया। ऐसा कहकर हम नाटककार के प्रमाद का परिमाजन कर सकते ह। **मिश्र**—पूज्य । **भवद्भि** आदरणीय आप लोगो से। (२) **ताडयमानस्य**—मारे जाते हुए के। ताड+शानच। (३) **कक्षत**—काख से।

भागुरायण—(विलोक्य) कुमार! इयमपि राक्षस-मुद्राङ्कितैव।

मलयकेतु—अय लेखस्याशून्यार्थो भविष्यति। इमामपि मुद्रा परिपालयन्नुद्घाट्य दर्शय।

भागुरायण—(तथा कृत्वा दर्शयति।)

मलयकेतु—(विलोक्य) अये! तदिदमाभरण यन्मया स्वशरीरादवतार्य राक्षसाय प्रेषितम्। व्यक्त चन्द्रगुप्तस्याय लेख ।

भागुरायण—कुमार! एष निर्णीयते सशय । भद्र! पुनरपि ताड्यताम।

पुरुष—ज अज्जो आणवेदि। (यदाय आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुन प्रविश्य च) अज्ज! एसो क्खु ताडीअमाणो विण्णवेदि—कुमारस्स स्सअ ज्जेव णिवेदेमि त्ति। (आय एष खलु ताड्यमानो विज्ञापयति—कुमारस्य स्वयमेव निवेदयामीति।)

मलयकेतु—प्रवेशय।

पुरुष—ज कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रम्य सिद्धार्थकेन सह पुन प्रविशति ।)

सिद्धाथक ——(पादयोर्निपत्य) अभएण मे कुमालो प्पसाद करेदु । (अभयेन मे कुमार प्रसाद करोतु ।)

मलयकेतु ——भद्र ! भद्र !! अभयमेव परायत्तजनस्य, तन्निवेद्यता यथाऽवस्थितम ।

सिद्धाथक ——णिसामेदु कुमालो, अह क्खु अमच्चरक्खसेण इम लेह देइअ, चन्दउत्तसआस प्पेसिदोह्मि । (निशामयतु कुमार, अह खल्वमात्यराक्षसेनेम लेख दत्त्वा चन्द्रगुप्त-सकाश प्रेषितोऽस्मि ।)

मलयकेतु ——भद्र ! वाचिकमिदानी श्रोतुमिच्छामि ।

हिन्दी अनुवाद——भागुरायण (देखकर) कुमार, इस पर भी राक्षस की मुहर लगी है।

मलयकेतु——यह इस पत्र की रिक्तता को पूरा करने वाला उपहार होगा। मुहर को बचाते हुए इसे भी खोल कर दिखाओ।

भागुरायण——(वसा करके दिखाता है)।

मलयकेतु——(देखकर) यह तो वही आभरण है जो मने अपने शरीर पर से उतार कर राक्षस के लिए भेजा था। निश्चय ही यह पत्र चन्द्रगुप्त के लिए है।

भागुरायण——कुमार, अभी यह सदेह दूर कर लिया जाता है। भद्र, इसे फिर मारो।

पुरुष——जसी आय की आज्ञा (बाहर जाकर और फिर प्रवेश कर) आय, मारे जाने पर वह कह रहा है कि म कुमार को खुद ही बताऊँगा।

मलयकेतु——(उसे अन्दर) ले आओ——

पुरुष——जसी कुमार की आज्ञा। (बाहर जाकर फिर से सिद्धाथक के साथ प्रवेश करता है)

सिद्धाथक——(परो पर पडकर) कुमार, मुझे अभयदान दें।

मलयकेतु——भद्र, पराधीन पुरुष के लिए अभयदान ही है। इसलिए जो बात है उसे बताओ।

सिद्धाथक——कुमार सुनें। यह लेख देकर अमात्य राक्षस ने मुझे चन्द्रगुप्त के पास भेजा है।

मलयकेतु——भद्र, अब वह मौखिक सदेश सुनना चाहता हूँ।

Bhaguravan (*Seeing*)—Prince this too is stamped with Rakshas s seal

Malayaketu—This might be the present to accompany the letter Open it too and show me without breaking the seal (*Bhagurayan does so and shows*)

Malayaketu (*Observing*)—This is the same ornament which I sent to Rakshas by taking off from my body Indeed this letter is for Chandragupta

Bhagurayan—Prince the doubt is here confirmed Noble man beat him again

Attendant—As the Noble Sir commands (*Going out and re entering*) Noble Sir on being beaten he says that he will himself tell it to the Prince

Malayaketu—Let him be admitted

Attendant—As says the Prince (*Going out re enters with Siddharthaka*)

Siddharthaka (*Falling at his feet*)—May Prince favour me with impunity

Malayaketu—Good man a dependent has always impunity Tell me as it is

Siddharthaka—Prince may hear I was sent to Chandragupta by Minister Rakshas who gave me this letter

Malayaketu—Now I wish to hear the verbal message

टिप्पणी

व्यक्त चन्द्रगुप्तस्याय लेख—स्पष्ट है कि चन्द्रगुप्त के लिए यह पत्र लिखा गया है। कारण राजा के धारण करने योग्य जो आभूषण मने राक्षस के लिए भिजवाया था वही आभूषण उसने चन्द्रगुप्त के लिए भेजा है। **अभयेन**—भयस्य अभाव अभयम (अव्ययीभाव स०) तेन। **यथावस्थितम**—ठीक ठीक सब समाचार। अवस्थितमनतिक्रम्य यथावस्थितम (अव्ययी भाव स०)।

सिद्धार्थक—कुमाल ! सदिट्ठोह्मि अमच्चरक्खसेण, जहा—'एदे मम प्पिअबअस्सा पञ्च राआणो तुए सह प्पढमसमुप्पण्णसन्धाणा। जहा—कुलूदाहिबो चित्तबम्मा, मलअजणबदाहिबो सिंहणादो, कस्सीरदेसणाहो पुक्खरक्खो, सिन्धुराओ सिन्धुसेणो, पारसीआधिबदी मेहक्खो त्ति। एत्थ ज्जेब पढमभणिदा तिण्णि राआणो मलअकेदुणो बिसअं अहिलसन्ति, इदरे दुबे कोस हत्थिबलं अ त्ति। ता जहा चाणक्कं णिराकरिअ महाराएण, मम प्पीदी उप्पादिआ,

तहा एदाण पि प्पढमभणिदो अत्थो सपादइदव्वो' त्ति एत्तिओ बाआसन्देसो त्ति। (कुमार! सन्दिष्टोऽस्म्यमात्यराक्षसेन, यथा—'एते मम प्रियवयस्याः पञ्च राजानस्त्वया सह प्रथमसमुत्पन्नसन्धाना। यथा—कुलूताधिपश्चित्रवर्मा, मलयजनपदाधिप सिंहनाद, काश्मीरदेशाधिप पुष्कराक्ष, सिन्धुराज सिन्धुसेन, पारसीकाधिपतिर्मेघाक्ष इति। अत्रैव प्रथमभणितास्त्रयो राजान मलयकेतोर्विषयमभिलषन्ति, इतरौ द्वौ कोष हस्तिबलञ्चेति। तद्यथा चाणक्य निराकृत्य महाराजेन मम प्रीतिरुत्पादिता, तथैतेषामपि प्रथमभणितोऽर्थ - सपादयितव्य' इत्येतावान वाक्सन्देश इति।)

मलयकेतु—(स्वगतम) कथ चित्रवर्मादयोऽपि माम-भिद्रुह्यन्ति, अत एवैतेषा राक्षसे निरतिशया प्रीति। (प्रकाशम्) विजये! अमात्यराक्षस द्रष्टुमिच्छामि।

प्रतीहारी—ज कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्ता।)

(तत प्रविशत्यासनस्थ स्वभवनगत पुरुषेणानुगम्यमान सचिन्तो राक्षस)

राक्षस—(स्वगतम) सम्पूर्णमस्मदबल चन्द्रगुप्तबलरिति यत सत्य न मे मनस शुद्धिरस्ति। कुत ?—

हिंदी अनुवाद—सिद्धार्थक—कुमार, अमात्य राक्षस ने संदेशा भेजा है। ये मेरे प्रियमित्र पाच राजा तुम्हारे साथ पहले ही सधि कर चुके ह। जसे (उनके नाम ये) ह—कुलूत देश का राजा चित्रवर्मा, मलय जनपद का राजा सिंहनाद, काश्मीर देश का राजा पुष्कराक्ष, सिंधु देश का राजा सिंधुसेन, फारस देश का राजा मेघाक्ष। इनमें पहले कहे हुए तीन राजा मलयकेतु का राज्य चाहते ह और दूसरे दो खजाना और हाथी चाहते ह। तो जसे चाणक्य को निकाल कर महाराज ने मुझे प्रसन्न किया उसी प्रकार इन लोगो का उपयुक्त मनोरथ पूरा कर देना चाहिए। बस, इतना ही मौखिक सदेश है।

मलयकेतु—(मन में) तो चित्रवर्मा आदि भी मुझसे द्वेष करते ह। इसी लिए राक्षस से इनका इतना प्रेम है। (प्रकट), विजये, अमात्य राक्षस को देखना चाहता हूँ।

प्रतीहारी—जसी कुमार की आज्ञा (बाहर चली जाती है)।

(तदनन्तर अपने भवन में आसन पर विराजमान चिंतामग्न राक्षस एक पुरुष के साथ प्रवेश करता है)

राक्षस—(मन में) हमारी सम्पूण सेना चद्रगुप्त की सेनाओ से भर चुकी है, यह सत्य बात है। इसलिए मेरे मन में शान्ति नहीं है। क्योकि,

Siddharthaka—Prince Minister Rakshas has sent the message These five kings who are my friends and have already entered into alliance with you are—Chitravarman the ruler of Kuluta Sinhanada the chief of the city of Malaya Pushkaraksh the lord of Kashmir Sindhusena the king of Sindhu and Meghaksha the king of Persia Of these the first three want the kingdom of Malayaketu and the rest two want his force of elephants and treasure So just as your Majesty has caused my pleasure by dismissing Chanakya in the same way the wishes of these should also be accomplished This much is the oral message

Malayaketu (*To himself*)—How so Chitravarman and others also are hostile to me and so they show excessive love to Rakshas (*Aloud*) Vijaya I wish to see Minister Rakshas

Warder—As the Prince commands (*Exit*)

(Now enter with an attendant Rakshas seated in his own house meditating)

Rakshas (*To himself*)—My whole army is full of the warriors of Chandragupta hence peace of mind really does not come to me For—

टिप्पणी

(१) **प्रथमसमुत्पन्नसधाना**—जो पहले से ही सधि कर चुके ह। (२) **प्रियवयस्या**—प्रियमित्र। वयसा तुल्या इति वयस्या वयस+यत। प्रिया वयस्या प्रियवयस्या (कमधारय स०)। (३) **मामभिद्रुह्यन्ति**—मुझसे द्रोह करते ह। यहा पर क्रुधद्रुहोरुपसष्टयो कम से अभिपूवक द्रुह धातु के कम मे द्वितीया हुई है। नही तो उपसग रहने पर चतुर्थी होती। ध्यान रहे कि यह सिद्धाथक चाणक्य का गुप्तचर है और इसीलिए ऐसी मिथ्या बाते कह रहा है, ताकि राक्षस का और मलयकेतु का विरोध तो हो ही जाय साथ ही साथ मलयकेतु के साथी पाच राजाओ के भी ऊपर उसका सदेह हो जाय जिससे वह उनका विनाश कर दे और शक्तिहीन हो जाय।

साध्ये निश्चितमन्वयेन घटित बिभ्रत् सपक्षे स्थिति
व्यावृत्तञ्च विपक्षतो भवति यत् तत् साधन सिद्धये ।
यत साध्य स्वयमेव तुल्यमुभयो पक्षे विरुद्धञ्च यत्
तस्याङ्गीकरणेन वादिन इव स्यात् स्वामिनो निग्रह ॥१०॥

अन्वय—यत साधन निश्चितम सपक्षे स्थिति बिभ्रत अन्वयेन घटित विपक्षतो व्यावृत्त च तत सिद्धये भवति। यत स्वयमेव साध्यम उभयो तुल्यम, यच्च पक्षे विरुद्ध तस्य अङ्गीकरणेन वादिन इव स्वामिन निग्रह स्यात ॥१०॥

हिन्दी अनुवाद—सग्राम में वही सेना जीत सकती है जो ठीक शास्त्राथ में वादी के हेतु (तक के समान) हो। सवथा अपने पक्ष का पूण तौर से तयार प्रत्येक अवस्था में समन्वित और अनुकूल, अपने समान पक्ष में भी अवस्थित और साथ ही साथ विपक्ष से सवथा प्रतिकूल। ऐसी सेना से तो हमारे जसे विजयाकाक्षी की पराजय ही अवश्यभावी है जो कि किसी वादी के ठीक उस तक जसी हो जिसे बार-बार सँभालना पडे जिसे अपने और पराये दोनो पक्षो में लागू होता देखा जाय और वस्तुत अपने पक्ष से ही सवथा विरुद्ध पडा करे।

विशेष—यह श्लोक द्व्यथक हे—भाव यह है कि जो हेतु साध्य है तथा सपक्ष और विपक्ष में समान है और जो हेतु पक्ष में विपरीत है उस हेतु को स्वीकार करने से स्वामी की तरह वादी की पराजय होती है। जो सेना अपने पक्ष से विपरीत है और अपने पक्ष तथा शत्रु पक्ष से बराबर प्रेम रखती है उस सेना से हार अवश्य होगी।

That army of a king leads to success which brought together by lineal succession maintains stay with its own side (पक्ष) and has no sympathy for the foe but defeat may come from the incorporation of such as are themselves to be won over or are opposed to the king (स्वामी) himself like that reason of a disputant (वादी) undoubtedly seen in the subject becomes suitable for a conclusion which maintaining presence in similar cases is attended by succession and is not found in dis similar cases (while) by the assumption of that which is itself to be proved (साध्य) or is equally true to both sides (स्वपक्ष and परपक्ष) or what is opposed to the subject error might creep into the argument

सस्कृत व्याख्या—यदिद साधन सन्यादिसाध्ये शत्रुविजयकृत्ये निश्चित निर्णीत परसन्यनिवारणशक्तिनिर्धारिविभव वेति यदिद साधनमन्वयेन घटित

सभतमौलबल यदिद साधन सपक्षे स्थितिं बिभ्रत श्रेणीबलाटवी बलमित्रबलादि रूपबलसमुद्दानाऽविरोधि यदिदञ्च साधन विपक्षतो यावतञ्च भवति तदेव साधन सिद्धये अभियानकमण निर्विघ्ननिष्पत्तये विजयाय च भवति सञ्जायते। किन्तु यत् खलु साधनम चतुरङ्गमपि स्वयमेव साध्य वशीकायम यद्धि वस्तुत उभयो सपक्षविपक्षयो तुल्यम समानम यच्च पक्षे विरुद्धम विपरीतम साध्यधर्मा सत्त्वेऽपि स्वय सदित्यथ तस्य तथाविधस्य साधनस्य बलसमुद्दानस्य अङ्गीकरणेन स्वीकरणेन स्वामिन राजविजिगीषोर्वादिन इव वादविजिगीषोरिव निग्रह पराभव अवश्यमेव स्यात। तात्पय तु यथा कश्चित वादी कञ्चन प्रतिज्ञातमथम साधयितुकाम पक्ष यापकत्वधमयुक्त हेतुम उपाददान सिद्धप्रतिज्ञ भवति तथव विजिगीषुरपि परोपजापादिविरहित बल प्रयुञ्जान निश्चितविजयो भवति। किन्तु विपरीतदशाया तस्य पराजयो भवति।

टिप्पणी

(१) **साधनम**—साधन जिससे कोई पक्ष सिद्ध किया जाय, स्वामी के पक्ष मे सेना अथ है। साध्यते अनेन इति साधनम साध+ल्युट। (२) **साध्ये**—साध्य में। साध+यत कमणि। साध्य उसे कहते ह जो बात सिद्ध करना है यह न्याय शास्त्र का पारिभाषिक श द है। जसे कि पवतोऽयम वह्निमान धूमात अर्थात इस पवत मे आग है धूम होने के कारण यहा पर यह साध्य हे कि वह्निमान है स्वामी पक्ष मे इसका अथ है काय मे। (३) **सपक्षे**—पक्षेण सह वतमान इति सपक्ष। निश्चितसाध्यवान सपक्ष जिसमे साध्य का विषय हो एक ही पक्ष का समान पक्ष का। (४) **अ वयेन घटितम**—तत्सत्त्वे तत्सत्त्वम। उस हेतु के रहन पर उस (साध्य) की सत्ता निश्चित है हेतु और साध्य का साहचय पक्षा तर मे ल ध (प्राप्त वस्तु)। अनु+इ+अच भावे=अ वय। पक्षान्तरे—अनु+इ+अच अधिकरणे=अ वय+वश। (५) **सिद्धये**—सिद्धि के लिए (आग की अनुमिति) पक्षा तर मे—विजयादि की प्राप्ति। (६) **विपक्षत**—विपक्ष से भिन्न वस्तु (जलाशय आदि से) स्वामि पक्ष मे शत्रु से। (७) **यावत्तम**—हटा हुआ। (८) **तुल्यमुभयो**—वह हेतु जो पक्ष और विपक्ष दोनो मे लागू हो। जो दोनो पक्ष मे लागू होता है उस हेतु से कोई परिणाम (Conclusion) नही निकलता पक्षान्तर मे वह सेना जो दोनो (शत्रु और अपनी) ओर मिली हो। राक्षस के कहने का तात्पय है कि जसे कोई

वादी किसी पक्ष को सिद्ध करना चाहता हो और ऐसे हेतुओ (Reasonings या arguments) का प्रयोग करता है जो उसके पक्ष और विपक्ष दोनो मे समान लागू ह तो वह किसी परिणाम पर नही पहुच पाता उसी प्रकार जो सेना दोनो ओर मिली है उससे विजय पाना असम्भव है। हमारी सेना मे विपक्ष (चन्द्रगुप्त) के लोग भी वतमान ह अत विजय असभव है। इसमे श्लेष और उपमा अलकार ह तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अथवा तैस्तैर्विज्ञातापरागहेतुभि प्राक्परिगृहीतोपजापैरापूर्णमिति न विकल्पयितुमर्हामि। (प्रकाशम्) प्रियवदक! उच्यन्तामस्मद्वचनात् कुमारानुयायिनो राजान —सम्प्रति दिने दिने प्रत्यासीदति कुसुमपुरम्। अत परिकल्पितविभागैर्भवद्भि प्रयाणे प्रस्थातव्यम्। कथमिति?

प्रस्थातव्य पुरस्तात खसमगधगणैर्मामनुव्यूह्य सैन्यै-
र्गान्धारैर्मध्ययाने सयवनपतिभि सविधेय प्रयत्न।
पश्चाद् गच्छन्तु वीरा शकनरपतय सवृताश्चेदिहूणै
कौलूताद्यश्च शिष्ट पथि परिवृणुयाद्राजलोक कुमारम॥११॥

अन्वय—पुरस्तात व्यूह्य मामनु खसमगधगण सन्यै प्रस्थातव्यम। मध्य याने सयवनपतिभि गान्धार प्रयत्न सविधेय। पश्चात चेदिहूण सवता वीरा शकनरपतय गच्छन्तु। शिष्ट च कौलूताद्य राजलोक पथि कुमारम परिवृणुयात॥११॥

हिन्दी अनुवाद—अथवा हमें यह सन्देह नही करना चाहिए, क्योकि हो सकता है कि हमारी सेना के सैनिक एसे निकलें जो हमारी भेदनीति से हमारे ही बने रहें जसा कि शत्रु पक्ष से उनके विच्छेद के कारणो से स्पष्ट है। (प्रकट) प्रियवदक, हमारी ओर से कुमार के अनुयायी राजाओ से कहो कि इस समय धीरे धीरे पाटलिपुत्र करीब आता जा रहा है और विभागो की रचना करके प्रयाण में चलना चाहिए। क्योकि—सामने (आगे आगे) व्यूह बनाकर मेरे पीछे खस और मगध की सेना चले। मध्यभाग में यवन सनिको के साथ गाधार सनिको को चलना चाहिए। इसके पीछे चेदि और हूणो के साथ वीर शक राजा लोग चलें और बाकी कौलूत आदि राजाओ का समूह माग में कुमार को घेर कर चले।

Or I should not have any doubt for it (*army*) is filled by such as have sufficient cause of their disloyalty (*To Chandra gupta*) known and had previously consented to abide by the terms of peace that was made with them (*Aloud*) Priyamvadak let the Kings following the prince be told in my name that Pataliputra is coming nearer and nearer day by day so you should march by making divisions of the army For The army of Khas and Magadh warriors should follow me in the van Gandhar with the yavan chiefs should march in the centre and the brave Saka kings along with Chedis and Huns should march in the rear The rest of the Kings including the King of Kuluta and others should march surrounding the prince

सस्कृत व्याख्या—पुरस्तात अग्रे व्यूह्य व्यूह रचयित्वा माम अनु मम पष्ठत खसमगधगणै खसाश्च मगधाश्च तेषा गणा खसमगधगणा ते येषा सन्याना तै सन्यै बल प्रस्थातव्यम पुरोयान करणीयमित्यथ मध्ययाने सैन्यमध्यगमने सयवनपतिभि यवनसेनानायक सम गान्धारै गान्धारदेशवासिभि सन्य प्रयत्न सविधेय व्यामिश्रव्यूह विधाय योद्धव्यमित्यथ पश्चात अनन्तरम चेदिहूणा सवता सम्मिलिता वीरा पराक्रमशालिन शकनरपतय शकदेशीयराजान गच्छन्तु शिष्ट च अवशिष्ट च कौलूताद्य कुलूतराजप्रमुख राजलोक नपवग पथि मार्गे कुमार मलयकेतुम परिवणुयात चित्रवमराजप्रभतिराजवग परित रक्षणाथम सव्यूह्य यायादित्यथ ।

टिप्पणी

(१) **विज्ञातापरागहेतुभि**—जिनके विराग के कारण को जान लिया गया है (उनसे)। विज्ञाता अनुमिता अपरागहेतव विरागकारणानि येषा ते तथोक्ता त । यहा राक्षस के कहने का तात्पय यह है कि इन भद्रभट आदि की चन्द्रगुप्त के प्रति विरक्ति वास्तविक थी। इस बात की जाच पडताल कर ली गई थी। अत इनके अलग होने की आशा पहले से ही थी। (२) **प्राकपरिगहीतोपजाप**—पहले से जिन लोगो ने भेद को समझ लिया है। प्राक पूवम परिगहीत ज्ञात उपजाप भद य ते तथोक्ता त । भाव यह है कि इन लोगो को चन्द्रगुप्त से विरक्त जानकर हमने इनके सामन अपने पक्ष मे आने का प्रस्ताव रखा और उन्होने स्वीकार कर लिया तथा चले भी आये। अत इनके ऊपर यह सोचकर सन्देह नही करना चाहिए कि ये चन्द्रगुप्त के व्यक्ति ह। (३) **प्रत्यासीदति**—समीप आता जा रहा है। (४) **परिकल्पितविभाग**—विभागो की

रचना करके। परिकल्पित आरचित विभाग स यविभाग य ते तथोक्ता त ।
(५) व्यूह्य—व्यूह बनाकर। यूह+णिच+ल्यप।

प्रियवदक—ज अमच्चो आणबेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्त ।)

प्रतीहारी—(प्रविश्य) जेदु जेदु अमच्चो। अमच्च ! इच्छदि तुम कुमालो प्पेक्खिदु। (जयतु जयत्वमात्य । अमात्य ! इच्छति त्वा कुमार प्रेक्षितुम्।)

राक्षस—भद्रे ! मुहूत्त तिष्ठ। क कोऽत्र भो ?

पुरुष—(प्रविश्य) आणबेदु अमच्चो। (आज्ञापयत्वमात्य ।)

राक्षस—भद्र ! उच्यता शकटदास, यथा परिधापिता वयमाभरण कुमारेण, तन्न युक्तमिदानीमस्माभिरनलकृतै कुमारदशनमनुभवितुम्, अतो यदलङ्करणत्रय क्रीत तन्मध्यादेक दीयतामिति।

पुरुष—ज अमच्चो आणबेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुन प्रविश्य च) अमच्च ! इद त अलङ्करण। (अमात्य ! इद तदलङ्करणम्।)

राक्षस—(नाटयेनावलोक्यात्मानमलकृत्योत्थाय च) भद्रे ! राजकुलगामिन मार्गमादेशय।

प्रतीहारी—एदु एदु अमच्चो। (एतु एत्वमात्य ।)

राक्षस—(स्वगतम्) अधिकारपद नाम निर्दोषस्यापि पुरुषस्य महदाशङ्कास्थानम्। कुत—

हिन्दी अनुवाद—प्रियवदक—जसी अमात्य की आज्ञा (निकल जाता है)

प्रतीहारी—(प्रवेशकर) अमात्य की जय हो। आपको कुमार देखना चाहते ह।

राक्षस—भद्रे, क्षणभर रुको। अरे, यहा कौन है ?

पुरुष—(प्रवेशकर) अमात्य आज्ञा दें।

राक्षस—भद्र, शकटदास से कहो कि कुमार ने जो आभूषण हमें पहना दिया

है सो इस समय बिना आभूषण पहने हमें कुमार का दर्शन करना उचित नहीं। इसलिए जो तीन अलकार खरीदे गए ह उनमें से एक दे दो।

पुरुष—जो अमात्य की आज्ञा। (बाहर जाकर और फिर प्रवेशकर) अमात्य, यह वह आभूषण है।

राक्षस—(देखने का अभिनय करके, अपने को अलकृत कर और उठकर) भद्रे, राजा के पास जाने का मार्ग बताओ।

प्रतीहारी—अमात्य, आइये।

राक्षस—(मन में) अधिकार का स्थान निर्दोष पुरुष के वास्ते भी महान् आशका का स्थान होता है। क्योंकि—

Priyamvadak—As Minister orders (*Goes out*)

Warder (*Entering*)—Victory to Minister The Prince wishes to see you

Rakshas—Good lady wait a moment Oh who is here ?

Attendant (*Entering*)—Let Minister command

Rakshas—Let Shakatdas be told that as the prince has made me wear ornament it is therefore not proper that I should enjoy the sight of the prince undecorated So one of the three ornaments that have been purchased be handed over to me

Attendant—As the Minister orders (*Going out re entering*) Minister this is the ornament

Rakshas—(Acting the seeing of the ornament and the decoration of the person and rising) Good woman show me the way leading to the royal presence

Warder—Let Minister come

Rakshas (*To himself*)—Verily this thing which is called office is source of great apprehension even to an innocent Person For—

टिप्पणी

(१) परिधापिता —पहनाये गये। परि+धा+णिच, पुक+क्त। (२) यद-लङ्करणत्रय क्रीतम—जो तीन आभूषण खरीदे गये ह। इन आभूषणो की चर्चा पीछे आ चुकी है। आगे के कथानक को विकसित करने के लिए इनका प्रसग यहा उपस्थित किया गया है।

भय तावत् सेव्यादभिनिविशते सेवकजन
तत प्रत्यासन्नाद् भवति हृदयेष्वेव निहितम्।
ततोऽध्यारूढाना पदमसुजनद्वेषजनन
मति सोच्छ्रायाणा पतनमनुकूल कलयति ।।१२।।

अन्वय—सेवकजन तावत भय सेव्यात अभिनिविशते। तत प्रत्यासन्नात् हृदयेषु निहितमेव भवति । तत अध्यारूढाना पदम असुजनद्वेषजननम । सोच्छ्रायाणा मति अनुकूल पतन कलयति ।।१२।।

हिन्दी अनुवाद—सबसे प्रथम तो सेवक के हृदय में स्वामी का भय स्थान पा जाता है और बाद में (राजा के) निकटवर्ती लोगो के कारण हृदय में वह बना ही रहता है। तदनन्तर उच्च पद प्राप्त (अधिकारियो) का पद दुष्टो के लिए द्वेष उत्पन्न करता है। इसलिए ऊँचे पदाधिकारी जो पतन की बात सोचते रहते ह वह ठीक ही है (अर्थात ऊचे पदाधिकारी इसी चिन्ता में पडे रहते ह कि अब गये, तब गये)।

Verily suspicion comes to the server from the served then it takes its root in the heart from his (master s) intimates besides the office of those that are highly placed excites enmity in bad people hence those who are highly placed always think of their fall

संस्कृत व्याख्या—तावत सवप्रथम सेव्यात स्वामिन भय सेवकजनम अभिनिविशते समन्तात हृदयम अभिव्याप्य स्थितिं करोति तत तदनन्तरम प्रत्यासन्नात स्वामिसहोत्थायिन जनात्तदेव भय हृदयेषु एव निहित भवति निरन्तरम अधिष्ठितहृदयमेव विभाव्यत इति। तत तस्मादेव कारणात अध्यारूढानाम पदम महाधिकारवता पदम असुजनद्वेषजननम यो वाऽधिकारस्य दुजनासूयित दुष्टजनक्रोधोद्दीपक एव भवतीति शेष । सोच्छ्रायाणा मति अत्युन्नताना पुरुषाणा मति बुद्धि अनुकूलम उचितम पतनम अधिकाराच्चयवन मेव कलयति अवगच्छति विचिकित्सते इत्यभिप्राय ।

टिप्पणी

(१) **सेव्यात**—स्वामी से। (२) **अभिनिविशते**—अधिकारी के हृदय मे अपने स्वामी की ओर से कई तरफ से भय प्रवेश करता है। नेर्विश अर्थात नि उपसग पूवक विश धातु मे आत्मनेपद होता है। (३) **प्रत्यासन्नात**—स्वामी के के पास सदा उठने-बठने वालो से। (४) **अध्यारूढानाम**—उच्च पद ~~अन्न~~ वालो का। (५) **असुजनद्वेषजननम**—दुष्टो के मन मे द्वेष पदा करने वाला। इसमे काव्यलिङ्ग और अर्थान्तरन्यास अलकार ह और शिखरिणी छद है।

प्रतीहारी—(परिक्रम्य) अमच्च ! अअ कुमालो चिट्ठदि,

ता उपसप्पदुण अमच्चो। (अमात्य! अय कुमारस्तिष्ठति, तदुपसर्पत्वेनममात्य।)

राक्षस —(नाट्येनावलोक्य) अये! अय कुमारस्तिष्ठति। य एष —

पादाग्रे दृशमवधाय निश्चलन्ती
शून्यत्वादपरिगृहीततद्विशेषाम।
वक्त्रेन्दु वहति करेण दुर्वहाणा
कार्याणा कृतमिव गौरवेण नम्रम्॥१३॥

अन्वय—शून्यत्वात अपरिगहीततद्विशेषाम् निश्चलन्ती दृश पादाग्रे अवधाय दुवहाणा कार्याणा गौरवेण इव नम्र कृत वक्त्रेन्दु करेण वहति॥१३॥

हिदी अनुवाद—प्रतीहारी—(घूमकर) अमात्य, यह कुमार बठे ह। अत अमात्य इनके पास जाय।

राक्षस—(अभिनय के साथ देखकर) अरे, यह कुमार ह। जो ये अपने पैरो के आगे अपनी निश्चल किंवा मन के सूनेपन से सभी दृष्टिगोचर वस्तुओं से विमुख आँखें गडाये महान कार्यों की गुरुता से मानो झुके हुए मुखचद्र को हाथ से धारण कर रहे ह।

Warder (*Going round*)—Minister the prince is here let Minister approach him

Rakshas (*Acting observation*)—Ho here sits the Prince This one who fixing his motionless eye on the forepart of his feet with its different parts unseen due to vacancy supports in his hand his moon like face which is as if bowed down by the weight of heavy tasks

सस्कृत व्याख्या—शून्यत्वात मनोव्यापारहीनत्वात् अपरिगृहीततद्विशेषाम न परिगहीता न अवबुद्धा तस्य पादाग्रस्य विशेषा तत्तद्भागा यया तादृशी निश्चलन्ती स्थिरा दृश दृष्टिम पादाग्रे चरणाङ्गुलीषु दौमनस्यात् अवधाय सस्थाप्य दुवहाणा वोढुमशक्यानाम महाभाराणाम कार्याणाम् गौरवेण गुरुत्वेन इव नम्रम आननम कृतम विहितम वक्त्रेन्दुम मुखचद्रम करेण हस्तेन वहति।

टिप्पणी

(१) शून्यत्वात—अन्यमनस्क होने के कारण। जब चित्त कही अन्यत्र रहता है तो सामने की चीजे नही दिखाई पडती। (२) निश्चलतीम दृशम—

निश्चल दृष्टि। (३) अपरिगहीततद्विशेषाम—उस (पर के) अग्रभाग के विशेषो को (अँगूठा आदि) को न जानने वाली। (४) वक्त्रेन्दुम—वक्त्रम मुखम् इदुरिव अथवा वक्त्रमिव इन्दु इति वक्त्रेन्दु (उपमित स०)। मुखरूपी चद्रमा को। इस श्लोक मे चिताग्रस्त मलयकेतु का वणन है। यहा रूपक एवम उत्प्रेक्षा अलकार तथा प्रहर्षिणी छद है। छन्द का लक्षण— त्र्याशाभिमनजरगा प्रहर्षिणीयम।

(उपसृत्य) विजयता विजयता कुमार।

मलयकेतु—आर्य! अभिवादये। इदमासनमास्यताम्।

(राक्षस—उपविशति)

मलयकेतु—अमात्य! चिरदर्शनेनार्यस्य वयमुद्विग्ना।

राक्षस—कुमार! प्रयाणे प्रतिविधानमनुतिष्ठता मया कुमारादयमुपालम्भोऽधिगत।

मलयकेतु—अमात्य! प्रयाणे कथ प्रतिविहितमिति श्रोतु-मिच्छामि।

राक्षस—कुमार! एवमादिष्टा कुमारस्यानुयायिनो राजान।

(प्रस्थातव्यमित्यादिश्लोक पुन पठति।)

मलयकेतु—(स्वगतम्) विज्ञायते, कथ य एव मद्विनाशेन चन्द्रगुप्तमाराधयितुमुद्यता त एव मा परिवृण्वन्ति (प्रकाशम्) आर्य! अस्ति कश्चित् य कुसुमपुर प्रति गच्छति तत आगच्छति वा?

राक्षस—कुमार! अवसितमिदानी गतागतप्रयोजनम्। ननु पञ्चषैरहोभिर्वयमेव तत्र गन्तास्म।

मलयकेतु—(स्वगतम) विज्ञायते। (प्रकाशम्) यद्येव, तत् किमयमार्येण सलेख पुरुष कुसुमपुर प्रस्थापित?

हिदी अनुवाद—(पास जाकर) कुमार की विजय हो।
मलयकेतु—आय, प्रणाम करता हूँ। यह आसन है। बठिये।
(राक्षस—बठता है।)

मलयकेतु—अमात्य बहुत दिन के बाद आप का दर्शन होने से हम व्याकुल हू ।

राक्षस—कुमार, चढाई की तयारी करते हुए, मुझे कुमार से यह उलाहना मिला है।

मलयकेतु—अमात्य, प्रयाण के लिए कसी तयारी की है, यह म जानना चाहता हूँ ।

राक्षस—कुमार, कुमार के अनुयायी राजाओ को इस प्रकार आदेश दे दिया गया है। (प्रस्थातव्यम आदि श्लोक को पुन पढता है)

मलयकेतु—(मन में) समझता हू, जो मेरा विनाश करके चन्द्रगुप्त की सेवा करना चाहते ह वे ही मुझे घेर कर चलेंगे। (प्रकट) आय, क्या कोई ऐसा है जो कुसुमपुर से आ रहा हो या वहा जाता हो ?

राक्षस—कुमार, अब जाने-आने का प्रयोजन समाप्त हो गया है। पाच या छ दिन में हमी लोग वहा पहुच जायगे।

मलयकेतु—(मन में) समझ गया। (प्रकट) यदि ऐसी बात है तो पत्र देकर (इस) पुरुष को पाटलिपुत्र क्यो भेजा है ?

(*Advancing*) Victory to the Prince

Malayaketu—Noble Sir I bow to you This is the seat Please take it

(*Rakshas—Sits*)

Malayaketu—Noble Sir we are uneasy due to seeing you after a long time

Rakshas—Prince being engaged in the preparation of the march I have become the object of censure from the Prince

Malayaketu—Minister I wish to hear what preparation for the march has been made

Rakshas—Prince the kings following you have been instructed thus

(*Repeats the verse*) *Malayaketu* (*To himself*)—I understand Those very men who want to serve Chandragupta by ruining me will surround me (*Aloud*) Noble Sir is there any one who is going to or coming from Kusumpura ?

Rakshas—The object of coming and going is now achieved we ourselves will go there in five or six days

Malayaketu (*To himself*)—I know (*Aloud*) If so then why was this man sent there with a letter by Noble Sir ?

टिप्पणी

(१) प्रतिविधानम—व्यवस्था तयारी। यहाँ मलयकेतु के द्वारा किये गये प्रश्न के गूढ आशय को न समझते हुए राक्षस उत्तर दे रहा है। वस्तुत

राक्षस निष्कपट एव सन्देह रहित है। वह मलयकेतु के प्रश्नो का उत्तर सीधे सादे भाव से दे रहा है। किन्तु उधर मलयकेतु के मन मे कुछ दूसरी ही बात राक्षस के प्रति घर कर चुकी है। वह राक्षस के प्रत्येक बात को अपनी गलत व्याख्या के साथ ले रहा है। (२) **अवसितम**—समाप्त। (३) **पञ्चष**—पाच या छ। पञ्च षट वा परिमाणम येषा तानि पञ्चषानि त। (४) **विज्ञायते**—मलयकेतु के कहने का भाव यह है कि तुम्हारी पोल मालूम हो गई। वह यह समझ रहा है कि राक्षस पाच या छ दिन मे मुझे कदी बनाकर स्वय चन्द्रगुप्त का मत्री बनकर कुसुमपुर जायगा।

राक्षस—(विलोक्य) अये सिद्धार्थक, भद्र, किमिदम ?

सिद्धार्थक—(सबाष्प लज्जा नाटयन्।) प्पसीददु प्पसीददु अमच्चो अमच्च! अतिताडीअन्तेण मए ण पारिद अमच्चस्स रहस्स धारिदु। (प्रसीदतु प्रसीदत्वमात्य। अमात्य! अति-ताडयमानेन मया न पारितममात्यस्य रहस्य धारयितुम्।)

राक्षस—भद्र! कीदृश तत रहस्यम् ? न खल्ववगच्छामि।

सिद्धार्थक—ननु बिण्णबेमि, ताडीअन्तेण मए'—। (ननु विज्ञापयामि, ताडयमानेन मया—') (इत्यर्धोक्ते सभय-मधोमुखस्तिष्ठति)।

मलयकेतु—भागुरायण! स्वामिन पुरस्ताद् भीतो लज्जितश्च नैष कथयिष्यति, अत स्वयमेवार्याय कथय।

भागुरायण—यदाज्ञापयति कुमार। अमात्य! एष कथयति, यथा—'अहममात्यराक्षसेन लेख दत्त्वा वाचिकञ्च सन्दिश्य चन्द्रगुप्तसकाश प्रेषित' इति।

राक्षस—भद्र, सिद्धार्थक! अपि सत्यम ?

सिद्धार्थक—(लज्जा नाटयन) एब्ब अति-ताडीअन्तेण मए णिबेदिद। (एवमतिताडयमानेन मया निवेदितम्।)

राक्षस—कुमार! अनृतमेतत् ताडयमान कि न ब्रूयात् ?

मलयकेतु —भागुरायण ! दर्शय लेख, वाचिकञ्चायमस्मै स्वभृत्य कथयिष्यति ।

हिंदी अनुवाद—राक्षस—(देखकर) अरे सिद्धार्थक, भद्र ! यह क्या ?

सिद्धार्थक—(आँसू के साथ लज्जा का अभिनय करता है) अमात्य, प्रसन्न हों, प्रसन्न हो। अमात्य, जब म बहुत पीटा गया तो अमात्य के रहस्य को न छिपा सका।

राक्षस—भद्र, वह कसा रहस्य है, समझ में नहीं आ रहा है।

सिद्धार्थक—कह तो रहा हूँ कि पीटा जाता हुआ म (ऐसा आधा कहकर भयपूवक मुह नीचे करके खडा हो जाता है)।

मलयकेतु—भागुरायण, स्वामी के आगे लज्जित और भयभीत यह नही कहेगा। अत स्वयम आय को बता दो।

भागुरायण—कुमार की जसी आज्ञा। अमात्य, यह कह रहा है कि अमात्य राक्षस ने लेख देकर और जबानी सदेश देकर चद्रगुप्त के पास भेजा है।

राक्षस—सिद्धार्थक, क्या यह सत्य है ?

सिद्धार्थक—(लज्जा का अभिनय करके) बहुत मारे जाने पर मने ऐसा कहा है।

राक्षस—कुमार, यह असत्य है। पीटा जाता हुआ व्यक्ति क्या नहीं कह देगा ?

मलयकेतु—भागुरायण, वह लेख दिखा दो, मौखिक सदेश तो इनका यह भृत्य कहेगा।

Rakshas (*seeing*)—Oh Siddharthaka Gentleman what is this ?

Siddharthaka (*With tears acts to be ashamed*)—Minister be pleased be pleased When I was severly beaten I could not conceal the Minister s secret

Rakshas—Gentleman what is that secret ? I do not under stand

Siddharthaka—I say that being beaten I (*saying only half stands with face down cast with fear*)

Malayaketu—Bhagurayan frightened or ashamed before the master he will not say you tell it yourself to the Noble Sir

Bhagurayan—As the Prince commands Minister he says that Minister sent me to Chandragupta giving me a letter and speaking a verbal message

Rakshas—Siddharthaka is it true ?

Siddharthaka—Being beaten seriously I told so

Rakshas—This is false On being beaten what would not a man say ?

Malayaketu—Bhagurayan show (him) the letter The verbal message will be told by the servant himself

टिप्पणी

(१) न पारित रहस्य धारयितुम—इस कथन से सिद्धाथक ने सत्यता को स्वीकार कर लिया है। (२) **अतिताडयमानेन** —इसका भाव यह है कि मार पडने पर प्राण बचाने के खयाल से मने जो कुछ कहा है वह सत्य नही है।

भागुरायण —अमात्य, अय लेख ।

राक्षस —(वाचयित्वा) कुमार, शत्रो प्रयोग एष ।

मलयकेतु —लेखस्याशून्यार्थमार्येणेदमाभरणमनुप्रेषितमिति तत कथ शत्रो प्रयोग एष स्यात् ? (इत्याभरण दर्शयति ।)

राक्षस —(आभरण निर्वण्य) कुमार ! नैतन्मयानुप्रेषितम्, एतद्धि कुमारेण मह्य दत्त, मया च परितोषस्थाने सिद्धार्थकाय दत्तम् ।

भागुरायण —भो अमात्य ! ईदृशस्याभरणविशेषस्य, विशेषत कुमारेण स्वगात्रादवतार्य दत्तस्येय परित्यागभूमि ?

मलयकेतु —वाचिकमप्याप्ततमात्सिद्धाथकाच्छ्रोतव्यमिति लिखितमार्येण ।

राक्षस —कुतो वाचिकम् ? कस्य वा लेख ? अयमेवास्मदीयो न भवति ।

मलयकेतु —इय तर्हि कस्य मुद्रा ?

राक्षस —कुमार ! कपटमुद्रामप्युत्पादयितु शक्नुवन्ति धूर्ता ।

भागुरायण —कुमार ! सम्यगमात्यो विज्ञापयति — सिद्धाथक ! केनाय लिखितो लेख ?

सिद्धार्थक —(राक्षसमुखमवलोक्य तूष्णीमधोमुखस्तिष्ठति ।)

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—अमात्य, यह लेख है।

राक्षस—(पढकर) कुमार यह शत्रु की चाल है।

मलयकेतु—पत्र को पूरा करने के लिये आय ने यह आभूषण भेजा है। तब यह शत्रु की चाल कसे है ? (आभूषण दिखाता है)।

राक्षस—(आभरण देखकर) कुमार, मने नही भेजा है। यह तो कुमार ने मुझे दिया था और मने पारितोषिक के रूप में सिद्धाथक को दे दिया था।

भागुरायण—ऐ अमात्य, ऐसे विशिष्ट आभूषण का विशेष करके कुमार के द्वारा अपने शरीर से उतार कर दिए हुए का यह देने का स्थान है ?

मलयकेतु—आय ने यह भी लिखा है कि अति विश्वासपात्र सिद्धाथक से मौखिक सदेश भी सुनना चाहिए।

राक्षस—कहा से जबानी सदेश या किसका पत्र। यह पत्र ही मेरा नहीं है।

मलयकेतु—तो यह किसकी मुहर है ?

राक्षस—कुमार, धूत लोग जाली मुद्रा भी बना सकते ह।

भागुरायण—कुमार, अमात्य ठीक कहते ह। सिद्धाथक, यह पत्र किसने लिखा है ?

सिद्धाथक—(राक्षस का मुह देखकर चुपचाप मुह नीचा करके खडा रहता है)।

Bhagurayan—Minister this is the letter

Rakshas (*Reading*)—This is a plot of the enemy

Malayaketu—This jewellery too is sent by Noble Sir as an accompaniment to the letter how then is it a move of the enemy ?

Rakshas (*observing the jewellery*)—Prince this was not sent by me it was given to me by Prince and I gave it to Siddharthaka as reward

Bhagurayan—Minister is this the place to part with such jewellery specially what has been gifted by the prince after taking off from his own person ?

Malayaketu—Noble Sir has also written that the oral message has to be heard from Siddharthaka who is trustworthy

Rakshas—From whom is the oral message ? To whom is the oral message ? The letter itself is not mine

Malayaketu—Then whose seal is this ?

Rakshas—Prince the wily can make forged seals too

Bhagurayan—Prince the Minister says the truth Siddhar thaka by whom was this letter written?

Siddharthaka—(Keeps silence with head down cast after having looked at Rakshas s face)

टिप्पणी

परित्यागभूमि—मलयकेतु के कहने का भाव यह है कि कुमार ने जो आभूषण आपको दिये वे बहुमूल्य हैं। वे राजाओं के ही धारण करने योग्य हैं। अत: आपने सिद्धार्थक को तो दिया न होगा। निश्चय ही वे आभूषण चन्द्रगुप्त के पास भेजे जा रहे हैं।

भागुरायण:—अलं पुनरात्मानं ताडयित्वा। कथय।

सिद्धार्थक:—अज्ज सअडदासेण। (आर्य शकटदासेन।)

राक्षस:—कुमार, यदि शकटदासेन लिखितस्तर्हि मयैव लिखितः।

मलयकेतु:—विजये, शकटदासं द्रष्टुमिच्छामि।

प्रतीहारी—जं कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।)

भागुरायण:—(स्वगतम्) न खल्वनिश्चितार्थमार्यचाणक्यप्रणिधयोऽभिधास्यन्ति। आगत्य शकटदासो वा 'सोऽयं लेखः' इति प्रत्यभिज्ञाय पूर्ववृत्तं प्रकाशयेत। एवं सति सन्दिहानो मलयकेतुरस्मिन् प्रयोगे श्लथादरो भवेत्। (प्रकाशम्) कुमार! न कदाचिदपि शकटदासोऽमात्यराक्षसस्याग्रतो 'मया लिखितः' इति प्रतिपत्स्यते, अतोऽन्यलिखितमस्यानीयतां, यतो वर्णसंवाद एवैतत् सर्वं विभावयिष्यति।

मलयकेतु:—विजये! एवं क्रियताम्।

भागुरायण:—कुमार! मुद्रामप्यानयत्वियम्।

मलयकेतु:—उभयमप्यानीयताम्।

प्रतीहारी—जं कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य) कुमाल! इदं क्खु तं सअडदासेण स्सहत्थलिहिदं पत्तअं मुद्दा अ। (कुमार! इदं खलु तत् शकटदासेन स्वहस्तलिखितं पत्रं मुद्रा च।)

मलयकेतु —(उभयमपि नाट्येनावलोक्य) आर्य ! सवदन्त्यक्षराणि ।

राक्षस —(स्वगतम्) सवदन्त्यक्षराणि, शकटदासस्तु मम मित्रमिति च विसवदन्त्यक्षराणि, तत् किं शकटदासेन लिखितम ?

हिदी अनुवाद—भागुरायण—बोलो, क्यो मार खाते हो ?

सिद्धार्थक—आर्य, शकटदास ने ।

राक्षस—कुमार, यदि शकटदास ने लिखा है तो मेरा ही लिखा हुआ है ।

मलयकेतु—विजये, शकटदास को बुलाओ ।

प्रतीहारी—जसी कुमार की आज्ञा ।

भागुरायण—(मन में) आर्य चाणक्य के दूत तो बिना सोचे समझे कुछ कहेंगे नहीं । आकर शकटदास यदि पहचान कर यह कह दे कि "यह वही लेख है" और सभी पुरानी बातें खोल दे तो इस चाल का मलयकेतु पर प्रभाव नष्ट हो जायगा । (प्रकट), कुमार, अमात्य राक्षस के सामने शकटदास यह कभी नहीं कहेगा कि यह मेरा लेख है । इसलिए उसकी कोई दूसरी लिखावट मगा लें और उससे सब बातो का पता चल जायगा ।

मलयकेतु—विजये, ऐसा ही करो ।

भागुरायण—कुमार, मुद्रा भी मगा लीजिए ।

मलयकेतु—दोनो चीजें लाई जाँय ।

प्रतीहारी—जसी कुमार की आज्ञा । (जाकर और फिर प्रवेशकर) कुमार, यह रहा शकटदास का हस्तलिखित पत्र और यह रही मुद्रा ।

मलयकेतु—(दोनो को देखने का अभिनय करके) अमात्य, लिखावट तो दोनो की मिलती-जुलती है ।

राक्षस—(मन में) अक्षर तो मिलते-जुलते ह, पर यह सोचकर कि शकटदास मेरा मित्र है भला कसे मिल सकते ह, तो क्या सचमुच शकटदास ने लिखा है—

Bhagurayan—Speak do not get beaten?

Siddharthaka—Noble Sir by Shakatdasa

Rakshas—Prince if it is written by Shakatdasa then it is written by me

Malayaketu—Vijaya I wish to see Shakatdasa

Warder—As Prince commands

Bhagurayan (*To himself*)—The spies of Noble Chanakya will not say anything without verifying it Shakatdasa on coming and recognising the letter might disclose past events

Then Malayaketu who is becoming suspicious might shake his faith in the plot (*Aloud*) Prince Shakatdasa will never admit in the presence of Minister that this was written by him So let some others of his writing be produced and resemblance of the characters will enable us to guess everything

Malayaketu—Vijaya do it

Bhagurayan—Prince let the seal too be brought

Malayaketu—Let both the things be brought

Warder—As the Prince orders (*Going out and re entering*) This is the letter written by Shakatdasa and this is the seal

Malayaketu—(*Acting the inspection of both*) Noble Sir characters agree (are similar)

Rakshas (*To himself*)—The characters agree but the letters do not agree with the fact that Shakatdasa is a friend Then was it written by Shakatdasa ?

टिप्पणी

(१) **ततो मयव लिखित**—राक्षस का यह कथन उसकी शकटदास के साथ अति घनिष्ठ मित्रता को सूचित करता है। उसका विश्वास है कि शकटदास ऐसा लेख कभी भी नही लिखेगा। यही कारण है कि वह बिना सोचे-समझे भी उक्त बात कह डालता है। (२) **सवदन्ति**—मिलते-जुलते है। राक्षस के मन मे शकटदास के प्रति कुछ स देह उत्पन्न हो रहा है। वह कहता है कि अक्षर तो मिलते ह पर मित्र होने के नाते क्या शकटदास ऐसा पत्र लिखेगा या हो सकता है कि उसने लिखा होगा। राक्षस का मन कुछ निश्चय नही कर पाता।

स्मृत स्यात पुत्रदाराणा विस्मृता स्वामिभक्तय ।
चलेष्वर्थेषु लुब्धेन न यश स्वनपायिषु ॥१४॥

अ वय—चलेषु अर्थेषु लु धेन न अनपायिषु यश सु (लुब्धेन) स्वामिभक्तय विस्मता पुत्रदाराणा स्मत स्यात ॥१४॥

हि दी अनुवाद—अरे क्षणिक लाभ के लोभी, चिरस्थायी यश को खो देने वाले क्या बाल-बच्चो की स्मति तुझे हो आयी, क्या सारी स्वामिभक्ति यकायक भूल गये ?

Could it be that (*Shakatdasa*) greedy after fleeting wealth and not desirous of ever lasting fame thought of his wife and children and ignored his loyalty to master

सस्कृत व्याख्या—चलेषु अर्थेषु नश्वरेषु धनेषु लुब्धेन लोभयुक्तेन न अनपा-

यिषु चिरस्थायिषु राजभक्तिमहाफलेषु कीर्तिलाभेषु स्वामिभक्तय विस्मता त्यक्ता पुत्रदाराणा पुत्रकलत्राणा स्मरण कृत स्यात अर्थात शकटदासेनव पत्र मिद लिखित भवेत पुत्रकलत्रवित्तादिषु अथनीयेषु वस्तुषु गर्धावता तेन राजद्रोहिणा शकटदासेन लिखितम इति उपपद्यते।

टिप्पणी

राक्षस यह सोच रहा है कि अपने लडके बच्चो व स्त्री का ख्याल करके कि वे बधनमुक्त हो जायेगे शकटदास ने स्वामिभक्ति त्याग कर चद्रगुप्त के लिए यह पत्र लिखा हो। (१) **चलेषु**—नाशवान (२) **अनपायिषु**—स्थायी (यश) स्वामिभक्ति से स्थायी यश की प्राप्ति है। धन और पुत्र कलत्र तो अस्थायी ह। इस श्लोक मे परिसख्या अलकार तथा अनुष्टुप छद है।

अथवा, क सन्देह ?

मुद्रा तस्य कराङ्गुलिप्रणयिनी सिद्धाथकस्तत्सुहृत्
तस्यैवापरलेख्यसूचितमिद पत्र प्रयोगाश्रयम्।
सुव्यक्त शकटेन भेदपटुभि सन्धाय सार्द्धं परै-
भर्तृस्नेहपराङमुखेन कृपण प्राणार्थिना चेष्टितम् ।।१५।।

अन्वय—प्राणार्थिना भर्तस्नहपराङमुखेन शकटेन भेदपटुभि पर सार्द्ध सधाय कृपण चष्टितम (इति) सुव्यक्तम। (यतो हि) मुद्रा तस्य कराङ्गुलि प्रणयिनी प्रयोगाश्रयम अपरलेख्यसूचिनम इद पत्र तस्यव सिद्धाथक तत्सुहृत ।।१५।।

हिदी अनुवाद—अथवा अब सदेह कहाँ रह गया। यह अङ्गुलीयक मुद्रा निरन्तर उसकी उँगलियो के साथ रहने वाली, यह सिद्धाथक उसका परम मित्र, यह कपटपत्र उसकी लिखावट से मिलती लिखावट वाला। सदेह अब कहाँ, अरे यह तो हमारे भेद पटु शत्रुओ से सवथा मिले, स्वामिभक्ति से विमुख, अपने और अपने बाल बच्चो के प्राणो के ही एकमात्र मोही इस नीच शकटदास का ही काम है।

Or what doubt can be in this matter ? This writing the root of this plot is indeed his for it is identified by another writing the seal is a companion of his fingers Siddharthaka is his friend Indeed Shakatdasa desirous of (saving the life of his wife and children) and being disloyal to the master has thus meanly acted entering into intrigue with the enemies that are clever in causing a discord

संस्कृत व्याख्या—प्राणार्थिना पुत्रदारादिजीवनाभिलाषिणा भर्तृस्नेहपराङ मुखेन भर्तु स्वामिनः स्नेहः प्रेम तस्मात पराङ्मुखेन विमुखेन शकटेन शकट-दासेन भेदपटुभि उपजापचतुर पर शत्रुभि साधम सह सन्धाय सधिं कृत्वा कृपण महाकदय चेष्टितम आचरितम इति सुव्यक्तम स्पष्टम मुद्रा तस्य अङ्गुलि मुद्रा तस्य शकटदासस्य कराङ्गुलिप्रणयिनी राज्यकार्यकरणाय मदर्पितत्वात्सदा तदङ्गुलिवर्तिनी एव इति प्रयोगाश्रयम शत्रोरस्मत्सधिभेदनौपयिककूटनयव्यवहार-विदानाम अपरलेख्यसूचितम अपरेण अन्येन लेख्येन सूचितम सवादितम इद दृश्यमान पत्र तस्यव सिद्धार्थक तत्सुहृत तस्य मित्रम ।

टिप्पणी

(१) **प्राणार्थिना**—स्त्री पुत्र के जीवन को बचाने की इच्छा से। (२) **भर्तृ-स्नेहपराङ्मुखेन**—स्वामिभक्ति से विमुख। परा अञ्चति इति परा+अञ्च+क्विप कर्तरि=पराच। पराक मुखम अस्य इति पराङ्मुख तेन। (३) **भेदपटुभि**—भेद डालने मे चतुर। (४) **कृपणम**—बुरा। (५) **कराङ्गुलिप्रणयिनी**—हमेशा हाथ की उगलियो मे रहने वाली। (६) **प्रयोगाश्रयम**—शत्रुकृत भेद का मूल। प्रयोग शत्रुकृतभेदोपाय तस्य आश्रय आलम्ब यस्य तथाभूतम। प्रयोग चार प्रकार का होता है—साम, दान, दण्ड भेद। (७) **अपरलेख्य-सूचितम**—दूसरी लिखावट से मिलता हुआ। इसमे काव्यलिंग तथा समुच्चय अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

मलयकेतु—आर्य! 'अलङ्कारत्रय श्रीमता यदनुप्रेषित, तदुपगतम' इत्यार्येण यल्लिखित, तन्मध्यादेक किमिदम? (निवर्ण्यात्मगतम) कथ तातेन धृतपूर्वमिदमाभरणम? (प्रकाशम) आर्य, कुतोऽयमलङ्कार?

राक्षस—वणिग्भ्य क्रयादधिगत।

मलयकेतु—विजये! अपि प्रत्यभिजानाति भवती भूषण-मिदम्।

प्रतीहारी—(निर्वर्ण्य सवाष्पम्) कुमाल! कह ण पच्च-भिआणिस्स? इम क्खु सुगिहीदणामधेएण देएण पव्वदी-

सरेण धारिदपुब्ब । (कुमार ! कथ न प्रत्यभिज्ञास्यामि? इद खलु सुगृहीतनामधेयेन देवेन पवतेश्वरेण धारितपूवम् ।)

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—आय, आपने लिखा है कि "श्रीमान् ने जो तीन आभूषण भेजे थे वह मिले" सो क्या उन्ही में से यह एक है ? (अच्छी तरह देख कर मन में) पहले पिता जी के द्वारा धारण किए गए ये ही आभूषण ह। (प्रकट) आय, अलङ्कार आपको कहा से मिला ?

राक्षस—बनियो से खरीद कर प्राप्त किया।

मलयकेतु—विजये, क्या तुम इस आभूषण को पहचानती हो ?

प्रतीहारी—(भली भाति देखकर आसू के साथ) कुमार, कसे न पहचानूगी। प्रात स्मरणीय देव पवतेश्वर पहले इसको धारण करते थे।

Malayaketu—Noble Sir you have written The three ornaments which were sent by you have been received Is it one of them (*Observing carefully to himself*) How so this ornament was previously put on by father (*Aloud*) Noble Sir how did you get this ornament ?

Rakshas—Got by purchasing from merchants

Malayaketu—Vijaya do you recognise this ornament ?

Warder (*Looking carefully with tears*)—How can I not recognise it It was previously worn by Parvateshwara of auspicious name

टिप्पणी

(१) प्रत्यभिजानाति—पहचानती है। प्रति+अभि+ज्ञा+लट। अत्र सम्प्रति ऽध्यामनाध्याने इति सूत्रेण नात्मनेपदम अभिना व्यवधानात। (२) निवण्य—ध्यान से देखकर। निर+वण+णिच+क्त्वा—ल्यप।

मलयकेतु—(सवाष्पम) हा तात !—

एतानि तानि तव भूषणवल्लभस्य
गात्रोचितानि कुलभूषण ! भूषणानि।
यै शोभितोऽसि मुखचन्द्रकृतावभासो
नक्षत्रवानिव शरत्समयप्रदोष ॥१६॥

अन्वय—कुलभूषण ! भूषणवल्लभस्य तव गात्रोचितानि एतानि तानि भूषणानि यै शोभित मुखचन्द्रकृतावभास नक्षत्रवान शरत्समयप्रदोष इव असि ॥१६॥

मलयकेतु—आय पिता जी द्वारा पहले धारण किए गए और विशेष करके च द्रगुप्त के हाथ में गए हुए विशिष्ट आभूषणो का बनियो से खरीदना ठीक नहीं है। अथवा यह ठीक ही है।

Rakshas (*To himself*)—How so he says they were formerly put on by Parvateshwara (*Aloud*) It is quite clear that these ornaments too were sold to me by the merchants set on by Chandragupta

Malayaketu—Noble Sir it is not proper to purchase from merchants the ornaments worn by father specially which fell into the hands of Chandragupta or perhaps it is proper

टिप्पणी

इति न युज्यते—मलयकेतु के कहने का तात्पय है कि इन आभूषणो को च द्रगुप्त ने किसी अ य के हाथ मे बेचा हो और उसने पुन आपके हाथो बेचा हो—यह बात जचती नही है।

चन्द्रगुप्तस्य विक्रेतुरधिक लाभमिच्छत ।
कल्पिता मूल्यमेतेषा क्रूरेण भवता वयम् ।।१७।।

अ वय—अधिक लाभम इच्छत विक्रेतु च द्रगुप्तस्य क्रूरेण भवता वयम एतेषा मूल्य कल्पिता ।।१८।।

हि दी अनुवाद—अधिक लाभ चाहने वाले विक्रेता च द्रगुप्त के लिए निदयी आपने मुझे ही इन आभूषणो का मूल्य बनाया है (अर्थात मुझे उसके हाथो में सौप दिया है)।

You the cruel one have offered myself as the price of these ornaments to Chandragupta the seller who desires a big profit

स स्कृत व्याख्या—अधिक लाभम इच्छत वाञ्छत विक्रेतु विनिमयकामस्य च द्रगुप्तस्य क्रूरेण दयारहितेन भवता त्वया राक्षसेन वयम एतेषामाभूषणानाम् मूल्यम कल्पिता निरूपिता ।

टिप्पणी

वयम—महा अस्मदो द्वयोश्च सूत्र से बहुवचन हुआ है। इस श्लोक मे परिवत्ति अलकार तथा अनुष्टुप छ द है।

राक्षस —(आत्मगतम्) अहो ! सुश्लिष्टोऽयमभूच्छत्रु-प्रयोग । कुत ?—

लेखोऽयं न ममेति नोत्तरमिदं मुद्रा मदीया यतः
सौहार्दं शकटेन खण्डितमिति श्रद्धेयमेतत् कथम् ? ।
मौर्ये भूषणविक्रयं नरपतौ को नाम सम्भावयेत् ?
तस्मात् सम्प्रतिपत्तिरेव हि वरं न ग्राम्यमत्रोत्तरम् ।।१८।।

अन्वय—अयं लेखो मम न इति इदं न उत्तरम् यतः मुद्रा मदीया । शकटेन सौहार्दं खण्डितम् इति एतत् कथं श्रद्धेयम् ? नरपतौ मौर्ये को नाम भूषणविक्रयं सम्भावयेत् ? तस्मात् अत्र सम्प्रतिपत्तिरेव हि वरं ग्राम्यम् उत्तरं न ।।१८।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) ओह शत्रुओं की चाल कैसी सफल हो गई । क्योंकि यह तो कोई उत्तर नहीं है कि लेख मेरा नहीं है क्योंकि मुहर तो मेरी ही है । और यह कैसे मान लूं कि शकटदास ने विश्वासघात किया । यह कौन मानेगा कि मौर्य सम्राट (चन्द्रगुप्त) आभूषण बेचता होगा । अतः अपराध स्वीकार कर लेना ही ठीक है । इधर उधर का उत्तर देना ठीक नहीं ।

Rakshas (*To himself*)—Ha the enemy's plot has been fully successful This letter is not mine is no answer because the seal is mine and how should I believe that Shakatdas has severed friendship (*has decieved me*) Who would indeed think that the Maurya king sells ornaments so in this matter it is better to admit the guilt than to give a reply

संस्कृत व्याख्या—अयं लेखः मदीयः न इदम् पत्रम् मम न इति उत्तरम् न (उचितमिति) यतः मुद्रा मदीया मामकीना । शकटेन शकटदासेन सौहार्दम् मित्रता खण्डितम् त्यक्तम् इति कथम् श्रद्धेयम् केन प्रकारेण विश्वासयोग्यम् । नरपतौ राजनि मौर्ये चन्द्रगुप्ते को नाम कः जनः भूषणविक्रयं अलंकारपणनं सम्भावयेत् विश्वासं कुर्यात् अर्थात् चन्द्रगुप्तः भूषणानि विक्रीणीते यानि राक्षसः क्रीणाति इति कोऽपि न कथयिष्यति । तस्मात् सम्प्रतिपत्तिः एव दोषस्वीकरणम् एव वरम् निर्दोषताघोषणम् न वरम् ।

टिप्पणी

(१) **सौहार्दम्**—मित्रता । सुहृदः भावः इति सौहार्दम्, सुहृद्+अण्, हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च इत्युभयपदवृद्धिः । (२) **मौर्ये भूषणविक्रयम्**—यह कौन मानेगा कि चन्द्रगुप्त भूषण बेचता है और जो आभूषण राक्षस पहने था वह उसने खरीदा है । यह आभूषण तो पर्वतेश्वर पहनता था । अतः लोग

यही समझेंगे कि उसे मरवाने के उपलक्ष्य म इहे राक्षस ने पाया है। इसलिए राक्षस सोचता है कि अपराध अपने ऊपर ले लेना ही ठीक है, सफाई देना ठीक नही। इसमे काव्यलिंग अलकार तथा शादूलविक्रीडित छद है।

मलयकेतु —एतदार्यं पृच्छामि ।

राक्षस —(सवाष्पम) कुमार य आर्यस्त पृच्छ, वय-मिदानीमनार्या सवृत्ता ।

मलयकेतु —

मौर्योऽसौ स्वामिपुत्र परिचरणपरो मित्रपुत्रस्तवाह
दाता सोऽथस्य तुभ्य स्वमतमनुगतस्त्वन्तु मह्य ददासि ।
दास्य सत्कारपूव ननु सचिवपद तत्र ते स्वाम्यमत्र
स्वार्थे कस्मिन् समीहा पुनरधिकतरे त्वामनार्यं करोति ॥१६॥

अन्वय—तव असौ मौय स्वामिपुत्र अह परिचरणपर मित्रपुत्र। स तुभ्यम अथस्य दाता, त्व तु स्वमतमनुगत मह्य ददासि। तत्र ते सचिवपद सत्कारपूव दास्य ननु अत्र स्वाम्यम। पुन अधिकतरे कस्मिन स्वार्थे समीहा त्वाम अनाय करोति ? ॥१६॥

हिदी अनुवाद—मलयकेतु—आय से यह पूछता हूँ।

राक्षस—(आसू के साथ) कुमार, जो आय हो उससे पूछो। म तो इस समय अनाय हो गया हूँ।

मलयकेतु—पर मौर्य तुम्हारे स्वामी का लडका है। म परिचर्या में लगा हुआ मित्र का पुत्र हू। वह तुमको द्रय देगा यहा तुम जो चाहते हो वह मुझे देते हो। वहाँ तुम्हारा मत्री होना भी दासता है और यहा तो तुम स्वामी हो। फिर इससे बढकर आप को कौन सी कामना है जो तुम्हें अनाय बना रही है।

Malayaketu—I ask Noble Sir this

Rakshas (*with tears*)—Prince ask him who is noble I am now ignoble

Malayaketu—This Maurya is your master s son I am the son of your friend who is always attending you He is the giver of wealth to you but to me you give according to your wishes there though you are minister yet your office is of slavery here this (office) is of a master then for what more is your desire that makes you ignoble

संस्कृत व्याख्या—तव असौ अयम मौय च द्रगुप्त स्वामिपुत्र प्रभो तनय अहम परिचरणपर सततसेवालग्न मित्रपुत्र सुहृत्तनय स मौय तुभ्यम् अर्थस्य धनस्य दाता त्व स्वयमनुगत स्वेच्छानुरूप मह्यम ददासि अर्थात यद वाञ्छसि तत ददासि तत्र ते सचिवपदम साचिव्याधिकारग्रहणम नतु सत्कारपूर्वम् दास्यम समानितभत्यकर्मैव केवलम किन्तु अत्र मत्सकाशे स्वाम्य प्रभुता। पुन भूय अधिकतरे कस्मिन स्वार्थे प्रयोजने समीहा इच्छा त्वामनाय करोति विदधाति। भूय विचार्यापि तव मन पार नव प्राप्त शक्नोमीति महाकृतघ्नस्त्वमिति भाव ।

टिप्पणी

मलयकेतु के कहने का भाव यह है कि वहा तो तुम च द्रगुप्त के अधीन ही रहोगे और यहा तो स्वय मालिक हो। फिर अब क्या चाहते हो जो अपने को अनाथ कहते हो। इस श्लोक मे यथासख्य अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

राक्षस—कुमार! एवमयुक्तव्याहारिणा भवतैव मे निर्णयो दत्त । कुत ?—(‘मौर्योऽसौ स्वामिपुत्र ’ इति युष्मदस्मदोर्व्यत्ययेन पठति।)

मलयकेतु—(लेखमलङ्करणस्थगिकाञ्च विनिर्दिश्य) इदमिदानीं किम् ?

राक्षस—(सबाष्पम) विधेर्विलसितमिद, कुत ?

भृत्यत्वे परिभावधामनि सति स्नेहात् प्रभूणा सता
पुत्रेभ्य कृतवेदिना कृतधिया येषामभिन्ना वयम।
ते लोकस्य परीक्षका क्षितिभृत पापेन येन क्षता-
स्तस्येद विपुल विधेर्विलसित पुसा प्रयत्नच्छिद ॥२०॥

अ वय—कृतधिया कृतवेदिना येषा सता प्रभूणा वय परिभावधामनि भत्यत्वे सति स्नेहात पुत्रेभ्य अभिन्ना ते लोकस्य परीक्षका क्षितिभत येन पापेन क्षता तस्य पुसा प्रयत्नच्छिद विधे इद विपुल विलसतिम् ॥२०॥

राक्षस—इस प्रकार अनुचित बात कह करके आपने ही मेरा निणय कर दिया है, क्योकि (मौर्योऽसौ स्वामिपुत्र) इस श्लोक में युष्मत और अस्मत शब्दो को एक दूसरे से बदल कर पढता है।

मलयकेतु—(लेख और गहनो की पेटी को बता कर) अब यह क्या है ?

राक्षस—(आसू के साथ) यह भाग्य की लीला है, क्योंकि यह तो उस भाग्य का फेर है जो मनुष्य के पुरुषार्थ का शत्रु है यदि ऐसा न होता तो वे न्यायपरायण राजराजेश्वर क्यों नष्ट हो जाते जिनके लिए, जिन प्रभुत्वशालियो के लिए, जिन परोपकारपरायणो के लिए और जिन सदसद्विवेककर्त्ताओ के लिए, सेवक होने पर अपमान का पात्र होकर भी केवल उनके स्नेहवश हम निरन्तर पुत्रवत रहते आये।

Rakshas—speaking so ignobly you yourself have given decision about me For (Repeats मौर्योऽसौ) with an interchange of युस्मद् and अस्मद

Malayaketu—(*Pointing at the letter and the box of ornaments*) What then is this ?

Rakshas (*with tears*)—This is the play of Fate For This is the play of Fate which is the enemy of human efforts Fate by whom those kings who could see through men were slain who being of trained intellect were appreciators of services and were good masters and to whom we were like sons through kindness whom we served inspite of insults

सस्कृत व्याख्या—कृतधियाम कृता समाहिता धी बुद्धि येषा ते तेषा समाहित चित्तानाम कृतवेदिनाम कृत कर्म विदन्ति जानन्ति ये तादशानाम् गुणज्ञानाम येषा सता प्रभूणाम नपोत्तमानाम् वयम अहम परिभावधामनि परिभावस्य अव मानस्य यत धाम आस्पदम तस्मिन भृत्यत्वे सेवकत्वे सति स्नेहात पुत्रेभ्य अभिन्ना पुत्रवदाहृता ते तथाविधा लोकस्य परीक्षका पुरुषस्य परीक्षका निर्णायिका क्षितिभृत राजान येन पापेन दुराचारेण विधिना क्षता नाशिता तस्य भाग्यस्य पुसाम जनानाम प्रयत्नच्छिद उद्योगनाशिन विधे दैवस्य इदम दश्यमानम विपुल विलसितम महती किल लीला।

टिप्पणी

(१) **अयुक्तव्याहारिणा**—अनुचित बात कह करके। अयुक्त व्याहरति इति अयुक्त+वि+आ+हृ+णिनि। (२) **युष्मदस्मदोर्व्यत्ययेन**—युस्मद और अस्मद शब्द के व्यत्यय से (उलट पुलट करके यह श्लोक बनता है)—मौर्योऽसौ स्वामिपुत्र परिचरणपरो मित्रपुत्रो मम त्वम् दाता सोऽर्थस्य मह्य स्वमतमनुगतोऽह तु तुभ्य ददामि। दास्य सत्कारपूर्व ननु सचिवपद तत्र मे स्वाम्यमत्र स्वार्थे कस्मिन समीहा पुनरधिकतरे मामनार्य करोति॥

(३) **विलसितम**—काम। लीला। (४) **कृतधियाम**—सयतचित्तवाले।

(५) **कृतवेदिनाम**—उपकार को मानने वाले, कृतज्ञ। ये सब विशेषण प्रभूणा (न दानाम) के लिए आया है। इससे राक्षस मलयकेतु के प्रति यह भाव व्यक्त कर रहा है कि तुम असज्जन हो कृतघ्न हो और साथ ही मूख भी हो। (६) **परिभा वधामति**—अपमान का घर। नौकरी अपमान का घर है। (७) **प्रयत्नच्छिद**—उपायो को नष्ट करने वाले (का) प्रयत्न छिनत्ति इति प्रयत्न+छिद+क्विप। (८) **क्षता**—नाश कर दिये गए। भाग्य के आगे पराक्रम नही काम करता। इसी से इसको प्रयत्नच्छिद कहा है। इस पद्य मे अतिशयोक्ति एव परिसख्या अलकार तथा शादूलविक्रीडित छद है।

मलयकेतु—(सक्रोधम्) कथमद्यापि निह्नूयते विधेर्विलसितमिद, न ममेति? अनार्य!

कन्या तीव्रविषप्रयोगविषमा कृत्वा कृतघ्न! त्वया
विस्रम्भप्रवण पुरा मम पिता नीत कथाशेषताम्।
सम्प्रत्याहितगौरवेण भवता मन्त्राधिकारे रिपो
प्रारब्धा प्रणयाय मासवदहो! विक्रेतुमेते वयम् ॥२१॥

अन्वय—कृतघ्न! पुरा त्वया तीव्रविषप्रयोगविषमा कन्या कृत्वा विस्रम्भप्रवण मम पिता कथाशेषता नीत। सम्प्रति अहो रिपो मन्त्राधिकारे आहित गौरवेण भवता प्रणयाय एते वय मासवत विक्रेतु प्रारब्धा ॥२१॥

हिंदी अनुवाद—मलयकेतु—(क्रोध से) क्यो अब भी छिपा रहे हो और कहते हो कि यह सब भाग्य का किया हुआ है और मने कुछ नहीं किया। अनाय, कृतघ्न, तुमने पहले अपने ऊपर विश्वास करने वाले मेरे पिता के ऊपर विषकन्या का प्रयोग करके उनकी हत्या की। अब भी हमारे शत्रु के महासचिव के पद पर अपनी आखें लगाए हुए तुम यही चाहते हो कि हम तो मास के टुकडे के समान बिक जाय और तुम उसकी कृपा का प्रसाद प्राप्त कर लो।

Malayaketu (*Angrily*)—What even now you are concealing by saying that it was done by fate not by me Ignoble man previously you the ungrateful one caused the death of my father by using the poisoned girl—my father who had placed confidence in you Now your eyes are set (*lit esteem has been placed by you*) on the office of Maha Mantri and to please the Maurya we are going to be sold by you like meat

सस्कृत व्याख्या—अरे कृतघ्न महापकार, महापचार राक्षस, पुरा प्रथम त्वया

तीव्रविषप्रयोगविषमाम तीक्ष्णरसदानेन जीवहत्री कन्याम विषकन्या कृत्वा विस्रम्भ-प्रवण कृतभवद्विश्वास मम पिता जनक पवतेश्वर कथाशेषता नीत घातित इत्यथ । सम्प्रति इदानीम अहो आश्चयम रिपो शत्रो मत्राधिकारे महामन्त्रिपदे आहितगौरवेण कृतनमस्कारेण प्राप्तमाहात्म्येन वा भवता एते वयम प्रणयाय मौर्यं प्रसादयितुम मासवत विक्रेतुम पणायितु प्रारब्धा प्रक्रान्ता ।

टिप्पणी

(१) **निह्नूयते**—छिपाया जाता है। (२) **विस्रम्भप्रवण**—विश्वास करने वाला। (३) **कथाशेषता नीत**—मार डाला गया। ध्यान रहे कि 'राक्षस ने विषकन्या के माध्यम से पवतक को मार डाला था यह सूचना अभी अभी जीवसिद्धि के द्वारा मलयकेतु को मिली है। इसके पूव वह यही जानता था कि चाणक्य ने पवतक का विषकन्या के माध्यम से वध कराया था। (४) **मत्राधिकारे**—महामत्री के पद मे। (५) **आहितगौरवेण**—आख लगाए हुए। चाहने वाले। (६) **प्रणयाय**—चन्द्रगुप्त को प्रसन्न करने के लिए। इसमे शादूल-विक्रीडित छद और पूर्णोपमा अलकार है।

राक्षस—(स्वगतम्) अयमपरो गण्डस्योपरि विस्फोट । (प्रकाश कर्णौ पिधाय) शान्त पाप, शान्त पापम। नाह विषकन्यामारोपितवानपापोऽह पवतेश्वरे।

मलयकेतु—केन तर्हि व्यापादितस्तात ?

राक्षस—दैवमत्र प्रष्टव्यम्।

मलयकेतु—(सक्रोधम) दैवमत्र प्रष्टव्य, न क्षपणको जीवसिद्धि ?

राक्षस—(स्वगतम) कथ जीवसिद्धिरपि चाणक्य-प्रणिधि ? हन्त ! हृदयमपि मे रिपुभि स्वीकृतम।

मलयकेतु—(सक्रोधम) भासुरक ! आज्ञाप्यता शिखर-सेन सेनापति—'ये एतेन राक्षसेन सह सौहादमुत्पाद्यास्म-च्छरीरद्रोहेण चन्द्रगुप्तमाराधयितुकामा पञ्च राजान, तद्यथा—'कौलूत चित्रवर्मा, मलयनरपति सिंहनाद, काश्मीर पुष्कराक्ष, सिन्धुराज सुषेण, पारसीकाधिराजो

मेघाक्ष इति। तेषु त्रय प्रथमा मदीया भूमिं कामयन्ते, ते गम्भीरश्वभ्रमुपनीय पाशुभि पूर्यन्ताम्, इतरौ तु द्वौ हस्ति-बलकामौ हस्तिनैव घात्येतामि' ति।

पुरुष—ज कुमारो आणबेदि। (यत् कुमार आज्ञा-पयति।) (इति निष्क्रान्त ।)

मलयकेतु—(सक्रोधम्) राक्षस! राक्षस! नाह विस्रम्भघाती राक्षसो, मलयकेतु खल्वह, तद गच्छ, समा-श्रीयता सर्वात्मना चन्द्रगुप्त इति,—

विष्णुगुप्तञ्च मौर्यञ्च सममप्यागतौ त्वया।
उन्मूलयितुमीशोऽह त्रिवर्गमिव दुनय ॥२२॥

अ वय—त्वया समम अपि आगतौ विष्णुगुप्त च मौय च अह त्रिवग दुनय इव उ मूलयितुम ईश ॥२२॥

हि दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) यह ममस्थान के फोडे पर दूसरा फोडा है। (अर्थात विपत्ति पर विपत्ति) (प्रकट, कानो को ब द कर) पाप शान्त हो, पाप शा त हो, मने पवतेश्वर पर विषकन्या का प्रयोग नहीं किया। म पवतेश्वर का अपराधी नही हूँ।

मलयकेतु—तो पिता को किसने मारा?

राक्षस—भाग्य से पूछो।

मलयकेतु—(क्रोध से) दव से पूछा जाय न कि इस क्षपणक जीवसिद्धि से।

राक्षस—(मन में) ओह! तो क्या जीवसिद्धि भी चाणक्य का गुप्तचर निकला। हाय! तब तो शत्रुओ ने मेरे हृदय पर भी अधिकार कर लिया।

मलयकेतु—(क्रोध से) भासुरक, सेनापति शिखरसेन को आज्ञा दो कि ये जो मेरे शरीर से द्रोह करने वाले राक्षस के साथ मित्रता करके च द्रगुप्त की सेवा करने के इच्छुक पाच राजा ह जिनके नाम ये ह—कुलूत का चित्रवर्मा, मलयदेश का राजा सिंहनाद, काश्मीर का पुष्कराक्ष, सि धुराज सुषेण, फारस का राजा मेघाक्ष—इनमें पहले तीन मेरी भूमि चाहते ह उ हें गहरे गड्ढे में ले जाकर मिट्टी से तोप दो और गजसेना चाहने वाले अन्य दो को हाथी से ही मरवा डालो।

पुरुष—जसी कुमार की आज्ञा (चला जाता है)।

मलयकेतु—(क्रोध से) राक्षस, राक्षस, म विश्वासघाती राक्षस नहीं हूँ, म मलयकेतु हूँ। इसलिए जाओ और हर प्रकार से च द्रगुप्त का सहारा लो। तुम्हारे साथ आये हुए विष्णुगुप्त चाणक्य को और मौय को विनष्ट करने में म उसी तरह समथ हूँ जसे दुर्नीति धम, अथ और काम को नष्ट कर देती है।

Rakshas (*To himself*)—This is another boil on the corbuncle (*Aloud blocking the ears*) Begone sin Begone sin I did not set the poison girl on Parvateshwar I am not guilty of killing Parvateshwar

Malayaketu—Then who is it that killed the father ?

Rakshas—In this matter fate should be asked

Malayaketu (*With anger*)—Fate should be asked in this matter and not Jiwasiddhi the mendicant

Rakshas (*To himself*)—Oh is Jiwasiddhi also a spy of Chanakya ? Alas my heart too has been owned by the enemies

Malayaketu (*With anger*)—Let Shikharasena the commander in chief be ordered thus—of these five kings Chitravarman of Kuluta Sinhanada the king of Malawa Pushkaraksha of Kashmir Sushen the king of Sindha Meghanada the lord of Parasika who having entered in agreement with Rakshas are desirous of serving Chandra gupta by injuring my person the first three want my lands let them be taken to a deep hole and covered with sand let the other two who greed after my force of elephants be killed by an elephant

The servant—As Prince commands (*Exit*)

Malayaketu (*With anger*)—Rakshas Rakshas I am not Rakshas the murderer of the tursting I am Malayaketu go and take shelter of Chandragupta in every way See I alone am able to destroy Vishnugupta and the Maurya advancing with you as bad policy is (*capable of destroying*) the group of three (piety prosperity and propensity)

सस्कृत व्याख्या—(श्लोक २२) त्वया राक्षसेन समम अपि साधम अपि आगतौ आयानौ विष्णुगुप्तम चाणक्य मौय च वषल चाह मलयकेतु त्रिवगम धमाथ कामान दुनय इव कुनीतिरिव उ मूलयितुम विनाशयितुम ईश समथ अस्मि।

टिप्पणी

(१) **गण्डस्योपरि विस्फोट**—ममस्थान के फोडे (गण्ड) के ऊपर दूसरा फोडा (विस्फोट) अर्थात च द्रगुप्त के साथ मिलकर षडय त्र करने का आरोप तो लगा ही था अब पवतक को मारने का भी दोष मढा गया। यह सस्कृत की कहावत है। जसे हि दी मे कहते ह कि गरीबी मे आटा गीला। (२) **अस्मच्छरीर द्रोहेण**—हमारे शरीर से द्रोह करके अर्थात हमको नुकसान पहुँचा कर। (३) **कामयन्ते**—चाहते ह। (४) **श्वभ्रम**—गडढा। (५) **पासुभि**—मिट्टी

से। (६) **हस्तिबलकामौ**—(मेरी) हस्तिसेना को चाहने वाले। (७) **विश्रम्भ घाती**—विश्वासघाती, अथवा विश्वास करने वाले की हत्या करने वाला। (८) **त्रिवग**—धम, अथ, काम—त्रिवर्गो धमकामाथश्चतुवग समोक्षक। (६) **दुनय**—बुरी नीति। यहा मलयकेतु ने राक्षस चाणक्य और च द्रगुप्त को क्रमश धम अथ और काम तथा अपने आपको दुर्नीति के समान बतलाया है। इस प्रकार क्रोध के आवेग मे उसने अपनी ही बुराई की। इस श्लोक मे उपमा अलकार तथा अनुष्टुप छद है।

भागुरायण—कुमार! कृत कालहरणेन। शीघ्रमेव कुसुमपुरोपरोधाय प्रतिष्ठाप्यन्तामस्मदबलानि,—

गौडीना लोध्रधूलीपरिमलबहलान् धूम्रयन्त कपोलान्
क्लिश्नन्त कृष्णिमान भ्रमरकुलरुच कुञ्चितस्यालकस्य।
पाशुव्यूहा बलाना तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभा
शत्रूणामुत्तमाङ्गे गजमदसलिलच्छिन्नमूला पतन्तु ॥२३॥

(इति सपरिजनो निगतो मलयकेतु ।)

अन्वय—बलाना तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभा पाशुव्यूहा गजमदसलिल च्छिन्नमूला (सन्त) गौडीना लोध्रधूलीपरिमलबहलान कपोलान धूम्रयन्त भ्रमरकुलरुच कुञ्चितस्य अलकस्य कृष्णिमान क्लिश्नन्त शत्रूणाम उत्तमाङ्गे पतन्तु ॥२३॥

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—कुमार! समय बिताना व्यथ है। शीघ्र ही हमारी सेना पाटलिपुत्र को घेरने के लिए प्रयाण कर दें। हमारी सेनायें ऐसी धूल उडा दें— कि सेना के घोडों के खुरो से उठती हुई तथा हाथियो के मदजल से सिची हुई धूल उडकर गौड देश के रमणियो के लोध्रपुष्प के पराग से सुगधित कपोलो को मलिन करती हुई और उनके भ्रमरो के समान काले बालो को सफेद बनाती हुई शत्रुओ के शिर पर पडे।

Bhagurayan—Prince! let us not waste time Let our army now march to siege Kusumpura Let the columns of dust rising from the hoofs of the cavalry and whose bases are detached by the ichoral water of our elephants fall on the heads of our enemies making dark the cheeks of the Gauda Women which are decorated with the pollens of Lodhra flowers and (dust) mitigating the darkness of their curly hairs that are bright as the black bees

सस्कृत याख्या—बलानाम अस्मच्चतुरगसेनासघातस्य तुरगखुरपुटक्षोद-ल धात्मलाभा तुरगाना खुरपुटा अश्वाना खुरपुटा तै य क्षोद चूणन तेन ल ध प्राप्त आत्मलाभ ज म यस्तथाभूता पाशु यूहा धूलिराशय गजमद-सलिलच्छिन्नमूला गजानाम अस्मत्सेनागजानाम मदा एव सलिलानि दानवारय तै छिन्न विनाशितम मूल येषा तथाभूता गौडीना गौडदेशनारीणाम लोध्रधूली-परिमलबहलान लोध्ररजोविलेपनसुरभीन कपोलान गण्डभागान धूम्रय त धूसिरतान कुवन्त भ्रमरकुलरुच भ्रमरकुलाना मधुपव दानाम रुक कातिरिव रुक यस्य तादशस्य कुचितस्य कुटिलस्य अलकस्य केशपाशस्य कृष्णिमान कृष्णराग क्लिश्न त विनाशयन्त शत्रूणाम रिपूणाम उत्तमाङ्गे शिरसि पतन्तु अवरोहन्तु ।

टिप्पणी

(१) **प्रतिष्ठाप्य ताम**—भेजी जाय। (२) **गौडीनाम**—गौड देश की स्त्रिया। (३) **तुरगखुरपुटक्षोदल॰धात्मलाभा**—घोडो की टाप से उठी हुई। तुरगाणा खुरपुट ल ध आत्मलाभ य ते तादश । (४) **पाशु य हा**—धूलि-समूह। (५) **गजमदसलिलच्छिन्नमूला**—हाथियो क मदरूपी जल से जिनका (धूलि का) मूल (पथ्वी से) सम्पक नष्ट कर दिया गया है। अर्थात हाथियो के मद से वह धूलि दब गई। (६) **लोध्रधूलीपरिमलबहलान**—लोध्र पुष्प के परिमल से सुगधित। लोध्राणा धूली पराग तस्या परिमल आमोद तेन बहलान व्याप्तान। (७) **धूम्रयन्त**—धूसरित करते हुए। धूम्र+णिच+लट—शत। (८) **भ्रमरकुलरुच**—भौरे की-सी कान्ति वाले (का)। अलकस्य का विशेषण है। (९) **कृष्णिमानम**—श्यामलता को। कृष्ण+इमनिच। '(१०) **क्लिश्नन्त**—दबाते हुए कम करते हुए। (११) **उत्तमाङ्गे**—शिर पर—शत्रुओ के शिर पर धूलि पडे। इस श्लोक मे तदगुण लुप्तोपमा रूपक पर्याय और स्वभावोक्ति अलकार ह तथा स्रग्धरा छद है।

राक्षस—(सावेगम) हा धिक कष्टम ! तेऽपि हतास्त-पस्विनश्चित्रवर्मादय ! ! तत कथ सुहृन्नाशाय राक्षसश्चेष्टते, न रिपुविनाशाय ? तत् किमिदानीं करवाणि मन्दभाग्य ?
किं गच्छामि तपोवनम ? न तपसा शाम्येत् सवैर मन
किं भर्तननुयामि जीवति रिपौ ? स्त्रीणामिय योग्यता ।

किं वा खड्गसखः पताम्यरिबले ? नेदं न युक्तं भवेत्
चेतश्चन्दनदासमोक्षरभसं रुन्ध्यात् कृतघ्नं न चेत् ॥२४॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

॥ इति पञ्चमोऽङ्कः ॥

अन्वय—तपोवनम् गच्छामि किम् ? सवैरं मनः तपसा न शाम्येत । रिपौ जीवति भर्तॄन् अनुयामि किम् ? इयं स्त्रीणां योग्यता । वा खड्गसखः अरिबले पतामि किम् ? न इदं युक्तं न भवेत्, चन्दनदासमोक्षरभसं चेतः रुन्ध्यात् चेत् न कृतघ्नं भवेत् ॥२४॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(उद्विग्नता के साथ) ओह ऐसा अनर्थ, ऐसा संकट, अब तो बेचारे चित्रवर्मा आदि भी मारे गए। ऐसा लगता है मानो राक्षस मित्रों के नाश के लिए कार्य कर रहा है न कि शत्रु के नाश के लिए। तो मैं अभागा अब क्या करूँ। क्या मैं तपोवन में चला जाऊँ। परन्तु वहाँ भी तो बदला लेने की इच्छा से भरा हुआ मन शान्त नहीं होगा। क्या शत्रु के जीते हुए ही अपने दिवंगत स्वामी का अनुगमन करूँ। यह तो स्त्रियों को ही शोभा देता है। क्या तलवार लेकर शत्रुदल में कूद पड़ूँ, परन्तु यह ठीक न होगा (क्योंकि) चन्दनदास को छुड़ाने में (व्यग्र) मेरा मन ऐसा न होने देगा। यदि वह ऐसा नहीं करता तो कृतघ्न होगा। (सभी चले जाते हैं)

पाँचवाँ अंक समाप्त

Rakshas (*With agitation*)—Oh fie oh woe Now they too poor Chitravarman and others are killed It seems as if Rakshas's all efforts are for the destruction of the friends not for the enemies Ill fated as I am what should I do now Should I go to the penance forest ? But a revengeful mind would not be pacified there Should I follow my (*dead*) masters while my enemy is alive this befits only women Should I fall upon the enemy forces with sword in hand ? No This would not be proper thing if my heart eager to get Chandandas free did not check my ungrateful self (Exeunt all) End of the Fifth Act

संस्कृत व्याख्या—तपोवनम् तपः कर्तुम् गच्छामि किम् सवैरं मनः प्रतिशोधमिच्छन्मनः तपसा न शाम्येत शान्तिं प्राप्स्यति रिपौ शत्रौ जीवति प्राणधारणं कुर्वति भर्तॄन् मृतान् स्वामिनः अनुयामि किम् अनुगच्छामि किम्। इयम्

एषा स्त्रीणाम् नारीणाम योग्यता कायम वा खड्गसख करे खड्ग नीत्वा अरिबले शत्रुसेनाया पतामि प्रविशामि न इदम एतत युक्तम उचितम न भवेत न स्यात (यत) च दनदासमोक्षरभस चन्दनमोक्षेच्छक चेत मन रुध्यात प्रतिबध्नीयात चेत् यदि न एव कुर्यादिति अथ (तदा मम मन) कृतघ्न भवेत अकृतज्ञ स्यात ।

टिप्पणी

(१) **सुहृद्विनाशाय**—भाव यह है कि अब तक किये गये मेरे कार्यो का परिणाम शत्रुनाश के स्थान पर अपने ही व्यक्तियो का विनाश हुआ है। (२) **सवरम**—बदला लेने का इच्छुक। (३) **खड्गसख**—तलवार है मित्र जिसका तलवार लेकर खडग सखा यस्य स । (४) **च दनदासमोक्षरभसम**—च दनदास को छुडाने का इच्छुक च दनदासस्य मोक्षे रभस यस्य तादशम च दनदासमोक्षरभसम। इस श्लोक मे दीपक तथा का यलिग अलकार ह और शादूलविक्रीडित छ द है।

षष्ठोऽङ्क

(तत प्रविशत्यलडकृत सहष सिद्धाथक ।)

सिद्धार्थक —

जअदि जलदणीलो केसवो केसिघादी
जअदि अ जणदिठठे चन्दमा चन्दउत्तो ।
जअदि जअणसज्ज जा अकाऊण सेण्ण
पडिहदपरपक्खा अज्जचाणक्कणीदी ।।१।।

(जयति जलदनील केशव केशिघाती
जयति च जनदृष्टेश्चन्द्रमाश्चन्द्रगुप्त ।
जयति जयनसज्ज या अकृत्वा च सैन्य
प्रतिहतपरपक्षा आर्यचाणक्यनीति ।।१।।)

अन्वय—जलदनील केशिघाती केशव जयति। जनदष्टे चन्द्रमा चन्द्रगुप्तश्च जयति। आयचाणक्यनीतिश्च जयति या जयनसज्ज सन्यम् अकृत्वा प्रतिहतपरपक्षा (विद्यते) ।।१।।

छठवाँ अङ्क

(अलकारो से सजा हुआ प्रसन्नचित्त सिद्धाथक प्रवेश करता है)

हिन्दी अनुवाद—मेघ के समान नीलवण वाले, केशी राक्षस के वध करने वाले कृष्ण की जय हो! लोगो की दष्टि के लिए चन्द्र तुल्य चन्द्रगुप्त की जय हो! आचाय चाणक्य की नीति की, जो युद्धाथ उद्यत सेना के बिना ही शत्रुपक्ष को नष्ट करने वाली है, जय हो!

ACT VI

(Now enter Siddharthaka with joy and decorated with ornaments)

Victory to Krishna who is cloud blue and is the slayer of Kesin Chandragupta too the moon to the eyes of the people may prosper victory to the diplomacy of Noble Chanakya which has done all the work of conquest without any army, and has suppressed the enemy

सस्कृत व्याख्या—जलदनील मेघश्याम केशिघाती केशिनामराक्षसनाशक केशव कृष्ण विष्णु वा जयति जनदृष्टे लोकलोचनस्य चद्रमा चद्रगुप्त जयति आर्यचाणक्यनीतिश्च माननीयकौटिल्यनीति जयति विजय प्राप्नोति या जयनसज्ज जयन युद्धसभार तस्य सज्जा सनाहो यस्य तथाविधमकृत्वव विना युद्धम विनारक्तपातमिति शेष प्रतिहतपरपक्षा प्रतिहत विनाशित प्रतिपक्ष शत्रुवर्गो यया इति विजितशात्रवा विराजते ।

टिप्पणी

(१) **जलदनील**—बादल के समान नीलवण। जलदवत नील उपमित कमधारय। (२) **केशिघाती**—केशी नामक राक्षस को मारने वाले। केशिन हन्तु शीलमस्य इति केशिन=हन+णिनि कतरि ताच्छील्ये। (३) **केशव**—विष्णु। हिरण्यगभ क प्रोक्त ईश शकर एव च। सष्टयादिना वतयति तौ यत केशवो भवान॥ (हरिवश)। (४) **जयनसज्जम**—जीतने की तयारी। जीयतेऽनेनेति जयन (करणे ल्युट)। (५) **प्रतिहतपरपक्षा**—शत्रुपक्ष का नाश करने वाली। प्रतिहत परपक्ष यया तादृशी। इसमे मालिनी छन्द है। लुप्तोपमा तथा विभावना अलकारो का मिश्रण है।

ता जाव चिरस्स कालस्स प्पिअवअस्स सुसिद्धत्थअ पेक्खामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) अअ उण प्पिअवअस्सओ सुसिद्धत्थओ इदो ज्जेब आअच्छदि, ता जाव उबसप्पामि। (तद्यावच्चिरस्य कालस्य प्रियवयस्य सुसिद्धाथक पश्यामि। अय पुन प्रियवयस्य सुसिद्धाथक इत एवागच्छति, तद्या-वदुपसर्पामि।)

हिन्दी अनुवाद—तो बहुत दिनो के बाद प्रियमित्र सुसिद्धाथक को देखूगा। (घूम कर और देखकर) अरे, प्रिय मित्र सुसिद्धाथक तो इधर ही आ रहा है। तो इसीके पास चलू।

I see my dear friend Susiddharthaka after a long time Oh my dear friend Susiddharthaka is coming this very way Let me approach him

(तत प्रविशति सुसिद्धार्थक ।) सुसिद्धार्थक —
सन्तावेन्ता आवाणेसु महूसबेसु रुआवेन्ता ।
हिअअच्छिआ अबि विहबा बिरहे मित्ताण दुम्मणाअन्ते ।।२।।
(सन्तापयन्त आपानेषु महोत्सवेषु रुजायन्त ।
हृदयस्थिता अपि विभवा विरहे मित्राणा दुर्मनायन्ते ।।२।।)

अन्वय—मित्राणा विरहे विभवा हृदयस्थिता अपि आपानेषु सन्तापयन्त महोत्सवेषु रुजायन्त दुमनायन्ते ।।२।।

हिन्दी अनुवाद—(सुसिद्धार्थक का प्रवेश) सुसिद्धार्थक—मित्रो के वियोग में हृदयस्थित विभव भी पानगोष्ठियो में टीस उत्पन्न करते हुए और महोत्सवो में रोग उत्पन्न करते हुए आनन्द रहित हो जाते ह ।

(Now enter Susıddharthaka) *Susıddharthaka*—In the absence of frıends rıches though dwellıng ın the heart gıve paın ın pleasure partıes and durıng festıvals trouble by causıng dısease

सस्कृत व्याख्या—मित्राणा सुहृदा विरहे अभावे विभवा धनानि हृदयस्थिता अपि अन्त करणस्थितानि अपि आपानेषु पानगोष्ठीषु सन्तापयन्त दु ख जनयन्त महोत्सवेषु नत्यगीतादिषु सभारम्भेषु रुजायन्त मनोरोग समुत्पादयन्त केवल दुमनायन्ते निरानन्दवन्त भवन्ति ।

टिप्पणी

(१) **आपानेषु**—पानगोष्ठी आदि मे। (२) **रुजायन्त**—रुजा कुर्वन्त इति रुजा+णिच+लट—शत । (३) **दुमनायन्ते**—अदुमनस दुमनस भवति इति दुमनस+क्यङ सलोप। इस पद्य मे दीपक तथा कार्यलिंग अलकार और आर्या छद है।

सुदञ्च मए जधा—मलयकेदु कडआदो प्पिअबअस्सओ सिद्धत्थओ आअदोत्ति । ता जाव ण अण्णेसामि (परिक्रम्योपसृत्य च) एसो सिद्धत्थओ । (श्रुतञ्च मया यथा—मलयकेतुकटकात्प्रियवयस्य सिद्धार्थक आगत इति । तद्यावदेनमन्विष्यामि । एष सिद्धार्थक)

सिद्धार्थक —(विलोक्य) कध इदो ज्जेब प्पिग्रबग्रस्सग्रो सुसिद्धत्थग्रो। (उपगम्य) ग्रबि सुह प्पिग्रबग्रस्सस्स ? (कथमित एव प्रियवयस्य सुसिद्धार्थक। ग्रपि सुख प्रियवयस्यस्य ?) (उभावन्योन्यमालिङ्गत)

हिदी ग्रनुवाद—मने सुना है कि मलयकेतु के कटक से प्रिय मित्र सुसिद्धाथक ग्रा गया है। तो ग्रब उसे खोजू। (परिक्रमा करके ग्रौर पास जाकर) ग्ररे, सिद्धाथक तो यह है।

सिद्धाथक—(देखकर) ग्ररे प्रिय मित्र सुसिद्धाथक तो इधर ही ग्रा रहा है। (समीप जाकर) प्रिय मित्र, कुशल तो है। (दोनो एक दूसरे को गले लगाते ह)

I have heard that dear friend Susiddharthaka has come back from the camp of Malayaketu I will search for him (*Going round and seeing*) Here is Susiddharthaka

Siddharthaka (*Observing*)—Ha dear friend Susiddharthaka is coming this way (*Approaching*) Dear friend are you quite well ? (Both embrace each other)

सुसिद्धार्थक —ग्रह बग्रस्स, कुदो मे सुह, जस्स तुम चिरग्रालप्पवासपच्चागदोबि ग्रग्राणिग्र बुत्तन्त ग्रण्णदो गदोसि ? त्ति (ग्रहो वयस्य, कुतो मे सुखम्, यस्य त्व चिर-प्रवासप्रत्यागतोऽप्यज्ञापयित्वा वृत्तान्तमन्यतो गतोऽसीति।)

सिद्धाथक —प्पसीददु प्पिग्रबग्रस्सो। ग्रह खु दिट्ठमेत्तो ज्जेब्ब ग्रज्जचाणक्केण ग्राणत्तो जधा। "सिद्धत्थग्र, गच्छ, एद प्पिग्र बुत्तन्तम् प्पिग्रदसणस्स देग्रस्स चन्दसिरिणो णिबेदेहि" त्ति। तदा तस्स त णिबेदिग्र एब्ब ग्रणुभूदपात्थिब-प्पसादो ग्रह प्पिग्रबग्रस्स प्पेक्खिदु तुह गेह चलिदोह्मि। (प्रसीदतु प्रियवयस्य। ग्रह खलु दृष्टमात्र एवार्यचाणक्ये-नाज्ञप्तो यथा—"सिद्धार्थक! गच्छ, इम प्रिय वृत्तान्त प्रियदशनस्य देवस्य चन्द्रश्रियो निवेदयेति"। ततस्तस्य तन्नि-वेद्य एवमनुभूतपार्थिवप्रसादोऽह प्रियवयस्य प्रेक्षितुम् तव गेह चलितोऽस्मि।)

सुसिद्धार्थक—बअस्स ! जदिमए एद सुणिदव्व भोदि ता म पि सुणावेहि, किं ते प्पिअ प्पिअदसणस्स चन्दसिरणो णिबेदिद त्ति। (वयस्य ! यदि मयेद श्रोतव्य भवति, तन्मामपि श्रावय, किं तत् प्रिय प्रियदशनस्य चन्दश्रिय निवेदितमिति।)

हिन्दी अनुवाद—सुसिद्धार्थक—अहो मित्र, मुझे सुख कहा से (हो सकता है) जिसके तुम चिरकाल के प्रवास से लौटकर बिना हालचाल बताये दूसरी ओर चले गए।

सिद्धार्थक—प्रिय मित्र, प्रसन्न हो। मुझे तो देखते ही आर्य चाणक्य ने आज्ञा दी कि "सिद्धार्थक जाओ और यह प्रिय समाचार प्रियदशन वाले महाराज चन्द्रगुप्त को बता दो"। तब वह समाचार उनको देकर और इस प्रकार राजा की कृपा का अनुभव करके म प्रियमित्र को देखने के लिए तुम्हारे घर की ओर चल पडा हू।

सुसिद्धार्थक—मित्र, मेरे सुनने योग्य हो तो मुझे भी सुनाओ कि वह कौन प्रिय समाचार है जो प्रियदशन वाले चन्द्रगुप्त को सुनाया है।

Susiddharthaka—Oh friend whence can I get happiness as you after coming from outside after a long time went away to another place without telling me any news

Siddharthaka—Dear friend be appeased As soon as seen I was ordered by Noble Chanakya thus Siddharthaka go and report this happy news to king Chandrashri Then having reported to him and enjoyed the king s favour thus I am going to your house to see you (*my dear friend*)

Susiddharthaka—Friend if it is fit to be heard by me tell me what happy news you have reported to Chandrashri of charming presence

टिप्पणी

(१) **चिरप्रवासप्रत्यागतोऽपि**—बहुत दिनो के बाद परदेश से लौटा हुआ। (२) **वत्तान्तम अज्ञापयित्वा**—बिना हालचाल बताये हुए। (३) **दृष्ट मात्र एव**—ज्योही दिखाई पडा। (४) **प्रियदशनस्य**—प्रिय सुखकारक दशनम अवलोकन यस्य स तस्य। शेषत्वविवक्षया षष्ठी। **अनुभूतपार्थिवप्रसाद**—राजा की कृपा का अनुभव करके। अनुभूत पार्थिवस्य नृपस्य प्रसादो येन स। (५) **श्रावय**—सुनाओ। श्रु+णिच+लोट मध्यमपुरुष आज्ञा।

सिद्धार्थक—प्पिअबअस्स ! तुह बि किं असुणिदव्व

अत्थि ? ता णिसामेहि । अत्थि दाव, अज्जचाणक्कणीति-मोहिदमदिणा मलअकेदुहदएण णिराकरिअ रक्खस, हदा चित्तबम्मप्पमुहा प्पहाणा पच्च पात्थिवा, तदो असमिक्खकारी एसो दुराआरो त्ति कदुअ, उज्झिअ मलअकेदुकडअ-भूमि, णिअभूमिकुसलदाए भअबिलोलसेण्णतणूकिदसेसपरि-बारेसु सक सक बिसअ अभिप्पत्थिदेसु, पात्थिबेसु भद्रभट-पुरुदत्तहिङ्गुरात- बलउत्त – राअसेण-भागुरायअण- रोहिदक्ख-बिजअबम्मप्पमुहेहि सजमिदो मलअकेदू । (प्रियवयस्य ! तवापि किमश्रोतव्यमस्ति ? तन्निशामय—अस्ति तावदाय-चाणक्यनीतिमोहितमतिना मलयकेतुहतकेन निराकृत्य राक्षस, हताश्चित्रवमप्रमुखा प्रधाना पञ्च पार्थिवा । ततोऽस-मीक्ष्यकारी एष दुराचार इत्युज्झित्वा मलयकेतु-कटकभूमि निजभूमिकुशलतया भयविलोलसैन्यतनूकृतशेषपरिवारेषु स्वक स्वक विषयमभिप्रस्थितेषु पार्थिवेषु, भद्रभट-पुरुषदत्त-हिङ्गु-रात-बलगुप्त-राजसेन-भागुरायण-रोहिताक्ष-विजयवमप्रमुखै सयमितो मलयकेतु ।

हिदी अनुवाद—सिद्धार्थक—प्रिय मित्र, क्या कोई ऐसी भी बात है जो तुम्हारे सुनने योग्य न हो। तो सुनो, आय चाणक्य की नीति से किंकर्तव्यविमूढ होकर अभागे मलयकेतु ने राक्षस को निकाल कर चित्रवर्मा प्रभति पाच मुख्य राजाओ को मरवा डाला। तब अ य राजाओ ने यह समझकर कि यह मलयकेतु दुराचारी और बिना विचार कर काम करने वाला है मलयकेतु की सेना को छोड दिया और अपने-अपने अधिकार की रक्षा करने लगे और भय से व्याकुल होकर सेना के अल्प हो जाने पर वे (राजा) अपने-अपने देश को चले गये। तब भद्रभट, पुरुषदत्त, हिङ्गुरात, बलगुप्त, राजसेन, भागुरायण, रोहिताक्ष, विजयवर्मा आदि ने मलयकेतु को कद कर लिया।

Siddhārthaka—Dear friend is there anything which even you can not hear The wretched Malayaketu s mind was deluded by the diplomacy of Noble Chanakya and he having dismissed Rakshas got the five leading kings with Chitravarman at their head killed Then all the other kings thinking Malayaketu to be a miscreant acting thoughtlessly deserted

his camp and in order to save themselves went to their respective kingdoms for their army was rendered small due to the soldiers being afraid Then Malayaketu was chained by Bhadrabhatta Purushdatta Hingurata Balgupta Rajsen Bhagurayan Rohitaksh and Vijayavarman and others

टिप्पणी

(१) **किमश्रोतव्यमस्ति**—क्या तुम्हारे भी न सुनने के योग्य कुछ है अर्थात तुम सब कुछ सुन सकते हो। (२) **चाणक्यनीतिमोहितमतिना**—चाणक्य की नीति से किंकर्त्तव्यविमूढ। चाणक्यस्य नीत्या मोहिता मति यस्य स तेन। (३) **निराकृत्य**—अलग कर। (४) **असमीक्ष्यकारी**—बिना विचार कर काम करने वाला। असमीक्ष्य कर्त्तु शीलमस्य इति। असमीक्ष्य+कृ+णिनि। (५) **उज्झित्वा**—छोडकर। (६) **भयविलोलसैन्यतनूकृतशेषपरिवारेषु**—भय से व्याकुल सैनिको के कारण कम हो गई है सेना जिनकी। भयेन विलोलानि सैन्यानि तै तनूकृता शेषा परिवारा येषा ते तेषु। (७) **विषयम**—देश। 'देशविषयौ तूपवर्तनम' इत्यमर। (८) **संयमित**—पकड लिया गया। सम+यम+णिच+क्त।

सुसिद्धार्थक—बअस्स! भद्दभटप्पमुहा किल देअस्स चन्दसिरिणो अबरत्ता मलअकेदु समास्सिदा त्ति लोए मन्तीअदि। ता किं णिमित्त एद कुकबिणाडअस्स बिअ अण्ण मुहे अण्ण णिब्बहणे त्ति? (वयस्य! भद्रभटप्रमुखा किल देवस्य चन्द्रश्रियोऽपरक्ता मलयकेतु समाश्रिता इति लोके मन्त्र्यते। तत् किं निमित्तमेतत् कुकविनाटकस्येवान्यन्मुखेऽन्यन्निर्वहण इति?)

सिद्धार्थक—बअस्स! सुणु दाव, दैवगदीए बिअ असुणिदगदीए णमो अज्जचाणक्कणीदीए। (वयस्य! शृणु तावत्, देवगत्यै इवाश्रुतगत्यै नम आर्यचाणक्यनीत्यै।)

सुसिद्धार्थक—बअस्स! तदो तदो? (वयस्य! ततस्तत?)

सिद्धार्थक—बअस्स! तदो प्पहुदि, सारसाहणसमुदएण इदो णिक्कमिअ अज्जचाणक्केण पडिबण्ण अराअलोअ

असेसराअबल। (वयस्य ! तत प्रभृति, सारसाधनसमुदयेनेतो निष्क्रम्य आर्यचाणक्येन प्रतिपन्नमराजलोकमशेषराजबलम्।)

सुसिद्धार्थक —वअस्स ! कहिं ? (वयस्य ! कुत्र ?)

हिंदी अनुवाद—सुसिद्धार्थक—मित्र, सुना जाता है कि भद्रभट आदि सम्राट चन्द्रगुप्त से रुष्ट होकर मलयकेतु से मिल गये ह। तो क्या कारण है कि किसी कुकवि के बनाए हुए नाटक की तरह मुखसधि (अर्थात प्रारम्भ) में कुछ और तथा निवहण सधि (अन्त) में कुछ और होता जा रहा है।

सिद्धार्थक—अरे मित्र, सुनते जाओ। यह सब तो आय चाणक्य की नीति की महिमा है जो ब्रह्मा की गति विधि के समान अगम्य है। उस गति को नमस्कार है।

सुसिद्धार्थक—मित्र, तो क्या हुआ ?

सिद्धार्थक—इसके बाद उत्कृष्ट सेना के साथ आय चाणक्य ने निकलकर राजाओ से रहित सारी सेना को वश में कर लिया।

सुसिद्धार्थक—मित्र, कहाँ ?

Susiddharthaka—Friend it is heard that Bhadrabhatta and others being disgusted of Chandragupta have gone over to the side of Malayaketu Why then is it as in a drama written by a bad poet one thing is in the beginning and another is in the end

Siddharthaka—Friend listen Salutation be to the diplomacy of Chanakya the course of which is unheard or (*un understandable*) like that of Fate

Susiddharthaka—Friend what next ?

Siddharthaka—Then the entire army which was without kings was captured by noble Chanakya going out from here with a large army

Susiddharthaka—Friend where ?

सिद्धार्थक —वअस्स ! जहि एदे,—(वयस्य ! यत्रैते,—)

अदिसअगुरुएण दाणदप्पेण दन्ती
    सजलजलदलीला उव्वहन्तो णदन्ति।
कसपहरभएण जादकम्पा तुरन्तो
    गहिदजअणसज्जा सपदन्ते तुलगा ॥३॥

(अतिशयगुरुकेण दानदर्पेण दन्तिन
    सजलजलदलीलामुद्वहन्तो नदन्ति।

कशाप्रहारभयेन जातकम्पास्त्वरयन्त
गृहीतजयनसज्जा सम्पद्यन्ते तुरङ्गा ॥३॥)

अन्वय—गहीतजयनसज्जा दतिन अतिशयगुरुकेण दानदर्पेण सजलजलद लीलामुद्वहन्त नदन्ति । तुरङ्गा कशाप्रहारभयेन जातकम्पा त्वरयन्त सम्पद्यन्ते ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—सिद्धार्थक—मित्र, जहाँ ये—युद्ध के वेश को धारण किए हुए हाथी अत्यन्त बढे हुए मद के अभिमान से जल से भरे हुए बादल की लीला करते हुए चिग्घाड रहे ह और घोडे चाबुक की मार की डर से कापते हुए शीघ्रता करते हुए दिखाई दे रहे ह।

Siddharthaka—Friend where the war elephants due to their excessive ichoral water are trumpeting like clouds full of water and the horses from fear of being whipped by (*the riders*) are shaking their body and seem to run fast

सस्कृत व्याख्या—यत्र अतिशयगुरुकेण भश प्रवद्धेन दानदर्पेण मदजलजनितेन दर्पेण उद्दामेन गहीतजयनसज्जा गहीत परिहित जयनस्य युद्धस्य सज्ज वेश यै तादशा दतिन गजा सजलजलदलीलाम सजला जलभरिता ये जलदा मेघास्तेषा लीलामिव लीला विलासम उद्वहन्त धारयन्त नदन्ति उच्च शब्द कुवति। तुरङ्गा अश्वा कशाप्रहारभयेन कशाना प्रहारा आघाता तेभ्य भय तेन हेतुना जातकम्पा जात उत्पन्न कम्प कम्पन येषा तादशा (अतएव) त्वरयन्त (स्वारोहिण) त्वरावत विदधत सम्पद्यन्ते सन्नद्धा सन्तीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **चन्द्रश्रिय अपरक्ता**—चन्द्रगुप्त से अलग हो गये ह। (२) **कुकवि नाटकस्य इव**—खराब (अयोग्य) कवि के नाटक के समान। (३) **अन्यत मखे अन्यत निवहणे**—मुख सधि मे कुछ और निवहण सधि मे कुछ। अर्थात पहले कुछ बाद मे कुछ। नाटक का अन्त प्रारम्भ के अनुसार होना चाहिए। उसी प्रकार मनुष्य को जसा पहले रहे वैसा ही रहना चाहिए। रहे कुछ दिखावे कुछ यह ठीक नही है। (४) **नम आर्यचाणक्यनीत्य**—आचाय चाणक्य की नीति को नमस्कार है। नम के योग मे चतुर्थी होती है। (५) **अश्रुतगत्य**—जिसकी गति सुनी नही गई है अर्थात जिसकी गति जानी नही जाती। अश्रुता गति यस्या सा तस्य। कहने का तात्पय यह है कि चाणक्य की नीति समझ मे

नही आती। काम हो जाने पर ही उसकी वास्तविकता का पता लगता है। सिद्धाथक के कहने का भाव यह है कि जो तुमने सुना था कि भद्रभट आदि मलयकेतु से मिल गए ह वह गलत है। (६) **सारसाधनसमुदयेन**—साधनो को लेकर यानी सेना के साथ। सार साधन तस्य समुदयेन समूहेन। साध्यते अनेन इति साधनम। साध+ल्युट। सार—वरम—श्रेष्ठ। सारसाधन—उत्तम साधन (सेना।) (७) **प्रतिपन्नम**—अधिकार कर लिया। (८) **अशेषराजबलम**—राजाओ की सारी सेना। (९) **अराजलोकम**—राजाओ से रहित। नपजन रहितम। (१०) **गहीतजयनसज्जा**—लडाई का वेश धारण किए। (११) **अतिशयगुरुकेण**—अत्य त प्रबल। गुरुरेव गुरुक गुरु+कन स्वार्थे। अतिशयश्चासौ गुरुक अतिशयगुरुक (कमधारय) तेन। (१२) **सजलजलदलीलाम**—जलपूण बादलो की लीला को। (१३) **कशाप्रहारभयेन**—चाबुक की मार के डर से। यहा उपमा तथा रूपक का स देहसकर अलकार और मालिनी छ द है।

सुसिद्धाथक—बअस्स! एद सब्ब दाब चिटठदु, तहा सब्बलोअप्पच्चक्ख उज्झिआहिआरो भविअ कह अज्ज-चाणक्को पुणो बि त ज्जेब मन्तिपद आरूढो? (वयस्य! एतत सर्व तावत तिष्ठतु। तथा सर्वलोकप्रत्यक्षमुज्झिताधिकारो भूत्वा कथमार्यचाणक्य पुनरपि तदेव मन्त्रिपदमारूढ?)

सिद्धाथक—बअस्स! अदिमुद्धो दाणी सि तुम, जो अमच्चरक्खसेण अणबगाहिदपुब्ब अज्जचाणक्कबुद्धि अब-गाहिदु इच्छसि? (वयस्य! अतिमुग्ध इदानीमसि त्व, योऽमात्यराक्षसेनानवगृहीतपूर्वामार्यचाणक्यबुद्धिमवगाहितुमि-च्छसि।)

सुसिद्धाथक—बअस्स! अथ अमच्चरक्खसो दाणीं कहि? (वयस्य! अथाऽमात्यराक्षस इदानीं कुत्र?)

सिद्धार्थक—बअस्स! सोक्खु तस्सि प्पलअकोलाहले बढ्ढमाणे मलअकेदुकडआदो णिक्कमिअ उन्दुरणामहेएण चरेण अणुसरन्तो इम ज्जेब कुसुमउर आगदो त्ति अज्ज-

चाणक्कस्स णिबेदिद । (वयस्य ! स खलु तस्मिन् प्रलय-कोलाहले वधमाने मलयकेतुकटकात निष्क्रम्योन्दुरनामधेयेन चरेणानुस्त्रियमाण इदमैव कुसुमपुरमागत इत्यायचाणक्यस्य निवेदितम् ।)

हिन्दी अनुवाद—सुसिद्धाथक—मित्र, यह सब बातें रहने दो। बताओ तो सबके सामने चाणक्य ने अधिकार का त्याग कर फिर मन्त्री का पद किस प्रकार ग्रहण किया ?

सिद्धाथक—मित्र, इस समय तुम नितान्त अनभिज्ञ हो जो कि आय चाणक्य की बुद्धि को, जिसे पहले अमात्य राक्षस भी न समझ पाए, समझना चाहते हो।

सुसिद्धाथक—मित्र, अमात्य राक्षस इस समय कहा ह ?

सिद्धाथक—मित्र, जब प्रलयकालीन कोलाहल (मलयकेतु के शिविर में) बढने लगा तो वह वहा (मलयकेतु की कटक) से निकल कर उन्दुर नामक गुप्तचर से पीछा किया जाता हुआ इसी कुसुमपुर में आया है। यह बात आय चाणक्य को बता दी गई है।

Susiddharthaka—Friend let this go (*Tell me now*) Why has Chanakya accepted the office of the minister when previously he renounced it in the presence of the whole world ?

Siddharthaka—You are quite ignorant that you are trying to understand the policy of Arya Chanakya which even Minister Rakshas could not comprehend

Susiddharthaka—Friend where is Minister Rakshas at present ?*

Siddharthaka—Friend when there was terrible convulsion in the camp of Malayaketu he slipped out of it and being shadowed by a spy named Undura has come here to Pataliputra and Chanakya has been informed of it

टिप्पणी

(१) **उज्झिताधिकार**—अधिकार त्याग कर देने वाले अधिकार का परित्याग किये हुए। (२) **अतिमुग्ध**—बिलकुल अबोध। (३) **अनवगहीत पूर्वाम**—जिसे पहले (अमात्य राक्षस भी) न समझ सके। पूवमज्ञाताम। (४) **अनुस्त्रियमाण**—पीछा किया जाता हुआ।

सुसिद्धाथक—बअस्स ! तहा णाम अमच्चरक्खसो णन्दरज्जप्पचचाअअणे किदव्ववसाओ णिक्कमिअ सम्पद

अकिदत्थो पुणो बि कह इम ज्जेब कुसुमउर आग्रदो ? (वयस्य ! तथा नाम अमात्यराक्षसो नन्दराज्यप्रत्यानयने कृतव्यवसायो निष्क्रम्य साम्प्रतमकृताथ पुनरपि कथमिद-मेव कुसुमपुरमागत ?)

सिद्धार्थक —बअस्स ! तक्केमि, चन्दणदासस्स सिणेहेण त्ति। (वयस्य ! तकयामि, चन्दनदासस्य स्नेहेनेति।)

सुसिद्धाथक —बअस्स ! सच्च च दणदासस्स सिणेहेण त्ति ? अध चन्दणदासस्स मोक्ख प्पेक्खसि ? (वयस्य ! सत्य चन्दनदासस्य स्नेहेनेति ? अथ चन्दनदासस्य मोक्ष प्रेक्षसे ?)

सिद्धार्थक —बअस्स ! कुदो से अधण्णस्स मोक्खो ? सो क्खु सम्पद अज्जचाणक्कस्स आणत्तीए दुवेहि पि अह्मेहि बज्झटठाण प्पबेसिअ बावादइदब्बो। (वयस्य ! कुतोऽस्या-धन्यस्य मोक्ष ? स खलु साम्प्रतमार्यचाणक्यस्याऽऽज्ञप्त्या द्वाभ्यामप्यावाभ्या वध्यस्थान प्रवेश्य व्यापादयितव्य।)

सुसिद्धाथक —(सक्रोधम) बअस्स ! किं अज्जचाणक्क-स्स घादअजणो अणो णत्थि, जेण अह्मे ईदिसे णिससे कम्मे णिजुज्जीअदि ? (वयस्य ! किमायचाणक्यस्य घातक जनोऽन्यो नास्ति, येनावामीदृशे नृशसे कर्मणि नियुज्यावहे ?)

सिद्धार्थक —बअस्स ! को जीवलोए जीविदुकामो अज्ज-चाणक्कस्स आणत्ति पडिऊलेदि ता एहि, चडालबेस-धारिणा भबिअ चन्दणदास वज्झटठाण णेह्म। (वयस्य ! को जीवलोके जीवितुकाम आयचाणक्यस्याज्ञप्ति प्रतिकूल-यति ? तदेहि चण्डालवेशधारिणौ भूत्वा चन्दनदास वध्य-स्थान नयाव।) (इत्युभौ निष्क्रान्तौ।)

प्रवेशक

हिन्दी अनुवाद—सुसिद्धाथक—मित्र, यह भला कसे हो सकता है कि जो अमात्य राक्षस नन्दराज्य की पुन स्थापना में इतना प्रयत्नशील रहा है

वह निष्फल प्रयत्न होने पर इसी पाटलिपुत्र में चला आवेगा जहाँ से वह चला गया था।

सिद्धार्थक—मित्र, म समझता हूँ कि चन्दनदास के प्रेम से वह यहाँ आया है।

सुसिद्धार्थक—तो क्या यह सच है कि चन्दनदास का स्नेह उसे यहा खींच लाया है? क्या तुम चन्दनदास के छुटकारा की आशा कर रहे हो?

सिद्धार्थक—मित्र, उस अभागे का छुटकारा कहा? उसे तो इस समय आय चाणक्य की आज्ञा से हम दोनों वध्यस्थान में ले जाकर मार डालेंगे।

सुसिद्धार्थक—(क्रोध से) मित्र, क्या आय चाणक्य को दूसरा वधिक नहीं मिला जो हम लोगो को ऐसे क्रूर कम में लगा दिया?

सिद्धार्थक—मित्र, इस ससार में ऐसा कौन व्यक्ति है जो कि जीने की इच्छा रखता हुआ आय चाणक्य की आज्ञा का उल्लघन करे। तो आओ, चाण्डाल का वेष बनाकर चन्दनदास को वध्य भूमि में ले चलें। (दोनो चले जाते ह) प्रवेशक समाप्त।

Susiddharthaka—Friend how can Minister Rakshas who made an attempt to restore the sovereignty of Nanda and left Pataliputra come back to the city with his object unrealised

Siddharthaka—Friend I presume that it is through the love of Chandandas

Susiddharthaka—Is it true that he has come here through the love of Chandandas ? Do you expect the release of Chan dandas ?

Siddharthaka—Friend whence is the release of that unlucky fellow By the command of Noble Chanakya he has to be led by both of us to the place of execution and killed

Susiddharthaka (*With anger*)—Friend has Chanakya no other executioner that we have been employed in such a cruel task ?

Siddharthaka—Friend who in the world of the living desi rous of life can oppose the command of Noble Chanakya So come and being clad in the garb of Chandal let us take Chandandas to the place of execution (Exeunt both) (Pra veshaka)

टिप्पणी

(१) नन्दराज्यप्रत्यानयने—नन्द के राज्य को वापस ले लेने मे। (२) कृत व्यवसाय—प्रयत्नशील। कृतोद्यम। (३) अकृताथ—असफल मनोरथ होकर। (४) अधन्यस्य—अभागे का। (५) आज्ञप्त्या—आज्ञा से। आ+ज्ञप+णिच्+क्तिन् भावे आज्ञप्ति तया। (६) प्रतिकूलयति—उल्लघन करेगा। प्रतिकूल+

णिच+लट—तिप। (७) **प्रवेशक**—दो अको के बीच वे एक प्रकार के अक को प्रवेशक कहते ह। इसमे नीच पात्र भावी या न दिखाई हुई घटनाओ की सूचना देते ह। वत्तवर्तिष्यमाणाना कथाशाना निदशक । प्रवेशकस्तु नाटयेऽङ्के नीचपात्रप्रयोजित ।

(तत प्रविशति रज्जुहस्त पुरुष ।) पुरुष—
छग्गुणसजोअदिढा उवाअपरिवाडिघडिदपासमुही ।
चाणक्कणीदिरज्जू रिउसजमणउजुआ जअदि ।।४।।
(षड्गुणसयोगदृढा उपायपरिपाटीघटितपाशमुखी ।
चाणक्यनीतिरज्जू रिपुसयमनऋजुका जयति ।।४।।)

अन्वय—षडगुणसयोगदढा उपायपरिपाटीघटितपाशमुखी रिपुसयमनऋजुका चाणक्यनीतिरज्जु जयति ।।४।।

हिदी अनुवाद—(रस्सी हाथ में लिए हुए पुरुष का प्रवेश) (सधि विग्रह आदि) छ गुणो के सयोग से सुदढ और साम, दान आदि उपाय चतुष्टय से सवथा सगठित पाश रूपी मुख वाली और शत्रु के बाधने से सीधी चाणक्य की नीति रूपी रस्सी विजयी होती है। जसे रस्सी ६ गुनी बटी होने के कारण टूटना नहीं जानती वसे ही साम, दान आदि उपायो से तथा सधि विग्रह आदि छ गुणो से युक्त चाणक्य की नीति कभी असफल नही होती।

(Enter a man with a rope in hand)

Man—The rope of Chanakya s policy is successful being strong by the union of six threads like expedients having at one end a noose made of succession of devices and straight with the entrapping of the enemy

सस्कृत याख्या—षडगुणसयोगदढा षण्णा गणाना सयोगेन दृढा दुर्भेद्या उपायपरिपाटीघटितपाशमुखी उपायाना सामादिचतुष्टयाना परिपाटचा क्रमसमावेशेन घटित रचित य पाश जाल स मुखे प्रान्ते यस्या तादशी रिपुसयमनऋजुका रिपो शत्रो यत सयमन बधन तेन ऋजुका ऋज्वी सरला चाणक्यनीतिरज्जु जयति विजयिनी भवति।

टिप्पणी

(१) **षडगुणसयोगदढा**—छ गुनी बटी होने से मजबूत (रस्सी) और सधि विग्रह यानासन द्वधाश्रयात्मक छ गुण वाली चाणक्य की नीति। नीति

और रस्सी की समानता दिखाई गई है। चाणक्य की नीति शत्रुओ को वसे ही बाधती है जसे रस्सी अपन फदे मे वस्तुओ को बाधती है। (२) **पाशमुखी**—वस्तुत चाणक्य की नीतिरूपी रस्सी का सम्पूण अग काय कर चुका है। अब पाशरूपी मुख का काय होना है। इसी पाश (फदे) मे राक्षस(शत्रु) बधेगा। रूपक और श्लेष अलकार है। आर्या छद है।

(परिक्रम्यावलोक्य च) एसो सो अज्जचाणक्कस्स उन्दुरण्ण चरेण कधिदो प्पदेसो, जहि मए अज्जचाणक्काणत्तीए अमच्चरक्खसो प्पेक्खिदव्वो। (विलोक्य) कह एसो क्खु अमच्चरक्खसो किदसीसावगुण्ठणो इदो ज्जेव आअच्छदि। ता जाव इमेहि जिण्णुज्जाणपादवेहि अवबारिदसरीरो प्पेक्खामि, कहि आसणपरिग्गह करेदि। (एष स आयचाणक्यस्योन्दुरकेण चरेण कथित प्रदेश यत्र मयाऽऽयचाणक्याज्ञप्त्याऽमात्यराक्षस प्रेक्षितव्य। कथमेष खल्वमात्यराक्षस कृतशीर्षावगुण्ठन इत एवागच्छति। तद्यावदेभिर्जीर्णोद्यानपादपैरपवारितशरीर प्रेक्षे, कुत्रासनपरिग्रह करोतीति।) (इति परिक्रम्य तथा स्थित।)

(घूमकर और देखकर) अरे यह तो वही स्थान है जिसके विषय में गुप्तचर उन्दुरक ने आय चाणक्य को बताया है। यही पर आय चाणक्य की आज्ञा से मुझे राक्षस से भेंट करना है। (देखकर) अरे तो क्या अमात्य राक्षस यही ह जो सिर को ढके हुए इधर ही आ रहे ह। अच्छा इस पुराने बगीचे के पेडो की झुरमुट में छिप कर देखू कि यह कहा बठते ह। (घूमकर पेडो की झुरमुट में खडा हो जाता है)।

(*Going round and seeing*) This is the same place which was described by Undurak to Noble Chanakya and where I have to see Minister Rakshas (*Seeing*) Oh ! is it Minister Rakshas who is coming this way with his head covered Well screening myself behind these old garden trees I shall watch where he sits (*Stands after going round*)

टिप्पणी

(१) **कृतशीर्षावगुण्ठन**—सिर को ढककर। अव+गुण्ठ+ल्युट भावे=

अवगुण्ठनम्। कृत शीर्षस्य अवगुण्ठन येन स । (२) अपवारितशरीर —अपने को छिपाकर। अपवारित तिरोहित शरीर यस्य स ।

(तत प्रविशति यथानिर्दिष्ट सशस्त्रो राक्षस ।)
राक्षस —(सबाष्पम्) कष्ट, भो कष्टम् ! !
उत्सन्नाश्रयकातरेव कुलटा गोत्रान्तर श्रीगता
तामेवानुगता गतानुगतिकास्त्यक्तानुरागा प्रजा ।
आप्तैरप्यनवाप्तपौरुषफलै कायस्य धूरुज्झिता
किं कुवन्त्वथवोत्तमाङ्गरहितैर्नागैरिव स्थीयते ।।५।।

अन्वय—श्री उत्सन्नाश्रयकातरा कुलटा इव गोत्रा तर गता। गतानुगतिका प्रजा त्यक्तानुरागा ताम एव अनुगता । अनवाप्तपौरुषफल आप्त अपि कायस्य धू उज्झिता। अथवा किं कुवन्तु उत्तमाङ्गरहित नाग इव स्थीयते ।।५।।

हिन्दी अनुवाद—(शस्त्र हाथ में लिए हुए उपयुक्त वर्णित अवस्था में राक्षस का प्रवेश)। राक्षस—(आसू के साथ) बडे कष्ट की बात है —आश्रय के नष्ट हो जाने पर लक्ष्मी व्याकुल होकर कुलटा स्त्री की तरह दूसरे गोत्र में चली गई। लकीर की फकीर प्रजा (पहले के स्वामी का) अनुराग छोडकर उसी लक्ष्मी के पीछे पीछे चली गई। पुरुषाथ का फल न पाकर विश्वासपात्रों ने भी काय भार छोड दिया। अथवा वे क्या करें (वे तो) सिर रहित हाथियों की तरह जीवन बिता रहे ह ।

(Then enter Rakshas as described with arms in hand) *Rakshas* (*With tears*)—Oh it is a matter of great sorrow upset by the death of her supporter Lakshmi has passed on to another race like a bad charactered woman (*Harlot*) The people accustomed to follow those who have gone before giving up their allegiance to (*the previous master*) have followed her (लक्ष्मी) Even the trusted persons not getting the reward of their effort have thrown down the burden of work Or what should they do They are living like head less elephants

सस्कृत व्याख्या—श्री लक्ष्मी उत्सन्नाश्रयकातरा उत्सन्न नष्ट आश्रय अवलम्बो नन्द पतिरिव यस्या सा चासौ कातरा किंकर्त्तव्यविमूढा च कुलटा इव पुश्चली इव गोत्रान्तर नन्दभिन्नराजवशम अन्यत गोत्रमिव गता प्राप्ता गतानुगतिका गतस्य प्राक प्रस्थितस्य यत अनुगमनम तच्छीला प्रजा प्रकृतय त्यक्ता

नुरागा त्यक्त परिहृत अनुराग स्नेह याभि तथाभूला ताम लक्ष्मीम अनुगता अनुसता । अनवाप्तपौरुषफल अनवाप्तम अप्राप्तम पौरुषस्य पुरुषार्थस्य फलम य तादश आप्त विश्वस्त अपि कायस्य धू भार उज्झिता त्यक्ता । अथवा आप्ता अपि किं कुवन्तु उत्तमाङ्गरहित शीषवियुक्त नाग गज इव स्थीयते भूयते ।

टिप्पणी

(१) **उत्सन्नाश्रयकातरा**—आश्रय के नष्ट होने के कारण कातर । (२) **कुलटा**—दुश्चरित्रा स्त्री । कुलात कुलमटतीति या सा । (३) **गतानुगतिका**—पहले गए हुए लोगो के पीछे चलने वाली लकीर की फकीर । (४) **आप्तरपि**—विश्वस्त व्यक्तियो ने सामान्य प्रजाओ की भाँति च द्रगुप्त से जाकर मेल नही किया । हा उन लोगो ने च द्रगुप्त का विरोध करना अवश्य छोड दिया । इस तरह के व्यक्ति ह—विराधगुप्त आदि । (५) **नाग इव**—हाथियो की तरह । जिस प्रकार सिर रहित हाथी या सप कुछ नही कर सकता उसी प्रकार नेता न रहने पर आप लोग ही क्या करेंगे । कही कही पर ऐसा पाठ है उत्तमाङ्गरहितरङ्गरिव स्थीयते अर्थात बिना सिर के शरीर के समान । इसमे उपमा अलकार तथा शादूलविक्रीडित छद है ।

पतिं त्यक्त्वा देव भुवनपतिमुच्चैरभिजन
गता च्छिद्रेण श्रीर्वृषलमविनीतेव वृषली ।
स्थिरीभूता चास्मिन् किमिह करवाम स्थिरमपि
प्रयत्न नो येषा विफलयति दैव द्विषदिव ।।६।।

अन्वय—श्री उच्चरभिजन भुवनपतिं पतिं देव त्यक्त्वा अविनीता वृषली इव छिद्रेण वषल गता अस्मिन स्थिरीभूता च । इह किं करवाम येषा न स्थिरमपि प्रयत्न द्विषदिव दव विफलयति ।।६।।

हिन्दी अनुवाद—राजलक्ष्मी महाकुलीन सम्राट नन्द जसे पति को छोडकर दुश्चरित्रा शूद्रा के समान छल से मौय के पास चली गई और उसमें स्थिर हो गई । इस विषय में क्या करें । हमारे बडे-बडे उपायो को भी भाग्य शत्रु के समान व्यथ बना देता है ।

Abandoning her husband the king of high birth who was the ruler of the earth Shri like an immodest harlot has gone to the sudra in the time of distress and become permanent in

him In this matter what can we do whose efforts though steady have been baffled by fate like an enemy

सस्कृत व्याख्या—श्री लक्ष्मी उच्चैरभिजनम उच्चकुलोत्पन्न भुवनपति राजानम पति देव स्वामिन नन्द राजानम त्यक्त्वा उज्झित्वा अविनीता विनय रहिता कुलटा इति यावत वषली इव शूद्रा इव छिद्रेण महताच्छलेन वृषल चन्द्रगुप्त गता प्राप्ता अस्मिन वषले चन्द्रगुप्ते स्थिरीभूता च। इह किं करवाम अस्मिन प्रयतितेऽपि अप्रतीकार्ये विषये किं करवाम विदधाम येषा न स्थिरमपि दृढमपि प्रयत्नम प्रयासम द्विषदिव शत्रुरिव दव दुर्भाग्य विफलयति निष्फलम कुवदेव सतत वत्तते।

टिप्पणी

(१) **उच्चैरभिजनम**—उच्चकुल मे उत्पन्न। इससे नन्द की कुलीनता सूचित की गई है। अभिजायते अस्मिन इति अभिजन । अभि+जन+क। उच्च अभिजनो यस्य स तम। (२) **वषलम**—चन्द्रगुप्त। वषल कहकर चन्द्रगुप्त को हीन वश का बतलाया गया है। **विफलयति**—व्यथ (असफल) कर रही है। (३) **द्विषद**—शत्रु। इसमे उपमा तथा अतिशयोक्ति अलकार और शिखरिणी छन्द है।

मया हि—देवे गते दिवमतद्विधमृत्युयोग्ये
शैलेश्वर तमधिकृत्य कृत प्रयत्न ।
तस्मिन हते तनयमस्य तथाप्यसिद्धि-
दव हि नन्दकुलशत्रुरसौ न विप्र ।।७।।

अन्वय—अतद्विधमत्युयोगे देवे दिव गते त शलेश्वरम अधिकृत्य प्रयत्न कृत । तस्मिन हते अस्य तनयम (अधिकृत्य प्रयत्न कृत) तथापि असिद्धि । दव हि नन्दकुलशत्रु असौ विप्र न ।।७।।

हिन्दी अनुवाद—महाराज नन्द, जो उस प्रकार की मत्यु के योग्य नही थ, के स्वग चले जाने पर उस पवतेश्वर का आश्रय लेकर प्रयत्न किया गया। उस (पवतेश्वर) के मर जाने पर उसके पुत्र (मलयकेतु) का सहारा लेकर प्रयत्न किया गया फिर भी असफलता मिली। नन्दकुल का शत्रु तो उसका भाग्य है न कि वह (दरिद्र) ब्राह्मण (चाणक्य)।

When King (*Nanda*) who suffered a death that did not befit him went to heaven effort was made by winning over Parva teshwar and after his (*Parvateshwar s*) death help was taken from his son Still there was no success It is really Fate that is the enemy of Nanda s race not that Brahman

सस्कृत व्याख्या—अतद्विधमत्युयोगे अतद्विध आत्माननुरूप मत्युयोग विनाश घटना यस्य तादशे अराजोचितमरणे देवे महाराजे न दे दिवगते स्वर्गाभिमुख प्रस्थिते त शलेश्वरम पवतेश्वरम अधिकृत्य समाश्रित्य प्रयत्न कृत उपाय विहित न दराजपुनरुद्धरणरूप उपाय कृत । तस्मिन शलेश्वरे हते चाणक्येन घातिते तस्य तनयम पुत्रम अधिकृत्य प्रयत्न कृत तथापि असिद्धि असफलता । तत मन्ये दैव हि भाग्य हि नन्दकुलशत्रु अरि असौ विप्र चाणक्य न ।

टिप्पणी

(१) **अतद्विधमत्युयोगे**—जो उस प्रकार की मत्यु के योग्य नही था । तस्य विधा प्रकार इव विधा अस्य इति तद्विध । तद्विध मत्यु तस्य योग्यो न भवति तस्मिन । भाव यह है कि महाराज न द की मत्यु पामर लोगो की मृत्यु के समान हुई । उनको युद्ध मे मरना था । (२) **अधिकृत्य**—आश्रय बनाकर । अधि+कृ+क्त्वा—ल्यप । (३) **असिद्धि**—असफलता । इस श्लोक मे का य लिग परिसख्या तथा अतिशयोक्ति अलकारो की ससष्टि है । और वसन्त तिलका छन्द है ।

यो नष्टानपि जीवनाशमधुना शुश्रूषते स्वामिन-
स्तेषा वैरिभिरक्षत कथमसौ सन्धास्यते राक्षस ।
इत्थ वस्तुविवेकमूढमतिना म्लेच्छेन नालोचित
दैवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा पूव विपयस्यति ।।८।।

अन्वय—य अधुना अपि जीवनाश नष्टान स्वामिन शुश्रूषते असौ राक्षस अक्षत (सन) तेषा वैरिभि कथ स धास्यते ? इत्थ वस्तुविवेकमूढमतिना म्लेच्छेन न आलोचितम अथवा दवेन उपहतस्य बुद्धि पूव विपयस्यति ।।८।।

हि दी अनुवाद—जो अब भी पूणरूप से नाश को प्राप्त स्वामियो की सेवा कर रहा है, वह राक्षस कुशल से रहते हुए उन (स्वामियो) के शत्रुओ के साथ कसे मिल सकता है । यवन (मलयकेतु) ने, जिसकी बुद्धि विषयो को समझने में असमथ है, यह नहीं सोचा । अथवा भाग्य से मारे हुए की बुद्धि पहले ही से विपरीत (उलटी) हो जाती हे ।

How can Rakshas who even now serves his masters who are totally destroyed side with the enemies The Mlechha (मलयकेतु) whose mind was devoid of discrimination did not think this Or the intellect of one who is struck by Fate becomes entirely perverse

सस्कृत व्याख्या—य राक्षस अधुना अपि इदानीमपि जीवनाश समूलघातम् नष्टान् घातितान स्वामिन नन्दनपतीन शुश्रूषते न केवल सेवते किन्तु सेवितु-मिच्छति च असौ राक्षस अमात्य अक्षत सन स्वस्थगात्र सन तेषा स्वामिना वरिभि शत्रुभि सह कथ सधास्यते सधि करिष्यति। इत्थम एतत वस्तुविवेक-मूढमतिना वस्तुन विवेको विमश तत्र मूढा मोहम उपगता मतिबुद्धियस्य तेन म्लेच्छेन न आलोचितम् न समीक्षितम अथवा कथ विचारयतु स वराक इति भाव दवेन भाग्येन उपहतस्य विनाशितस्य बुद्धि धी पूव प्राक विपयस्यति विपरीता भवति।

टिप्पणी

(१) **अधुना अपि**—अब भी अर्थात स्वामी के नष्ट हो जाने पर भी। (२) **जीवनाशम**—समूल। जीव+नश+णमुल प्रत्यय। समूलघातम्। (३) **शुश्रूषते**—सेवा करना चाहता है। (४) **कथ सधास्यते**—किस प्रकार सधि कर सकता है। (५) **वस्तुविवेकमूढमतिना**—वस्तु (यथाथ बात) के जानने मे मूढ मति वाला। वस्तुन विवेके मूढा मति यस्य स तेन। इस श्लोक मे अर्थान्तिरन्यास अलकार तथा शादूलविक्रीडित छन्द है।

तदिदानीमपि तावदरातिहस्तगतो विनश्येद्राक्षसो, नतु चन्द्रगुप्तेन सह सन्धि कुर्यादिति, अथवा मम काममसत्य-सन्ध इति वरमयश न पुन शत्रुवञ्चनपरिभूति (समन्ताद-वलोक्य सास्रम) एतास्ता देवस्य पादक्रमणपरिचयपवित्री-कृतरथ्या कुसुमपुरोपकण्ठभूमय।

हिन्दी अनुवाद—इस समय भी शत्रु के हाथ में पडकर राक्षस नष्ट हो जायगा परन्तु चन्द्रगुप्त के साथ सधि न करेगा। अथवा यह अपकीर्ति कि "म प्रतिज्ञा को पूरा करने वाला नहीं हूँ" ठीक है परन्तु शत्रु के दल से पराजित होना (अथवा अपमानित होना) ठीक नहीं है। (चारो तरफ देखकर आसू भर

कर) ओह पाटलिपुत्र के वही ये प्रान्त भाग ह जिनके रास्ते कभी महाराज नन्द के चलने फिरने से अनेको बार पवित्र किए जा चुके ह—

Thus even to day Rakshas would die having fallen in the hands of his enemies but he would not make alliance with Chandragupta or this infamy that I am not true to my promise is better than my being defeated (*beaten*) by the enemy s strategy (*Looking round with tears*) These are the suburban grounds of Kusumpura whose streets were made sacred by the footsteps of Sire

इह हि—

शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेणात्र देशे
देवेनाकारि चित्र प्रजविततुरग बाणमोक्षश्चलेषु ।
अस्यामुद्यानराजौ स्थितमिह कथित राजभिस्तैर्विनेत्थ
सम्प्रत्यालोक्यमाना कुसुमपुरभुवो भूयसा दु खयन्ति ॥६॥

अ वय—अत्र देशे शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेण देवेन चलेषु प्रजविततुरग चित्र बाणमोक्ष अकारि अस्याम उद्यानराजौ स्थितम इह राजभि कथितम सम्प्रति त विना इत्थम आलोक्यमाना कुसुमपुरभुव भूयसा दु खयन्ति ॥६॥

यहा पर कभी महाराज न द धनुष की डोरी में फसे हुए ढीली बागडोर दौडते हुए घोडो पर, भागते हुए निशाने पर आश्चयजनक ढग से बाण मारा करते थे। यह वह उपवन श्रेणी ह जहां पर वे कभी बठते थे। यहीं पर वह राजाओ से बठ कर बातें करते थे। पर अब तो उनके बिना इस प्रकार देखी जाती हुई पाटलिपुत्र की भूमियाँ अत्यन्त क्लेश पहुँचा रही ह।

Here formerly the King (*Nanda*) effected to lodging of arrows into the moving mark Sometimes his reins in the bit got slack being dropped while drawing the bow and the horse was running very fast He stopped in these rows of gardens here he spoke to princes Thus indeed these precincts of Kusum pura now being seen without him greatly pain me

सस्कृत यारया—अत्रदेशे अस्मिन भूभागे शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेण शार्ङ्गस्य धनुष या ज्या प्रत्यञ्चा तस्या या आकृष्टि बाणमोक्षाय बलादाकषणम तत्र मुक्तोऽतएव प्रशिथिल कविकाप्रग्रह अश्वरशनाकर्षो यस्य

स तेन तथाभूतेन देवेन न देन चलेषु अस्थिरेषु (लक्ष्येषु) प्रजविततुरगम प्रजवित प्रवृद्धवेग तुरग अश्व यस्मिन कर्मणि तद यथा तथा चित्र महदाश्चयकारि यथा स्यात्तथा बाणमोक्ष अकारि शरत्याग कृत अस्याम उद्यानराजौ उपवनपक्तौ स्थितम मगयाश्रमोपनोदाय विश्रान्तम इह अस्मिन स्थाने राजभि नप सह कथितम किमपि किमपि आलपितम सम्प्रति इदानी त तदादिभि राजभि विना इत्थमनेन प्रकारेण आलोक्यमाना दृश्यमाना कुसुमपुरभुव पाटलिपुत्रप्रत्यन्त भागा भूयसा भशम दु खयन्ति खेदयन्ति।

टिप्पणी

(१) **अरातिहस्तगत**—शत्रु के रूप मे पडा हुआ। अराते शत्रो हस्तगत। (२) **असत्यसध**—झूठी प्रतिज्ञा वाला। असत्या मिथ्या सधा प्रतिज्ञा यस्य स असत्यसध। (३) **अयश वरम**—यह अकीर्ति ठीक है। (४) **शत्रुवञ्चन परिभूति**—शत्रु की वञ्चना से पराजय। शत्रो वञ्चनेन प्रतारणेन परिभूत पराजय इति। राक्षस के कहने का भाव यह है कि मेरी तो हर तरफ से बदनामी हो रही है। मलयकेतु समझता है कि मने अपनी बात छोड कर चन्द्रगुप्त से मेल कर लिया है यह एक बदनामी है दूसरी बदनामी यह है कि चाणक्य ने मुझे नीति से जीतकर स्ववश कर लिया। इन दोनो प्रकार की अपकीर्तियो मे दूसरी प्रकार की अपकीर्ति ठीक नही है। (५) **पादक्रमणपरिचयपवित्रीकृतरथ्य**—चलने फिरने से पवित्र गलियो वाली। पादक्रमण चरणसञ्चार तस्य य परिचय तेन पवित्रीकृता रथ्या यत्र तथाविधा। यह उपकण्ठभूमय का विशेषण है। (६) **शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेण**—धनुष की डोरी के खीचने के कारण लगाम हाथ से छूट गई अत शिथिल पड गई जिसके हाथ से। यह देवेन का विशेषण है। धनुष की डोरी को खीचते समय स्वभावत हाथ से छूटकर लगाम ढीली हो गई। समास के लिए व्याख्या देखिए। (७) **बाणमोक्ष अकारि (चित्रम)**—आश्चर्यजनक ढग से बाण मारा। इस पद्य मे स्वभावोक्ति दीपक तथा विनोक्ति अलकारो की ससृष्टि है और स्रग्धरा छन्द है।

तत् क्व खलु गच्छामि मन्दभाग्य ? (विलोक्य) भवतु दृष्टमेतज्जीर्णोद्यानम, अत्र प्रविश्य कुतश्चिच्चन्दनदासस्य वृत्तान्तमुपलप्स्ये। (परिक्रम्य स्वगतम) अहो ! अलक्षितोप-

निपाता पुरुषाणा समविषमदशाविभागपरिणतयो भवन्ति कुत ?—

हिदी अनुवाद—तो म अभागा अब कहा जाऊ। (देखकर) अच्छा, यह जीण उद्यान दिखाई देता है। इसके अदर जाकर किसी प्रकार चन्दनदास का वत्तान्त जानू। (घूमकर मन में) ओह कौन जान सकता है कि सुख-दु-ख की अनुकूल प्रतिकूल परिस्थितिया कब किस प्रकार आया जाया करती ह। क्योकि—

Where should I the ill starred one go now ? (*Observing*) Well I see a ruined garden Entering into it I shall from some where gather information about Chandandas The changes into smooth and rough stages of men s life are unknown For—

पौरेरङ्गुलिभिनवेन्दुवदह निर्दिश्यमान शनै
यो राजेव पुरा पुरान्निरगम राज्ञा सहस्रैवृत ।
भूय सम्प्रति सोऽहमेव नगरे तत्रैव बन्ध्यश्रमो
जीर्णोद्यानकमेष तस्कर इव त्रासाद् विशामि द्रुतम् ॥१०॥

अन्वय—य अहम पुरा राज्ञा सहस्रै वत राजा इव पौर अगुलिभि नवेदुवत निर्दिश्यमान (सन) शन पुरात निरगम स एव बध्यश्रम अह सम्प्रति भूय तत्रैव नगरे तस्कर इव त्रासात द्रुत जीर्णोद्यानकम एव विशामि ॥१०॥

हिदी अनुवाद—जो म पहले सकडो राजाओ से घिरा हुआ राजा के समान नगर के बाहर निकलता था और मेरे निकलते समय नागरिक लोग नवोदित चद्रमा की तरह मेरी ओर उँगलियो से इशारा करते थे वह निष्फल प्रयास वाला म फिर उसी नगर मे चोर की तरह भय से जल्दी से जीण उपवन में प्रवेश कर रहा हूँ।

I myself formerly went out of the city leisurely attended like a king by thousands of princes and was pointed out (*to one other*) with their fingers by the citizens like the new moon now the same self of mine in the same city enters with fear like a thief into a ruined garden when all my efforts are ren dered unsuccessful

सस्कृत व्याख्या—य अहम राक्षस पुरा नदराज्य तत्रयति सति राज्ञा सहस्र अनुयायिनाम राज्ञा नपतीना सहस्र वत परित परिवेष्टित राजा इव नृप इव पौरै पाटलिपुत्रीय प्रजाजन अङ्गुलिभि सकेतकारिणीभि नवेदुवत

नवोदितच द्र इव निर्दिश्यमान अयमसौ महामात्य इति रूपेण सकेतविषयी कृत सन शन पुरात नगरात निरगम गतागतमकरवम स एव अहम ब ध्यश्रम ब ध्य विफलीकृत विफलीभूतो वा श्रम न दराज्यप्रतिष्ठापनरूप प्रयत्न यस्य स सम्प्रति इदानी भूय पुन तत्रव नगरे तस्मिन्नेव पाटलिपुत्रे तस्कर इव चौर इव त्रासात भयात द्रुतम् शीघ्रम धावमान जीर्णोद्यानकम एव पुराणोपवनम विशामि प्रविशामि। किमधिक भाविनी भवित यतेति भाव ।

टिप्पणी

(१) **अलक्षितोपनिपाता**—जिनका आना दिखाई नही पडता अर्थात् जो यकायक आ जाते ह। उप+नि+पत+घञ भावे=उपनिपाता । न लक्षिता उपनिपाता यासा ता अलक्षितोपनिपाता। (२) **समविषमदशाविभागपरिणतय**— अनुकूल और प्रतिकूल दशाओ के विभाग का परिणाम। समाश्च विषमाश्च समविषमा, तादृश्य दशा तासा विभागा, तेषा परिणतय । राक्षस के कहने का भाव यह है कि दशा (सुख और दु ख का होना) के बदलने को कोई नही जान सकता। सुख से दु ख और दु ख से सुख होता है। (३) **इन्दुवत**— च द्रमा के समान। च द्रमा जब नवोदित होता है उस समय लोग उगली उठाकर दिखाते ह कि यह च द्रमा निकला है उसी प्रकार जब राक्षस बाहर निकलता था तो लोग इशारा करते थे कि अमात्य राक्षस जा रहे ह। (४) **ब ध्यश्रम**— विफल प्रयत्न होकर। ब ध्य श्रम यस्य स । (५) **जीर्णोद्यानकम**—प्राचीन काल मे राजाओ तथा धनाढ्य व्यक्तियो के पास नगर के बाहर जो उद्यान रहता था उसे जीर्णोद्यान कहा जाता था। मृच्छकटिक मे भी ऐसे उद्यान का वणन आया है। इसमे उपमा अलकार और शादूलविक्रीडित छ द है।

अथवा, येषा प्रसादादिदमासीत ते एव न सन्ति। (नाट्येन प्रविश्य विलोक्य च) अहो ! जीर्णोद्यानस्य नाभिरमणीयता । अत्र हि—

विपर्यस्त सौध कुलमिव महारम्भरचन
सर शुष्क साधोर्हृ दयमिव नाशेन सुहृद ।
फलैर्हीना वृक्षा विगुणविधियोगादिव नया-
स्तृणश्छन्ना भूमिमतिरिव कुनीत्या ह्यविदुष ।।११।।

शुष+क्त, तस्य क । (५) **विगुणविधियोगात**—भाग्य के विपरीत होने के कारण। कही-कही पर विगुणनृपयोगात भी पाठ है। उस समय अर्थ होगा मूर्ख राजा के सम्पर्क से । (६) **अविबुध**—मूर्ख की। (७) **छन्ना**—ढक गई। छद+क्त तस्य न । यहा पूर्णोपमा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

अपि च अत्र—

क्षताङ्गाना तीक्ष्णै परशुभिरुदग्रै क्षितिरुहा
रुजा कूजन्तीनामविरतकपोतोपरुदितै ।
स्वनिर्मोकच्छेदै परिचितपरिक्लेशकृपया
श्वसन्त शाखाना व्रणमिव निबध्नन्ति फणिन ॥१२॥

अन्वय—तीक्ष्ण उदग्र परशुभि क्षताङ्गाना क्षितिरुहा रुजा अविरत कपोतोपरुदित कूजन्तीना शाखाना व्रण फणिन परिचितपरिक्लेशकृपया श्वसन्त स्वनिर्मोकच्छेद निबध्नन्ति इव ॥१२॥

हिन्दी अनुवाद—यहा तो सापो की केंचुलें पेड-पौधो में ऐसी लटकी हुई ह मानो कि लोगो के द्वारा सवथा उपेक्षित देखकर, बडी-बडी तेज धार वाली कुल्हाडियो से कटे हुए पेडो की निरन्तर कपोतो की करुण कूजित ध्वनि के बहाने करुण क्रन्दन करने वाली कटी हुई टहनियो और उँगलियो के घावो पर ये सप अपने पूर्व परिचित इन पेड-पौधो की दयनीय दशा में सहानुभूति प्रकट करते और आहें भरते हुए मरहम पट्टी कर रहे हो। (कपोतो की कूजन को पेडो की कराह बताई गई है। सापो की केंचुलें जो पेडो पर या शाखाओ पर लटकी हुई ह मरहम पट्टी बताई गई ह । कहने का भाव यह है कि अब इन बगीचो के वक्षो की पूर्ववत देख रेख नहीं हो रही है। यहा के वक्ष काटे जा रहे ह और यहा कबूतरो का तथा सर्पों का वास है न कि मनुष्य का)।

The snakes are as if out of pity for the acquaintances now in pain are tying up with sighs the wounds of branches of trees with their own sloughs—the branches whose bodies are pierced with sharp axes and which are due to great pain growning with the never ending cooing of pigeons

सस्कृत व्याख्या—तीक्ष्ण निशितनिशित उदग्र महता बलेनोत्तोलित परशुभि कुठार क्षताङ्गानाम क्षतानि अङ्गानि यासा तथाविधानाम क्षितिरुहा वृक्षाणाम् रुजा पीडया अविरतकपोतोपरुदित अविरत यथा स्यात्तथा कपोताना पारावताना यानि उपरुदितानि कूजितानि त कृत्वा तद्व्याजेन वा कूजन्तीना

शब्द कुर्वतीनाम शाखाना व्रण क्षतम फणिन सर्पा परिचितपरिक्लेशकृपया परिचिताना सहवासिना य परिक्लेश कष्टपात तत्र या कृपा अनुकम्पा तया हेतुभूतया श्वसन्त नि श्वास कुर्वन्त स्वनिर्मोकच्छेद स्वेषाम आत्मनाम निर्मोकच्छेदा कञ्चुकखण्डा त व्रणबध पर्गरिव निबधनन्तीव विरोपणाय वेष्टयन्तीव ।

टिप्पणी

(१) **तीक्ष्ण उदग्र परशुभि**—तेज और जोर से मारे हुए कुल्हाडो से । (२) **परशुभि**—कुठारो से । द्वयो कुठार स्वधिति परशुश्च परश्वध इत्यमर । परान अन्यान शृणन्ति हिंसन्ति इति परशव पर√श+डु त । (३) **क्षताङ्गानाम**—घायल शरीर वाले (वृक्षो) का । (४) **क्षितिरुहा रुजा**—पेडो के घाव से । रुज+क्विप भावे=रुक तया । (५) **अविरतकपोतोपरुदित**—कबूतरो के निरन्तर कूजने के व्याज से शब्द करने वाली शाखाओ का । (६) **परिचितपरिक्लेशकृपया**—परिचितो की वेदना से उत्पन्न करुणा के कारण । परिचितस्य य परिक्लेश तत सञ्जाता या कृपा तया । (७) **स्वनिर्मोकच्छेद**—अपनी कचुलो से । साँपो की केंचुल जो शाखाओ मे लटकी ह वे मानो मरहम-पट्टी ह । यहा उत्प्रेक्षा अलकार और शिखरिणी छन्द है ।

अन्त शरीरपरिशोषमपाश्रयन्त
कीटक्षतिस्रुतिभिरस्रमिवोद्वमन्त ।
छायावियोगमलिना व्यसने निमग्ना
वृक्षा श्मशानमपगन्तुमिव प्रवृत्ता ॥१३॥

अन्वय—अन्त शरीरपरिशोषमुपाश्रयन्त कीटक्षतिस्रुतिभि अस्रम उद्वमन्त इव छायावियोगमलिना व्यसने निमग्ना वृक्षा श्मशानम उपगन्तुम प्रवृत्ता इव ।

शरीर के भीतर शुष्कता को प्राप्त करते हुए, कीडो के द्वारा किए गए छेदो से बहने वाले द्रव के रूप में आसू बहाते हुए, अपनी पत्रच्छाया की शोभा से सवथा बिछुडे दीन-मलीन, शोक में मग्न ये पेड ऐसे लग रहे ह मानो श्मशान जाने की तयारी कर रहे ह ।

And these trees aggravating the drying up of the interior of their trunk shedding tears as it were by the exudation through the holes made by insects and plunged in distress withered through the loss of shade are as if preparing to go to the cremation ground

संस्कृत व्याख्या—अन्त शरीरपरिशोषम शरीरस्य अन्त इति अन्तशरीर य परिशोष जीर्णतया सेचनाद्यभावेन वा संजायमान रसहानिरूप शोषणम तत उपाश्रयन्त प्राप्नुवन्त कीटक्षतिस्रुतिभि कीट कृता या क्षतय रन्ध्राणि ताभ्य या स्रुतय रसक्षरणानि ताभि करण अस्रम नयनजलम उद्वमन्त इव मुञ्चन्त इव छायावियोगमलिना छायाया प्रियतमाया इव स्वकान्ते अनातप रूपाया यो वियोग विरहस्तेन मलिना विहतकान्तय व्यसने दारुणे दु खे निमग्ना पतिता वक्षा श्मशानम पितवनम गन्तुम इव प्रवृत्ता उद्युक्ता इव आत्मघातायव समुद्युक्तमानसा इव।

टिप्पणी

(१) **अन्तशरीरपरिशोषम**—शरीर के भीतरी भाग का सुखाते हुए। वृक्षो मे पानी देने वाला कोई नही रह गया अत वे सूख रहे ह मानो उनकी अन्तरात्मा ही सूख गई है। (२) **कीटक्षतस्रुतिभि**—कीडो के द्वारा किए गए छिद्रो से निकलता हुआ द्रव उसके द्वारा (या उसके रूप मे)। भाव यह है कि जसे कोई स्त्री पति के मर जाने पर उसका अनुगमन करती हुई भस्म हो जाती है उसी प्रकार ये वृक्ष भी राजा नन्द के वियोग को न सहन कर सकने के कारण मानो मरने को उद्यत ह। (३) **अस्रम**—आसू। अस्रमश्रुणि शोणिते इति कोश। यहा उत्प्रेक्षा अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

यावदस्मिन् विषमदशापरिणामसुलभे भग्नाग्रशिलातले मुहूर्तमुपविशामि। (उपविश्याकर्ण्य च) अये! किमयमाकस्मिक शङ्खपटहविमिश्रो नान्दीनाद श्रूयते? य एष—

प्रकुर्वन श्रोतणा श्रुतिपथमसार गुरुतया
बहुत्वात् प्रासादै सपदि परिपीतोज्झित इव।
असौ नान्दीनाद पटुपटहशङ्खध्वनिमहान्
दिशा दैर्घ्य द्रष्टु प्रसरति सकौतूहल इव॥१४॥

अन्वय—गुरुतया श्रोतणा श्रुतिपथम असार प्रकुर्वन बहुत्वात प्रासाद सपदि परिपीतोज्झित इव पटुपटहशङ्खध्वनिमहान असौ नान्दीनाद सकौतूहल इव दिशा दैर्घ्य द्रष्टु प्रसरति॥१४॥

हिदी अनुवाद—तो अब क्षण भर टूटे हुए अग्रभाग वाले शिला-खण्ड पर बठता हूँ जो हमारी इस बुरी दशा के परिणाम योग्य है। (बठ कर और सुनकर) अरे यह शङ्ख और नगाडे के महानिनाद से भरा हुआ आनद का कोलाहल कहा से अकस्मात सुन पडा। ओह! यह तो सुनने वालो के कण कुहरो को अपनी गम्भीरता के कारण तुच्छ बनाता हुआ और अधिकता के कारण एक प्रकार से राजभवन से शीघ्र पिया हुआ और बाद में उगल कर फेंका हुआ और बडे बडे नगाडो और शङ्खो के महारव से बराबर बढता ही जाता हुआ यह आनद का महानाद ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो दिशाओ की दूरी नापने के लिए फलता जा रहा है।

Meanwhile I will sit down for a moment on this broken slab of stone which is easily available in this rough time of mine (*Sitting down and hearing*) Ha what is this sound of music at this hour in which the deep notes of drums and conches are intermingled The note of music along with the deep notes of drums and conches which due to its being so loud is as it were bursting the powerless ear holes of listeners and (*which*) being drunk and instantly thrown out by the big mansions proceeds as it were with curiosity to measure the expanse of the quarters

सस्कृत व्याख्या—य असौ गुरुतया दुधरत्वेन श्रोतृणाम शृण्वता जनानाम श्रुतिपथम कणविवरम असार प्रकुवन श्रवणभारवहनाशक्तमकुवन बहुत्वात नाद पूरोत्पीडस्य दुधषत्वात सपदि शीघ्रम प्रासाद हर्म्यै भवनर्वा परिपीतोज्झित इव आदौ परिपीत निगीण पश्चात उज्झित उद्वान्त इव पटुपटहशङ्खध्वनिमहान् पटु यथा स्यात्तथा पटहाना रणवाद्याना शङ्खाना च जयघोषकाणा ये ध्वनय निनादा त महान अतिप्रवद्ध असौ नान्दीनाद शत्रुप्रहषसूचक ध्वनि सकौतूहल इव कौतुकाक्रान्त इव दिशा दघ्य परिमाण द्रष्टु ज्ञातु प्रसरति सवतोधावतीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **विषमदशापरिणामसुलभे**—बुरी दशा के परिणाम मे सुलभ। अथवा बठने योग्य। विषमा चासौ दशा विषमदशा तस्या परिणाम तस्मिन सुलभ इति तस्मिन। कठिनदुरवस्थावशिष्टभागसुकरे। (२) **आकस्मिक**—यकायक सुनाई पडने वाला। (३) **शङ्खपटहविमिश्र**—शङ्ख और नगाडे की आवाज से मिला हुआ। कम्बुग्रीवपटहवाद्यश दमिलित। (४) **श्रुतिपथम असारम कुवन**—कान के छिद्रो को शक्तिहीन करता हुआ। (५) **गुरुतया**—

अधिक जोर का होने के कारण। (६) **परिपीतोज्झित इव**—पूव परिपीत पश्चात उज्झित इति परिपीतोज्झित पूवकालक —इत्यादि सूत्रेण समास। पीकर फिर वमन किया हुआ। अर्थात वह श द महान होने के कारण महल मे न समाकर। (७) **नादीनाद**—मङ्गल की आवाज। (८) **पटुपटहशङ्ख-ध्वनिमहान**—नगाडे और शङ्खो की ध्वनि के कारण महान। **दिशा दध्यम द्रष्टुम**—दिशाओ का विस्तार जानने के लिए। यहा उत्प्रेक्षा अलकार है। छन्द शिखरिणी है।

(विचिन्त्य) आ, ज्ञातम्। एष हि मलयकेतुसयमन-सञ्जातो राजकुलस्य। (इत्यर्धोक्ते सासूयम्) मौयकुलस्या-धिकपरितोष पिशुनयति। (सबाष्पम) कष्ट भो! कष्टम्!!

श्रावितोऽस्मि श्रिय शत्रोरभिनीय च दर्शित।
अनुभावयितु मन्ये यत्न सम्प्रति मा विधे ॥१५॥

अन्वय—शत्रो श्रियम श्रावित अस्मि अभिनीय च दर्शित मन्ये सम्प्रति माम् अनुभावयितु विधे यत्न ॥१५॥

हिदी अनुवाद—(सोच कर) आह समझ गया। यह मलयकेतु के पकडे जाने से उत्पन्न राजकुल का (ऐसा आधा कह कर ईर्ष्या के साथ) यह मौय कुल की अधिक प्रसन्नता को सूचित करता है। (आसू के साथ) कष्ट, महान कष्ट। शत्रु की राज्य लक्ष्मी मुझको सुनाई गई है और समीप लाकर दिखाई भी गई। म समझता हू कि इस समय मुझे अनुभव कराने के लिए भाग्य का यह प्रयत्न है।

(*Thinking*) O I see This is the noise of the great joy (*of the royal family*) caused by the capture of Malayaketu (*Saying this half only with spite*) of the Maurya family (*With tears*) Hard Oh hard I have been told of the fortune of the enemy and have been made to see it by being dragged near it I think that this is the effort of Fate to make me feel it

सस्कृत याख्या—शत्रो अमित्रस्य श्रिय लक्ष्मीम श्रावित आकर्णित अस्मि अभिनीय च मदन्तिक प्रापय्य च ता (श्रियम) दर्शित साक्षात्कारित मन्य सम्प्रति अधुना तु विधे दुर्दैवस्य यत्न उद्यम माम अनुभावयितुम तामेव श्रिय सर्वात्मना स्वीकारयितुम विद्यते।

टिप्पणी

(१) **श्रावित**—सुनाया गया। श्रु+णिच+क्त। (२) **अभिनीय**—समीप मे लाकर। अभि+नी+ल्यप। (३) **मलयकेतुसयमनसजात**—मलय-केतु के पकड जाने से उत्पन्न। मलयकेतो सयमनात् ग्रहणात सञ्जात उत्पन्न। (४) **पिशुनयति**—सूचित करता है। (५) **अनुभावयितुम**—अनुभव कराने के लिए। अनु+भू+णिच+तुमुन। राक्षस के कहने का भाव है कि पहले विराधगुप्त तथा करभक आदि के द्वारा सुना था अब देख रहा हूँ। तथा चन्दनदास को छुडाने के लिए शत्रु की लक्ष्मी का अनुभव भी करना पडेगा। इसमे उत्प्रेक्षा अलङ्कार तथा अनुष्टुप छन्द है।

पुरुष—आसीणो अअ। ता जाव अज्जचाणक्कस्स आणत्तिं सपादेमि। (आसीनोऽयम। तद्यावदार्यचाणक्य-स्याज्ञप्तिं सम्पादयामि।) (राक्षसमपश्यन्निव तस्याग्रतो रज्जुपाशेन कण्ठमुद्बध्नाति।)

राक्षस—(विलोक्य स्वगतम) अये! कथमयमात्मान-मुद्बध्नाति? नन्वयमहमिव दु खितस्तपस्वी। भवतु, पृच्छा-म्येनम्। (उपसृत्य प्रकाशम) भद्र भद्र! किमिदमनुष्ठीयते?

पुरुष—(सवाष्पम) अज्ज! ज प्पिअबअस्सबिणास-दु खिदो अह्मादिसो मन्दभाओ जणो अणुचिट्ठदि। (आर्य! यत प्रियवयस्यविनाशदु खितोऽस्मादृशो मन्दभाग्यो जनोऽनु-तिष्ठति।)

राक्षस—(स्वगतम) प्रथममेव मया ज्ञात, नूनमहमिवा-यमातस्तपस्वीति। भवतु, पृच्छाम्येनम (प्रकाशम) भद्र! व्यसनसब्रह्मचारिन्! यदि न गुह्य, नातिभारिक वा, तत श्रोतुमिच्छामि किं ते प्राणपरित्यागकारणम?

पुरुष—(निरूप्य) अज्ज! ण रहस्स, ण वा अतिगुरुअ, किन्तु ण सक्कणोमि प्पिअबअस्सबिणासदुक्खिदहिअओ एत्ति-अमत्तम्पि मरणस्स कालहरण कादु। (आर्य! न रहस्य,

न वाऽतिगुरुक, किन्तु न शक्नोमि प्रियवयस्यविनाशदु खित-हृदय एतावन्मात्रमपि मरणस्य कालहरण कर्तुम् ।)

राक्षस —(नि श्वस्याऽऽत्मगतम) कष्टमेतेषु सुहृदव्य-सनेषु परवदुदासीना प्रत्यादिश्यामहे वयमनेन । (प्रकाशम) भद्र ! यदि न रहस्य, नाऽतिगुरुक वा, तत पुन श्रोतु-मिच्छामि । कथ्यता का गति दु खस्येति ?

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—अब यह (राक्षस) बठ गया है। तो अब आय चाणक्य की आज्ञा का पालन करूँ। (राक्षस को मानो न देखता हुआ उसी के सामने रस्सी का फदा गले में डाल लेता है।)

राक्षस—(देखकर अपने मन में) अरे यह तो फासी लगाना चाहता है। मेरे समान यह बेचारा भी कोई दुखिया होगा। अच्छा, इससे पूछता हू (पास जाकर प्रकट) अरे भले, मानुष ! यह क्या कर रहे हो ?

पुरुष—(आसू के साथ) आय, वही कर रहा हूँ जो अपने प्रिय मित्र के विनाश से दु खी कोई मेरे समान अभागा व्यक्ति कर सकता है।

राक्षस—(मन में) म पहले ही समझ गया कि मेरी तरह यह बेचारा भी कोई दु खी है। अब इससे पूछता हूँ। (प्रकट) क्यो भाई ! मेरे व्यसन के भाई ! (साथी) अगर बहुत गुप्त न हो अथवा बहुत दु खमय न हो तो म सुनना चाहता हूँ कि प्राण त्यागने का तुम्हारा क्या कारण है ?

पुरुष—(देख भाल कर) आय, इसमें न तो कुछ गोपनीय है और न दु ख दायी, कितु अपने प्रिय मित्र के विनाश से सतप्त हृदय वाला म मरने के समय को इतना भी गवाने में समथ नहीं हूँ।

राक्षस—(आह भर कर मन में) हाय, मित्र की इन विपत्तियों में इतर जन की तरह उदासीन हम इसके द्वारा शिक्षा दिए जा रहे ह। (प्रकट) भद्र, अगर यह गुप्त बात नहीं है या अत्यत महान नहीं है तो म पुन सुनना चाहता हू। कहो, दु ख का क्या कारण है ?

Man—He is seated Now I should carry out the orders of Noble Chanakya (He ties up his neck with the noose of the rope in front of Rakshas as if not seeing him)

Rakshas (*Seeing to himself*)—How so this man is hanging himself The poor fellow is also distressed like me Well I shall ask him (*Going near and aloud*) Oh good man what are you doing ?

Man (*With tears*)—I am doing the same what an ill starved man like myself does Noble Sir grieved by the loss of his dear friend

Rakshas (*To himself*)—At the very outset I guessed that this poor fellow was grieved like myself (*Aloud*) O fellow-student in the school of ill luck if not secret or not very painful then I wish to hear what is the reason of giving up your life

Man—Noble Sir it is neither a secret nor very painful but my heart is so much grieved at the loss of my dear friend that I cannot brook even this much loss of time in dying

Rakshas (*Sighing to himself*)—It is very sorrowful This self of mine indifferent like a stranger in the distress of my friend is being taught a lesson by this man (*Aloud*) Good man if it is neither a secret nor very painful I wish to hear it Tell me what is the cause of your grief ?

पुरुष —अहो ! णिब्बन्धो अज्जस्स, का गदी एसो णिबेदेमि, अत्थि एत्थ णअरे मणिआरसेटठी जिष्णुदासो णाम । (अहो ! निर्बन्ध आयस्य, का गतिरेष निवेदयामि । अस्त्यत्र नगरे मणिकारश्रेष्ठी जिष्णुदासो नाम ।)

राक्षस —(स्वगतम्) अस्ति जिष्णुदासश्चन्दनदासस्य पर मित्रम् । (प्रकाशम) किं तस्य ?

पुरुष —सो मम प्पिअबअस्सो । (स मम प्रियवयस्य ।)

राक्षस —(सहषमात्मगतम्) अये ! प्रियवयस्य इत्याह ॥ अत्यन्तसन्निकृष्ट सम्बन्ध । हन्त ! ! ज्ञास्यति चन्दनदासस्य वृत्तान्तम् । (प्रकाशम्) भद्र ! कि तस्य ?

पुरुष —(सवाष्पम्) सपद सो दीणअणदिण्ण बिहबो ज्वलण प्पविसिदुकामो णअरादो णिक्कन्तो । ता अह पि जाब तस्स प्पिअबअस्सस्स असुणिदब्ब ण सुणेमि, ताब अत्ताण उब्बन्धिअ बाबादेमि त्ति इम जिष्णुज्जाण आअदो । (साम्प्रत स दीनजनदत्तविभवो ज्वलन प्रवेष्टुकामो नगरान्निष्क्रान्त । तदहमपि यावत्तस्य प्रियवयस्यास्याश्रोतव्य न शृणोमि तावदात्मानमुद्बध्य व्यापादयामीतीद जीर्णोद्यानमागत ।)

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—ओह ! आय का ऐसा आग्रह । क्या उपाय है । अब बताता हू । इस नगर में जिष्णुदास नामक एक सेठ जौहरी है ।

राक्षस—(मन में) जिष्णुदास च दनदास का परम मित्र है। (प्रकट) उसको क्या हुआ ?

पुरुष—वह मेरा प्रिय मित्र है।

राक्षस—(प्रसन्नता से स्वगत) अरे "प्रिय मित्र है" यह कहा। बडा समीप का सम्बध है। हाय, यह तो च दनदास का हाल जानता होगा। (प्रकट) भद्र, उसको क्या हुआ ?

पुरुष—(आसू के साथ) इस समय गरीबों को अपना धन, विभव देकर वह आग में जलने के लिए नगर से बाहर निकल गया है। इसलिए जब तक म उस प्रिय मित्र की न सुनने योग्य बात (मृत्यु) नहीं सुनता हूँ तब तक अपने को फासी लगाकर मार डालता हूँ। इस लिए इस जीण उपवन में आया हूँ।

Man—Oh the insistence of Noble Sir What alternative I will tell you There is a banker Jeweller in this city named Jishnudas

Rakshas (*To himself*)—There is Jishnudas the friend of Chandandas (*Aloud*) What has become of him ?

Man—He is my great friend

Rakshas (*Joyfully to himself*)—Ha ! he says he is his dear friend There is very close relationship He must be knowing the news of Chandandas (*Aloud*) My good man what has happened to him ?

Man—At this time giving his jewellery and wealth to poor men he has gone out of the city with the intention of entering fire I myself have come to this ruined garden to hang myself to death before I hear any sad news about him

टिप्पणी

(१) **रज्जुपाशेन**—रस्सी के फ दे से। रज्जुस्थित पाश (मध्यमपद लोपी स०) तेन। करणे ततीया। **तपस्वी**—बेचारा। (२) **व्यसनसब्रह्मचारिन**—दु ख के साथी। यसन रूपी पाठशाला के साथी। समानो ब्रह्मचारी सब्रह्मचारी =सहाध्यायी। यसनेन सब्रह्मचारी यसनसब्रह्मचारी तत्सम्बोधन यसनसब्रह्मचारिन। (३) **गुरुकम**—बहुत भारी या अति कष्टदायक। गुरु+ठक्। (४) **प्रियवयस्यविनाशदु खितहृदय**—प्रिय मित्र के नाश के कारण दु खी हृदय वाला। प्रियवयस्यनाशन दु खित हृदय यस्य स (ब० व्री०)। (५) **प्रत्यादिश्यामहे**—शिक्षा दिया जा रहा हूँ (कि तुम भी ऐसा ही करो)। राक्षस अब तक समझ रहा था कि म ही सबसे बडा मित्रवत्सल हूँ। किन्तु आज उसका एक ऐसे मित्रवत्सल से सामना हो गया है कि उसके निकट वह अपने आपको

लज्जित समझ रहा है। (६) निबन्ध—आग्रह। (७) दीनजनदत्तविभव—गरीबो को धन देकर। दीनजनाय दत्तो विभवो येन स। (८) अश्रोतव्यम—न सुनने योग्य बात (मृत्यु)।

राक्षस —भद्र! अथाग्निप्रवेशे तव सुहृद: को हेतु:? किमौषधपथातिगैरुपहतो महाव्याधिभि:?

पुरुष —अज्ज! णहि णहि। (आर्य! नहि नहि।)

राक्षस —किमग्निविषकल्पया नरपतेर्निरस्त: क्रुधा?

पुरुष —अज्ज! सन्तं पाबं, सन्तं पाबं। चन्दउत्तस्स जणबदेसु अणिससा पडिबत्ती। (आय! शान्तं पाप, शान्तं पापम्। चन्द्रगुप्तस्य जनपदेष्वनृशसा प्रतिपत्ति:।)

राक्षस —अलभ्यमनुरक्तवान् किमयमन्यनारीजनम्?

पुरुष —(कर्णौ पिधाय) अज्ज! सन्तं पाबं, सन्तं पाबं। अभूमी क्खु एसो विणअणिधाणस्स सेट्ठिजणस्स, बिसेसदो जिष्णुदासस्स। (आर्य! शान्तं पाप, शान्तं पापम्। अभूमि: खल्वेष विनयनिधानस्य वणिग्जनस्य, विशेषतो जिष्णुदासस्य।)

राक्षस —किमस्य भवतो यथा सुहृद एव नाशोऽवश:?॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—भद्र, क्या कारण है कि तुम्हारे मित्र आग में जल मरना चाहते है? क्या उन्हें कोई ऐसी बीमारी तो नहीं लगी है जिसका औषध से उपचार असम्भव हो चुका?

पुरुष—आर्य, नहीं ऐसी बात नहीं है।

राक्षस—क्या आग और विष के समान भयकर राजा के क्रोध के शिकार तो नहीं है?

पुरुष—आर्य, पाप शान्त हो, पाप शान्त हो (ऐसी बात नहीं) चन्द्रगुप्त के राज्य में क्रूर प्रवृत्ति नहीं है।

राक्षस—तो क्या कही किसी ऐसी पराई स्त्री पर तो आसक्त नहीं है जो उन्हें न मिल सके?

पुरुष—(कान बन्द करके) आर्य, पाप शान्त हो, पाप शान्त हो। यह अत्यन्त विनीत वणिग जाति, विशेष करके जिष्णुदास के लिए अयोग्य बात है।

राक्षस—क्या आपकी तरह मित्र का विनाश ही इनके विनाश का कारण है?

Rakshas—Why does your friend wish to kill himself by entering fire ? Is he suffering from a disease that is incurable by medicines ?

Man—Noble Sir no no

Rakshas—Has he become the victim of the king s wrath which is all but fire and poison ?

Man—Noble Sir begone sin begone sin There is no cruelty in the kingdom of Chandragupta

Rakshas—Has he fallen in love with some lady who is difficult to get ?

Man (*Blocking the ears*)—Begone sin this humble Bania class specially Jishnudas is no subject for such indecorum

Rakshas—Has unavoidable loss of friend happened to him as to you ?

टिप्पणी

यह उपरोक्त वार्ता श्लोक मे इस प्रकार है—राक्षस कहता है—

किमौषधपथातिगरुपहतो महाव्याधिमि
किमग्निविषकल्पया नरपतेर्निरस्त क्रुधा ।
अलभ्यमनुरक्तवान् किमयमन्यनारीजनम
किमस्य भवतो यथा सुहृद एव नाशोऽवश ॥

अन्वय—किमौषधपथातिग व्याधिभि उपहत किमग्निविषकल्पया नरपते क्रुधा निरस्त किम अयम अलभ्यनारीजनम अनुरक्तवान किम भवतो यथा सुहृद अवश नाश एव ।

(१) **औषधपथातिग**—औषध से न अच्छी होने वाली । औषधाना पन्था तम अतिगच्छन्तीति ये तादश असाध्यरिति भाव । पन्था मे राजाह सखिभ्यष्टच सूत्र से समासा त अच प्रत्यय हो जाने से औषधपथ रूप बना। (२) **महा व्याधिभि**—बडी बीमारी असाध्यरोग । (३) **उपहत**—पीडित । उप+हन+क्त । (४) **अग्निविषकल्पया**—आग और विष के समान । अग्नि च विष च अग्निविषे ताभ्याम ईषदूना इति अग्निविष+कल्पप+टाप=अग्निविषकल्पा, तया । (५) **नरपते क्रुधा**—राजा के क्रोध से। नृपते क्रोधेन निरस्त समाक्षिप्त किम । येन आत्मान व्यापाद्य राजरोष परिहर्त्तुमिच्छति । (६) **अलभ्यम अन्य नारीजनम अनुरक्तवान**—क्या एसी स्त्री से प्रेम कर रहा है जो मिल नही सकती । न लभ्यम अलभ्यम दुष्प्राप्य अन्यनारीजनम—परस्त्रियम । अनुरक्त

वान—प्रणयवान आसीत। (७) किमस्य भवतो यथा अवश सुहृद नाश— क्या आपके समान इसके मित्र का भी विनाश हो गया है जिसके कारण यह अपना प्राण दे रहा है। अवश—अप्रतीकार्य्य—जिसका कोई उपाय नही है। वह नाश जो रोका नही जा सकता। इस श्लोक मे रूपक अलकार तथा पृथ्वी छद है। छद का लक्षण—'जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पथ्वी गुरु ।

पुरुष—अज्ज! अध इ? (आय! अथ किम्?)

राक्षस—(सावेगमात्मगतम) चन्दनदासोऽस्य सुहृद प्रियसुहृत, तस्य प्रियसुहृद्विनाश एवाऽग्निप्रवेशहेतुरिति यत् सत्य समाकुलित एवाऽस्मि सुहृतस्नेहपक्षपातिना हृदयेन। (प्रकाशम्) भद्र! तस्यापि तव सुहृद सुचरित विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि।

पुरुष—अज्ज! अदो अबर ण सक्कणोमि मन्दभाओ मरणस्स बिग्घमुप्पादेदु। (आर्य! अतोऽपर न शक्नोमि मन्दभाग्यो मरणस्य विघ्नमुत्पादयितुम।)

राक्षस—श्रवणीया कथा कथयतु भद्रमुख।

पुरुष—का गदी? एसो क्खु णिबेदेमि, णिसामेदु अज्जो। (का गति? एष खलु निवेदयामि, निशामयत्वार्य।)

राक्षस—भद्र! दत्तावधानोऽस्मि।

पुरुष—अत्थि, जाणादि अज्जो, एत्थ णअरे मणिआर-सेटठी चन्दणदासो णाम। (अस्ति, जानात्याय, इह नगरे मणिकारश्रेष्ठी चन्दनदासो नाम।)

राक्षस—(सविषादमात्मगतम्) एतत्तदपावृतमस्म-द्विनाशदीक्षाप्रकाशद्वार दैवेन। हृदय! स्थिरीभव, किमपि ते कष्टतरमाकणनीयम्। (प्रकाशम्) भद्र! श्रूयते मित्र-वत्सल स साधु। किं तस्य?

पुरुष—सो एदस्स जिण्णुदासस्स प्पिअबअस्सो होदि। (स एतस्य जिष्णुदासस्य प्रियवयस्यो भवति।)

राक्षस –(स्वगतम्) अयमभ्यण शोकवज्रपातो हृदयस्य। (प्रकाशम्) ततस्तत ?

पुरुष —तदो जिण्णुदासेण प्पिअबअस्सस्स सिणेहसरिस अज्ज बिण्णत्तो चन्दउत्तो। (ततो जिष्णुदासेन प्रियवयस्यस्य स्नेहसदृशमद्य विज्ञप्तश्चन्द्रगुप्त ।)

राक्षस —कथय किमिति ?

पुरुष —देव! अत्थि मे गेहे कुडुम्बभरणपज्जत्तो अत्थो तस्स बिणिमएण मुञ्चिज्जदु मे प्पिअबअस्सो चन्दणदासो त्ति। (देव! अस्ति मे गृहे कुटुम्बभरणपर्य्याप्तोऽथ तस्य विनिमयेन मुच्यता मे प्रियवयस्यश्चन्दनदास इति।)

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—आय, और क्या (अर्थात यही बात है।)

राक्षस—(आवेग के साथ मन में) चन्दनदास इसके मित्र का प्रिय मित्र है और उसके प्रिय मित्र का विनाश ही इसके अग्नि में प्रवेश करने का कारण है। इसलिए मित्र स्नेह से म व्याकुल हो रहा हूँ (प्रकट) भद्र! तुम्हारे उस मित्र का भी हाल विस्तार से सुनना चाहता हू।

पुरुष—आय, इसके आगे (कहकर) मे अपने मरने में विघ्न नहीं पदा कर सकता।

राक्षस—भाई, अपने मित्र की बातें बताओ, वे सुनने योग्य होगी।

पुरुष—क्या उपाय है। कहता हूँ। सुनिए।

राक्षस—भद्र, म ध्यान दे रहा हूँ।

पुरुष—आय जानते होगे कि इस शहर में एक जौहरी सेठ च दनदास है।

राक्षस—(विषाद के साथ मन में) अब तो दुर्दैव ने हमारे लिए, हमें विनाश की दीक्षा देने के लिए अपना मुख्य द्वार खोल ही दिया। हृदय, दृढ़ बनो। अभी तो तुमको कोई कष्टतर बात सुननी पडेगी। (प्रकट) भद्र, सुना है कि वह सज्जन मित्र का प्रेमी है। उनका क्या हुआ ?

पुरुष—वह इस जिष्णुदास का प्रिय मित्र है।

राक्षस—(मन में) अब तो हृदय पर शोक रूपी वज्रपात हुआ ही चाहता है। (प्रकट) तब ?

पुरुष—तब आज उस जिष्णदास ने प्रिय मित्र के स्नेह के योग्य बात च द्र गुप्त से कही।

राक्षस—कहो क्या है ?

पुरुष—महाराज मेरे घर में कुटुम्ब के पालन-पोषण के लिए काफी धन है। उसको लेकर मेरा मित्र च दनदास छोड दिया जाय।

Man—What else Noble Sir (Yes)

Rakshas (*With agitation to himself*)—Chandandas is the dear friend of his friend and his destruction is the cause of his entering into fire thus really my heart is trembling from partiality caused by affection (*Aloud*) Noble Sir I wish to hear in detail the good deeds of your friend

Man—I the unlucky one do not want to create another obstacle to my death after this

Rakshas—Good man relate the story which is worth listening to

Man—What help Here I relate and let Noble Sir hear it

Rakshas—Good man I am attentive

Man—Your Noble Sir knows that there is a banker jeweller in this city named Chandandas

Rakshas (*Sorrowfully to himself*)—Now ill fate has opened its door to my death O heart be steady there is something more terrible for you to hear (*Aloud*) Good man it is reported that gentleman is affectionate towards his friends What has befallen him ?

Man—He is a friend of Jishnudas

Rakshas (*To himself*)—Here the stroke of the thunderbolt of the grief of my heart is at hand (*Aloud*) What next ?

Man—Today Jishnudas spoke to Chandragupta as befitting the love of his friend

Rakshas—Say what is it ?

Man—Sir there is sufficient wealth in my house to support the family so in exchange for it let my dear friend Chandandas be set free

टिप्पणी

(१) **सुहृत्स्नेहपक्षपातिना**—मित्र के स्नेह का पक्षपाती मित्र से स्नेह करने वाला। मित्रानुरागासक्तेन। सुहृद स्नेह, तस्मिन पक्षपात, स अस्ति अस्य इति सुहृत्स्नेहपक्षपात+इनि। (२) **विस्तरेण**—वि+स्त+अप भावे=विस्तर। विस्तारशब्दे तु प्रथने वावशब्दे इति सूत्रेण घञ्प्रत्यय। (३) **अतोऽपरम**—पुरुष यह समझता है कि जब सारी कथा राक्षस को मालूम हो जायगी तो वह चन्दनदास को बचाने के लिए आत्म समपण कर ही देगा और उस समय वह (पुरुष तो ऊपर से प्राण दे रहा था न कि मन से) अपना प्राण न दे सकेगा क्योकि चन्दनदास के बचने से जिष्णुदास भी बच जायगा। (४) **अभ्यण**—समीप। अभि+अद+क्त कर्तरि=अभ्यण वा अभ्यर्दित।

(५) स्नेहसदशम—प्रेम के उपयुक्त। (६) कुटुम्बभरणपर्याप्त—कुटुम्ब के पोषण के वास्ते पर्याप्त। यह अथ=धन की अधिकतामात्र को दिखलाने के लिए प्रयुक्त हुआ है।

राक्षस—(स्वगतम्) साधु जिष्णुदास! साधु!! अहो! दर्शितो मित्रस्नेह। कुत?—

पितन् पुत्रा पुत्रान् परवदभिहिसन्ति पितरो
यदथ सौहाद सुहृदि च विमुञ्चन्ति सुहृद।
प्रिय मोक्तु तद्यो व्यसनमिव सद्यो व्यवसित
कृतार्थोऽय सोऽथस्तव सति वणिक्त्वेऽपि वणिज ॥१७॥

अवय—यदथ पुत्रा पितन पितर पुत्रान परवत अभिहिसन्ति सुहृद सुहृदि सौहाद विमुञ्चन्ति च। स अयम अथ वणिज तव वणिक्त्वे सति अपि कृताथ य (त्व) तत प्रिय यसनमिव सद्य मोक्तु यवसित ॥१७॥

हिदी अनुवाद—राक्षस—(अपने मन में) धय हो जिष्णुदास! तुमने मित्र का प्रेम दिखा दिया। जिस धन के लिए पिता पुत्रो को, और पुत्र पिता को पराये की तरह मार डालते ह जिसके लिए मित्र अपने मित्रो के प्रति अपनी मित्रता को त्याग देते ह उसी धन को तुम बनिया होते हुए भी ऐसे छोडने को तयार हो जसे कोई महा सकट से छुटकारा पा रहा हो। वह धन अब कृताथ हो गया।

Rakshas (*To himself*)—Bravo of Jishnudas bravo you have displayed the love for a friend For—You being a trader are ready to part with the wealth as if with a calamity for the sake of which the fathers kill their sons and the sons kill the fathers like enemies and friends renounce friendship in their friends Now that wealth has gained its purpose

सस्कृत याख्या—यदथ यस्य धनस्य कृते पुत्रा आत्मजा पितन जनकान पितर जनका पुत्रान आत्मजान् परवत शत्रुवत अभिहिसन्ति घ्नति सुहृद मित्राणि सुहृदि मित्र सौहाद्र स्नह विमुञ्चन्ति त्यजति स अयम अथ धनम तव वणिज वणिक्त्वे सत्यपि लोभकापण्यादिसम्भावनाभूमिभूतवणिगजातीयत्वेपि कृताथ कृतकाय सफल य त्व तत प्रिय धनम यसनमिव दारुण दु खमिव सद्य तत्क्षणम मोक्तु हातुम यवसित उद्यत।

टिप्पणी

(१) सौहार्दम—सुहृदो भाव इति सुहृत+अण हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च इत्युभयपदवृद्धि । (२) वणिक्त्वे सति अपि—भाव यह है कि बनिया धन के लोलुप होते ह और उसे जल्दी खर्च नही करना चाहते पर जिष्णुदास बनिया होत हुए भी उसी धन को ऐसा त्याग रहा है जसे कोई अपनी व्याधि को त्यागता है। इसमे उपमा अलकार और शिखरिणी छद है।

(प्रकाशम्) भद्र ततस्तथाऽभिहितेन सता कि प्रतिपन्नम् मौर्येण ।

पुरुष —अज्ज तदो एव भणिदेण चन्दउत्तेण प्पडिभणिदो सेठी जिण्णुदासो—"जिण्णुदास ण मए अत्थस्स कालणेण सेट्ठी चन्दणदासो सजमिदो, किदु प्पच्छादिदो अणेण अमच्चरक्खसस्स घरअण समप्पेदि, तदो अत्थि से मोक्खो अण्णधा प्पाणहरो से दण्डो" त्ति भणिअ बज्झट्ठाण आणीदो चन्दणदासो। तदो जाव प्पिअबअस्सस्स चन्दणदासस्स असुणिदब्ब ण सुणेमि ताबज्जेव अत्ताण बाबादेमि' त्ति ज्जलणे प्पबिसिदुकामो सेट्ठी जिण्णुदासो णअरादो णिग्गदो । अह बि जाब प्पिअबअस्सस्स जिण्णुदासस्स असुणिदब्ब ण सुणेमि, ताब उब्बन्धिअ अत्ताण बाबादेमि, त्ति इम जिण्णुज्जाण आगदो ह्मि । (आय ! तत एव भणितेन चन्द्रगुप्तेन प्रतिभणित श्रेष्ठी जिष्णुदास—'जिष्णुदास ! न मयाऽर्थस्य कारणेन श्रेष्ठी चन्दनदास सयमित, किन्तु प्रच्छादितोऽनेनामात्यराक्षसस्य गृहजन बहुशो याचितेनाऽपि न समर्पित इति। तद्यद्यमात्यराक्षसस्य गृहजन समपर्यति, ततोऽस्त्यस्य मोक्ष, अन्यथा प्राणहरोऽस्य दण्ड'• इति भणित्वा वध्यस्थानमानीतश्चन्दनदास । ततो 'यावत् प्रियवयस्यस्य चन्दनदासस्याश्रोतव्य न शृणोमि, तावदेवात्मान व्यापादयामि' इति ज्वलने प्रवेष्टुकाम श्रेष्ठी जिष्णुदासो नगरान्निर्गत । अहमपि यावत्

प्रियवयस्यस्य जिष्णुदासस्याश्रोतव्य न शृणोमि, तावदुद-बध्यात्मान व्यापादयामि, इतीद जीर्णोद्यानमागतोऽस्मि ।)

हि दी अनुवाद—राक्षस—(प्रकट) तब ऐसा कहे जाने पर मौर्य्य ने क्या किया ?

पुरुष—आय, तब च द्रगुप्त इस प्रकार कहे जाने पर सेठ जिष्णुदास से बोला "जिष्णुदास, मने धन के लिए च दनदास को नहीं कद किया है, बल्कि इसने अमात्य राक्षस के परिवार को छिपाया है और बार बार मागने पर भी उ हें समपण नहीं किया, तो यदि यह अमात्य राक्षस के परिवार को मुझे दे दे तो इसको छोड दू गा, नहीं तो इसकी सजा फासी होगी" । ऐसा कहकर च दनदास को वध्य भूमि में लाया गया है तो "जब तक प्रिय मित्र च दनदास की न सुनने योग्य बात (मौत) नहीं सुन लेता तब तक आत्महत्या कर लेता हूँ" ऐसा सोच कर आग में जल मरने की कामना से सेठ जिष्णुदास नगर से निकल गया है । म भी जब तक प्रिय मित्र जिष्णुदास की मत्यु नही सुन पाता तब तक फासी लगाकर अपनी हत्या कर लेता हूँ, इसीलिए इस जीर्णोद्यान में आया हू ।

Rakshas (*Aloud*)—What dıd Maurya say on beıng spo ken so ?

Man—Chandragupta beıng told so saıd to Jıshnudas O Jıshnudas I have not arrested Chandandas for money He has concealed the famıly of mınıster Rakshas and has not surrendered ıt though beıng asked repeatedly Well ıf he delı vers ıt there ıs release for hım otherwıse there ıs death sentence for hım saying thıs he ordered Chandandas to be brought to the place of executıon Then Banker Jıshnudas resolvıng that by the tıme I do not hear the unhearable of my frıend I wıll kıll myself has gone out of the cıty wıth the ıntentıon of enter ıng fire I too have come to thıs dılapıdated garden wıth the ıntentıon of kıllıng myself by hangıng by the tıme I do not hear dısagreeable about my dear frıend Jıshnudas

सस्कृत याख्या—नत तदा एवम इत्थम भणितेन कथितेन च द्रगप्तेन प्रति भणित प्रत्युक्त जिष्णुदास न मया अथस्य कारणेन धनस्य कृते श्रष्ठी च दनदास सयमित बद्ध किन्तु प्रच्छादित गप्त अनेन च दनदासेन अमात्यराक्षसस्य गह जन परिवार बहुश मुहु मुहु याचितोऽपि कथितोऽपि न समपयति ददाति तत यदि चेत अमात्यराक्षसस्य गहजन परिवार समपयति तत तदा अस्ति अस्य मोक्ष मुक्ति अ यथा नोचेत प्राणहर अस्य दण्ड अर्थात तस्य जीवनाश भविष्यति इति भणित्वा कथयित्वा वध्यस्थानम वध्यभूमिम आनीत च दनदास । तत

यावत प्रियवयस्यस्य प्रियमित्रस्य च दनदासस्य अश्रोत यम मरणमित्यथ न शृणोमि तावदेवात्मान यापादयामि विनाशयामि इति विचाय ज्वलने अग्नौ प्रवेष्टुकाम प्रवेशच्छुक श्रेष्ठी च दनदास नगरात पुरात निगत बहिगत । अहमपि यावत् प्रियवयस्यस्य प्रियसुहृद जिष्णुदासस्य अश्रोत यम मरणम न शृणोमि तावत उदबध्य ऊध्वब धन कृत्वा आत्मान यापादयामि प्राणान त्यजामि इति इद जीर्णोद्यानम पुरातनोपवनम आगतोऽस्मि प्राप्तोऽस्मि ।

टिप्पणी

(१) **अभिहितेन**—कथितेन । अभि+धा+क्त धा इत्यस्य हि आदेश । (२) **प्रतिपन्नम**—उत्तरितम । प्रति+पद+क्त । (३) **प्राणहर दण्ड**—फासी की सजा । प्राणान हरतीति प्राणहर प्राण+हृ+अच । कत्तरि । (४) **आनीत**—लाया गया । आ+नी+क्त । कही पर आनायित पाठ है । आ+नी+णिच+क्त ।

राक्षस—न खलु व्यापादितश्चन्दनदास ?

पुरुष—अज्ज ! ण दाब बाबादीअदि । सो क्खु सप्पद पुणो पुणो अमच्चरक्खसस्स घरजण जाचीअदि । ण सो मित्तबच्छलदाए जाचीअन्तो बि त समप्पेदि । ता एदिणा कालणेण होदि से मरणस्स कालहलण । (आर्य ! न तावत् व्यापाद्यते । स खलु साम्प्रत पुन पुनरमात्यराक्षसस्य गृहजन याच्यते । न स मित्रवत्सलतया याच्यमानोऽपि त समर्पयति । तदेतेन कारणेन भवत्यस्य मरणस्य कालहरणम् ।)

राक्षस—(सहर्षमात्मगतम्) साधु वयस्य चन्दनदास ! साधु साधु !—

शिवेरिव समुद्भूत शरणागतरक्षया ।
निचीयते त्वया साधो ! यशोऽपि सुहृदा विना ॥१८॥

अन्वय—साधो ! शरणागतरक्षया समुदभूत शिवे यश इव त्वया सुहृदा विनाऽपि निचीयते ॥१८॥

राक्षस—चन्दनदास मारा तो नहीं गया ?

पुरुष—आर्य, वह मारा नहीं गया है । अभी उससे बार-बार अमात्य राक्षस

का परिवार मागा जा रहा है। वह मित्र स्नेह के कारण मागने पर भी समपण नहीं कर रहा है। इस प्रकार उसके मरने का समय टलता जा रहा है।

राक्षस—(प्रसन्नता से मन में) मित्र चन्दनदास, शाबाश, शाबाश। हे साधो (महापुरुष), जो यश शिवि को शरणागत की रक्षा करने से मिला था वह (यश) तुमको बिना मित्र के ही मिल गया।

Rakshas—Has not Chandandas been executed ?

Man—Noble Sir he has not been killed He is repeatedly being demanded to surrender the family of minister Rakshas but through the love for his friend he is not giving it up for this reason his execution is being delayed

Rakshas (*Joyfully to himself*)—Bravo friend Chandandas bravo You have even without your friend acquired the same fame which (*king*) Shivi acquired by giving shelter to a refu gee

सस्कृत व्याख्या—साधो सज्जन शरणागतरक्षया शरणे आगतस्य कपोतस्य रक्षया त्राणेन समुद्भूतम प्राप्त शिवे तदाख्यस्य नृपस्य यश कीर्ति इव त्वया भवता चन्दनदासेन सुहृदा मित्रेण मया तवोपकाराणा साक्षिणा विनाऽपि निचीयते सुतरामज्यत इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **स गहजन याच्यते**—उससे अमात्य राक्षस का परिवार मागा जा रहा है। त गहजन याचते का कमवाच्य मे स गहजन याच्यते हुआ। गौणे कमणि दुह्यादे प्रधाने नीहृकृष्वहाम। विभक्ति प्रथमा ज्ञेया द्वितीया च तदन्यत इस नियम से याच का गौणकम त को कमवाच्य मे प्रथमा विभक्ति हुई। (२) **शरणागतरक्षया**—शरणागत मे आये हुए की रक्षा से। शिवि न एक बार कपोत की रक्षा बाज से की थी। इन्द्र न बाज का रूप धारण करके कपोत रूप धारण किए हुए अग्नि का एक बार पीछा किया था। शिवि की परीक्षा लेने के लिए कपोत शिवि की शरण मे गया। बाज के बार बार मागन पर भी राजा न वह कबूतर बाज को नही दिया। बल्कि अपन शरीर का मास काटकर बाज को कबूतर के बदले देन को उद्यत हो गया। (३) **सुहृदा विना**—बिना मित्र के। तात्पय यह है कि शिवि न तो शरणागत क समक्ष अपना मास दिया पर तुम तो परोक्ष मे मित्र के न रहते हुए भी उसके लिए अपना प्राण त्याग कर रहे हो। यहा उपमा तथा व्यतिरेक अलकार की ससृष्टि है और अनुष्टुप छन्द है।

(प्रकाशम) भद्र, भद्र ? गच्छ शीघ्रमिदानी जिष्णुदास ज्वलनप्रवेशान्निवारय। अहमपि चन्दनदास मरणान्मोचयामि।

पुरुष —अध केण उण उबाएण अज्जो चन्दणदास मरणादो मोचेदि ? (अथ केन पुनरुपायेनायश्चन्दनदास मरणान्मोचयति।)

राक्षस —(खड्गमाकृष्य नन्वनेन व्यवसायमहासुहृदा निस्त्रिशेन। ननु पश्य—

(प्रकट) भद्र, जाओ। इस समय शीघ्र ही जिष्णुदास को आग में प्रवेश करने से रोको। म भी च दनदास को मौत से बचाता हूँ।

पुरुष—आय, आप किस प्रकार च दनदास को मत्यु से बचायेंगे ?

राक्षस—(तलवार खीचकर) पुरुषाथ रूपी मित्र वाले इस तलवार से, देखो—

(*Aloud*) Gentleman go at once and stop Jishnudas from entering into fire I too will save Chandandas from death

Man—By what means will you now save Chandandas from death ?

Rakshas (*Unsheathing the sword*)—With this sword the friend in adventures See—

टिप्पणी

(१) ज्वलनप्रवेशात—आग मे जलने से। यहा पर वारणार्थानामीप्सित से अपादान पञ्चमी है। मरणात् मे भीत्रार्थाना भयहेतु से पञ्चमी है। (२) व्यवसायमहासुहृदा—व्यवसाय मे मित्र अथवा पुरुषाथ रूपी मित्र। व्यवसाय पौरुष महासुहृत प्रियमित्र यस्य स व्यवसायमहासुहृत अथवा व्यवसाय महासुहृत तेन। वि+अव+सो+घञ—व्यवसाय। निस्त्रिशेन—तलवार से निगत त्रिशत अङ्गलिभ्य इति निस्त्रिश (ब० व्री०) निर+त्रिशत+डच (समासा त प्रत्यय)।

निस्त्रिशोऽय विगतजलदव्योमसङ्काशमूर्ति-
र्युद्धश्रद्धापुलकित इव प्राप्तसख्य करेण।
सत्त्वोत्कर्षात समरनिकषे दृष्टभार परैर्मे
मित्रस्नेहाद् विवशमधुना साहसे मा नियुङक्ते॥१९॥

अन्वय—विगतजलदव्योमसङ्काशमूर्ति समरनिकषे पर दष्टसार सत्त्वोत्कर्षात युद्धश्रद्धापुलकित इव करेण प्राप्तसरय अय मे निस्त्रिश मित्रस्नेहात विवश माम अधुना साहसे नियुडक्ते ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—बादल रहित आकाश के समान रूप वाली (चमकीली), युद्ध रूपी कसौटी पर शत्रुओ के द्वारा देखी गई शक्ति वाली बल की अधिकता के कारण मरने और मारने की उत्सुकता से आह्लादित और मेरे हाथ से मित्रता जोडने वाली मेरी यह तलवार मित्र-स्नेह के कारण विवश मुझको साहसिक काम में नियुक्त कर रही है।

This sword of mine which is shining like a cloudless sky whose might has been seen by my enemies on the touchstone of battle which through excessiveness of valour is as if over joyed from its fondness for a fight and which has secured union with my hand is now driving me to do daring deeds over powered as I am through the love of friend

सस्कृत व्याख्या—विगतजलदव्योमसङ्काशमूर्ति विगतजलदेन मेघरहितेन व्योम्ना आकाशेन सङ्काशा सदृशी मूर्ति स्वरूपशोभा यस्यव भूतो योऽयमसौ मे निस्त्रिश खडग समरनिकषे समर सग्राम एव निकष परीक्षणग्रावा तस्मिन पर शत्रुभि दष्टसार दष्ट ज्ञात सार बलम यस्य स सत्त्वोत्कर्षात वीयस्या धिक्यात युद्धश्रद्धापुलकित इव युद्धे सग्रामे या श्रद्धा तया पुलकित इव सजात रोमाच इव करेण हस्तेन प्राप्तसरय जातानुराग इव मित्रस्नहात सुहृत्प्रेम्ण विवश व्यग्र माम अधुना इदानीम साहसे साहसिक यापारे नियुक्ते प्रेरयति।

टिप्पणी

(१) **विगतजलद योमसकाशमूर्ति**—मेघ रहित आकाश के समान चमकने वाली। (२) **समरनिकषे**—लडाई रूपी कसौटी पर। (३) **सत्त्वोत्कर्षात**—बल की अधिकता से। (४) **युद्धश्रद्धापुलकित**—युद्ध के लिए श्रद्धा के कारण रोमाचित। यह तलवार ऐसी हो रही है मानो युद्ध से बडी प्रसन्न है। पुलक सञ्जात अस्य इति पुलक+इतच=पुलकित। (५) **विवशम**—व्याकुल। विग वतशम् अस्थ इति विवश तम। साहसे—साहस का काम, मरने मारने का काम। सहसा कृत साहसम सहस+अण। इस श्लोक मे उपमा, उत्प्रेक्षा तथा रूपक अलकार एव मन्दाक्राता छद है। छद का लक्षण—मदाक्रान्ता जलधिषडगम्भौ नतौ तादगुरू चत।

पुरुष ——अज्ज ! एव सेटठिच दणदासजीबिद होदि त्ति सुणिद, बिसमदसाबिभाअपरिणामपडिदो ण सक्कणोमि णिच्चिदपद पडिवत्तु । (विलोक्य पादयोर्निपत्य) अथ सुगिहीदणामधेआ अमच्चरक्खसपादा तुह्मे त्ति, ता करेहि मे प्पसाद सदेहणिण्णएण । (आय ! एव श्रेष्ठिचन्दनदासजीवित भवतीति श्रुत, विषमदशाविभागपरिणामपतितो न शक्नोमि निश्चितपद प्रतिपत्तुम । अथ सुगृहीतनामधेया अमात्यराक्षस-पादा यूयमिति, तत् कुरु मे प्रसाद सन्देहनिर्णयेन ।)

राक्षस ——भद्र ! सोऽहमनुभूतभर्तृवशविनाश सुहृद्विना-शहेतुरनार्यो दुर्गृहीतनामा यथार्थो राक्षस ।

पुरुष ——(सहर्ष पुन पादयोर्निपत्य) प्पसीदध, प्पसीदध । हीमाणहे ! दिटिठआ कदत्थोह्मि । (प्रसीदत, प्रसीदत । आश्चयम ! दिष्टया कृतार्थोऽस्मि ।)

राक्षस ——भद्र ! उत्तिष्ठोत्तिष्ठ, कृतमिदानी कालहरणेन, निवेद्यता जिष्णुदासाय, यथैष राक्षस चन्दनदास मरणान्मो-चयति । (इति 'निस्त्रिशोऽयम' इत्यादि पठन आकृष्टखड्ग परिक्रामति ।)

हिन्दी अनुवाद——पुरुष——आय, यह तो सुन लिया कि सेठ च दनदास का प्राण इस प्रकार बच जायगा किन्तु इस दुदशाग्रस्त परिस्थिति में यह नही समझ पा रहा हू कि आप कौन ह । (देखकर और परो पर गिर कर) क्या प्रात स्मरणीय अमात्य राक्षस आप ही ह । तो मेरे सन्देह को दूर करने की कृपा करें ।

राक्षस——भद्र, स्वामी के वश के नाश का अनुभव करने वाला, मित्रो के विनाश का कारण, नाम न लिए जाने के योग्य यथाथनामा म ही राक्षस हू ।

पुरुष——(प्रसन्नता से फिर परो पर गिर कर) महाराज प्रसन्न हो, प्रसन्न हो । आश्चय है । भाग्य से म कृताथ हो गया ।

राक्षस——भद्र, उठो, उठो, अब समय न बिताओ । जिष्णुदास से कह दो कि यह राक्षस च दनदास को मरने से बचायेगा । (ऐसा कह कर "निस्त्रिशोऽयम" श्लोक को पढता हुआ तलवार खींचकर घूमता है ।)

Man—Noble Sır thıs I have heard that Banker Chandandas wıll be saved but fallen ınto thıs adverse state of fate I cannot make out wıth certaınty as to (*who you are*) (*Seeıng and fallıng on hıs feet*) Are you the revered mınıster Rakshas of auspıcıous name luckıly seen by me ? If so be gracıous enough to remove my doubt

Rakshas—I am that Rakshas ın the true sense who saw the death of hıs master who ıs the souıce of troubles to hıs frıends and who ıs ıgnoble and of ınauspıcıous name

Man (*Joyfully agaın fallıng on hıs feet*)—Be pleased be pleased wonder luckıly I have become successful

Rakshas—Gentleman get up get up do not now lose tıme go and ınform Jıshnudas that Rakshas wıll save the lıfe of Chandandas (Goes round wıth the sword drawn repeatıng the verse निस्त्रिशोऽयम)

टिप्पणी

(१) निश्चितपदम प्रतिपत्तुम—यह ठीक से समझने मे कि आप कौन है। प्रतिपत्तुम—ज्ञातुम । (२) अनुभूतभत वशविनाश—स्वामी (नन्द) के वश के नाश का देखन वाला। भतु वश तस्य विनाश (षष्ठीतत०) अनुभूत भत वशविनाशो यन स (बहुव्रीहि स०) । (३) दुग हीतनामा—अपुण्यनामधेय । प्रात काले यस्य नामस्मरणेन अमङ्गल जायते तादश ।

पुरुष —(पादयोर्निपत्य) प्पसीदन्तु प्पसीदन्तु अमच्चचरक्खसपादा । अत्थि दाव एत्थ णअरे प्पढम चन्दउत्तहदएण अज्जसअडदासस्स बधो आणत्तो। सो अ केणावि बज्झटठाणादो अबहरिअ, देसन्तर अबबाहिदो। तदो चन्दउत्तहदएण कीस प्पमादो किदो त्ति अज्जसअडदासबधबञ्जणाए समुज्जलिदो रोसग्गो घादअजणबधजलेण णिब्बाबिदो । तदो पहुदि घादआ ज क पि गहीदसत्थ अपुब्ब पुरुस अग्गदो पच्चादो बा पेक्खन्ति, तदो अद्धबधे ज्जेब अत्तणो जीबिद परिरक्खन्तो अप्पमत्ता एदे अबाप्तबज्झटठाण बज्झ बाबादेन्ति। ता एब्ब गहीदसत्थेहि अमच्चपादेहि तहि गच्छन्तेहि सेटिठचन्दणदासस्स बहो तुबराइदो होदि । (प्रसीदन्तु प्रसीद-

न्त्वमात्यराक्षसपादा । अस्ति तावदत्र नगरे प्रथम चन्द्रगुप्त-हतकेनाऽऽर्यशकटदासस्य वध आज्ञप्त । स च केनापि वध्य-स्थानादपहृत्य देशान्तरमपवाहित । ततश्चन्द्रगुप्तहतकेन 'कस्मात् प्रमाद कृत ?' इति आर्यशकटदासवधवञ्चनया समुज्ज्वलितो रोषाग्निर्घातकजनवधजलेन निर्वापित । तत प्रभृति घातका य कमपि गृहीतशस्त्रम अपूर्वं पुरुषमग्रत पश्चाद्वा प्रेक्षन्ते, तदाधपथे एवात्मनो जीवित परिरक्षन्तोऽ-प्रमत्ता एतेऽप्राप्तवध्यस्थान वध्य व्यापादयन्ति । तस्मादेव गृहीतशस्त्रैरमात्यपादैस्तत्र गच्छद्भि श्रेष्ठिचन्दनदासस्य वधस्त्वरायितो भवति ।) (इति निष्क्रान्त ।)

हिन्दी अनुवाद—पुरुष (परो पर गिरकर) महामात्य महा मन्त्रिवर, राक्षस, प्रसन्न हो । अभी कुछ दिन पहले इस नगर में पापी चन्द्रगुप्त के द्वारा आर्य शकटदास का वध करने की आज्ञा दी गई । पर उस शकटदास को वध्य भूमि से हटा कर किसी ने दूसरे देश में पहुचा दिया । इसके बाद उस दुष्ट चन्द्रगुप्त ने 'यह असावधानी कसे हुई' ? यह कह कर पूज्य शकटदास के वध में हुई अपनी वञ्चना से धधकती अपनी क्रोधाग्नि को वधिको की ही हत्या रूपी जल से बुझा डाला । उसी दिन से वधिक लोग शस्त्र धारण किए हुए जब किसी अजनबी व्यक्ति को देख लेते ह तो उस समय अपने जीवन की रक्षा करते हुए पूरी सावधानी दिखाते हुए (वधिक लोग) बीच रास्ते में ही (बिना वध्यभूमि में पहुचे ही) प्राण दण्डित पुरुष को मार डालते ह । इसलिए इस प्रकार शस्त्र धारण करके वहा जाते हुये अमात्य चरणो द्वारा चन्दनदास का वध शीघ्र ही कर दिया जायगा । (अर्थात वसे तो चाहे चन्दनदास को देर में मारते पर ज्योही आपको शस्त्र लिये हुए वहा वधिक लोग देखेंगे त्यो ही चन्दनदास को समाप्त कर देंगे ।)

(बाहर निकल जाता है)

Man (*Falling on his feet*)—Oh revered Minister be pleased The fact is —Previously here order for executing Noble Shakatdas was given by cursed Chandragupta but he was removed by some one from the execution ground and carried to another country After that saying how this carelessness was shown the fire of anger (*of Chandragupta*) caused by the deception in the execution of Noble Shakatdas was extinguished by the water of execution of the executioners Since then the executioners saving their own life and showing great alertness kill the doomed person in the very midway (without reaching

the place of execution) when they see some stranger approaching with arms Thus really the execution of Banker Chandandas will be hastened by revered Minister s going there with arms in hand (i e with a drawn sowrd) (*Exit*)

सस्कृत याख्या—पादयो चरणयो निपत्य पतित्वा अर्थात् प्रणाम कृत्वा प्रथमम प्राक च द्रगुप्तहतकेन पापीयसा च द्रगुप्तेन आयशकटदासस्य वध हत्या आज्ञप्त स च शकटदास केनापि अज्ञातेन पुरुषेण वध्यस्थानात मारणभूमे अपहृत्य नीत्वा देशा तरम अन्य देशम अपवाहित प्रापित । तत च द्रगुप्तहतकेन कस्मात कारणात प्रमाद असावधानता कृत विहित इति एतत कथयित्वा आय शकटदासस्य वञ्चनया प्रतारणया समुज्ज्वलित प्रदीप्त क्रोधाग्नि रोषानल घातकजनवधजलेन घातकपुरुषहत्याजलेन निर्वापित शान्ति नीत । तत प्रभति तस्मात दिनात घातका य कमपि गहीतशस्त्र शस्त्रयुक्त अपूवम नव पुरुष प्रेक्षन्ते पश्यन्ति तदा अधपथ एव आत्मन जीवितम प्राणान परिरक्ष त परित्रायमाणा अप्रमत्ता सावधाना (सन्त) एते अप्राप्तवध्यस्थानम वध्यस्थानमगत्वव वध्य पुरुष यापादयति घातयन्ति । तस्मात कारणात एवम अनन प्रकारेण गहीत शस्त्र शस्त्रयुक्त अमात्यपाद मत्रिचरण तत्र वध्यभूमिम गच्छद्भि श्रेष्ठिच दन दासस्य वध मरण त्वरायित शीघ्रतया भवति स्यात ।

टिप्पणी

(१) **च द्रगुप्तहतकेन, आयशकटदास**—यहाँ च द्रगुप्त को हतक तथा शकटदास को आय कहकर वह पुरुष राक्षस को यह दिखलाना चाहता है कि म न दवश के प्रति अनुरक्त हू । (२) **जीवित परिरक्षन्त**—भाव यह है कि असावधानी होन पर वध्य पुरुष भाग सकता है । उसके भाग जाने पर च द्रगुप्त वधिको को मरवा देगा । अत वे वधिक अपने प्राणो की रक्षा करने के लिए वध्य को शीघ्र मार दे सकते ह ।

राक्षस—(स्वगतम्) अहो ! दुर्बोधश्चाणक्यवटोर्नीति-माग । कुत ?—

यदि स शकटो नीत शत्रोर्बलेन ममान्तिक
किमिति निहतस्तेन क्रोधाद् वधाधिकृतो जन ? ।
अथ न कृतक तादृक्कष्ट कथ नु विभावये-
दिति मम मतिस्तर्कारूढा न पश्यति निश्चयम ।।२०।।

अन्वय—स शकट यदि शत्रो मतेन ममान्तिक नीत (तर्हि) तेन क्रोधात वधाधिकृत जन किमिति निहत ? अथ कृतक न, तादक कष्ट कथ नु विभावयेत ? इति मम मति तर्कारूढा निश्चय न पश्यति ।।२२।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) इस दुष्ट चाणक्य के नीति के माग को समझना कठिन है—यदि यह शकटदास शत्रु की अनुमति से ही मेरे पास लाया गया तो फिर वधिको को क्रोध वश क्यो मार डाला गया और यदि यह (शकटदास सम्बन्धी बात) बनावटी नही है तो वसा कष्ट-पूण काय (कूट, लेख, मुद्रा से छापना आदि) क्यो सोचा। इस प्रकार मेरी मति तक वितक करती हुई किसी निश्चय पर नही पहुच रही है।

Rakshas (*To himself*)—Ha it is difficult to understand the course of the policy of the cunning Chanakya For—if Shakatdas was brought to me by the consent of the enemy why were then the executioners killed by him in wrath? If on the other hand this is not showy (i e it is real) how could he (*Shakatdas*) think of such a horrible thing ? Thus guessing again and again my mind does not come to a definite conclusion

सस्कृत व्याख्या—स शकट शकटदास यदि शत्रो चाणक्यस्य मतेन अनुज्ञानेन ममान्तिक मत्समीपम नीत प्रापित तदा तेन शत्रुणा क्रोधात रोषात वधाधिकृत वधाय अधिकृत नियुक्तो जन किमिति कस्माद्धेतो निहत व्यापादित । अथ कृतक न असत्य न अपि तु यथाथमेव तर्हि तादृक कष्ट तथाविध स्वामिद्रोहरूप पापकम कथ नु शकटदासो विभावयेत चिन्तयेत। इति एवम मम मे मति तर्कारुढा पुन पुन तकयन्ती निश्चय न पश्यति निणय नाभिजानाति इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **शत्रो मतेन**—चाणक्य की राय से। (२) **तर्कारुढा**—बार-बार तक करती हुई। राक्षस उस पुरुष की बात सुनकर आश्चय मे पड गया। उस चर ने वधिको को मारने की बात बनाकर कही। इसी से राक्षस यह सब नही समझ पा रहा है कि अगर चाणक्य की ही राय से शकटदास छोडा गया तो फिर वधिको की हत्या क्यो की गई और यह सब बाते यदि झूठी ह तो शकटदास ने ऐसा पत्र क्यो लिखा। इन्ही सब कारणो से वह किसी निश्चय पर नही पहुँच पाता और चाणक्य की नीति को दुर्बोध कह रहा है। यहा काव्यलिंग अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

(विचिन्त्य) तस्मात—
नाय निस्त्रिशकाल प्रथममिह कृते घातकाना विघाते
नीति कालान्तरेण प्रकटयति फल किं तया कायमत्र ?
औदासीन्य न युक्त प्रियसुहृदि गते मत्कृते चातिघोरा
व्यापत्ति ज्ञातमस्य स्वतनुमहमिमा निष्क्रय कल्पयामि ॥२१॥
(इति निष्क्रान्ता सर्वे ।) ॥ इति षष्ठोऽङ्क ॥

अन्वय—इह प्रथम घातकाना विघाते कृते अय निस्त्रिशकाल न। नीति कालान्तरेण फल प्रकटयति अत्र तया किं कायम ? प्रियसुहृदि मत्कृते अतिघोरा व्यापत्ति गते औदासीन्य च न युक्तम। ज्ञातम—अहम इमा स्वतनुम यस्य निष्क्रय कल्पयामि ॥२१॥

हिन्दी अनुवाद—(सोच कर) इसलिये जब कि वधिक मेरे हाथ में तलवार देखते ही चन्दनदास का वध कर देंगे तो यह समय तलवार उठाने का नहीं है। नीति समय पाकर फल देती है। यहा उससे (नीति से) क्या प्रयोजन ? परन्तु जब मेरा प्रिय मित्र मेरे ही लिए अति दारुण विपत्ति में पड गया है तो उदासीन रहना भी ठीक नही अब समझ गया। म चन्दनदास के छुडाने का मूल्य अपना शरीर बनाता हू। (अर्थात् उसके बदले में अपना प्राण त्याग करता हूँ।)
(सभी चले जाते ह।) ।छठा अङ्क समाप्त।

(*Thinking*) Therefore —
This is no time for the sword if the executioners will execute him (*Chandandas*) seeing a sword in my hand Diplomacy bears fruit after the lapse of some time but of what use is it here ? Indifference is not proper when my dear friend has been rendered so miserable for my sake I have known it I will offer my own person as his ransom (Exeunt all) (End of the sixth Act)

संस्कृत व्याख्या—इह अस्मिन चन्दनदासमोचनकार्ये प्रथम पूवम प्रथम चन्दनदासस्य मोचनात पूवम घातकाना वधिकाना विघाते वधिकजन चन्दनदासस्य विघाते कृते सम्पन्ने सति अय निस्त्रिशकाल खडगधारणसमय न। नीति कालान्तरेण बहुकालान्तरम फल प्रकटयति साधयति इति हेतोरत्राऽस्मिन सपदि कत्तु योग्य कार्ये नीत्या किम काय न किमपि प्रयोजन सिद्धयति। प्रियसुहृदि प्रियमित्रे मम कृते अतिघोराम अतिदारुणाम विपत्ति विपद गते प्राप्ते औदासीन्य नराश्यमपि न युक्तम नोचितम आ ज्ञातम बुध्यते करणीयम अहम् इमां

स्वतनुम स्वशरीरम अस्य चन्दनदासस्य निष्क्रय मोचनशुल्क कल्पयामि सम्पादयिष्यामीति भाव । भविष्यतसामीप्ये लट प्रयोग ।

टिप्पणी

(१) **घातकाना विघाते कृते**—वधिको के द्वारा (चन्दनदास का) वध कर देने पर। यहा कृद्योगे कर्त्तरि षष्ठी है। (२) **मत्कृते**—मेरे लिए ही चन्दनदास पर विपत्ति आयी है। यदि वह मेरे परिवार को चाणक्य को सुपुर्द कर देता तो उसका कुछ न होता। (३) **निष्क्रयम**—मूल्य। निष्क्रीयते अनेन इति निस+क्री+अच। (४) **कल्पयामि**—करूगा। यहा भविष्य अर्थ मे लट का प्रयोग है। (५) **कालान्तरेण**—कुछ समय के बाद। राक्षस का भाव यह है कि यदि नीति से काम लेता हूँ तो उसका फल तो कुछ दिन बाद मिलेगा और चन्दनदास को छुडाने के काम मे शीघ्रता करनी है। (६) **औदासीन्यम**—चुपचाप रहना। इसमे काव्यलिग अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

सप्तमोऽङ्क

(तत प्रविशति चण्डाल)

चण्डाल —ओसलध अज्जा ! ओसलध, अबेध माणहे ! अबेध—(अपसरत आर्या ! अपसरत, अपेत मान्या ! अपेत—)

जइ लक्खिदु मणद्ध प्पाणे, बिहबे, कुल कलत्ते अ ।
पलिहलध ता बिस बिअ लाअापत्थ प्पअत्तेण ।।१।।
(यदि रक्षितु मन्यध्व प्राण, विभव, कुल, कलत्र च ।
परिहरत तस्माद् विषमिव राजापथ्य प्रयत्नेन ।।१।।)

अन्वय—यदि प्राण विभव कुल कलत्र च रक्षितु मन्यध्वम, तस्मात प्रयत्नेन विषमिव राजापथ्य परिहरत ।।१।।

सातवाँ अङ्क

हिंदी अनुवाद—(चण्डाल का प्रवेश) चण्डाल—आय लोग हटें, हटें, माननीय सज्जन लोग हट जाय। यदि प्राण, धन, कुल और स्त्री को रक्षा करना चाहते हो तो विष के समान राजद्रोह को त्याग दो (या यत्नपूवक राजद्रोह से बचो)।

ACT VII

(*Then enter a Chandal*) *Chandal*—Away away gentleman Respected Sirs away away If you wish to protect your life wealth family and wife avoid in every way the injury to the king

संस्कृत व्याख्या—यदि प्राण जीवित विभव धन कुल वश कलत्र च दाराश्च रक्षितु परित्रातुम मन्यध्वम् इच्छत तर्हि तस्मात—प्रयत्नेन प्रयासेन विषमिव गरलमिव राजापथ्यम नृपविरोध परिहरत त्यजत।

टिप्पणी

चण्डाल—यह चण्डाल कोई नया व्यक्ति नही है। यह वही सिद्धाथक है जो राक्षस के यहा नौकरी कर चुका है। यदि रक्षितुम—इस श्लोक मे व्यतिरेक अलकार तथा आर्या छन्द है।

अविग्र—(अपि च—)

होदि पुलिसस्स ब्वाही मलण बा सेबिदे अपत्थेवि ।
लाग्रापत्थे उण सेबिदे सग्रल बि कुल मलदि ॥२॥
(भवति पुरुषस्य व्याधिर्मरण वा सेविते अपथ्येऽपि ।
राजापथ्ये पुन सेविते हि सकलमपि कुल म्रियते ॥२॥)

अन्वय—अपथ्ये अपि सेविते पुरुषस्य व्याधि वा मरण भवति, पुन राजापथ्ये सेविते हि सकलमपि कुल म्रियते ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—और भी—अपथ्य वस्तु का सेवन करने से तो मनुष्य की मौत होती है अथवा उसे बीमारी हो जाती है परन्तु राजा का अहित करने से सारा कुल नष्ट हो जाता है।

Again—If a man takes what is unwholesome he dies or falls sick but if he injures the king his whole family perishes

सस्कृत व्याख्या—अपथ्ये अहितकरे कस्मिंश्चिद्विषादौ सेविते सति पुरुषस्य जनस्य व्याधिश्शरीरपीडा मरण प्राणप्रीडा वा भवति किन्तु राजापथ्ये राजानिष्टकरे राजविद्रोहरूपे वस्तुनि पुनस्सेविते सकलमपि कुल म्रियते नकस्य विनाश अपि तु सवकुटुम्बस्य विनाशो निश्चित । अत राजद्रोह परिहरत इति शेष ।

टिप्पणी

भवति पुरुषस्य—इस पद्य मे भी व्यतिरेक अलकार तथा आर्या छद ह।

ता जइ ण प्पत्तिआग्रध, तदा पेक्खध एण लाग्रापत्थकालिण सेट्ठिचन्दणदास बज्झट्ठाण आणीअमाण सपुत्तकलत्त । (आकाशे) अज्जा ! किं भणाध ? अत्थि किं चन्दनदासस्स मोक्खोबाओ त्ति ? कुदो से अधणस्स मोक्खो बाओ ? एद उण अत्थि—सो जइ अमच्चरक्खसस्स घरअण समप्पेदि । (पुनराकाशे) किं भणाध ? एसे सलणागदवच्छले अत्तणो जीबिदस्स कालणेण ईरिस अकज्ज ण कलिस्सदि त्ति ? अज्जा । जई एब्व त्तेण हि अवधाणेध से सुभगदिं किं दाणि तुह्माण प्पडीआलविआरेण (तद्यदि न प्रत्यध्व

तदा प्रेक्षध्वमेनम् राजापथ्यकारिण श्रेष्ठिचन्दनदास वध्य-स्थानमानीयमानम् सपुत्रकलत्रम। आर्या किं भणथ ? अस्ति किं चन्दनदासस्य मोक्षोपाय इति ? कुतोऽस्याधन्यस्य मोक्षोपाय ? एतत पुनरस्ति—स यद्यमात्यराक्षसस्य गृहजन समपर्यति। किं भणथ ? एष शरणागतवत्सल आत्मनो जीवितस्य कारणेनेदृशमकार्यं न करिष्यतीति। आर्या, यद्येव तेन ह्यवधत्तास्य शुभगतिं। किमिदानीं युष्माक प्रतीकारविचारेण ?)

हिदी अनुवाद—तो यदि विश्वास नहीं पड रहा है तो इस राजद्रोही चदन दास को देख लो जो स्त्री व पुत्र समेत वध्यभूमि को ले जाया जा रहा है (आकाश की ओर देखकर) क्या कहा ? क्या चन्दनदास के बचने का कोई उपाय है ? इस भाग्यहीन का छुटकारा किस उपाय से हो सकता है ? हा, इसका एक उपाय है, वह यह है कि यह (चदनदास) अमात्य राक्षस के परिवार को सौंप दे। (फिर आकाश की ओर देखकर) क्या कहा कि यह शरणागतवत्सल (चदन दास) अपने प्राण बचाने के लिए यह नीच काम न करेगा। यदि यह बात है तो चन्दनदास की सवगति मनाओ, छुटकारा पाने का उपाय पूछने से क्या ?

If you do not believe come and see this rebel Chandandas who is being taken to the place of execution with his wife and son (*Looking at the sky*) Gentlemen do you ask if there is any means of his release ? How can there be any means of the release of this unlucky fellow ? There is a way of his release and that is this—he should deliver the family of Minister Rakshas (*Again in the air*) Do you say that a person kind to refugees will not do such mean deed for the sake of his life ? Noble Sirs if it is so then pray foı pleasant passage (*pleasant death*) and what is the use of your asking the remedy in this matter ?

सस्कृत व्याख्या—तत मया कथित सव यदि चेत न प्रत्यध्वम विश्वसित तदा एनम राजापथ्यकारिणम् भूपतेरनिष्टकारिणम वध्यस्थानम प्राणदण्डस्थानम आनीयमान सपुत्रकलत्रम तनयपत्नीसहितम श्रेष्ठिचदनदास प्रेक्षध्वम पश्यत। किं भणथ कथयथ चदनदासस्य मोक्षोपाय चदनदास कथम मुक्तो भविष्यति ? अस्य अधन्यस्य भाग्यरहितस्य मोक्षोपाय कुत कस्मात ? एतत उपाय पुन अस्ति यदि चदनदास अमात्यराक्षसस्य गहजन कुटुम्ब समपयति ददाति। किं

भणथ किं कथयथ एष अयम चन्दनदास शरणागतवत्सल शरणागतेषु प्रेम करोति अत आत्मन स्वस्य जीवितस्य जीवनस्य कारणेन हेतुना ईदृशम अकाय पाप कुत्सित कम वा न करिष्यति। यदि एव यदि स न समपयति तेन हि अवधत्त अस्य शुभगतिं जानीत अस्य चन्दनदासस्य शुभगतिम मरणम। तर्हि इदानीम प्रतीकारविचारेण मोक्षोपायविचारणन किम न कोऽपि लाभ ।

टिप्पणी

शुभगतिम—इसका बाह्य अथ है—शरणागत की रक्षा करन के निमित्त उत्तम लोक की प्राप्ति और गूढ अथ है—राक्षस के आ जाने से कल्याण की प्राप्ति अर्थात चन्दनदास बन्धनमुक्त हो जायगा।

(तत प्रविशति द्वितीयचण्डालानुगतो वध्यवेशधारी शूल स्कन्धेनादाय कुटुम्बिन्या पुत्रेण चानुगम्यमानश्चन्दनदास ।)

चन्दनदास —हद्धी ! हद्धी !! अह्मारिसाण बि कध णिच्चचारित्तभङ्गभीरुण चोरजणोचिद मलण पत्त त्ति। णमो किदन्तस्स। अहवा ण णिससाण उदासीणेसु इदरेसु बा बिसेसो अत्थि। तधा हि—(हा धिक, हा धिक् !! अस्मादृशानामपि कथ नित्यचारित्रभङ्गभीरूणा चौरजनानामिव मरण प्राप्तमिति। नम कृतान्तस्य। अथवा न नृशसानामुदासीनेष्वितरेषु वा विशेषोऽस्ति। तथा हि—)

हिन्दी अनुवाद—(तदनन्तर दूसरे चण्डाल के साथ वध के योग्य वेश धारण किए हुए कधे पर शूल रख कर स्त्री और पुत्र से अनुगम्यमान चन्दनदास प्रवेश करता है) चन्दनदास—हाय धिक्कार, हाय धिक्कार ! हमारे समान निरन्तर चरित्र दोष से डरते रहने वाले की चोर की भाति मौत। यमराज को नमस्कार है। अथवा नशस लोगो को अपराधी तथा निरपराधी में कोई भेद नहीं होता। जसे कि—

(Now enters Chandandas accompanied by another Chandal his son and his wife wearing the dress of a doomed person and carrying a stake on his shoulder) *Chandandas*—Oh fie oh fie salutation to death people like me who are always apprehensive of the loss of character should die a death like that of a thief or to those who are bad hearted there is no distinction between an innocent and guilty person

टिप्पणी

(१) नित्यचारित्रभङ्गभीरूणाम—चरित्र के भग होने से या चरित्र पर धब्बा लगने से सदा डरने वाले। (२) कुटुम्बिया—पत्न्या। 'दारा स्यात्तु कुटुम्बिनी इत्यमर।

मौहूण आमिसाइ मलणभएण तिणेहि जीवन्तम्।
बाहाण मुद्धहरिण हन्तु को णाम णिब्बन्धो ? ।।३।।
(मुक्त्वा आमिषाणि मरणभयेन तृणैर्जीवन्तम्।
व्याधाना मुग्धहरिण हन्तु को नाम निर्बन्ध ? ।।३।।)

अन्वय—मरणभयेन आमिषाणि मुक्त्वा तृण जीवन्तम मुग्धहरिण हन्तु व्याधाना को नाम निब‍ध ? ।।३।।

हिदी अनुवाद—जीव हिंसा के भय से मास को छोडकर तिनके से जीवन धारण करने वाले हिरणो को मारने के लिए बहेलियो का यह कसा हठ है अर्थात (इतने पर भी जब व्याध हिरनो को मारने के लिए तयार है तो क्या कहा जाय क्या न कहा जाय) ?

What is this persistency of the hunters in killing the innocent deer which through fear of killing lives on grass only giving up meat ?

सस्कृत व्याख्या—मरणभयेन कश्चित प्राणी म्रियेतेति भीत्या आमिषाणि मासादीनि मुक्त्वा त्यक्त्वा तृण घासादिभि जीवन्त वृत्ति कल्पयन्त मुग्धहरिण सरलस्वभावम् मृगादिक हन्तु व्याधाना को नाम निब‍ध कीदृश दुराग्रह ?

टिप्पणी

(१) मरणभयेन—कही जीवहिंसा न हो जाय इस डर से। (२) तृण जीवन्तम—घास खाकर निर्वाह करने वालो का। (३) मुग्धहरिणम—सीधे साधे हरिणो को (४) को नाम निब‍ध—कैसा दुराग्रह है। इस पद्य मे दृष्टान्त तथा अतिशयोक्ति अलकार और आर्या छद है।

(समन्तादवलोक्य) भो प्पिअवअस्स जिण्णुदास ! कध प्पडिवअण बि मे ण प्पडिबज्जसि त्ति। अधवा दुल्लहा क्खु पुरिसा, जे इमस्सि काले दिटिठबधे बि चिट्ठन्ति। (सवा-

ष्पम्) एदे अह्मप्पिअवअस्सा अस्सुवादमेत्तकेण किदप्पदीआरा कह विणिवत्तमाणा परिवड्ढमाणसोअदीणबदणा प्बाप्फगरुआए दिट्ठीए म अणुगच्छन्दि। (भो प्रियवयस्य जिष्णुदास! कथ प्रतिवचनमपि मे न प्रतिपद्यसे इति। अथवा दुलभा खल्वेते पुरुषा येऽस्मिन् काले दृष्टिपथेऽपि तिष्ठन्ति। एतेऽस्मत्प्रियवयस्या अश्रुपातमात्रेण कृतप्रतीकारा निवतमानाः परिवर्धमानशोकदीनवदना बाष्पगुर्व्या दृष्ट्या मामनुगच्छन्ति।) (इति परिक्रामति।)

चण्डालौ—(परिक्रम्यावलोक्य च) अज्ज चन्दणदास! आगदोसि वज्झट्ठाण। ता बिसज्जेहि परिअण। (आर्य चन्दनदास! आगतोऽसि वध्यस्थान। तत् विसर्जय परिजनम।)

चन्दनदास—अज्जे! कुटुम्बिनि! णिबत्तस्स तुम सपुत्ता। बज्झट्ठाण क्खु एद, अदो अबर अभूमि क्खु अणुगच्छिदुम्। (आर्ये! कुटुम्बिनि! निवर्तस्व त्व सपुत्रा। वध्यस्थान खल्वेतत्, अतोऽपरमभूमि खल्वनुगन्तुम्।)

कुटुम्बिनी—(सवाष्पम्) परलोअ प्पत्थिदो अज्जो, ण उण देसन्तर ता अज्जोग्गो दाणीं कुलजणस्स णिबत्तिदु। (परलोक प्रस्थित आर्यो न पुनर्देशान्तर, तदयोग्यमिदानीं कुलजनस्य निर्वाततुम्।)

चन्दनदास—अज्जे! सच्च, मित्तकज्जेण मम बिणासो, न पुरिसदोसेण। ता किं हरिसट्ठाणे बि रोइसि त्ति? (आर्ये? सत्य, मित्रकार्येण मम विनाशो, न पुरुषदोषेण, तत् किं हर्षस्थानेऽपि रोदिषि इति?)

कुटुम्बिनी—अज्ज! जइ एब्ब, ता अणुचिद दाणीं कुलजणेण णिबत्तिदु। (आय! यद्येव, तदनुचितमिदानीं कुलजनेन निर्वाततुम्।)

हिन्दी अनुवाद—(चारों ओर देखकर) ऐ मित्र जिष्णुदास, मुझे उत्तर भी

नहीं देते हो ! अथवा ऐसे लोग दुलभ ह जो ऐसे मौके पर दिखाई भी दे सकें। (आसू भरकर) ये हमारे मित्र केवल आसू गिरा कर प्रतीकार करने वाले तथा बढ़ते हुए शोक से मलिन बदन वाले आसू भरे नेत्रो से मेरा अनुसरण कर रहे ह। (यह कह कर घूमता है।)

चण्डाल—(घूम कर और देखकर) आय, च दनदास, अब आप वध्य स्थान में आ गये ह इसलिए परिजनो को लौटा दीजिये।

च दनदास—अरे घर वाली, तुम पुत्र सहित लौट जाओ। यह फासी देने की जगह है। इसके आगे मेरे साथ चलना ठीक नहीं।

कुटुम्बिनी—(आसू के साथ) आय, आप परलोक जा रहे ह न कि विदेश यात्रा कर रहे ह। तो इस समय परिजनो का लौटना उचित नही है।

च दनदास—आर्ये, सत्य है। मेरा नाश मित्र के काय के लिए हो रहा है। न कि मेरे किसी अपराध से। तो अब आन द के समय क्यो रोती हो ?

कुटुम्बिनी—आय, यदि ऐसा है तो कुलजनो का लौटना अनुचित है।

(*Looking on all sides*) Ho dear friend Jishnudas How so You do not even respond to me or such people are rare who stand within the range of sight at such occasions (*With tears*) Here my dear friends who have shed tears and thus offered oblation of water are following me with pale faces through increasing grief having tears in their eyes

Both the Chandals (*Going round and seeing*)—Noble Chandandas you have reached the place of execution hence dismiss your family

Chandandas—Noble lady return along with your son This is the execution ground It is not proper to follow me beyond this

Wife (*With tears*)—Noble Sir is going to another world not to another country So it is not proper to return

Chandandas—Noble wife it is true My death is due to the cause of my friend and not through any fault of mine So why do you weep at this time of rejoicing ?

Wife—Noble Sir if it is so it is not proper for the family to go back

टिप्पणी

(१) **प्रतिवचनम**—प्रत्युत्तरम्। (२) **प्रतिपद्यसे**—ददासि। (३) **कृत-प्रतीकारा**—कृत विहित प्रतीकार उपाय य ते। (४) **बाष्पगुर्व्या**—अश्रुपूणया।

चन्दनदास —अध इ ब्बबसिद अज्जाए (अथ किं व्यवसितमायया ?)

कुटुम्बिनी—(सबाष्पम्) भत्तुणो चलणमणगच्छन्तीए अप्पाणग्गहो होदि त्ति। (भर्तुश्चरणमनुगच्छन्त्या आत्मानुग्रहो भवति इति।)

चन्दनदास —अज्जे ! दुब्बबसिद एद दे, ता दाणीं अज्जाए अअ असुणिदलोअब्बबहारो कुमारो अणुगेह्णिदब्बो त्ति। (आर्ये ! दुर्व्यवसितमिद ते, तदिदानीमायया ऽयमश्रुतलोकव्यवहार कुमारोऽनुग्रहीतव्य इति।)

कुटुम्बिनी—अणगेह्णन्तु ण प्पसण्णाओ कुलदेबदाओ। जाद ! पुत्तअ ! प्पणम अपच्छिमस्स पिदुणो पाएसु। (अनुगृह्णन्त्वेन प्रसन्ना कुलदेवता। जात ! पुत्रक ! प्रणम अपश्चिमस्य पितु पादयो।)

पुत्र —(पादयोर्निपत्य) ताद ! मए तादबिरहिदेण किं अणुचिटिठदब्ब (तात ! मया तातविरहितेन किमनुष्ठातव्यम् ?)

चन्दनदास —पुत्त ! चाणक्कबिरहिदे देसे बसिदब्ब। (पुत्र ! चाणक्यविरहिते देशे वस्तव्यम।)

चण्डालौ—अज्ज ! चन्दणदास ! णिखादे शूले, ता दाणीं सज्जो होहि। (आय ! चन्दनदास ! निखात शूल, तदिदानीं सज्जो भव।)

कुटुम्बिनी—अज्जा ! पलित्ताअध पलित्ताअध। (आर्या ! परित्रायध्व परित्रायध्वम्।)

चन्दनदास —भद्दमुह ! मुहुअत्त चिट्ठ। अइ जीबिदबच्छले ! किं एत्थ आक्कदसि ? सग्ग गदा क्खु ते देबा णन्दा, जे दुक्खिद इत्थीजण प्पइदिण अणुकम्पन्ति। (भद्रमुख ! मुहूत तिष्ठ। अयि जीवितव[illegible]े ! किमत्राक्रन्दसि स्वग

गता खलु ते देवा नन्दा, ये दु खित स्त्रीजन प्रतिदिन-मनुकम्पन्ते।)

हिदी अनुवाद—चदनदास—अरी स्त्री, क्या करना चाहती हो?

कुटुम्बिनी—(अश्रु भरे नेत्रो से) आपके चरण का अनुगमन करने से मं कृताथ हो जाती।

चदनदास—आर्ये, यह विचार ठीक नहीं है। यह तुम्हारे लिए अनुचित है। इस समय इस कुमार के ऊपर दया करो, जो ससार के व्यवहार से अनभिज्ञ है।

कुटुम्बिनी—इसके ऊपर तो प्रसन्न हुए कुल देवता कृपा करें। बेटा, सदा के लिए विदा होने वाले पिता के परो पर गिर पडो।

पुत्र—(पिता के दोनो परो पर पडकर) पिता जी, आप से विमुक्त होकर म क्या करूँ?

चन्दनदास—पुत्र, वहाँ जाकर रहना जहाँ चाणक्य न पहुँच पाए।

दोनो चाण्डाल—आर्य चदनदास, सूली गड चुकी, अब तयार हो जाओ।

कुटुम्बिनी—अरे बचाओ, बचाओ।

चन्दनदास—भद्रमुख! थोडी देर रुक जा। अरी प्राणप्यारी, क्यों रो रही हो? हमारे राजा नन्द अब स्वग चले गये है, जो दुःखी स्त्रियो पर प्रतिदिन कृपा करते थे।

Chandandas—What do you intend to do?

Wife (With tears in her eyes)—I shall become blessed by following your footsteps

Chandandas—Noble wife this resolve of yours is not proper you have to think of this poor boy who is unexperienced in the ways of the world

Wife—Let the family gods be pleased and help him Oh son fall at the feet of your father who is to be seen for the last time

Son (Falling on the father s feet)—Father what should be done by me abandoned by my father?

Chandandas—Son you have to live in a land where Chanakya may not reach

Both the Chandals—Noble Chandandas the stake is driven so be ready

Wife—Noble Sirs protect protect

Chandandas—Noble wife wait for a moment Oh my dear wife why are you weeping at this time? King Nanda, who used to take pity on the grieved ladies is gone to heaven

दूसरा चाण्डाल—अरे वज्रलोमक, लो म पकडता हू।

चन्दनदास—भद्रमुख, क्षण भर ठहरो जब तक म पुत्र का आलिङ्गन कर लू। (पुत्र का आलिङ्गन करके और मस्तक सूघकर) बटा, यद्यपि मृत्यु अवश्य म्भावी है फिर भी मित्र के काय को वहन करता हुआ म मृत्यु को प्राप्त हो रहा हू।

पुत्र—पिता जी, यह तो बता दीजिए कि क्या हमारी कुल की रीति यही रही है? (परो पर गिरता है)।

चाण्डाल—अरे वज्रलोमक, पकड ले।

(दोनो चण्डाल शूली पर चढ़ाने के लिए चन्दनदास को पकड लेते ह)

कुटम्बिनी—(छाती पीटती हुई) आर्यो, बचाओ, बचाओ।

First Chandal—Oh Venuvetraka catch this Chandandas and the family will itself go back

Second Chandal—Oh Vajralomak here I catch him

Chandandas—Good man wait a moment till I embrace my son (Embracing the son and smelling him at his head) Dear child death being inevitable I am dying for the cause of my friend

Son—Father tell me if this is the custom of my family (*Falls at his feet*)

Chandal—Oh Vajralomak seize him

(Both the Chandals seize Chandandas to put him to gallows)

Wife (*Beating the breast*)—Noble Sirs protect protect

टिप्पणी

(१) अवश्यभवितव्ये—अवश्य होने योग्य। मत्यु तो सबकी निश्चित है। फिर जो मित्र के लिए मरे वह प्रशसनीय होता है अत शोक करना व्यथ है।

(२) सोरस्ताडम—छाती पीटकर। यह अव्यय है। उरस ताड उरस्ताड तेन सहित यथा स्यात्तथा सोरस्ताडम।

(प्रविश्य पटाक्षेपेण राक्षस।) भवति! न भेतव्य न भेतव्यम। भो भो शूलायतना! न खलु व्यापादनीयश्चन्दनदास। कुत—

येन स्वामिकुल रिपोरिव कुल दृष्ट विनश्यत पुरा
मित्राणा व्यसने महोत्सव इव स्वस्थेन येन स्थितम।
आत्मा यस्य वधाय व परिभवक्षेत्रीकृतोऽपि प्रिय
तस्येय मम मृत्युलोकपदवी वध्यस्रगाबध्यताम्॥१५॥

अन्वय—यन पुरा रिपो कुलमिव स्वामिकुल विनश्यत दृष्टम येन मित्राणा व्यसने महोत्सवे इव स्वस्थेन स्थितम यस्य परिभवक्षेत्रीकृतोऽपि आत्मा व वधाय प्रिय तस्य मम इय मत्युलोकपदवी वध्यस्रक आबध्यताम् ॥५॥

हिदी अनुवाद—(पर्दा हटाकर राक्षस का प्रवेश) अरे डरो मत, डरो मत, अरे शूली देने वालो लोगो, चन्दनदास को न मारो, जिस (मुझ राक्षस के द्वारा) शत्रुकुल के समान नष्ट होता हुआ स्वामी का कुटुम्ब देखा गया। जो मित्रो के कष्ट में ऐसा आनन्दपूवक था मानो महान उत्सव में हो और जिसका शरीर पराभव का क्षेत्र बना दिया जाने पर भी वध करने के लिये तुम लोगों को प्रिय है उस मुझको, मत्युलोक की पगडण्डी, वध्य लोगो के गले में डाली जाने वाली यह माला पहना दो।

Rakshas—(*Entering with a toss of the curtain*)—Oh noble lady do not fear do not fear Oh executioners Chandandas ought not to be killed For—Let this wreath of the doomed the foot path to the land of the God of Death be fastened on him this self of mine by whom the master s family was witnessed perishing like the enemy s family who stood unmoved in the calamity of friends as if at high festivities whose body though made an object of defeats and insults is dear to you for killing

सस्कृत व्याख्या—अये शूलायतना न खलु न खलु व्यापादनीय चन्दनदास येन मया राक्षसेन पूवम प्राक रिपो शत्रो कुलमिव शत्रुवश इव स्वामिकुल नन्दवश विनश्यत नष्टभ्रष्ट दष्ट साक्षात कृत येन मया मित्राणा सुहृदा व्यसने विपत्तौ महोत्सवे इव स्थित महोत्सवारम्भ इवाचरितम यस्य मम परिभवक्षेत्रीकृतोऽपि तिरस्क्रियापात्रीकृतोऽपि आत्मा शरीरम व युष्माकम वधाय हननाय प्रिय तस्य मम महाधमस्य मम राक्षसस्य इय मत्युलोकपदवी यमपुर्या पदवी पद्धति वध्यस्रक वध्यमाला आबध्यताम पिनह्यताम गल इति शेष ।

टिप्पणी

(१) **पटाक्षेपेण**—पर्दा हटाकर—आसम्यक क्षेप अपसारणम पटस्य आक्षेप इति तेन असूचितस्य सहसा सभ्रमेण प्रवेश पटाक्षेप । नाटक मे बिना किसी पूव सूचना के जो सहसा प्रवेश किया जाता है उसे पटाक्षेप कहते ह । इसमे रगमच पर आन वाला पात्र अपने आप पर्दे को हटाता है। (२) **शूलायतना**—शूली देने वाले। शूलम आयतन जीवन येषा ते शूलायतना (ब० व्री०)। आ-यत्यते अत्र आ+यत+ल्युट अधिकरणे आयतनम। (३) **परिभवक्षेत्रीकृत**—

परिभव का (नाश, अपमान का) क्षेत्र बनाया गया हुआ। मित्रो का नाश हो जाने पर राक्षस का शरीर परिभव क्षेत्र हो गया। अर्थात हर प्रकार से उसकी पराजय हो गई। (४) **वध्यस्रक**—फासी दी जाने वाले लोगो के गले मे डाली जाने वाली (माला) (५) **मत्युलोकपदवी**—मत्युलोक की पगडण्डी के समान। जिसके गले मे वध्यमाला पहना दी जाती थी उसके लिए मानो स्वग का रास्ता तैयार हो जाता था। (६) **आवध्यताम**—डाल दी जाय। यहाँ पर पूर्णोपमा तथा रूपक अलकार है और शादूलविक्रीडित छद है।

चन्दनदास—(विलोक्य सबाष्पम्) अमच्च! किं एद दे ब्बबसिद? (अमात्य! किमिद ते व्यवसितम्?)

राक्षस—त्वदीयसुचरितैकदेशस्यानुकरण किल।

चन्दनदास—अमच्च! सब्ब बि मे णिप्फल एद प्पआस करन्तेण ण मे प्पिअ अणुचिट्ठिद अमच्चेण। (अमात्य! सर्वमपि मे निष्फलमिम प्रयास कुर्वता न मे प्रियमनुष्ठित-ममात्येन।)

राक्षस—सखे चन्दनदास! कृतमुपालम्भेन, स्वार्थ-प्रधानो हि जीवलोक। भद्रमुख! अयमर्थो निवेद्यता तावदुरात्मन चाणक्याय।

चण्डालौ—अध किं त्ति? (अथ किमिति?)

हिंदी अनुवाद—चदनदास (देखकर आसुओ के साथ) अमात्य, आपने यह क्या किया?

राक्षस—आप के उच्च चरित के एक अश का अनुकरण है।

चदनदास—अमात्य, मेरे इस सब प्रयत्न को निष्फल करके आप ने मेरा प्रिय नहीं किया।

राक्षस—मित्र चदनदास, रहने दो उलाहना देने को। यह ससार स्वाथ प्रधान है। भद्रमुख, यह बात दुष्ट चाणक्य से कह दो।

दोनो चाण्डाल—क्या?

Chandandas (Seeing and with tears)—Minister what have you done this?

Rakshas—This is only an imitation of a part of your noble character

Chandandas—Minister you have not done good to me by rendering all my attempts useless

Rakshas—Friend Chandandas away with this remonstration This world is entirely selfish Good man, let this be communicated to the vice hearted Chanakya

Both the Chandals—What ?

टिप्पणी

त्वदीयसुचरितकदेशस्य—आपके सच्चरित्र के एक भाग का। शोभन चरितम सुचरितम (प्रा० स०)। एको देश एकदेश (कम० स०)। त्वदीय सुचरितम (कम० स०), तस्य एकदेश (षष्ठीतत०) तस्य।

राक्षस —

दुष्कालेऽपि कलावसज्जनरुचौ प्राणै पर रक्षता
नीत येन यशस्विनातिलघुतामौशीनरीय यश ।
बुद्धानामपि चेष्टित सुचरितै क्लिष्ट विशुद्धात्मना
पूजार्होऽपि स यत्कृते तव गतो वध्यत्वमेषोऽस्मि स ।।५।।

अन्वय—असज्जनरुचौ दुष्काले कलौ अपि प्राणै पर रक्षता यशस्विना येन औशीनरीय यश अतिलघुता नीतम विशुद्धात्मना (येन) सुचरित बुद्धाना चेष्टितमपि क्लिष्टम, स पूजार्होऽपि यत्कृते तव वध्यत्व गत स एष अस्मि।

हिंदी अनुवाद—म वह राक्षस हूँ जिसके लिये पूजा के योग्य, दुष्टरुचि वाले पापी कलियुग में भी अपने प्राणो से दूसरे के प्राण बचाने वाले शरणागत की रक्षा करके महाराज शिवि को भी नीचा दिखाने वाले और अपने शुद्ध आचरण के बल पर निमल अन्त करण वाले बुद्धो के भी चरित को तिरस्कृत करने वाले चदनदास मारा जा रहा है।

Rakshas—Here I am he (*that Rakshas*) for whose sake even that (*Chandandas*) worthy of being worshipped has become an object worthy of being killed by you—the one who by his fame reduced to insignificance the fame of Aushinara by saving the life of another at the cost of his life even in this wicked Kaliyuga the age when people have become of evil taste who (*Chandandas*) by his being pure hearted has surpassed even the deeds of Budha with his noble deeds

संस्कृत व्याख्या—असज्जनरुचौ दुष्टजनप्रीतिकरे दुष्काले कलौ महापापे कलियुगे अपि प्राण जीवित परम अन्यम रक्षता पालयता यशस्विना महाकीर्ति-

मता येन च दनदासेन औशीनरीय यश औशीनरस्य महाराजस्य शिवे कीर्ति अतिलघुता नीतम अत्यन्ततुच्छताम प्रापितम अर्थात शरणागतरक्षणाजनयशो नितराम कदर्थितम इति भाव (येन) विशुद्धात्मना निरस्ताहकारममकारेण सुचरित सुकृत बुद्धानामपि बोधिसत्त्वानामपि चेष्टितम चरितम् क्लिष्टम् तिरस्कृतम स पूजार्होऽपि पूजायोग्योऽपि स च दनदास यत्कृते यस्य राक्षसस्य कृते कारणात वध्यत्व गत त्वया हन्त यत्वेन शूलारोहणाय समाज्ञप्त स एष अहम राक्षस अस्मि।

टिप्पणी

(१) **असज्जनरुचौ**—दुष्ट रुचि वाले (कलियुग मे) कलौ अपि—अपि शब्द के प्रयोग करने का आशय यह है कि कलि मे सभी पापी होते ह। सभी स्वार्थी होते है और ऐसे कलि मे भी अपने प्राण देकर दूसरे की रक्षा करने वाले विरले हीं होते है। (२) **औशीनरीय यश**—उशीनर के पुत्र के यश को। उशीनरस्य अपत्य पुमान औशीनर। उशीनर+अञ। औशीनर अर्थात् राजा-शिवि। उशीनर एक पुरुवशी राजा थे। उनकी स्त्री दृषद्वती से राजा शिवि का ज म हुआ था। औशीनरस्य इदम औशीनरीयम तस्येदम से छ प्रत्यय हुआ और छ का ईय हो गया। पूजार्होऽपि—पूजा के योग्य। इस श्लोक मे दीपक यतिरेक तथा परिवत्ति अलकार एव शार्दूलविक्रीडित छ द है।

प्रथम —अले बेणुबेत्तआ। तुम दाव सेट्ठिचन्दणदास गेह्लिअ, इमस्स मसाणापादबस्स छाआए मुहुत्तअ चिट्ठ, जाब अह अज्जचाणक्कस्स णिवेदेमि, जधा गहीदो अमच्च-लक्खसो त्ति। (अरे वेणुवेत्रक! त्व तावच्छ्रेष्ठिचन्दनदास गृहीत्वाऽस्य श्मशानपादपस्यच्छायाया मुहूर्त तिष्ठ, यावदार्य-चाणक्यस्य निवेदयामि, यथा गृहीतोऽमात्यराक्षस इति।)

द्वितीय —अले बज्जलोमआ! एव्व होदु। (अरे वज्रलोमक! एव भवतु।)

(इति सपुत्रदारेण चन्दनदासेन सह निष्क्रान्त।)

प्रथम —(राक्षसेन सह परिक्रम्य) के के एत्थ दुआलि-आण? णिबेदेध दाब, णन्दकुलसेण्णसञ्चअचुण्णणकुलिस्स

मौलिग्रकुलपदिट्ठाबिदधम्मसञ्चग्रस्स ग्रज्जचाणक्कस्स । (क कोऽत्र दौवारिकाणाम् ? निवेदयत तावत, नन्दकुल-सैन्यसञ्चयचूर्णनकुलिशस्य मौयकुलप्रतिष्ठापितधर्मसञ्चय-स्यार्यचाणक्यस्य ।)

राक्षस —(स्वगतम) एतदपि नाम राक्षसेन श्रोतव्यम् ।

चण्डाल —एसो क्खु ग्रज्जणीदिसजमिदबुद्धिपलिसले गहीदे ग्रमच्चलक्खसे त्ति । (एष खल्वार्यनीतिसयमितबुद्धि-परिसरो गृहीतोऽमात्यराक्षस इति ।)

हिन्दी ग्रनुवाद—पहला चाण्डाल—ग्ररे वेणुवेत्रक, तब तक तुम सेठ चन्दन-दास को पकड कर इस श्मशान की वृक्षच्छाया में मुहूत भर बठो जब तक म ग्राय चाणक्य से निवेदन कर दू कि ग्रमात्य राक्षस पकड लिये गये ह ।

दूसरा—ग्ररे वज्रलोमक, ऐसा ही हो ।

(पुत्र, पत्नी सहित चन्दनदास के साथ निकल जाता है।)

पहला—(राक्षस के साथ घूमकर) ग्ररे द्वारपालो में यहा कौन है ? नन्द-कुल के सन्यसमूह को नाश करने में वज्र के समान तथा मौय कुल में धमराशि की प्रतिष्ठा वाले ग्राय चाणक्य से कह दो ।

राक्षस—(मन में) यह भी राक्षस को सुनना है ।

चाण्डाल—ग्राय की नीति से जकड कर बाधी गई नीति वाले ग्रमात्य राक्षस पकड लिये गये ह ।

First Chandal—Oh Venuvetrak wait a minute taking Chandandas with you in the shade of this tree of the burning ground while I report to Noble Chanakya that Minister Rakshas has been caught

The second—Oh Vajralomak let it be so

(Exit with Chandandas and his wife and son)

The first (*Going round with Rakshas*)—Which of the porters is here ? Tell Noble Chanakya the thunderbolt to the army of the Nandas and the establisher of religion in Maurya family

Rakshas (*To himself*)—Even this has to be heard by Rakshas

Chandal—That Minister Rakshas whose wit was made insignificant by the diplomacy of Noble Chanakya is caught

टिप्पणी

(१) ग्रायनीतिसयमितबुद्धिपरिसर—ग्राय चाणक्य की नीति से जकड कर बाधी गई है बुद्धि जिसकी । ग्रायस्य चाणक्यस्य नीत्या सयमित कुण्ठित ।

बुद्धिपरिसर मतिवशद्यम यस्य स (ब० व्री०)। (२) नदकुलसन्यसचय चूणनकुलिशस्य—नन्दकुल की सेना को चूण करने मे वज्र रूप। नन्दकुलस्य सैन्यसचय तस्य चूणन तस्य कुलिश तस्य नन्दकुलसन्यसचयचूणकुलिशस्य। (३) मौयकुलप्रतिष्ठापितधमसचयस्य—मौयकुल मे धम का सचय स्थापित करने वाले। मौयकुले प्रतिष्ठापित धमसचयो येन स तस्य।

(तत प्रविशति जवनिकावृतशरीर मुखमात्रदृश्य सहषश्चाणक्य)

चाणक्य—भद्र! कथय कथय—

केनोत्तुङ्गशिखाकलापकपिलो बद्ध पटान्ते शिखी ?
पाशै केन सदागतेरगतिता सद्य समासादिता ?
केनानेकपदानवासितसट सिंहोऽर्पित पञ्जरे ?
भीम केन चलैकनक्रमकरो दोर्भ्या प्रतीर्णोऽणव ?॥६॥

अन्वय—उत्तुङ्गशिखाकलापकपिल शिखी केन पटान्ते बद्ध ? सदागते अगतिता केन सद्य पाश समासादिता ? अनेकपदानवासितसट सिंह केन पञ्जरे अर्पित ? चलैकनक्रमकर भीम अणव केन दोर्भ्याम् प्रतीण ?

हिंदी अनुवाद—(तदनन्तर पर्दे से ढके हुए शरीर वाला और केवल मुह बाहर किये हुए प्रसन्न चाणक्य प्रवेश करता है।) चाणक्य—भद्र, बोलो, बोलो—ऊँची धधकती लपटो वाली लाल-लाल आग को कपडो में किसने बाधा ? सदा चलने वाले वायु की गति को रस्सियो से तुरन्त किसने रोक लिया ? हाथियो के मद जल से भीगी सटाओ वाले सिंह को पिंजडे में किसने बद किया ? और चचल मगर और घडियालो से निरन्तर विलोडित भयकर महासागर को हाथों से ही किसने तर कर पार किया ?

(Now enter Chanakya happily with his body covered by a veil and face alone visible)

Chanakya—Good man tell me tell me by whom the fire red with the mass of its high soaring flames has been tied in the skirts of his garments ? Who has caused motionlessness of the wind that is always moving by chaining it ? By whom has the lion whose manes are scented with the ichor of elephants has been put into a cage ? And who has crossed only with his arms the terrible sea abounding in numerous murderous sharks and alligators

संस्कृत व्याख्या—उत्तुङ्गशिखाकलापकपिल उत्तुङ्ग महोच्छ्राय शिखा-कलाप ज्वालासमूहै कपिल पिङ्गल शिखी अग्नि केन वीरेण पटान्ते वस्त्रान्ते बद्ध सयमित सदागते पवनस्य अगतिता अचलता केन सद्य तत्क्षण पाश रज्जुभि समासादिता प्रापिता ? राक्षसग्रहण किल वेगेन वहत वायो पाश-बधनमिव जनरसम्भाव्यम किमपि महाकम येन कृत सोऽहमस्मीतिभाव अनेकपदानवासितसट अनेकपाना द्विपाना महागजानाम दान मदजल वासिता सुरभीकृता सटा केसरा यस्य तादृश सिह मगराज केन पञ्जरे अर्पित स्थापित । राक्षसस्य ग्रहण दुर्दान्तस्य मृगराजस्य पिञ्जरग्रहणमिव महा-साहसकम येन कृत स एवाहम। चलकनक्रमकर चला सवत्रभ्रममाणा एके महान्त नक्रा मकरा ग्राहाश्च यत्रवभूत चञ्चलनक्रमकरबहुल भीम अणव समुद्र केन दोर्भ्यामिव भुजाभ्यामेव प्रतीण पार गत ।

टिप्पणी

इस श्लोक मे चाणक्य कह रहा है कि राक्षस का पकडना वसा ही कठिन था जसा कि आग को कपडे मे बाधना या वायु की गति को रोकना या सिह को पिंजडे मे बन्द करना या महाभयानक सागर को केवल हाथो से तरना (कठिन और असाध्य है)। यह कठिन काम सम्पादन करने वाला म हूँ। (१) **उत्तुङ्ग-शिखाकलापकपिल**—ऊची-ऊँची लपटो से पीली या भूरी। यह शिखी (आग) का विशेषण है। (२) **सदागते**—सदा चलने वाला (पवन)। (३) **अगतिता**—गतिहीनता चलने को रोकना। (४) **अनेकपदानवासितसट**—हाथियो के मद जल से भीगी सटा (केशर) वाला सिह। (५) **चलकनक्रमकर**—अनेक चञ्चल मगर और घडियालो वाला समुद्र (अणव)। इसमे अप्रस्तुत प्रशसा अतिशयोक्ति और मालानिदशन अलकार तथा शादूलविक्रीडित छन्द है।

चण्डाल—ण णीदिणिउणबुड्ढिणा अज्जेण ज्जेव ।
(ननु नीतिनिपुणबुद्धिनार्येणैव ।)

चाणक्य—भद्र ! मा मैवम्। नन्दकुलद्वेषिणा दैवेनेति ब्रूहि ।

राक्षस—(विलोक्य स्वगतम्) अये ! अय स दुरात्मा, अथवा अय स महात्मा कौटिल्य । यत—

आकर सवशास्त्राणा रत्नानामिव सागर ।
गुणैर्न परितुष्यामो यस्य मत्सरिणो वयम् ।।७।।

अन्वय—रत्नाना सागर इव सवशास्त्राणाम आकर । यस्य गुण मत्सरिण वयम न परितुष्याम ।।७।।

हिदी अनुवाद—चण्डाल—नीति निपुण आप के द्वारा (यह काम हुआ) ।
चाणक्य—भले आदमी, ऐसा न कहो। यह कहो कि नदकुल के द्वेषी भाग्य से।
राक्षस—(देखकर मन ही मन) अरे यही वह दुरात्मा अथवा महात्मा कौटिल्य है। रत्नो के आकर समुद्र के समान यह सब शास्त्रो का आकर है, जिसके गुणो से ईर्ष्या करने वाले हम लोग सतुष्ट नही होते हं।

Chandal—By Noble Sir whose wit is well skilled in diplomacy

Chanakya—No not so say by Fate the enemy of the house of Nanda

Rakshas (*Seeing to himself*)—This is the wicked or say noble hearted Kautilya the store of all knowledge as is the sea of gems with whose virtues we whose envy is aroused are not pleased

सस्कृत व्याख्या—रत्नाना महार्घाणा मणीनाम आकर उत्पत्तिभूमिसागर इव समुद्र इव सवशास्त्राणाम सवशास्त्रसग्रहैकरूपाणा राजनयानाम आकर निधिरिव मत्सरिण अद्यावधि मत्सराक्रान्तमानसा वयम यस्य चाणक्यस्य गुण न परितुष्याम नव प्रीतिमवाप्ता ।

टिप्पणी

(१) **आकर**—खजाना। जिस प्रकार सागर रत्नो का खजाना है उसी प्रकार चाणक्य सभी शास्त्रो का खजाना है। यहा पर राक्षस भी चाणक्य के गुणो की प्रशसा कर रहा है। वह यह मानता है कि म मत्सर (डाह) के कारण उससे प्रसन्न नही हू पर वह गुणी है। (२) **मत्सरिणा वयम**—डाह करने वाला (म राक्षस)। यहा उपमा और रूपक अलकार तथा अनुष्टुप छन्द है।

चाणक्य—(विलोक्य सहर्षम) अये। अयममात्यराक्षस येन महात्मना—

गुरुभि कल्पनाक्लेशैर्दीर्घजागरहेतुभि ।
चिरमायासिता सेना वृषलस्य मतिश्च मे ।।८।।

अन्वय—(येन महात्मना) दीघजागरहेतुभि गुरुभि कल्पनाक्लेश मे मति वषलस्य च सेना चिरम आयासिता ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(देखकर प्रसन्नता के साथ) अरे यह अमात्य राक्षस ह। जिन महापुरुष के द्वारा (कारण) मौय सम्राट की सेना और मेरी (कूटनीति युक्त) बुद्धि दिन रात जागरण करके बडी-बडी तयारियो से और बडी-बडी चिन्ताओ से अब तक कष्ट झेलती रही।

(*Seeing to himself with joy*) Ha ! there is that Minister Rakshas due to whom my wit and the army of the Vrishala has long been troubled with the difficult task of devising plans due to which long vigils have been kept

सस्कृत व्याख्या—अये अयम अमात्यराक्षस येन महात्मना वषलस्य सम्राज महाबलस्य मौयस्य सेना वाहिनी मम मति बुद्धि चिरम दीघकालम दीघजागर हेतुभि बहुकालात प्रवतमान यो जागर निद्राभावस्तस्य हेतुभि गुरुभि अति प्रवद्धै कल्पनाक्लेश वषलसेनापक्षे पत्तीनामश्वबलाना हस्तिसेनाना वा या कल्पना तत्तत्सन्नाहविशेषा एव क्लेशा कष्टानि तै चाणक्यमतिपक्षे चोपाय चतुष्टयस्य या कल्पना एव क्लेशा त आयासिता भृश कदर्थीकृता ।

टिप्पणी

(१) **दीघजागरहेतुभि**—बहुत दिन तक जागने के कारण। (२) **गुरुभि**—बडे महान। (३) **कल्पनाक्लेश**—(मति पक्ष मे) उपाय सोचने के कारण कष्ट (सेनापक्ष मे) सदा तैयार रहने के कारण कष्ट। (४) **आयासिता**—दु खित की गई। क्लेश का अनुभव किया। चाणक्य के कहने का भाव यह है कि मेरी बुद्धि तो राक्षस के कारण इसलिए परेशान थी कि म दिनरात सामदानादि उपायो को सोचता रहता था और चन्द्रगुप्त की सेना इसलिए परेशान थी कि उसे हमेशा चौकन्ना रहना पडता था और इन्ही के कारण मुझे और सेना को जागते ही बीतता था। यहाँ तुल्ययोगिता अलकार और अनुष्टुप् छन्द है।

(जवनिकामपनीयोपसृत्य च) भो भो अमात्यराक्षस ! विष्णुगुप्तोऽभिवादयते ।

राक्षस —(स्वगतम्) अमात्य इति लज्जाकरमिदानीं विशेषणपदम् । (प्रकाशम्) भो भो विष्णुगुप्त ! न मा श्वपाकस्पर्शदूषित स्प्रष्टुमर्हसि ।

चाणक्य —अमात्य राक्षस ! नाय श्वपाक । अय खलु दृष्टपूव एव भवता सिद्धार्थकनामा राजपुरुष, योऽयमसौ द्वितीय, सोऽपि सुसिद्धार्थकनामा राजपुरुष एव । ताभ्यामेव सह सौहार्दमुत्पाद्य शकटदासोऽपि तपस्वी त तादृशम-जानन्नेव कपटलेख मयैव लेखित ।

राक्षस —(आत्मगतम्) दिष्ट्या शकटदास प्रत्यपनीतो विकल्प ।

हिन्दी अनुवाद—(पर्दा हटाकर समीप जाकर)

चाणक्य—अये अमात्य राक्षस, विष्णुगुप्त आपका अभिवादन करता है।

राक्षस—(मन में) इस समय "अमात्य" यह विशेषण मेरे लिए लज्जा-जनक है। (प्रकट) अरे विष्णुगुप्त, म चण्डाल के स्पश से अपवित्र हो गया हूँ, इसलिए आप मुझे न छुयें।

चाणक्य—अमात्य राक्षस, यह चण्डाल नहीं है। इसको आपने पहले देखा है। यह सिद्धार्थक नामक राजपुरुष है। और जो यह दूसरा है वह भी सुसिद्धार्थक नाम का राजपुरुष ही है। इन्हीं दोनो के साथ मित्रता पदा करके मने ही बेचारे शकटदास से बिना उसके जाने हुए भी वसा जाली पत्र लिखवाया ।

राक्षस—(मन में) भाग्य से शकटदास के ऊपर जो सन्देह था वह दूर हो गया।

Chanakya (*Removing veil and approaching*)—Ho Minister Rakshas Vishnugupta salutes you

Rakshas (*To himself*)—At this moment the title Minister causes shame to me (*Aloud*) Oh Vishnugupta I have been defiled by the touch of Chandals so you do not deserve to touch me

Chanakya—Oh Minister Rakshas he is not a Chandal He is king s man Siddharthaka by name seen by you before And this other is also the king s man Susiddharthaka by name Making friendship with these two poor Shakatdas was caused by me to write that forged letter without knowing it

Rakshas (*To himself*)—Fortunately my suspicion about Shakatdas is removed

चाणक्य —किं बहुना, सङक्षेपत कथयामि—
भृत्या भद्रभटादय स च तथा लेख स सिद्धार्थक
तच्चालङ्करणत्रय स भवतो मित्र भदन्त किल।
जीर्णोद्यानगत स चार्तपुरुष क्लेश स च श्रेष्ठिन
सव मे—(इत्यर्धोक्ते लज्जा नाटयति।)
वृषलस्य वीर! भवता सयोगमिच्छोर्नय ॥९॥
तदेष वषलस्त्वा द्रष्टुमागच्छति पश्यैनम।

अन्वय—भद्रभटादय भत्या स तथा लेखश्च स सिद्धाथक तत अलङ्करण-त्रय च भवत किलमित्र स भदन्त जीर्णोद्यानगत स आतपुरषश्च स श्रेष्ठिन क्लेशश्च—सव वषलस्य भवता सयोगमिच्छो मे नय।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अधिक कहने से क्या लाभ, सक्षेप में कहे देता हूँ। भद्रभटादिक अनुचर, उस प्रकार का लेख, वह सिद्धायक, वे तीनो आभूषण, आपका मित्र वह बौद्ध सन्यासी, जीण उपवन में गया हुआ वह दु खी पुरुष और वह सेठ (चन्दनदास) का क्लेश यह सब (ऐसा आधा कहकर लज्जा का अभिनय करता है) मेरी नीति थी जो चद्रगुप्त के साथ आपकी मत्री कराना चाहती है। वह वषल आपसे मिलने आ रहा है (उसे देखिए)।

Chanakya—What s the use of telling more I tell you briefly —These people such as Bhadrabhatta etc the letter of that type that Siddharthaka those three ornaments the mendicant your friend the grieved man who was gone to the old garden and the whole trouble to the banker (*Chandandas*), all is my (*acting shame when half uttered*) diplomacy who wanted to unite you with Vrishala That Vrishala comes to see you Look at him

सस्कृत व्याख्या—वीर! हे शूर! भद्रभटादय भत्या सेवका स तथा लेखश्च तथाविध तेन प्रकारेण कपटेन लिखित लेख पत्रमपि तत अलङ्कारत्रय च पवतेश्वरभूषणानि अपि भवत तव किल मित्रम सुहृत भदन्त बौद्धसन्यासी च जीर्णोद्यानगत प्राचीननष्टभ्रष्टोपवनप्राप्त स आतपुरुषश्च दु खी नर च स श्रेष्ठिन चन्दनदासस्य क्लेशश्च दु ख च सवम इदम वषलस्य मौर्यस्य भवता त्वया सह सयोगमिच्छो मत्रीम कामयमानस्य मे मम नय नीति अस्ति।

टिप्पणी

(१) श्वपाकस्पशदूषितम—चण्डाल को छूने से अपवित्र। (२) श्वपाक —

चण्डाल। (३) **कपटलेख**—जाली पत्र। (४) **शकटदासम प्रति अपनीत विकल्प**—शकटदास के प्रति सन्देह दूर हो गया। (५) **वीर**—चाणक्य के द्वारा प्रयुक्त यह सम्बोधन राक्षस के यथाथ व्यक्तित्व को ध्वनित करता है। इसके साथ ही प्रशसा के द्वारा चाणक्य राक्षस को वशीभूत करना चाहता है। (६) **सयोगमिच्छो**—सयोग चाहने वाले का। इसमे काव्यलिंग अलकार तथा शादूलविक्रीडित छन्द है।

राक्षस—(स्वगतम्) का गति ? (प्रकाशम) एष पश्यामि।

(तत प्रविशति राजा विभवतश्च परिवार।)

राजा—(स्वगतम्) विनैव युद्धादार्येण पराजित दुजय रिपुकुलमिति लज्जित इवास्मि। मम हि—

फलयोगमवाप्य सायकानामनियोगेन विलक्षता गतानाम्।
न शुचेव भवत्यधोमुखाना निजतूणीशयनव्रत प्रतुष्टयै॥१०॥

अन्वय—फलयोगम अवाप्य अनियोगेन विलक्षता गतानाम शुचेव अधो मुखानाम (मम) सायकाना निजतूणीशयनव्रत प्रतुष्टय न भवति।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) क्या उपाय है (प्रकट) देखता हूँ।
(राजा का अपने अनुचर-परिचरों के साथ प्रवेश)

राजा—(मन में) युद्ध के बिना ही आय चाणक्य ने दुजय शत्रुकुल को पराजित कर दिया इससे म लज्जित-सा हो रहा हू। मेरे तो इन लोह-कीलित अस्त्रों को कुछ काम न मिलने के कारण (लक्ष्यहीनता को प्राप्त क्योंकि बाण चलाने की आवश्यकता ही नहीं पडी और विजय हो गई) लज्जित बने, इन शस्त्रों की अकमण्यता के कारण दु ख से मुह नीचा किए बाणो का अपने तूणीर में निश्चल होकर पडा रहना सतोषजनक नहीं है। (यह अथ बाणपक्ष में हुआ) अब चन्द्रगुप्त पक्ष में इसका अथ इस प्रकार है। कायसिद्धि को प्राप्त करके भी आज्ञा देने योग्य न होने के कारण लज्जा को प्राप्त किए हुए और (अतएव) मानो शोक से नीचा मुँह किए हुए निश्चेष्ट होकर हमारा अपने घर में पडा रहना मुझे सतोष नहीं दे रहा है।

Rakshas (*To himself*)—What help (*Aloud*) Here I see him

(Now enter the king surrounded by servants) *King*—(*To himself*) I am surely ashamed that Noble Chanakya has con

quered the invincible army of the enemy without a fight The arrows have been rendered useless through the operation of Chanakya s expedients hence their lying down in their own quiver after having been endowed with tips with the tops turned down as if in grief does not give me much satisfaction

This verse has two meanings—one is applicable to the arrows the other is applicable to maurya himself In the case of Chandragupta it means —As Noble Chanakya has con quered the enemy without a fight my aims are achieved I had to do nothing and so my lying down in my house without any activity is causing shame to me

सस्कृत व्याख्या—मत्सायकाना मदबाणाना फलयोगमवाप्य फलै शल्यै योग सम्बध त प्राप्य अथवा स्वयमेवोपनम्यमान विग्रहरूप फलमधिगम्य प्राप्य नियोगेन शत्रुवधाख्ये कार्ये व्यापाराभावेन विलक्षता गतानाम अनवाप्तशर यता नामत एव च हेतोरधोमुखाना तूणीर एवावस्थितानाम अतिलज्जायुक्तानाम इव यत शुचा इव शोकेन इव निजतूणीशयनव्रतम निजतूणीषु स्वेषु इषधिषु यच्छयन तदेव व्रत प्रायश्चित्ताचरणादिरूप तत प्रतुष्टय प्रीत्य नेति।

टिप्पणी

(१) **फलयोगम अवाप्य**—(राजा पक्ष मे) फल (शत्रु के ऊपर विजय) पाकर। (बाण पक्ष मे) फल (लोहे की तेज कील जिसे बाण का फल कहते ह पाकर)। (२) **अनियोगेन**—(राजा पक्ष मे) शत्रु वध रूपी काय मे भाग न लेने के कारण। (बाणपक्ष मे) बिना प्रयोग किए। (३) **विलक्षताम गतानाम**—लज्जा को प्राप्त। (बाण पक्ष मे) बाणत्व को न प्राप्त होने के कारण अर्थात हीनता के कारण। (४) **शुचेव**—शुचा+इव। मानो दुख के कारण। (५) **निजतूणीशयनव्रतम**—(राजा पक्ष मे) अपने घर मे पडा रहना। (बाण पक्ष मे) अपने तरकश मे पडा रहना। (६) **अधोमुखानाम**—नीचे मुह करके अवस्थित। बाणो को तूणीर मे जब रखा जाता है तब उनका मुह नीचे की ओर रहता है। इस पर कवि ने कल्पना की है कि मानो उन्होने अपना मुख शोक से नीचे कर रखा है। यहा उत्प्रेक्षा अलकार तथा मालभारिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—विषमे ससजा गुरु समे चेत्सभरा येन तु मालभारिणीयम ।

अथवा—

त्रिगुणीकृतकार्मुकोऽपि जेतु
भुवि जेतव्यमसौ समर्थ एव।

स्वपतोऽपि ममेव यस्य तन्त्रे
गुरवो जाग्रति कायजागरूका ॥११॥

अन्वय—स्वपतोऽपि मम इव यस्य तन्त्रे कायजागरूका गुरवो जाग्रति असौ विगुणीकृतकामुकोऽपि भुवि जेतव्य जेतु समर्थ एव ॥११॥

हिन्दी अनुवाद—मेरे समान सोते हुए भी जिस (राजा) के गुरु काय की चिन्ता के कारण जागते रहते ह वह (राजा) प्रत्यचा रहित धनुष वाला होने पर भी पृथ्वी पर शत्रु को जीतने में समर्थ होता ही है।

That king whose preceptors awake in affairs keep watch though he (*king*) is asleep (*not watchful*) can conquer everything in the world though his bow is unstrung

सस्कृत व्याख्या—स्वपतोऽपि शयानस्यापि असावधानस्यापीत्यथ मम इव यस्य भूपते तत्रे राष्ट्रहितचिन्तने कायजागरूका कायसावधाना गुरव आचार्या जाग्रति सावधाना सन्ति असौ राजा विगुणीकृतकामुक अपि विगुणीकृत मौर्वीरहित कृत कामुकम धनु यस्य तथाविधोऽपि भुवि वसुधाया जेतव्य शत्रु जेतु समथ एव।

टिप्पणी

(१) **जेतव्यम**—शत्रु को। जि+तव्य। (२) **जेतुम**—जीतने के लिए। जि+तुमुन। इस पद्य मे काव्यलिंग उपमा और विभावना अलकार ह तथा मालभारिणी छन्द है।

(चाणक्यमुपसृत्य) आय ! चन्द्रगुप्त प्रणमति।

चाणक्य —वृषल ! सम्पन्नास्ते सर्वाशिष । तदभिवादयस्व तत्रभवन्तममात्यराक्षसम, पैतृकस्तवायममात्यमुख्य ।

राक्षस —(स्वगतम्) योजितोऽनेन सम्बन्ध ।

राजा—(राक्षसमुपसृत्य) आय ! चन्द्रगुप्तोऽहमभिवादये।

राक्षस —(विलोक्य स्वगतम्) अये ! अय चन्द्रगुप्त ! ! य एष —

बाल एव हि लोकोऽस्मिन् सम्भावितमहोदय ।
क्रमेणारूढवान् राज्य यूथैश्वयमिव द्विप ॥१२॥

(प्रकाशम्) राजन् विजयस्व

अन्वय—अस्मिन् लोके सम्भावितमहोदय बाल एव द्विप यूथैश्वयमिव क्रमेण राज्य हि आरूढवान ॥१२॥

हिन्दी अनुवाद——(चाणक्य के पास जाकर) आर्य चन्द्रगुप्त प्रणाम करता है॥

चाणक्य—वृषल, मेरे सभी आशीर्वाद पूरे हो गये। अब पूज्य अमात्य राक्षस को प्रणाम करो। यह परम्परागत तुम्हारे महा अमात्य है।

राक्षस—(मन में) अरे इसने तो अब नाता जोड दिया।

राजा—(राक्षस के पास जाकर) आर्य, म चन्द्रगुप्त अभिवादन करता हूँ॥

राक्षस—(देखकर मन में) अरे यही वह चन्द्रगुप्त है जो कि इस ससार में, अपने बचपन से ही अपने महान अभ्युदय की आशा सब को बँधवाता रहा। इसने तो उसी प्रकार साम्राज्य का सिंहासन पा लिया जसे छोटेपन से ही होनहार कोई हाथी का बच्चा हाथियो के झुण्ड का आधिपत्य पा ले। (प्रकट) राजन! विजयी हो।

(*Approaching Chanakya*) Noble Sir Chandragupta bows unto you

Chanakya—All my blessings for you have matured so bow down to Minister Rakshas He is your hereditary prime minister

Rakshas (*To himself*)—Connection has been established by him

King (*Approaching Rakshas*)—Noble Sir Chandragupta bows unto you

Rakshas (*Seeing to himself*)—He Chandragupta He it is who with a mighty future in the world gradually attained sovereignty though only a child in the same way as the cub of an elephant attains the leadership of elephants (*Aloud*) O King be prosperous

सस्कृत व्याख्या—अस्मिन लोके ससारे सम्भावितमहोदय सम्भावित अनुमित महोदय विशिष्टाभ्युदय यस्य स सम्भाव्यमानविपुलाभ्युदय बाल एव अप्ररूढयौवन एव सन द्विप गज यूथश्वयमिव गजयूथाधिपत्यमिव क्रमेण क्रमश शन शन वा राज्यम मगधसाम्राज्यम आरूढवान समारूढो विराजते इति भाव॥

टिप्पणी

(१) सम्पन्ना—पूरे हो गये। ते सर्वाशिष—तुम्हारे वास्ते मेरे जितने आशीर्वाद थे सब पूरे हो गये। (२) सम्भावितमहोदय—जिसके अभ्युदय की सभावना की गई। सभावित महोदय यस्य स सम्भावितमहोदय (ब० व्री०)। व्यक्ति की भावी अवस्था बचपन मे ही परिलक्षित हो जाती है—

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात। राक्षस ने च द्रगुप्त को बचपन मे भी देखा था। उसी समय उसने च द्रगप्त के महान होने की सभावना कर ली थी। (३) **विजयस्व**—वि+परा पूवक जि धातु मे आत्मेनपद होता है विपराभ्या जे । अत विजयस्व हुआ। इस पद्य मे उपमा अलकार तथा अनुष्टुप छ द है।

राजा—आय ! —

जगत कि न विजित मयेति प्रविचिन्त्यताम् ।
गुरौ षाड्गुण्यचिन्तायामार्ये चार्ये च जाग्रति ।।१३।।

अ वय—आर्ये गुरौ आर्ये च षाडगुण्यचि तायाम जाग्रति जगत कि न मया विजितम् इति प्रविचिन्त्यताम ।।१३।।

हि दी अनुवाद—आय, गुरु आय चाणक्य और आपके (सधि, विग्रह आदि) छ गुणो के चि तन में सतत लगे रहने पर ससार की वह कौन सी विजय है जो मेरी न हो जाय। यह सोचिए।

Kıng—Noble Sır thınk what worldly thıngs are not attaıned by me when Noble Sır (*Rakshas*) and Noble Sır (*Chanakya*) my preceptor are watchıng over the delıberatıons on the sıx expedıents

सस्कृत याख्या—गुरौ आचार्ये आर्ये च पूज्ये चाणक्ये च आर्ये च माननीये भवति राक्षसे च षाडगुण्यचिन्तायाम षाडगुण्यस्य मत्साम्राज्यस्य सधि विग्रह यानासन सश्रय द्वधीभावरूपकायस्य चि ताया जाग्रति जागरूके सति मया जगत ससारस्य कि न विजितम सकलमेव जगत स्ववशीकृतमेवेति प्रविचि त्यताम बुद्धचतामिति।

टिप्पणी

षाडगुण्य—षडेव गुणा इति षाडगुण्यम षडगुण+ष्यञ् स्वार्थे। छ गुण य ह—सधि विग्रह यान आसन, सश्रय और द्वधीभाव। इस श्लोक मे तुल्य-योगिता समुच्चय का यलिग तथा अर्थापत्ति अलकार और अनुष्टुप छ द है।

राक्षस —(स्वगतम्) स्पृशति मा भृत्यभावेन कौटिल्य-शिष्य । अथवा विनय एवैष चन्द्रगुप्तस्य। मत्सरस्तु मे विपरीत कल्पयति। सर्वथा स्थाने यशस्वी चाणक्य ।

कुत —

द्रव्य जिगीषुमधिगम्य जडात्मनोऽपि
नेतुयशस्विनि पदे नियता प्रतिष्ठा।
अद्रव्यमेत्य भुवि शुद्धनयोऽपि मन्त्री
शीर्णाश्रय पतति कूलजवृक्षवृत्त्या ।।१४।।

अन्वय—द्रव्य जिगीषुम अधिगम्य जडात्मनोऽपि नेतु यशस्विनि पदे प्रतिष्ठा नियता (भवति)। अद्रव्यम एत्य शुद्धनय अपि मन्त्री शीर्णाश्रय (सन) कूल-जवृक्षवत्त्या भुवि पतति ।।१४।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(अपने मन में) कौटिल्य का शिष्य मुझे सेवक भाव से छू रहा है (अर्थात व्यवहार कर रहा है) अथवा यह तो चन्द्रगुप्त का विनय ही है। (इसके प्रति) मत्सर के कारण मै उलटा समझता हूँ। चाणक्य हर प्रकार से उचित ही यशस्वी है। क्योकि —योग्य और विजय की इच्छा रखने वाले राजा को पाकर मूख मत्री भी यशस्वी हो जाता है। अयोग्य राजा को पाकर शुद्ध नीति वाला भी मत्री आश्रयहीन होता हुआ किनारे के पेड की भाति गिर पडता है।

Rakshas (*To himself*)—This disciple of Kautilya is really treating me as a servant Or this is really Chandragupta s humility but my jealousy (*for him*) thinks it otherwise Chanakya by all means rightly deserves fame For—Finding an able and ambitious king even a block head is placed in a renowned position but coming by an unworthy (*king*) even a minister of unimpeachable diplomacy falls to the ground like a tree growing on the river bank devoid of his resort

N B There is a hint to Rakshas s failure due to the folly of Malayaketu

संस्कृत व्याख्या—द्रव्य भव्य विजिगीषुम वद्धिकाम राजानम नर वा अधिगम्य प्राप्य नेतु नायकस्य अमात्यस्य वा जडात्मनोऽपि मन्दबुद्धेरपि यशस्विनि पदे लोकप्रतिष्ठाने उच्चस्थाने प्रतिष्ठा स्थिति नियता अवधारिता भवति। अद्रव्यम अयोग्यम एत्य प्राप्य शुद्धनय अपि अवगतषाडगुण्योऽपि मत्री अमात्य शीर्णाश्रय सन उत्खातमूल सन कूलजवृक्षवत्त्या कूलजस्य नदीतटजातस्य वक्षस्य पादपस्य वृत्त्या व्यवहारेण भुवि पथिव्या पतति। आचायस्य कीर्ति बाहुल्येन शिष्याधीना भवति इति भाव ।

टिप्पणी

स्थाने—उचित । **द्र यम**—योग्यम । **शीर्णाश्रय** —जिसका आश्रय (मूल) उखड गया है । **कूलजवक्षवृत्त्या**—नदीतट के वक्ष के समान । **शुद्धनय** —शुद्धनीति वाला । यहा राक्षस का अपनी ओर सकेत है । वस्तुत उसकी नीतिया अप्रतिम थी । अत विजय की सभावना की जा सकती थी यदि मलयकेतु जसा अविवेकी व्यक्ति न मिला होता । इस पद्य मे निदर्शना अलकार तथा वसन्त तिलका छद है ।

चाणक्य —अमात्य राक्षस ! अपीष्यते चन्दनदासस्य जीवितम् ?

राक्षस —भो विष्णुगुप्त ! कुत सन्देह ?

चाणक्य—अमात्य राक्षस ! अगृहीतशस्त्रेण भवताऽनुगृह्यते वृषल इत्यत सन्देह । तद्यदि सत्यमेव चन्दनदासस्य जीवितमिष्यते, ततो गृह्यतामिद शस्त्रम् ।

राक्षस —भो विष्णुगुप्त ! मा मैवम् । अयोग्या वयमेतस्य ग्रहणे, विशेषतस्त्वया गृहीतस्य शस्त्रस्य ।

हिन्दी अनुवाद—**चाणक्य**—अमात्य राक्षस, क्या आप च दनदास का प्राण बचाना चाहते ह ?

राक्षस—हे विष्णुगुप्त, इसमें सदेह कसे ?

चाणक्य—अमात्य राक्षस, सन्देह इसलिये हो रहा है कि आप बिना शस्त्र लिये ही च द्रगुप्त पर कृपा कर रहे ह, यदि सचमुच आप च दनदास का प्राण बचाना चाहते ह तो इस हथियार को लें ।

राक्षस—हे विष्णुगुप्त, ऐसा मत करो । म इसको ग्रहण करने योग्य नहीं हू, विशेष करके आप द्वारा ग्रहण किये शस्त्र के (ग्रहण करने में) ।

Chanakya—Minister Rakshas do you really wish to save the life of Chandandas ?

Rakshas—Oh Vishnugupta whence this doubt ?

Chanakya—Minister Rakshas you are favouring Vrisha la without taking the weapon hence this doubt So if you really desire the life of Chandandas then take up this weapon

Rakshas—Oh Vishnugupta do not say so I am unworthy of accepting it specially as it was handled by you

चाणक्य —अमात्यराक्षस ! योग्योऽहमयोग्यो भवान् इति कथमेतत् ? पश्य—

अश्वैः सार्द्धमजस्रदत्तकविकाक्षामैरशून्यासनैः
स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुखैर्वर्जितान् ।
माहात्म्यादतिपौरुषस्य भवतो दृप्तारिदर्पच्छिद
पश्यैतान् परिकल्पनाव्यतिकरप्रोच्छूनवशान गजान् ॥१५॥

अन्वय—दृप्तारिदपच्छिद अतिपौरुषस्य भवत माहात्म्यात अशून्यासन अजस्रदत्तकविकाक्षाम अश्व साधम स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुख वर्जितान परिकल्पना यतिकरप्रोच्छूनवशात एतान गजान पश्य ॥१५॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—आप अयोग्य ह और म योग्य हूँ यह आप कसे कहते ह । देखिये—अभिमानी शत्रु के मद को नाश करने वाले तथा महापराक्रमी आपके प्रभाव से घोडो की पीठ पर से जीन कभी हटाई न जाती थी तथा उनके मुह में लगाम हमेशा पडी रहती थी अत वे (घोडे भी) क्षीणवदन हो गये थे और उनके साथ साथ हमारी सेना के हाथी भी हमेशा तयार रखे जाते थे। उनकी पीठ पर से हौदा कभी उतरता नहीं था अत उनकी पीठ में सूजन आ गई थी और वे हाथी मनमानी आहार, पान, विहार, शयनादिक सुखो से वचित रहते थे।

Chanakya—Minister Rakshas how do you say that I am fit and you are unfit? Look here look at these elephants (*of our side*) with their spine swollen through contact of their pads and they were deprived of the pleasure of bathing eating moving drinking and resting according to their will along with the horses which have become lean on account of the bits being constantly inserted and the saddles never being unoccupied This is all due to the greatness of your prowess who are the destroyer of the pride of a haughty enemy

सस्कृत व्याख्या—दप्तारिदपच्छिद दप्ताना चतुरङ्गबलसघेन प्रगल्भमानाना मस्मादृशानामरीणा यो दप बलाभिमानस्त सव छिनत्ति नाशयति इति तथाभूतस्य अर्थात गवहारिण अतिपौरुषस्य महापुरुषकारोपेतस्य भवत तव माहात्म्यात प्रभावात अशू यासनै अशून्यानि अनपनीतानि आसनानि पर्याणानि येषा तादृशै अजस्रदत्तकविकाक्षाम अजस्र निरन्तर दत्ता कविका खलीनादय येषाम अतएव क्षामा क्षीणक्षीणा त अश्व घोटकै साधम स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुखै

स्नान जलासेक आहार भोजनद्रव्याणि विहारो जलक्रीडादि पान तृषावारण शयन निद्रालाभश्च तेषा यत्स्वेच्छासुखम स्वमनोरथीकृत समुपभोगजात तै सर्वैरेव वर्जितान विरहितान परिकल्पना यतिकरप्रोच्छूनवशान परिकल्पनाना रणसज्जाना यो व्यतिकर नित्यसपक तत प्रोच्छना जातशोफा वशा मेरुदण्ड-भागा पृष्ठास्थिभागा वा येषा तथाभूतान एतान अमून गजान करिण पश्य अवलोकय। सव खलु चतुरङ्गबलमस्माक भवत्पौरुषेण भीतम अद्यापि सज्जसज्ज-मिति भवानेव अस्मान सर्वान अतिशेते इत्यथ ।

टिप्पणी

(१) **दप्तारिदपच्छिद**—अभिमानी शत्रु के दप को नष्ट करने वाले (का)। यह भवत का विशेषण है। (२) **अशून्यासन**—काठी अथवा पलान से हमेशा युक्त। घोडो की जीन हमेशा उनकी पीठ पर रखी रहती थी। (३) **अजस्रदत्तकविकाक्षाम**—निरन्तर लगाम धारण करने के कारण क्षीण। यह घोडो का विशेषण है। अजस्र दत्ता कविका येषाम अत एव क्षामा (४) **स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुख वर्जितान**—नहाने खाने, घूमने पीने और शयन के यथच्छसुख से वचित। यह गजान का विशेषण है। (५) **परिकल्पना यतिकरप्रोच्छूनवशान**—हौदे के सदा कसे रहने के कारण सूजे हुए पष्ठ भाग वाले। परिकल्पना—हाथी के पीठ पर कसा जाने वाला हौदा। व्यतिकर—प्रतिदिन कसे रहना। वि+अति+कृ+घ करणे वा अप भावे। प्रोच्छन—सूजे हुए। प्र+उद्+श्वि+क्त कतरि। वशान—पीठ। चाणक्य के कहने का भाव यह है कि राक्षस के डर से हमारी सेना सदा सुसज्जित रहती थी। घोडो के मुह मे लगाम हमेशा पडी रहती थी अतएव वे दुबल हो गये थे। उनके साथ ही साथ हाथी भी सदा तयार रहते थे। उनकी पीठो पर हौदे हमेशा कसे रहते थे, इससे उनकी पीठे सूज गई थी। यहा पर शादूलविक्रीडित छन्द है और तुल्ययोगिता अलकार है।

अथवा किमनेन। न खलु भवत शस्त्रग्रहणमन्तरेण चन्दनदासस्य जीवितमस्ति।

राक्षस —(स्वगतम्)

नन्दस्नेहकणा स्पृशन्ति हृदय भृत्योऽस्मि तद्विद्विषा
ये सिक्ता स्वयमेव पाणिपयसा चछेद्यास्त एव द्रुमा ? ।
शस्त्र मित्रशरीररक्षणकृते व्यापारणीय मया
कार्याणा गतयो विधेरपि न यान्त्यालोचनागोचरम् ।।१६।।

अ वय—नन्दस्नेहकणा हृदय स्पशन्ति, तद्विद्विषा भृत्योऽस्मि। ये द्रुमा स्वयमेव पाणिपयसा सिक्ता त एव छेद्या । मया मित्रशरीररक्षणकृते शस्त्र व्यापारणीयम । कार्याणा गतय विधेरपि आलोचनागोचरम न यान्ति ।।१६।।

हि दी अनुवाद—अथवा इन बातों से क्या प्रयोजन ? आपके शस्त्र ग्रहण करने के अलावा च दनदास के बचने का उपाय नहीं है।

राक्षस—(मन में) (एक ओर तो) न द के स्नेह के कण मुझे स्पश कर रहे ह और (दूसरी ओर) उनके शत्रुओ का सेवक भी हो रहा हूँ। जिन पेडों को हाथरूपी जल से सींचा उन्हीं को काटना पड रहा है। मित्र की शरीर-रक्षा के लिये मुझे शस्त्र ग्रहण करना चाहिये। कर्मों की गति ब्रह्मा भी नहीं समझ सकते (विधाता के भी दृष्टि-पथ पर नहीं उतरती)।

Or what is the use of such talks ? There is no other remedy of saving the life of Chandandas except your accepting the weapon

Rakshas (*To himself*)—The particles of the kindness of Nanda touch my heart and I am going to be the servant of his enemies The very trees which were watered with the water of my hands are to be cut down To save the life of my friend I have to accept the weapon The course of one s previous deeds does not come within the range of even the creator himself

सस्कृत व्याख्या—नन्दस्नेहकणा नन्देषु स्नेह प्रेम तस्य कणा लेशा हृदय मम चित्त स्पशन्ति समावजयन्ति (अह) तद्विद्विषा नन्दशत्रूणा भत्य सेवक अस्मि अभवम ये द्रुमा पादपा स्वयमेव पाणिपयसा हस्तसलिलेन सिक्ता परिपालिता ते एव छेद्या विनाश्या कुठारादिभि निपात्या इति मया मित्रशरीररक्षणकृते मित्रस्य चन्दनदासस्य शरीररक्षण प्राणरक्षण तत्कृते तत्करणाय शस्त्र च द्रगुप्त-साचिव्यस्वीकारचिह्नभूतम मौयशस्त्रम व्यापारणीय स्वय ग्राह्यम। कार्याणा व्यापाराणाम विलसितानाम वा गतय परिणतय विधेरपि विधातुरपि आलोचना गोचरम आलोचनाया अगोचर देश न यान्ति न गच्छन्ति। अर्थात कथमपीद-मित्थमिति विवेक्तुम अपि न पायन्ते इति भाव ।

टिप्पणी

कार्याणाम गतय—कम की गति। **आलोचनागोचरम**—दृष्टिगोचर आ+लोच+णिच+युच भावे=आलोचना। कर्मों की गति ब्रह्मा भी नही जान सकते। 'कमणो गहना गति'। इस श्लोक मे विषम परम्परितरूपक अप्रस्तुत प्रशसा तथा कार्यलिंग अलकार ह और शादूलविक्रीडित छद है।

(प्रकाशम) भो विष्णुगुप्त ! उपानय खड्गम्। नम सवकायप्रतिपत्तिहेतवे सुहृत्स्नेहाय। का गति ? एष सज्जोऽस्मि।

चाणक्य—(सहर्षं शस्त्रमपयित्वा) वृषल ! वृषल ! अमात्यराक्षसेनेदानीं गृहीतशस्त्रेणानुगृहीत दिष्टया वर्धते भवान्।

राजा—आर्यप्रसाद एष चन्द्रगुप्तेनानुभूयते।

(प्रविश्य पुरुष) जेदु जेदु अज्जो। अज्ज ! एसो क्खु भद्दभटभाउराअणप्पमुहेहिं, सजमिअकलचलणो मलअकेदू प्पडिहारभूमिए अबत्थापिदो, ता एब्ब सुणिअ, एत्थ अज्जो प्पमाण त्ति। (जयतु जयत्वाय। आर्य ! एष खलु भद्रभटभागुरायणप्रमुखै सयमितकरचरणो मलयकेतु प्रतीहारभूमावुपस्थापित, तदिद श्रुत्वाऽत्रार्य प्रमाणमिति।)

चाणक्य—आ श्रुतम्। भद्र ! निवेद्यताममात्यराक्षसाय, अयमिदानीं राजकार्यं करिष्यति।

राक्षस—(स्वगतम्) कथ दासीकृत्येदानीं विज्ञापनाय मा मुखरीकरोति कौटिल्य !! का गति ? (प्रकाशम्) राजन् चन्द्रगुप्त ! विदितमेव यथा वय मलयकेतौ किञ्चित कालान्तरमुषिता तत् परिरक्ष्यन्तामस्य प्राणा।

राजा—(चाणक्यमुखमवलोकयति)

हिंदी अनुवाद—(प्रकट) अजी विष्णुगुप्त ! तलवार लाइए। मित्र के स्नेह को नमस्कार है जिसके कारण सभी काय स्वीकार करने पडे। क्या उपाय है ? यह तयार हूँ।

चाणक्य—(प्रसन्नता से शस्त्र देकर) वृषल, वृषल, अब अमात्य राक्षस ने शस्त्र ग्रहण कर तुम्हें अनुगृहीत किया। भाग्य से तुम बढ़ रहे हो।

राजा—यह चन्द्रगुप्त आप की कृपा का अनुभव कर रहा है।

(पुरुष प्रवेश करके) आय की जय हो। भद्रभट व भागुरायण आदि के द्वारा हाथ पर बँधा हुआ मलयकेतु द्वार पर उपस्थित किया गया है। यह सुनकर अब आगे आय की जो आज्ञा हो।

चाणक्य—हा सुन लिया। भद्र, अमात्य राक्षस से निवेदन करो, अब यही राज-काय करेंगे।

राक्षस—(मन में) कसे दास बनाकर अब चाणक्य मुझे निवेदन करने के लिए वाचाल बना रहा है (अर्थात अब वह यह चाहता है कि म उससे कुछ मागू)। क्या उपाय है ? (प्रकट) राजन, चन्द्रगुप्त, आपको मालूम है कि हम मलयकेतु के आश्रय में कुछ दिन रह चुके ह। इसलिए इनके प्राणो की रक्षा की जाय।

(*Aloud*) Oh Vishnugupta I bow down to the love of the friend which is the cause of my accepting every work What help ? Here I am ready

Chanakya (*With joy giving the weapon*)—Vrishala Vrishala you have been favoured by Minister Rakshas by his accepting the weapon Luckily do you prosper

King—This is the grace of Noble Sir which is being enjoyed by Chandragupta

Attendant (*Entering*)—Victory to the Noble Sir Malayaketu with his hands nad feet fettered by Bhadrabhatta and Bhagurayan and others has been brought to the gate Hearing this Noble Sir will decide

Chanakya—Yes I have heard Let it be reported to Minister Rakshas Now it is he who will manage the state affairs

Rakshas (*To himself*)—How after making me a servant he causes me to be garrulous for prayer What help ? (*Aloud*) Oh king Chandragupta it is known to you indeed that I stayed for sometime with Malayaketu so let his life be spared

टिप्पणी

(१) **सवकायप्रतिपत्तिहेतवे**—सारे काम को स्वीकार करने का कारण भूत। प्रतिपत्ति-स्वीकार करना। सर्वाणि च तानि कार्याणि सवकार्याणि (कम धारय) तेषा प्रतिपत्ति तस्या हेतु (षष्ठीतत०), तस्मै। राक्षस अपने मित्र स्नेह को नमस्कार करता है क्योकि मित्र-स्नेह ही के कारण उसे आज चन्द्रगुप्त का सचिव होना स्वीकार करना पड रहा है। (२) **प्रतीहारभूमौ**—दरवाजे पर। फाटक पर। (३) **मुखरीकरोति**—बोलने के लिए प्रेरित करती है। न मुखर अमुखर तं मुखर करोति मुखरीकरोति। माघ काव्य मे भी लिखा है। 'तथापि कल्याणकरी गिर ते मा श्रोतुमिच्छा मुखरीकरोति ।

चाणक्य ---वृषल ! प्रतिमानयितव्योऽयममात्यराक्षसस्य प्रथम प्रणय । (पुरुषमवलोक्य) भद्र ! अस्मद्वचनादुच्यन्ता भद्रभटप्रभृतय, अमात्यराक्षसविज्ञापितो देवश्चन्द्रगुप्त प्रयच्छति मलयकेतवे पित्र्यमेव विषयम् । अतो गच्छतु भवन्त सहानेन, प्रतिष्ठिते चास्मिन् पुनरागन्तव्यम् ।

पुरुष --ज अज्जो आणबेदि त्ति । (यदाय आज्ञापयतीति ।)

चाणक्य ---तिष्ठ तावत्, भद्र ! भद्र ! एवमपरमुच्यता विजयपालो दुगपालश्च, अमात्यराक्षसस्य गृहीतशस्त्रस्य प्रीत्या देवश्चन्द्रगुप्त समाज्ञापयति, एष तावच्छ्रेष्ठी चन्दनदास पृथिव्या सर्वेषु नगरेषु श्रेष्ठिपदमारोप्यतामिति ।

पुरुष ---ज अज्जो आणबेदि । (यदाय आज्ञापयति ।)

(इति निष्क्रान्त ।)

चाणक्य ---भो राजन् चन्द्रगुप्त ! किं ते भूय प्रियमुपकरोमि ?

चाणक्य---वृषल, अमात्यराक्षस की यह प्रथम प्राथना स्वीकार कर लेनी चाहिए। (पुरुष को देखकर) भद्र, हमारी ओर से भद्रभट आदि से कह दो कि अमात्य राक्षस के कहने पर महाराज चन्द्रगुप्त मलयकेतु को उसका पतृक राज्य ही देते ह, इसलिये आप लोग उसके साथ जाइये और उसके प्रतिष्ठित हो जाने पर फिर वापस चले आइये।

पुरुष---जसी आय की आज्ञा।

चाणक्य---रुको, भद्र, भद्र ! विजयपाल और दुगपाल से इस प्रकार दूसरी बात कहो कि अमात्य राक्षस के शस्त्र ग्रहण करने के कारण प्रसन्न होकर महाराज चन्द्रगुप्त आज्ञा देते ह कि यह सेठ चन्दनदास पथिवी में सभी नगरो के सेठ के पद पर नियुक्त कर दिए जाँय।

पुरुष---जसी आय की आज्ञा। (चला जाता है)

चाणक्य---ऐ राजा चन्द्रगुप्त ! तुम्हारा और क्या प्रिय करू ?

Chanakya—Vrishala this first prayer of Minister Rakshas ought to be granted (*Seeing the attendant*) Gentleman, tell Bhadrabhatta and others on my behalf that at the request of Minister Rakshas King Chandragupta is giving to Malayaketu his ancestral domains only So you all go with him and will come back when he is established

Attendant—As Sire commands (*Exit*)

Chanakya—Stop good man stop Let this another message be told to Vijayapal and Durgapal that King Chandragupta being pleased on account of Rakshas accepting the weapon commands that this Banker Chandandas be appointed to the office of banker in all towns on earth

Attendant—As Noble Sir commands (*Exit*)

Chanakya—Oh king what more pleasure shall I bring to you ?

टिप्पणी

(१) **प्रतिमानयित यम**—स्वीकार किया जाना चाहिए। प्रति+मन+णिच+तव्य। (२) **अमात्यराक्षसविज्ञापित**—अमात्य राक्षस के निवेदन करने पर (प्राथना पर) (३) **पित्र्यमेव विषयम**—केवल पतक राज्य। पितुरागत इति पित+यत=पित्र्य तम। (४) **भो राजन चन्द्रगुप्त**—अभी तक चन्द्रगुप्त को चाणक्य वषल ही कहके पुकारता रहा है। पर अब राजन शब्द से सम्बोधित इसलिए किया है कि अब राक्षस के साथ मेल हो जाने पर इसका राजपद स्थिर हो गया। अभी तक तो सदेहयुक्त था।

राजा—किमत पर प्रियमस्ति ?
राक्षसन सम मैत्री राज्ये चारोपिता वयम।
नन्दाश्चोन्मूलिता सर्वे कि कतव्यमत परम् ?॥१७॥

अन्वय—राक्षसेन सम मत्री वय च राज्ये आरोपिता सर्वे नन्दा उन्मूलिताश्च, अत पर किं कतव्यम ? ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—इससे बढ़कर प्रिय अब क्या हो सकता है ? राक्षस के साथ (मेरी) मत्री हो गई और मुझे राज्य मिल गया तथा नन्दवशी सभी नष्ट कर दिए गए। अब इसके आगे क्या चाहिए ?

King—What pleasure beyond this remains to be done ? Friendship with Rakshas has been made I have been placed on the throne all the Nandas have been uprooted what else has to be done ?

संस्कृत व्याख्या—राक्षसेन अमात्येन सम सह मत्री मित्रता जाता वय च राज्ये आरोपिता अहम् राज्यम प्राप्तवान इत्यथ। सर्वे नन्दा नन्दवशीया उन्मूलिता उत्खाता अत पर किं कत्तव्यम अधिक किं विधेयम।

टिप्पणी

आरोपिता—स्थापित कर दिया। इस श्लोक मे सम नामक अलकार तथा अनुष्टुप छन्द है।

चाणक्य—विजये! उच्यता दुर्गपालो विजयपालश्च, अमात्यराक्षसपरिग्रहेण प्रीतो देवश्चन्द्रगुप्त समाज्ञापयति—विना हस्त्यश्व क्रियता सर्वबन्धमोक्ष इति। अथवा अमात्य-राक्षसे नेतरि कि हस्त्यश्वेन प्रयोजनम्? तदिदानीम्—

सह वाहनहस्तिभ्या मुच्यता सवबन्धनम्।
मया पूणप्रतिज्ञेन केवल बध्यते शिखा ॥१८॥

(इति शिखा बध्नाति)

प्रतीहारी—ज अज्जो आणवेदि। (यदाय आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्ता।)

अन्वय—वाहनहस्तिभ्या सह सवब धनम मुच्यताम। पूणप्रतिज्ञेन मया केवल शिखा बध्यते ॥१८॥

हि दी अनुवाद—चाणक्य—विजये, दुगपाल और विजयपाल से कह दो कि अमात्य राक्षस के साथ मेल हो जाने के कारण प्रसन्न होकर महाराज च द्र-गुप्त ने आज्ञा दी है कि हाथी और घोडो को छोडकर सभी ब धन से मुक्त कर दिए जॉय। अथवा अमात्य राक्षस के नेता होते हुए हाथी और घोडो की क्या आवश्यकता है? तो इस समय हाथी और घोडो के साथ सब का ब धन खोल दिया जाय। मेरी प्रतिज्ञा पूरी हो गई है। म अब शिखा को बाधता हूँ।

(शिखा को बाधता है।)

प्रतीहारी—जसी आय की आज्ञा।

(बाहर चली जाती है।)

Chanakya—Vijaya let Durgapal and Vijayapal be told that King Chandragupta being pleased at the union with Rakshas commands that all should be released except horses and elephants or what is the use of horses and elephants when Minister Rakshas is our guide So now—Let all fastenings be released along with those of horses and elephants By me only the tuft is being fastened for my vow is fulfilled (Fastens his tuft)

Warder—As Noble Sir commands (*Exit*)

सस्कृत व्याख्या—वाहनहस्तिभ्या सह अश्वद्विपाभ्या साक सवब धनम् सर्वेषा

जीवानाम बन्धन सयमन मुच्यताम दूरीक्रियताम। पूर्णप्रतिज्ञेन पूर्णा सफला प्रतिज्ञा शपथ यस्य तेन मया कौटिल्येन केवल शिखा बध्यते सयतीक्रियते।

टिप्पणी

(१) **हस्त्यश्वम**—हाथी और घोडे। हस्तिनश्च अश्वाश्च इति हस्त्यश्वम (द्वन्द्व स०) द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम इति सूत्रेण एकवद्भाव । (२) **बध्यते शिखा**—प्रथम अक मे तत प्रविशति मुक्ता शिखा परामशन कुपितश्चाणक्य यह जो बीज का निक्षेप किया गया था उसी का निवहण यहा किया गया है। इस श्लोक मे विषमालकार तथा अनुष्टुप छन्द है।

चाणक्य —अमात्यराक्षस! तदुच्यता, किं ते भूय-प्रियमुपकरोमि?

राक्षस —किमत परमपि प्रियमस्ति? यदि न परितोष-स्तदिदमस्तु—

(भरतवाक्यम्)

वाराहीमात्मयोनेस्तनुमतनुबलामास्थितस्यानुरूपा
यस्य प्राग्दन्तकोटिं प्रलयपरिगता शिश्रिये भूतधात्री।
म्लेच्छैरुद्वेज्यमाना भुजयुगमधुना सश्रिता राजमूर्तें
स श्रीमदबन्धुभृत्यश्चिरमवतु मही पार्थिवश्चन्द्रगुप्त ॥१९॥

(इति निष्क्रान्ता सर्वे।)

॥इति मुद्राराक्षसे सप्तमोऽङ्कः॥

अन्वय—प्रलयपरिगता भूतधात्री प्राक अतनुबलाम अनुरूपा वाराही तनुम आस्थितस्य यस्य आत्मयोने दन्तकोटिं शिश्रिये अधुना म्लेच्छ उद्वेज्यमाना (सती) राजमूर्तें (यस्य) भुजयुगम सश्रिता स श्रीमदबन्धुभृत्य पार्थिव चन्द्रगुप्त महीं चिरम अवतु ॥१९॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अमात्य राक्षस, कहिए, अब आप का और प्रिय क्या करूँ?

राक्षस—क्या इससे भी बढकर कोई प्रिय काय है? यदि आपको सतोष नहीं है तो ऐसा हो—प्रलय के समय पृथ्वी ने पहले (कल्प के प्रारम्भ में) अधिक बल युक्त तथा रक्षा करने में समर्थ सुअर का शरीर धारण किए हुए जिस विष्णु के दाँतो के अग्रभाग का सहारा लिया था और अब म्लेच्छो से पीडित होने पर राजा

का शरीर धारण किए हुए जिस विष्णुगुप्त चन्द्रगुप्त का आश्रय लिया है वह श्रीसम्पन्न तथा बन्धु और अनुचारो वाला चन्द्रगुप्त बहुत दिन तक पृथिवी की रक्षा करे। (सभी पात्र चले जाते ह।) ॥ मुद्राराक्षस का सातवा अङ्क समाप्त ॥

Chanakya—Minister Rakshas tell me what more pleasure shall I bring unto you ?

Rakshas—Is there anything more pleasant than this ? If you are not satisfied let this be—(Benediction)

Formerly the earth overwhelmed by annihilation clung to the tusk of self born (*Vishnu*) who had assumed the form of a brave and able boar and now being troubled by Mlech chas she has clung to the two arms of Chandragupta in the form of king May that Prince Chandragupta protect it (*earth*) for long with king and servants in prosperity

सस्कृत व्याख्या—प्रलयपरिगता प्रलयेन परिगता आक्रान्ता भूतधात्री पथिवी प्राक कल्पादौ अतनुबलाम अधिकबलयुक्ताम अनुरूपाम योग्या वाराही शूकरस्य तनु शरीरम आस्थितस्य अधिष्ठितस्य यस्य आत्मयोने स्वयभूतस्य विष्णो दन्तकोटिं शिश्रिये दशनाग्रस्य आश्रय स्वीचकार अधुना इदानी म्लेच्छ उद्वेज्यमाना पीडचमाना सती राजमूर्तें नृपशरीरे स्थितस्य यस्य भुजयुगम् बाहुयुगलम् सश्रिता समवलम्बिता स श्रीमदबन्धुभृत्य श्रीमन्त सप्राप्तसर्वेषणा महैश्वयवन्त बान्धव सगोत्रा भत्या सेवकादय च यस्य एवभूत पार्थिव नृप चन्द्रगुप्त मही वसुधाम चिर बहुकालम अवतु रक्षतु।

टिप्पणी

(१) **भरतवाक्य**—नाटक के अन्त मे आशीर्वाद रूप मे गाया जाने वाला पद्य। सस्कृत नाटको का आरम्भ नान्दी से होता है और भरत-वाक्य से अन्त होता है। भरत वाक्य को निवहणसधि का वह अङ्ग माना जाता है जिसे प्रशस्ति कहते ह। (२) **प्रलयपरिगता**—प्रलय से घिरी हुई अर्थात प्रलय काल मे। (३) **भूतधात्री**—प्राणियो को जन्म देने वाली। भूताना धात्रीति भूतधात्री (४) **अतनुबलाम**—अधिक बलशाली। तनु—थोडा। अतनु—ज्यादा। (५) **वाराहीम**—सुअर का। वराहस्य इयम वाराही ता वाराहीम। वराह+अण+ङीप। भगवान के अनेक अवतारो मे वाराह रूप भी एक अवतार है। (६) **उद्वेज्यमाना**—पीडित होकर। उद+विज्+णिच+शानच। (७) **अवतु**—रक्षा करे। 'ग्रन्थान्ते च मगलमाचरेत' इस शिष्टाचार के अनुसार इस श्लोक को मगलाचरण भी कह सकते ह। इसमे अतिशयोक्ति अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

परिशिष्ट (१)

अकारादिक्रम से श्लोको की सूची

परिशिष्ट (२)

मुद्राराक्षस मे सुभाषित या सूक्तियाँ

प्रथम अंक

(१) चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषि ।

(२) प्रज्ञाविक्रमभक्तय समुदिता येषा गुणा भूतये।
ते भत्या नपते कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च ॥

(३) नहि सव सव जानाति ।

(४) न युक्त प्राकृतमपि रिपुमवज्ञातुम ।

(५) श्रोत्रियाक्षराणि प्रयत्नलिखितान्यपि नियतमस्फुटानि भवन्ति ।

(६) अनुचित उपचारो हृदयस्य परिभवादपि दु खमुत्पादयति ।

(७) अत्यादर शङ्कनीय ।

(८) कीदृशस्तणानामग्निना सह विरोध ।

(९) शिरसि भयमतिदूरे तत्प्रतीकार ।

(१०) फलेन सवादितमस्य विकत्थितम ।

द्वितीय अंक

(११) भगवति कमलालये भशमगुणज्ञासि ।

(१२) प्रकृत्या वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला ।
पुरन्ध्रीणा प्रज्ञा पुरुषगुणविज्ञानविमुखी ॥

(१३) किं शेषस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मा न क्षिपत्येष यत्
किं वा नास्ति परिश्रमो दिनपतेरास्ते न यन्निश्चल ।
किन्त्वङ्गीकृतमुत्सजन्कृपणवच्छलाघ्यो जनो लज्जते
निव्यूढ प्रतिपन्नवस्तुषु सतामेतद्धि गोत्रव्रतम ॥

(१४) भव्य रक्षति भवितव्यता ।

(१५) सौहार्दात्कृतकृत्यतव नियत लब्धान्तरा भेत्स्यति ।

तृतीय अंक

(१६) राज्य हि नाम राजधर्मानुवत्तिपरस्य नपतेमहदप्रीतिस्थानम् ।

(१७) परायत्त प्रीते कथमिव रस वेत्ति पुरुष ।

(१८) दुराराध्या हि राजलक्ष्मीरात्मवद्भिरपि राजभि ।
(१९) श्रीलब्धप्रसरेव वेशवनिता दु खोपचर्या भृशम् ।
(२०) सेवा लाघवकारिणी कृतधिय स्थाने श्ववृत्ति विदु ।
(२१) निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कारविषय ।
(२२) न निष्प्रयोजनमधिकारवन्त प्रभुभिराहूयन्ते ।
(२३) दवमविद्वास प्रमाणयन्ति ।
(२४) विद्वासोऽप्यविकत्थना भवन्ति ।

चतुर्थ अंक

(२५) त्वद्वाञ्छान्तरितानि सम्प्रति विभो तिष्ठन्ति साध्यानि न ।
(२६) प्रायोभृत्यास्त्यजन्ति प्रचलितविभव स्वामिन सेवमाना ।

पञ्चम अंक

(२७) मुण्डितमुण्डो नक्षत्राणि पृच्छसि ।
(२८) तदाज्ञा कुर्वाणो हितमहितमित्येतदधुना,
विचारातिक्रान्त किमिति परतन्त्रो विमृशति ।
(२९) अधिकारपद नाम निर्दोषस्यापि पुरुषस्य महदाशङ्कास्थानम् ।
(३०) गति सोच्छ्रायाणा पतनमनुकूल कलयति ।
(३१) अयमपरो गण्डस्योपरि स्फोट ।

षष्ठ अंक

(३२) तत् किन्निमित्त कुकविकृतनाटकस्येवान्यन्मुखेऽन्यन्निवहणे ।
(३३) दवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा सर्वा विपयस्यति ।
(३४) अलक्षितनिपाता पुरुषाणा समविषमदशापरिणतयो भवन्ति ।
(३५) अभूमि खल्वेषोऽविनयस्य ।
(३६) कृतार्थोऽय सोऽथस्तव सति वणिक्त्वेऽपि वणिज ।
(३७) सोऽयमभ्यण शोकवज्रपातो हृदयस्य ।

सप्तम अंक

(३८) कार्याणा गतयो विधेरपि न यान्त्यालोचनागोचरम् ।
(३९) किं कतव्यमत परम् ।

परिशिष्ट (३)

छन्द-परिचय

(मुद्राराक्षस में प्रयुक्त छन्दों के लक्षण)

सस्कृत की रचना या तो गद्य मे होती है या पद्य मे। किन्तु नाटक मे गद्य और पद्य दोनो का व्यवहार किया जाता है। पद्य या श्लोक मे चार चरण होते ह, जिन्हे या तो अक्षरो की सख्या से विनियमित किया जाता है अथवा मात्राओ की गिनती से।

पद्य या तो वत्त होता है अथवा जाति। वत्त एक ऐसा श्लोक होता है जिसका छद प्रत्येक चरण मे अक्षरो की गिनती और स्थिति के अनुसार निर्धारित किया जाता है। जाति एक ऐसा श्लोक होता है जिसका छद प्रत्येक चरण मे मात्राओ की गिनती के अनुसार निश्चित किया जाता है।

वृत्त तीन प्रकार के होते ह—(१) **समवत्त**—जिसमे श्लोक के चारो चरण समान हो। (२) **अधसमवत्त**—जिसमे प्रथम तथा ततीय और द्वितीय तथा चतुथ चरण समान हो। (३) **विषमवत्त**—जिसके चारो चरण असमान हो।

अक्षर (वण) एक ऐसा शब्द है जो एक सास मे बोला जाय अर्थात एक स्वर इसके साथ चाहे एक व्यजन हो चाहे एक से अधिक और चाहे केवल स्वर ही हो।

अक्षर (वर्ण) लघु भी होता है गुरु भी जसा कि उसका स्वर हो ह्रस्व या दीघ। अ इ उ ऋ और ल ह्रस्व ह आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ और औ दीघ ह। परन्तु छद शास्त्र मे ह्रस्व स्वर दीघ माना जाता है जब कि उसके आगे अनुस्वार या विसग हो अथवा कोई सयुक्त व्यजन हो जसे कि गध का अ या ग। इसी प्रकार पाद का अन्तिम अक्षर भी छद की अपेक्षा के अनुरूप लघ या गुरु माना जा सकता है वह स्वय चाहे कुछ ही हो।

सानुस्वारश्च दीघश्च विसर्गी च गुरुभवेत।
वर्ण सयोगपूवश्च तथा पादान्तगोऽपि वा॥

मात्राओ की सख्या से निर्धारित होने वाले वृत्तो मे ह्रस्व स्वर की एक मात्रा होती है, और दीघ स्वर की दो मात्रायें।

अक्षरो की सख्या से विनियमित वत्तो की मापतोल के लिए छन्द शास्त्र के लेखको ने आठ गणो (अक्षरपाद) की एक युक्ति निकाली है। प्रत्येक गण मे तीन अक्षर होते ह वे तीनो लघु या गुरु होने के कारण एक दूसरे से भिन्न होते हैं। वे गण नीचे लिखे श्लाक मे बताये गये ह—

मस्त्रिगुरुश्च लघुश्च नकारो
भादिगुरु पुनरादिलघुय ।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्य
सोऽतगुरु कथितोऽन्तलघुस्त ॥
आदिमध्यावसानेषु यरता यान्ति लाघवम ।
भजसा गौरव यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम ॥

प्रतीकाक्षरो मे अभि यक्त (गुरु ऽ, लघु ।) भिन्न भिन्न गण निम्न प्रकार से दर्शाये जा सकते ह—

ऽऽऽ मगण
।ऽऽ यगण
ऽ।ऽ रगण
।।ऽ सगण
ऽऽ। तगण
।ऽ। जगण
ऽ।। भगण
।।। नगण

इसी प्रकार 'ल लघु तथा ग गुरु को प्रकट करता है। यदि लौ या गौ हो तो दो लघु या दो गुरु अथ होगा।

यति' का अथ है विराम या विश्राम। जहा पर एक पद के बीच मे उच्चारण करते समय थोडा रुकना होता है उसे यति' कहते है।

मुद्राराक्षस मे १६ छदो का प्रयोग हुआ है। उनके लक्षण आदि अकारादि-क्रम से निरूपित किये जा रहे हैं—

(१) **अनुष्टुप—श्लोके षष्ठ गुरु ज्ञेय सवत्र लघु पञ्चमम ।**
द्विचतु पादयोर्ह्रस्व सप्तम दीघमन्ययो ॥

अनुष्टुप् के प्रत्येक चरण मे ८–८ अक्षर होते ह। इनमे पाँचवाँ अक्षर सदा लघु और छठा अक्षर सदा गुरु होता है। सप्तम अक्षर प्रथम तथा तृतीय चरण मे गुरु और द्वितीय तथा चतुथ चरण मे लघु होता है। अन्य अक्षरो मे गुरु या लघु का कोई नियम नही है। वे कुछ भी हो सकते ह।

(२) आर्या—यस्या पादे प्रथमे द्वादशमात्रास्तथा ततीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुथके पञ्चदश सार्या॥

यह मात्रिक छद है। इसके प्रथम पाद मे १२ मात्रायें होती ह द्वितीय मे १८, तृतीय मे १२ और चतुथ मे १५ मात्रायें होती ह।

(३) इद्रवज्रा—स्यादिद्रवज्रा यदि तौ जगौ ग।

इसमे प्रत्येक पाद मे ११–११ वर्ण होते ह। २ तगण, १ जगण २ गुरु अक्षर।

(४) उदगाथा या गीति—

यह आर्या छद का ही एक भेद है। इसके पूर्वाध और उत्तरार्ध मे ३०–३० मात्राए होती ह। पूरे श्लोक मे ६० मात्राये होती ह। पूर्वाध मे १२+१८=३० तथा उत्तराध मे १२+१८=३० मात्राये होती हैं।

(५) उपजाति—स्यादिद्रवज्रा यदि तौ जगौग।
उपेद्रवज्रा जतजास्ततो गौ॥
अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ,
पादौ यदीयावुपजातयस्ता।
इत्थ किलायास्वपि मिश्रितासु
वदन्ति जातिष्विदमेव नाम॥

उपजाति के प्रत्येक चरण मे ११–११ वण होते ह। यह इद्रवज्रा और उपेद्रवज्रा के मिश्रण से बनता है। किसी चरण मे इद्रवज्रा छद होता है और किसी चरण मे उपेद्रवज्रा। इद्रवज्रा मे ११ वण होते हैं—२ तगण, १ जगण, २ गुरु। उपेद्रवज्रा मे भी ११ वण होते ह—१ जगण, १ तगण, १ जगण, २ गुरु।

(६) पथ्यावक्त्र—युजोश्चतुथतो जेन पथ्यावक्त्र प्रकीर्तितम्।

(१४) वसन्ततिलका—उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ ग ।

वसन्ततिलका के प्रत्येक चरण मे १४–१४ वण होते ह—१ तगण, १ भगण, २ जगण, २ गुरु।

(१५) शादूलविक्रीडित—सूर्याश्वयदि म सजौ सततगा शादलविक्रीडितम ।

शार्दूलविक्रीडित छ द मे प्रत्येक पाद मे १९ वण होते ह—१ मगण १ सगण १ जगण, १ सगण २ तगण १ गुरु। इसमे १२–७ पर यति होती है।

(१६) शिखरिणी—रस रुद्रश्छिन्ना यमनसभला ग शिखरिणी।

इसके प्रत्येक चरण मे १७ वण होते ह—१ यगण १ मगण, १ नगण, १ सगण, १ भगण, १ लघु, १ गुरु। इसमे ६–११ पर यति होती है।

(१७) सुवदना—ज्ञेया सप्ताश्वषडभिमरभनययुता म्लौग सुवदना।

इसके प्रत्येक चरण मे २० वण होते है—२ मगण, १ रगण १ भगण १ नगण, १ यगण, १ मगण, २ लघु, १ गुरु। इसमे ७, ७, ६ पर यति होती है।

(१८) स्रग्धरा—म्रभ्नर्याना त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम ।

इस छन्द मे प्रत्येक पाद मे २१ वण होते ह—१ मगण, १ रगण, १ भगण, १ नगण, ३ यगण। इसमे ७, ७, ७ पर यति होती है।

(१९) हरिणी—नसमरसला ग षडवेदहयहरिणी मता।

हरिणी छन्द के प्रत्येक चरण मे १७ वण होते है—१ नगण १ सगण १ मगण, १ रगण १ सगण, १ लघु, १ गुरु। इसमे ६ ४, ७ पर यति होती है।

परिशिष्ट (४)

अलकार-परिचय

(मुद्राराक्षस में प्रयुक्त अलकारो के लक्षण)

अलक्रियते अनेन इति अलकार अलम+कृ+घञ करणे यह अलकार श द की व्युत्पत्ति है। इसके अनुसार शरीर को विभूषित करने वाले अथ या तत्त्व का नाम अलकार' है। जिस प्रकार कटक कुडल, हार आदि आभूषण शरीर को विभूषित करते ह इसलिए अलकार कहलाते ह उसी प्रकार काव्य मे अनुप्रास,

उपमा आदि का य के शरीरभूत श द और अथ को अलकृत करते है, इसलिए अलकार कहलाते ह ।

मुद्राराक्षस मे निम्नलिखित अलकारो का प्रयोग हुआ है जिनके लक्षण आदि ये ह—

(१) **व्याजोक्ति—व्याजोक्तिश्छदमनोद्भिन्नवस्तुरूपनिगूहनम ।**

जहा वस्तु का छिपा हुआ रूप भी किसी प्रकार प्रकट हो जाने पर यदि पुन किसी छल से छिपा दिया जाता है तो वहा याजोक्ति अलकार होता है।

(२) **अतिशयोक्ति—सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते ।**

जहा उपमान उपमेय को आत्मसात कर लेता है वहा अतिशयोक्ति अलकार होता है ।

(३) **अर्था तर यास—भवेदर्था तर यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा ।**

मुख्य सम्बद्ध अथ का प्रतिपादन करने के लिए जहा दूसरे अथ को उपस्थित किया जाय, वहा अर्थान्तरन्यास अलकार होता है।

(४) **स्वभावोक्ति—स्वभावोक्ति स्वभावस्य जात्यादिषु वर्णनम।**

जहा किसी पदाथ की जाति आदि मे स्थित स्वभाव का वर्णन किया जाता है वहा स्वभावोक्ति अलकार होता है।

(५) **श्लेष—श्लेष स वाक्ये एकस्मिन यत्रानेकाथता भवेत ।**

जहा एक वाक्य मे अनेक अथ प्रकट होते हो, वहा श्लेष अलकार होता है।

(६) **रूपक—तद्रूपकभेदो य उपमानोपमेययो ।**

जहाँ उपमान और उपमेय मे अतिशय सादृश्य के कारण अभेद का आरोप किया जाता है वहा रूपक अलकार होता है।

(७) **परिसख्या—परिसख्या निषिध्यकमन्यस्मिन वस्तुयन्त्रणम।**

किसी वस्तु का एक स्थान मे निषेध कर (वस्तु की स्थिति का अभाव बतला कर) अन्य स्थान पर उस वस्तु की स्थिति का वणन जहाँ किया जाता है वहाँ परिसख्या अलकार होता है।

(८) **उपमा—उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयो ।**

दो पदार्थों मे जहा समानता दिखलायी जाती है वहाँ उपमा होती है। परन्तु समानता ऐसी हो कि चमत्कार की सष्टि कर सके।

(९) व्यतिरेक—उपमानाद्यदन्यस्य व्यतिरेक स एव स ।

जहाँ उपमान की अपेक्षा उपमेय के विशेष गुण रूप उत्कर्ष का कथन किया जाता है, वहा व्यतिरेक अलकार होता है।

(१०) दीपक—प्रस्तुताप्रस्तुताना च तुल्यत्वे दीपक मतम ।

जहाँ प्रस्तुत और अप्रस्तुत पदार्थो की समता क्रिया या गुण के साथ वर्णित की जाय वहा दीपक अलकार होता है।

(११) अप्रस्तुतप्रशसा—अप्रस्तुतप्रशसा स्यात सा यत्र प्रस्तुतानुगा ।

अप्रस्तुत वणन जहा प्रस्तुत का अनुगमन करता हो वहाँ अप्रस्तुत प्रशसा अलकार होता है।

(१२) दृष्टान्त—चेदबिम्बप्रतिबिम्बत्व दृष्टान्तस्तदलकृति ।

यदि बिम्बप्रतिबिम्ब भाव हो तो दृष्टान्त अलकार होता है।

(१३) काव्यलिंग—स्यात काव्यलिङ्ग वागर्थो नूतनार्थसमपक ।

नवीन अर्थ को बतलाने वाला जहाँ पद अथवा वाक्य हो वहा काव्यलिंग अलकार होता है।

(१४) अनुमान—अनुमान च कार्यादि कारणाद्यवधारणम ।

जहाँ काय से कारण का निश्चय किया जाता है वहा अनुमान अलकार होता है।

(१५) अपह्नुति—अतथ्यमारोपयितु तथ्यापास्तिरपह्नुति ।

जहाँ असत्य वस्तु का आरोप करने के लिए सत्य का निषेध किया जाता है वहाँ अपह्नुति अलकार होता है।

(१६) उत्प्रेक्षा—सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् ।

जहाँ उपमेय की उपमान के साथ एकरूपता की सभावना की जाती है, वहाँ उत्प्रेक्षा अलकार होता है।

(१७) तुल्ययोगिता—क्रियादिभिरनेकस्य तुल्यत्वे तुल्ययोगिता ।

जिस रचना मे अनेक प्रस्तुत पदार्थों अथवा अप्रस्तुत पदार्थों की समता क्रिया या गुण के साथ की जाय वहाँ तुल्ययोगिता अलकार होता है।

(१८) निदशना—वाक्यार्थयो सदृशयोरैक्यारोपो निदशना ।

जहा दो समान वाक्यार्थों मे एकता का आरोप किया जाता है वहा निदशना अलकार होता है।

(१९) परिकर—अलकार परिकर साभिप्राये विशेषणे।

जिस रचना मे प्रस्तुत अथ से सम्बद्ध विशेष अथ की अभिव्यक्ति के लिए किसी विशेषण का उपादान किया जाय वहा परिकर अलकार होता है।

(२०) परिणाम—परिणामोऽनयोयस्मिन्नभेद पयवस्यति।

उपमान और उपमेय का पयवसान जहा अभेद मे होता है और उसका क्रियापद के साथ उपयोग होता है वहा परिणाम अलकार होता है।

(२१) यथासख्य—यथासख्य द्विधार्थाश्चेत क्रमादेककमन्विता।

जहा दो प्रकार के कारक और क्रिया पदार्थो का क्रमश क्रिया और कारक के साथ अन्वय हो वहाँ यथासख्य अलकार होता है।

(२२) विभावना—विभावना विनापि स्यात कारण कायजन्म चेत।

जिस रचना में प्रसिद्ध कारण के बिना भी काय की उत्पत्ति का वणन किया जाय, वहा विभावना अलकार होता है।

(२३) विषम—विषम यद्यनौचित्यादनेकान्वयकल्पनम।

जहाँ अनुचित रूप से अनेक भिन्न पदार्थों मे एक सम्बध की कल्पना की जाय, वहा विषम अलकार होता है।

(२४) समाधि—समाधि कायसौकय कारणान्तरसन्निधे।

जहा काय सिद्धि के लिए एक कारण के रहने पर भी अन्य (आकस्मिक) कारण द्वारा काय की सिद्धि की शीघ्रता या सुगमता का वणन किया जाय, वहाँ समाधि अलकार होता है।

(२५) समासोक्ति—समासोक्ति परिस्फूर्ति प्रस्तुतेऽप्रस्तुतस्य चेत।

जहा प्रस्तुत के वृत्तात वणन से अप्रस्तुत वत्तात परिस्फुरित हो वहाँ समासोक्ति अलकार होता है।

(२६) समुच्चय—भूयसामेकसम्बधभाजा गुम्फ समुच्चय।

जहाँ एक पदार्थ से सम्बद्ध अनेक पदार्थों का एक साथ गुम्फन किया जाय, वहाँ समुच्चय अलकार होता है।

(२७) ससृष्टि, सकर—शुद्धिरेकप्रधानत्व तथा ससष्टिसकरौ।

जहाँ दो या अनेक अलकारो का सम्मिलन होता है, वहा ये दोनो अलकार होते ह ।

(२८) स्मृति, भ्रान्ति, स देह—

स्यात स्मतिभ्रा तिस देहैस्तदेवालकृतित्रयम ।

जिस स्थान मे स्मति भ्राति और स देह हो वहा तत्तत अलकार होते ह।

(२९) परिवृत्ति—परिवर्त्तिविनिमयो न्यूनाभ्यधिकयोर्मिथ ।

जहा सम, न्यून या अधिक पदार्थों मे परस्पर आदान प्रदान वर्णित किया जाय, वहा परिवृत्ति अलकार होता है ।

परिशिष्ट (५)

प्राकृत-परिचय

सस्कृत-नाटको मे स्त्रियाँ विदूषक तथा निम्न श्रेणी के पात्र प्राकृत भाषा का प्रयोग करते हं । प्राकृत श द प्रकृति श द से बना है । प्रकृते आगत प्राकृतम प्रकृति+अण । इस युत्पत्ति के अनुसार इसका अथ हुआ—प्रकृति अर्थात मूल भाषा सस्कृत से निकली हुई भाषा प्राकृत भाषा है ।

प्राकृत को तीन भागो मे विभक्त किया जा सकता है—(१) प्राचीन प्राकृत या पाली, (२) मध्यकालीन प्राकृत (३) परकालीन प्राकृत या अपभ्रश । प्राचीन प्राकृत मे इनका सग्रह है—३ य शताब्दी ई० पू० से २ य शता दी ई० तक के शिलालेख पाली, बौद्ध ग्रन्थ—महावश, जातक आदि प्राचीन जनसूत्रो की भाषा । मध्यकालीन प्राकृत मे इन प्राकृतो का सग्रह होता है—माहाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी परकालीन जन ग्रन्थो की भाषा अधमागधी, जन माहाराष्ट्री और जैन शौरसेनी पशाची, । परकालीन प्राकृत मे अपभ्रश है ।

इनमे माहाराष्ट्री प्राकृत भाषा सर्वोत्तम मानी गई है । इसका प्रयोग मुख्यत महाराष्ट मे होता था । प्राकृत पद्यो की भाषा माहाराष्ट्री ही थी । वतमान मथुरा के चारो ओर के स्थान को शूरसेन प्रदेश कहते थे । वहाँ पर प्रयुक्त भाषा को शौरसेनी कहते थे । नाटको मे स्त्रिया, विदूषक आदि शौरसेनी का ही प्रयोग करते थे । यह प्राकृत सस्कृत के बहुत निकट है । इसी से वर्तमान हि दी निकली है । प्राचीन मगध (गया के आसपास) म प्रयुक्त भाषा को मागधी कहते थे । नाटको मे निम्न श्रेणी के पात्र इसका प्रयोग करते थे ।

प्राकृत की मुख्य विशेषतायें

(१) प्राकृत मे श दो के विभिन्न रूप सक्षिप्त होकर तीन या चार प्रकार के ही रह गए अर्थात तीन-चार प्रकार के ही शब्द रूप चलने लगे। धातुरूप भी प्राय एक या दो प्रकार से चलने लगे। (२) सभी शब्दो के रूप प्राय अकारान्त शब्द के तुल्य चलने लगे और सभी धातुओ के रूप प्राय भ्वादिगणी धातु के तुल्य चलने लगे। (३) चतुर्थी विभक्ति का अभाव हो गया। प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन प्राय एक हो गए। (४) लङ लिट और लुङ लकारो का अभाव हो गया। (५) द्विवचन का अभाव हो गया। (६) आत्मनेपद का भी प्राय अभाव हो गया। (७) सयुक्ताक्षरो मे प्राय परसवण या पूवसवण का नियम लगा। कुछ प्राचीन स्वरो और वर्णों का अभाव हो गया। जसे—ऋ, ऐ औ य श (मागधी मे य और श ह उसमे स नही है) ष और विसग। (८) सस्कृत मे अप्राप्त ह्रस्व ए और ओ दो नये स्वर हो गए। (९) साधारणतया अन्तिम व्यजन का लोप हो जाता है।

ध्वनि विवेचन

(१) सामान्य नियम यह है कि न य श, ष को छोड कर अन्य एकाकी प्रारम्भिक व्यजन उसी रूप मे रहते ह। उनमे कोई परिवतन नही होता। न को ण होता है, य को ज और श ष को स।

(२) समस्त पद मे उत्तर पद का प्रथमाक्षर मध्यगत शब्द समझा जाता है, अत प्राय उसका लोप हो जाता है। किन्तु धातु रूप का प्रथमाक्षर प्राय शेष रहता है। जसे—आयपुत्र>अज्जउत्त किन्तु आगतम्>आगद।

(३) कुछ प्राकृतो मे भू धातु के भ को ह हो जाता है। भवति>होइ।

(४) क और प को क्रमश ख और फ महाप्राण हो जाता है। क्रीड>खेल, पनस<फणस।

(५) उच्चारणस्थान मे परिवतन हो जाता है। दन्त्य को ताल य त>च। तिष्ठति>चिटठदि। दन्त्य को मूधन्य न को ण। नयन>णअण नून>णूण।

(६) श ष स को स हो जाता है। (मागधी मे केवल श रहता है)।

(७) मध्य मे आने पर क ग च ज त द का प्राय लोप हो जाता है। प ब व का कभी-कभी लोप होता है। मध्यगत य का सदा लोप होता है। लोक> लोअ हृदय>हिअअ दिवस>दिअह प्रिय>पिअ।

(८) मध्यगत क त प को क्रमश ग द ब हो जाते ह। अतिथि>अदिधि, कृत<किद।

(९) शौरसेनी और माहाराष्ट्री मे एक मुख्य अन्तर यह है कि सस्कृत का मध्यगत शौरसेनी मे द हो जाता है, पर माहा० मे उसका लोप हो जाता है। जैसे—जानाति>शौर० जाणादि, माहा० जाणाइ शत>शौ० सद माहा० सअ। २

(१०) कभी-कभी स्वरो के मध्यगत व्यजन का लोप न होकर द्वित्व हो जाता है। एक>एक्क, यौवन>जोव्वण, प्रेमन्>पेम्म।

(११) स्वरो के मध्यगत ट ठ को क्रमश ड ढ हो जाते ह। कुटुम्ब>कुडुम्ब।

(१२) मध्यगत प को व हो जाता है। दीप>दीव।

(१३) ब को व होता है। शबर>सवर।

(१४) ड को प्राय ल होता है। क्रीडा>कीला।

(१५) त द को ल होता है। दोहद>दोहल।

(१६) ११ से १८ सख्याओ मे द को र। एकादश>एक्कारस।

(१७) दृश, दृश, दृक्ष के समासो मे द को र होता है। ईदृश>एरिस।

(१८) म को व होता है। मन्मथ<मा० वम्मह। इसी से ग्राम>गाव।

स्वर विवेचन

(१) प्राकृत मे ऋ ल स्वर नही है।

(२) ऐ औ के स्थान पर क्रमश ए ओ होते ह। कौमुदी>कोमुदी।

(३) ह्रस्व स्वर को दीघ होता है, यदि बाद मे र+व्यजन हो या ऊष्म य र व या ऊष्म हो। कतुम्>कादु, कतव्य>कादव्व, अश्व>आस।

(४) कही पर दीघ न करके स्वर को सानुस्वार कर देते ह। दर्शन>दंसण।

(५) सस्कृत के ऋ के स्थान पर ये आदेश होते ह। (क) रि ऋषि>रिसि। (ख) अ, कृत<कद। (ग) इ, दृष्टि>दिट्ठि। (घ) उ, पृच्छति>पुच्छदि।

सयुक्ताक्षर विवेचन

(१) शब्द के प्रारम्भ मे एक ही व्यजन रह सकता है।

(२) शब्द के मध्य मे दो व्यजनो से अधिक नही रह सकते। ये भी वर्ण के द्वित्व के रूप मे होगे। जैसे क्क क्ख आदि या अनुनासिक के बाद स्पश जसे ङ्क, ण्ड।

(३) सयुक्ताक्षरो को पूवसवण या परसवण होता है या मध्य मे कोई स्वरभक्ति का स्वर आता है। पूवसवण और परसवण का सामान्य नियम यह है कि समबल वाले वर्णो मे परवण प्रबल होता है और असमबल वालो मे अधिक बलवाला। व्यजनो को निम्नलिखित क्रम से रखा जा सकता है। इसमे बाद-वाले कम बलवाले ह। (१) स्पश (क से म तक पचम वण छोडकर) (२) वर्गों के पचम वण (३) ल स व य र।

(४) पूव नियमानुसार क+त=त्त ग+ध=दध द+ग=ग्ग प+त=त्त। दो स्पश वर्णो मे परसवण होगा। युक्त>जुत्त दुग्ध>दुदध उदगम>उग्गम सप्त<सत्त।

(५) स्पश के बाद अनुनासिक होगा तो परसवण होगा। वल्कल> वक्कल।

(६) श ष स के बाद स्पश (क से म तक) होगा तो परसवण होगा और स्पश महाप्राण हो जाएगा। जसे—स्त>त्थ श्च>च्छ पश्चात्>पच्छा। इनके स्थान पर ये होते ह—ष्क और ष्ख>क्ख ष्ट और ष्ठ>ट्ठ ष्प और ष्फ>प्फ स्त और स्थ>त्थ स्प और स्फ>प्फ।

(७) स्पश के बाद ऊष्म (श ष स) हो तो च्छ होता है। अक्षि>अच्छि।

(८) क्ष को साधारणतया क्ख होता है। दक्षिण>दक्खिण, अक्षि> अक्खि।

(९) त्स या त्स को स्स होता है या पूव स्वर को दीघ और स। पयुत्सुक> पज्जुस्सुअ उत्सव>ऊसव।

(१०) स्पश के बाद व अथवा य हो तो पूव सवण। पक्व>पक्क। योग्य>जोग्ग।

(११) यदि दन्त्य और य हो तो दन्त्य को तालव्य और पूवसवण। सत्य> सच्च अद्य>अज्ज सध्या>सझा।

(१२) र् और स्पश हो तो र् को स्पश का सवण अक्षर हो जाएगा। चक्र<चक्क, माग>मग्ग, चित्र>चित्त।

(१३) अनुनासिक के बाद ऊष्म हो तो अनुनासिक को अनुस्वार। यदि ऊष्म के बाद अनुनासिक हो तो ऊष्म को ह होता है और स्थान-परिवतन हो जाता है। श्न>ण्ह, श्म>म्ह ष्ण>ण्ह, स्न>ण्ह, स्म>म्ह। स्नान>ण्हाण कृष्ण>कण्ह।

(१४) अनुनासिक के बाद अन्त स्थ हो तो अन्त स्थ अनुनासिक का सवण हो जाएगा। पुण्य>पुण्ण अन्य>अण्ण।

(१५) क ख प फ से पूव विसग ऊष्म के तुल्य माना जाता है। दु ख> दुक्ख।

सधि विवेचन

(क) स्वरसधि

(१) प्राकृत मे प्रकृतिवद्भाव (सधि का अभाव) सामान्यतया होता है किन्तु समस्त पदो मे पूव और उत्तर पद के स्वरो मे सधि होती है। राजर्षि> राएसि, जन्मान्तरे>जम्मन्तरे।

(२) यदि समस्त पद का उत्तर पद इ या उ से प्रारम्भ होता हो और उसके बाद सयुक्ताक्षर हो, या ई ऊ हो तो पूव पद के अन्तिम अ या आ का लोप हो जाता है। गजेन्द्र>गइद वसन्तोत्सव>वसन्तूत्सव।

(ख) व्यञ्जनसधि

प्राकृत मे अन्तिम व्यजन का लोप हो जाता है, अत व्यजन-सधि भी बहुत कम शेष रही है। स्वर से पूर्व कुछ व्यजन पुनर्जीवित हो जाते ह। यदस्ति> जदत्थि। दुर् और निर का र् शष रहता है। म भी कुछ स्थलो पर शेष रहता एककम>एक्कमेक्क।

शब्दरूप विवेचन

प्राकृत-शब्द रूपों मे द्विवचन नही होता है। चतुर्थी का षष्ठी विभक्ति मे ही समावेश हो जाता है। प्राकृत के नियमो के कारण व्यजनान्त श द प्राय नही रहे ह। अधिकांश शब्दों के रूप निम्नलिखित रूप से चलते ह —

१ पुलिंग या नपुसक लिंग श द अकारान्त।

२ पु० या नपु० शब्द इ या उ अन्तवाले।

३ स्त्रीलिंग श द आ इ ई, उ, ऊ अन्तवाले।

(१) अकारान्त पुंलिग पुत्त=पुत्र शब्द के रूप—

शौरसेनी			माहाराष्ट्री	
ए०	ब०		ए०	ब०
पुत्तो	पुत्ता	प्र०	पुत्तो	पुत्ता
पुत्त	पुत्ते	द्वि०	पुत्त	पुत्ता, पुत्ते
पुत्तेण	पुत्तेहि	त०	पुत्तेण	पुत्तेहि (हिं)
पुत्तादो	पुत्तेहिंतो	प०	पुत्ताओ	पुत्तेहि
पुत्तस्स	पुत्ताण	ष०	पुत्तस्स	पुत्ताण (ण)
पुत्ते	पुत्तेसु (सु)	स०	पुत्ते, पुत्तम्मि	पुत्तेसु (सु)

माहाराष्ट्री मे च० ए० मे पुत्ताअ रूप भी मिलता है।

(२) अकारान्त नपुंसक फल शब्द। इसके रूप पुत्त के तुल्य चलते है, केवल प्र० द्वि० मे ए० मे फलं और प्र० द्वि० के ब० में फलाइ रूप बनेगा।

(३) इकारान्त पुंलिग अग्गि=अग्नि शब्द के रूप—

	ए०	ब०
प्र०	अग्गी	अग्गीओ, अग्गीणो (माहा० अग्गी अग्गीणो)
द्वि०	अग्गिं	अग्गीणो
त०	अग्गिणा	अग्गीहि (माहा० अग्गीहिं)
ष०	अग्गिणो (माहा० अग्गिस्स)	अग्गीण (माहा० अग्गीण)
सं०	अग्गिम्मि	अग्गीसु (सु)

चतुर्थी और पंचमी का साधारणतया प्रयोग नही होता।

(४) इकारान्त नपुंसक दहि=दधि शब्द। अग्गि के तुल्य रूप चलेंगे, केवल प्र० द्वि० एक मे दहिं या दहि और बहु० मे दहीइ।

(५) उकारान्त पुं० और न० के रूप इकारान्त के तुल्य ही चलते है। उकारान्त पु० वाउ=वायु शब्द। ए० और ब० मे रूप —प्र० वाऊ वाउणो (माहा० वाऊ) द्वि० वाउं वाउणो, त वाउणा वाऊहि (हिं) ष० वाउणा (माहा० वाउस्स वाऊण (ण) स० वाउम्मि वाउसु (सुं)। न० महु=मधु शब्द। प्र० द्वि० ए महु (हु) ब० महूइ।

(६) स्त्रीलिंग शब्दो के रूप। त० ष० और स० ए० में एक ही रूप होता है। आ ई ऊ अन्तवाले शब्दो के रूप समान होते है।

	माला		देवी		वहू=वधू	
	ए०	ब०	ए०	ब०	ए०	ब०
प्र०	माला	मालाओ, माला	देवी	देवीओ	वहू	वहूओ
द्वि०	माल	मालाओ, माला	देविं	देवीओ	वहु	वहूओ
तृ०	मालाए	मालाहिं (हिं)	देवीए	देवीहि (हिं)	वहूए	वहूहि (हि)
प०	मालादो	मालाहिंतो (माहा० मालाओ)	देवीदो	देवीहिंतो (माहा० देवीओ)	वहूदो	वहूहिंतो (माहा० वहूओ)
ष०	मालाए	मालाण (ण)	देवीए	देवीण (ण)	वहूए	वहूण (ण)
स०	मालाए	मालासु (सु)	देवीए	देवीसु (सु)	वहूए	वहूसु (सु)
स०	माले	—	देवि	—	वहु	—

(१) प्राकृत मे व्यजनान्त धातुएँ प्राय समाप्त हो गई है। द्विवचन का अभाव हो गया है। आत्मनेपद प्राय समाप्त हो गया है। सस्कृत के धातुरूपो मे से केवल ये शेष रह गये हैं—लट, लोट विधिलिङ, लट कतृ वाच्य और कम वाच्य कृत प्रत्यय—क्त, तुम्, क्त्वा ल्यप शतृ शानच्। १० गणो के स्थान पर दो गण ही शेष रहे ह—(१) भ्वादिगण, (२) चुरादिगण। दोनो गणो के रूप समान ही चलते ह।

(२) भ्वादिगण (लट्)

		शौर०	माहा०	शौ०	माहा०
शौर० पुच्छदि, माहा० पुच्छइ	पुच्छन्ति				
पुच्छसि	शौर० पुच्छध	कधेदि	कहेइ	कधेन्ति	कहेन्ति
पुच्छामि	महा० पुच्छह	कधेसि	कहेसि	कधेध	कहेह
	पुच्छामो	कधमि	कहेमि	कधेमो	कहेमो

(३) भ्वादिगण (लोट)　　　　चुरादिगण (लोट)

शौर० पुच्छदु माहा० पुच्छउ	पुच्छन्तु	कहेदु	कहेन्तु
पुच्छ पुच्छसु	शौर० पुच्छध, माहा० पुच्छह	कहेहि कहेसु	कहेह
पुच्छामु	पुच्छाम्ह	कहेमु	कहेम्ह

(४) विधिलिङ का प्रयोग अधमागधी और जन माहाराष्ट्री मे अधिक प्रचलित है, अन्य प्राकृतो मे इसका प्रयोग बहुत कम है।

(५) लृट मे भ्वादिगण और चुरादिगण के रूप समान ही चलेंगे।

शौर० पुच्छिस्सदि　माहा० पुच्छिस्सइ	पुच्छिस्सन्ति
शौर० पुच्छिस्ससि　माहा० पुच्छिहिसि	शौर० पुच्छिस्सध
पुच्छिस्स	माहा० पुच्छिस्सह
	पुच्छिस्सामो

(५) कमवाच्य मे सस्कृत य का ज्ज होता है या य रहता ही नही है।